दूरस्थ शिक्षा निदेशालय

Directorate of Distance Education

जम्मू विश्वविद्यालय

UNIVERSITY OF JAMMU

जम्मू

JAMMU

पाठ्य सामग्री

STUDY MATERIAL

एम. ए. हिन्दी

M.A. HINDI

Session : 2021 onwards

पाठ्यक्रम संख्या : 203 **COURSE NO. 203**	हिन्दी कहानी	सत्र – द्वितीय **Semester - II** आलेख संख्या 1 – 24 **Lesson No. : 1 - 24**

Dr. Anju Thappa
Co-ordinator

इस पाठ्य सामग्री का रचना स्वत्व/प्रकाशनाधिकार
दूरस्थ शिक्षा निदेशालय, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू –180006 के पास सुरक्षित है।

http:/www.distanceeducationju.in
Printed and published on behalf of the Directorate of Distance Education, University of Jammu, Jammu by the Director, DDE, University of Jammu, Jammu

M.A. HINDI

Course Contributors

- Dr. Anju Thappa — L. No. 1 to 3 & 16
  Associate Professor,
  Department of Hindi, DDE, University of Jammu

- Dr. Sunita Sharma — L.No. 13, 15, 17, 18
  Senior Assistant Professor,
  Department of Hindi,
  Guru Nanak Dev University, Amritsar

- (Review and editing of lesson No. 17, 18, : Dr. Anju Thappa)
  Associate Professor DDE

- Dr. Nisha Jamwal — L. No. 22 to 24
  Lecturur in Hindi, D.D.E. University of Jammu

- Ms. Bhagwati Devi — L. No. 7 to 9, 19 to 21
  Lecturer in Hindi,
  Department of Hindi, University of Jammu

- Ms. Vandana Shama — L. No. 4 to 6, 10 to 12
  NET
  Department of Hindi, University of Jammu

Review, Proof Reading and Content Editing

- Dr. Anju Thappa
  Coordinator PG Hindi, D.D.E., University of Jammu, Jammu

© ***Directorate of Distance Education, University of Jammu, Jammu, 2021***

- All rights reserved. No part of this work may be reproduced in any form, by mimeograph or any other means, without permission in writing from the DDE, Universityof Jammu.
- The script writer shall be responsible for the lesson/script submitted to the DDE and any plagiarism shall be his/her entire responsibility.

Printed by :- Classic Printers / 2021 / 500

विषय सूची

आलेख सं. संख्या	विषय	पृष्ठ
1.	प्रेमचन्द की कहानियों में यथार्थ चेतना/प्रेमचन्द का यथार्थवाद ।	1
2.	प्रेमचन्द की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	6
3.	प्रेमचन्द की कहानियों की मूल संवेदना।	30
4.	मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय।	39
5.	अज्ञेय की कहानियों की मूल संवेदना।	43
6.	अज्ञेय की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	49
7.	चिन्तनपरक कहानीकार भीष्म साहनी।	58
8.	भीष्म साहनी की कहानियों की मूल संवेदना।	68
9.	भीष्म साहनी की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	79
10.	धर्मवीर भारती की कहानियों में वैचारिक प्रतिबद्धता।	96
11.	धर्मवीर भारती की कहानियों की मूल संवेदना।	100
12.	धर्मवीर भारती की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	107
13.	आम आदमी के कहानीकार कमलेश्वर।	119
14.	कमलेश्वर की कहानियों की मूल संवेदना।	126
15.	कमलेश्वर की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	139
16.	नयी कहानीकार कृष्णा सोबती।	173

17.	कृष्णा सोबती की कहानियों की मूल संवेदना।	181
18.	कृष्णा सोबती की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	190
19.	संजीव की युगीन चेतना।	211
20.	संजीव की कहानियों की मूल संवेदना।	224
21.	संजीव की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	237
22.	नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी।	254
23.	मन्नू भंडारी की कहानियों की मूल संवेदना।	261
24.	मन्नू भंडारी की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र।	270

प्रेमचन्द की कहानियों में यथार्थ चेतना/प्रेमचन्द का यथार्थवाद

1.0 रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 प्रेमचन्द की कहानियों में यथार्थ चेतना

1.4 सारांश

1.5 कठिन शब्द

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1.7 पठनीय पुस्तकें

1.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरांत आप जानेंगे –

– प्रेमचन्द का यथार्थवाद कहानियों में भी परिलक्षित होता है।

– प्रेमचन्द की कहानियां यथार्थ चेतना लिए हुए है।

– कहानीकार के रूप में प्रेमचन्द ने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद की स्थापना की है।

1.2 प्रस्तावना

आलोचकों में प्रेमचन्द के विषय में वाद–विवाद रहा है कि वे आदर्शवादी थे कि यथार्थवादी। यह प्रश्न कहानीकार प्रेमचन्द से ही नहीं अपितु उपन्यासकार प्रेमचन्द से भी सम्बन्धित है। यदि आलोचकों का एक वर्ग उन्हें आदर्शवादी स्वीकार करता है तो दूसरा वर्ग उन्हें यथार्थवादी कहता है। इन दोनों के विपरीत

प्रेमचन्द स्वयं अपने आपको आदर्शोन्मुख यथार्थवादी कहते हैं। तथापि यह अत्यावश्यक हो जाता है कि हम उनकी लगभग 300 कहानियों के विश्लेषण के आधार पर तथा स्वयं प्रेमचन्द की आदर्श–यथार्थ विषयक विचारधारा के आधार पर देखें कि क्या वे पूर्णतः आदर्शवादी अथवा यथार्थवादी हैं। उनका आदर्श और यथार्थ अपना रूप बदलता हुआ प्रतीत होता है।

1.3 प्रेमचन्द की कहानियों में यथार्थ चेतना

प्रेमचन्द वस्तुतः भारतीय संस्कृति एवं आदर्श में आस्था रखते थे। इस आस्था को वे किसी भी मूल्य पर नहीं छोड़ना चाहते थे। योरूप की पाश्चात्य सभ्यता को वे भारतीय संस्कृति के पासंग बराबर भी न समझते थे। "योरुप और भारत की दृष्टि में अन्तर है। योरुप की दृष्टि सुन्दर पर पड़ती है– पर भारत की सत्य पर। सम्पन्न योरुप ने मनोरंजन के लिए गल्प लिखे। लेकिन भारतवर्ष कभी इस आदर्श को स्वीकार न करेगा। हम पराधीन हैं–पर हमारी सभ्यता पाश्चात्य से कहीं ऊँची है। यथार्थ पर निगाह रखने वाला योरुप हम आदर्शवादियों से जीवन संग्राम में बाजी क्यों न ले जाये, पर हम अपने परम्परागत संस्कारों का आधार नहीं त्याग सकते। साहित्य में भी हमें अपनी आत्मा की रक्षा करनी ही होगी।"

इससे स्पष्ट हो जाता है कि उनका भारतीय आदर्श के प्रति कितना मोह था ? यही मोह उनकी आरम्भिक काल की कहानियों में दृष्टिगत होता है। यद्यपि प्रेमचन्द भौतिकवादी न थे–बुद्धिवादी थे। परन्तु वे घोर बुद्धिवादी भी न थे। उन्हें सदैव पाश्चात्य सभ्यता की प्रवृत्तियों से शंका बनी रहती थी। यही कारण है कि इस आशंका के प्रति खुली चेतावनी भी दी। "उन्होंने घोषित किया कि त्राण शक्ति में नहीं सेवा में है। महिमा उद्धण्ड विभूति में नहीं–शान्त समर्पण में है।" प्रेमचन्द का विश्वास था कि गाँव की संस्कृति, गाँव का वातावरण ही श्रेष्ठ है। क्योंकि वहाँ तक आधुनिक युग की सभ्यता के पैशाची पंजे नहीं पहुँच पाये–वहाँ पर अब भी मानवता है। मनुष्य के सद्भावों का लोप नहीं हो गया। इस सबका वर्णन करने से मेरा आशय यही है कि प्रेमचन्द का यह विश्वास था कि भारत का कल्याण पाश्चात्य चरित्रों के दर्शन से एक विशेष आनन्द होता है।" तत्कालीन क्लान्त भारत के लिए ये आदर्श चरित्र प्रेरक थे।

"यथार्थवाद यदि हमारी आँखें खोल देता है तो आदर्शवाद हमें उठाकर किसी मनोरम स्थान पर पहुँचा देता है।... किसी देवता की कामना करना मुश्किल नहीं है, लेकिन उस देवता में प्राण प्रतिष्ठा करना मुश्किल है।"

प्रेमचन्द की विचारधारा को समझ लेने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कहानीकार प्रेमचन्द आदर्शोन्मुख यथार्थवादी है। उनकी पृष्ठभूमि यथार्थवादी है और उनके निष्कर्ष आदर्शवादी। परन्तु उनका आदर्शवाद निठ्ठलों का नहीं अपितु कर्मठ व्यक्तियों का आदर्शवाद है। वस्तुतः उनकी प्रारम्भिक कहानियों में कोरे आदर्शवाद की अवतारणा उस युग की ही पुकार थी। वह युग ही सुधारवादी था। उनकी सभी ऐतिहासिक कहानियाँ आदर्शवादी हैं। यथार्थवाद से प्रभावित प्रेमचन्द की कहानियाँ हैं–'पूस की रात', 'सवासेर गेहूँ', 'कफ़न', 'बाबा जी का भोज', 'सज्जनता का दण्ड', 'शिकार', 'लांछन–1', 'लांछन–2', 'बूढ़ी काकी', 'मनोव्रत', 'घासवाली', 'सती', 'विश्वास', 'बोध', 'बेटी का धन',

'माँ', 'सौत', 'शांति', 'बड़े घर की बेटी', 'अलग्योझा', 'पंचपरमेश्वर', 'सती', 'मूठ', 'उपदेश', 'दो बहनें', 'भूत', 'सौभाग्य के कोड़े', 'कामना तरू', 'आगा–पीछा', 'नरक का मार्ग', 'गृहनीति', 'आभूषण', 'दो कब्रें', 'शंखनाद', 'फ़ातिहा' आदि। परन्तु उनका यथार्थवाद फ्रायडियन यथार्थवादियों से भिन्नता लिए हुए है। वे यथार्थ परिस्थिति का उद्घाटन मात्र करते हैं। डा० रामविलास शर्मा कहते हैं–उनके पात्र एकदम जिन्दा हैं उनके पात्र यथार्थवादी हैं जो निष्क्रियता त्याग कर लड़ने के लिए सन्नद्ध हैं। प्रेमचन्द जी के पात्र यथार्थ की संकरी गलियों से गुजरता है, निर्बलताओं के वशीभूत होता है परन्तु उसका अंतःस्थित देवत्व पुनः जाग्रत होता है और निर्बलताओं को जीत कर जीवन में यशस्वी बनकर जीवन के रंगमंच पर आता है। यही उनका आदर्शोंमुख यथार्थवाद है। जो 'बूढ़ी काकी', 'मृतक भोज', 'अलग्योझा', 'ठाकुर का कुआँ' आदि में दृष्टिगत होता है।

इस प्रकार प्रेमचन्द की कहानियों में उनका आदर्शवाद तीन विभिन्न रूपों में प्रकट होता है। "आरम्भिक कहानियां भावना प्रधान और आदर्शवादी हैं। वे प्रत्येक स्थिति में किसी ऊंचे आदर्श पर जाकर समाप्त होती हैं। उनका प्रभाव भावुकतापूर्ण और उपदेशात्मक सा होता है।" प्रेमचन्द की यह आदर्शवादिता यहाँ कर्तव्य, त्याग, प्रेम, न्याय, मित्रता, देश सेवा आदि कई दिशाओं में प्रतिष्ठित हुई है। हमेशा असत्य पर सत्य की जीत दिखाकर आदर्श की प्रतिष्ठा दिखाई है। इसी सत्य के धरातल पर–'बड़े घर की बेटी', 'पंच परमेश्वर', 'नमक का दारोगा', 'उपदेश', 'परीक्षा' और 'पछतावा' आदि कहानियाँ निर्मित हुई हैं। 'बड़े घर की बेटी' कहानी स्रोत की दृष्टि से प्रकल्पित श्रेणी के अन्तर्गत आती है। इसकी रचना लेखक ने अपने जीवन के आस–पास के व्यवहार जगत से घटनाएँ लेकर, भोगे जा रहे यथार्थ के आधार पर की है। ग्राम्य वातावरण पर आधारित इस कहानी में मानवीय सम्बन्धों और पारिवारिक–सामाजिक जीवन के महत मूल्यों को सफलता के साथ उकेरा गया है।

'पंच–परमेश्वर' कहानी बहुत सरल–सीधी, परंपरागत वर्णन–शैली की यह कहानी प्रेमचन्द के शुरूआती दौर की कहानियों में शायद सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रसिद्ध है। 'हमने इन कहानियों में आदर्श को यथार्थ से मिलाने की चेष्टा की है" यह घोषणा प्रेमचन्द ने अपनी विकास कालीन कहानियों के विषय में की थी। उनकी 'ईश्वरी न्याय', 'महातीर्थ', 'धर्म संकट', 'बौढ़म सुहाग की साड़ी', 'लाल फीता', 'आत्माराम' आदि कहानियों में आदर्शोंमुख यथार्थवाद परिलक्षित हुआ है। वस्तुतः इस आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के पीछे गांधीवाद की प्रेरणा ही कार्य कर रही थी। इसी काल में उनकी विशुद्ध यथार्थवादी कहानियाँ प्रकाश में आई। 'बूढ़ी काकी', 'शतरंज के खिलाड़ी', 'शान्ति' तथा 'दफ्तरी' आदि कहानियाँ इसी प्रकार की हैं।

1.4 सारांश

"उत्कर्ष काल में आकर प्रेमचन्द का यह यथार्थवादी दृष्टिकोण और भी स्पष्ट हो गया है। 'कफन', 'पूस की रात', 'मिस पद्मा', 'कुसुम' आदि कहानियों की यथार्थता प्रेरणा तीव्रतम हुई है। 'कफ़न' में जीवन का नग्नतम यथार्थ अट्टहास कर उठा। 'पूस की रात' में यही यथार्थ व्यंग बनकर रह गया है। मानों 'हल्कू' समाज

को चुनौती दे रहा हो कि अब समाज की यह व्यवस्था और अधिक दिनों तक नहीं सही जा सकती। इस तरह विशुद्ध आदर्शवादी प्रेमचन्द अन्त में विशुद्ध यथार्थवादी बन जाते हैं।

1.5 कठिन शब्द

1. उत्कर्ष	2. यथार्थवाद	3. विशुद्ध	4. अट्टहास	5. परिलक्षित
6. प्रतिष्ठा	7. उद्घाटित	8. विभूति	9. भौतिकतावादी	10. निष्क्रियता

1.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. प्रेमचन्द के कहानियों में अभिव्यक्त यथार्थ चेतना पर प्रकाश डालिए।

2. प्रेमचन्द की कहानियों में आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का चित्रण हुआ है – स्पष्ट कीजिए।

1.7 पठनीय पुस्तकें

1. कफ़न : एक पुनः पाठ – सं पल्लव

2. प्रेमचन्द : एक विवेचन – डॉ. इन्द्रनाथ मदान

3. कहानीकार प्रेमचन्द रचनादृष्टि और रचना शिल्प – शिवकुमार मिश्र

4. प्रेमचन्द साहित्य में हाशिए का समाज –डॉ शुभ्रा सिंह

5. प्रेमचन्द – सं. सत्येन्द्र

6. कथाकार प्रेमचन्द – जाफ़र रज़ा

*****

निर्धारित कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

2.0 रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 कहानियों की कथा वस्तु

2.4 कहानियों के पात्रों का चरित्र चित्रण

2.5 कहानियों की संवाद योजना

2.6 कहानियों का वातावरण

2.7 कहानियों की भाषा शैली

2.8 कहानियों का नामकरण

2.9 कहानियों का उद्देश्य

2.10 प्रेमचन्द की कथा शैली

2.11 सारांश

2.12 कठिन शब्द

2.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

2.14 पठनीय पुस्तकें

2.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरांत आप –

– कहानियों के बारे में जानेंगे।

–प्रेमचन्द की कहानियों में व्यक्त सामाजिक जीवन के प्रति अवगत होंगे।

– प्रेमचन्द की कहानियों के पात्रों से अवगत होंगे

– कहानियों की संवाद योजना के सन्दर्भ में जानेंगे।

– कहानियों में अभिव्यक्त वातावरण को जानेंगे

– प्रेमचन्द की कथा शैली के बारे में जानेंगे

2.2 प्रस्तावना

प्रेमचन्द उपन्यासकार के नाते तो महान हैं ही, कहानीकार के नाते और भी महान हैं। इस क्षेत्र में उनकी सफलता और लोकप्रियता अद्वितीय है। वे कहानी लेखन कला के अग्रदूत थे और उनकी कहानियाँ हिन्दी साहित्य की अमर निधि हैं। उन्होंने कहानी को बिलकुल नया रूप दिया। कफ़न कहानी की बात करें तो यह कहानी विश्व की श्रेष्ठतम कहानियों में गिनी जाती है। यह कहानी ऐसे तीन व्यक्तियों से सम्बन्ध रखती है जो जीवन के प्रति जाहिल निश्चिन्त और लापरवाह हैं और फिर पशु और हृदयहीन भी बन जाते हैं। 'पूस की रात' दरिद्रता और भूमिहीन मजदूरों की पीड़ा का चित्रण करती है। 'नमक का दरोगा' और 'ईदगाह' की कहानियाँ भी हिन्दी कहानी साहित्य में विशेष स्थान रखती हैं।

2.3 कहानियों की कथावस्तु

पूस की रात की कथावस्तु

'पूस की रात' प्रेमचन्द की श्रेष्ठतम मानी जाने वाली कहानियों में से एक प्रमुख कहानी है। 'पूस की रात' की कथावस्तु ग्रामीण परिवेश में श्रमिक किसान के जीवन की विवशता से परिपूर्ण कहानी है। आर्थिक विषमता को इस कहानी का आधार बिन्दु कहा जा सकता है। ग्रामीण समाज के इर्द–गिर्द घूमती कथावस्तु श्रमिक वर्ग की समूची परिस्थितियों को उजागर करती है। यथार्थ को उजागर करती कहानी की कथावस्तु मानव–सभ्यता के विषम सत्यों से परिचित करवाने वाली है।

कहानी की कथावस्तु मात्र इतनी है कि हल्कू ने मजदूरी से एक–एक पैसा काट कर तीन रुपये इसलिये जमा किये थे कि वह सर्दियों में कम्बल खरीद लेगा। खेतों पर सर्दियों की रात में पहरा देने में सुविधा रहेगी। परन्तु लेनदार सहना तीन रुपये ले गया और बेचारे हल्कू को वही फटी–पुरानी चद्दर ओढ़कर पूस की ठिठुरती और तेज हवा से दहकती सर्दी वाली रात में खेत–रखवाली के लिए जाना पड़ा। सर्दी की उस रात

में जबरा कुत्ता उसका साथी बना और रात भर गला फाड़–फाड़ कर भौंकता रहा और खेत में घुस आये नील गायों के झुण्ड को भगाने का प्रयत्न करता रहा परन्तु गर्म राख पर थक–हार कर सोया हल्कू जागा नहीं। सुबह उसकी पत्नी मुन्नी ने उसे जगाया तब तक सारा खेत उजड़ चुका था। मुन्नी उदास हो गई थी परन्तु हल्कू यह सोचकर प्रसन्न था कि–'रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा, इतने से कथानक को हल्कू की क्रिया–प्रतिक्रियाओं और कुत्ते जबरे की प्रतिक्रियाओं द्वारा एक मार्मिक एवं प्रभावशाली कहानी की रचना की गई है। इस कहानी की कथावस्तु अत्यधिक मार्मिक है। मानवीय मूल्यों की त्रासद स्थिति पूर्ण रूप से उभर कर सामने आई है। इस कहानी की कथावस्तु को सभी प्रकार से सम्पुष्ट, सुसंगठित, सुसम्बद्ध, जिज्ञासा एवं कुतूहलवर्द्धक कहा जा सकता है।'

'कफ़न' की कथावस्तु

'कफ़न' कहानी प्रेमचन्द की सम्पूर्ण कहानियों में सबसे अधिक चर्चित कहानी है। किसी घटना को केन्द्र में रखकर सामान्यतः प्रेमचन्द जी किसी मनःस्थिति या व्यापक रूप से जीवन–स्थिति का उत्थापन करते हैं। 'कफ़न' में एक ही केन्द्रिय घटना है बुधिया की मृत्यु। कहानी का कथानक इसी घटना को जीवन की सामान्य किन्तु व्यापक परिस्थिति को केन्द्र में रखकर निर्मित है। कहानी की समाप्ति बिना किसी पूरक घटना के होती है, इसलिए ऐसा लगता है कि कहानी की सम्पूर्ण गति एक बार फिर इसी केन्द्र की ओर लौट जाती है।

कहानी का कथा–सूत्र बहुत छोटा है। कहानी एक दलित परिवार की है। परिवार में घीसू और माधव पिता–पुत्र हैं। घीसू की पत्नी मर चुकी है। माधव का विवाह एक वर्ष पूर्व हुआ है। उसकी जवान पत्नी बुधिया कोठरी के भीतर प्रसव–पीड़ा से छटपटा रही है। बाहर अलाव के पास बैठे हुए पिता–पुत्र आलू भूनकर खा रहे हैं। दोनों में से कोई भी भीतर बुधिया को देखने जाने के लिए इसलिए तैयार नहीं कि उसकी अनुपस्थिति में दूसरा सारे आलुओं को चट कर जायेगा। पिता–पुत्र आलू खाकर सो जाते हैं। बुधिया कराहते–कराहते दम तोड़ देती है। सवेरे माधव कोठरी में जाकर देखता है कि उसकी पत्नी मर चुकी है। पिता–पुत्र हाय–हाय करके रोने लगते हैं। घीसू लकड़ी और कफ़न के लिए गाँववालों से सहायता माँगता है। ज़मीदार साहब दोनों के निठल्लेपन को जानते हुए भी दो रुपयों की सहायता करके अपना फ़र्ज निभाते हैं। पिता–पुत्र कफ़न खरीदने बाज़ार जाते हैं। दिन–भर बज़ार में चक्कर लगाते हैं। उन्हें कफ़न के लिए कोई कपड़ा पसन्द नहीं आता। शाम होने पर दोनों उस पैसे से शराब पीते हैं और पेट भर पूरियाँ खाते हैं। दोनों आपस में बात करते हैं कि एक न एक दिन तो हम भी वहाँ जायेंगे जहाँ बुधिया गयी है। अगर वह पूछेगी कि तुमने हमें कफ़न क्यों नहीं दिया तो क्या जवाब देंगे ? घीसू माधव को डाँटकर कहता है कि उसे कफ़न मिलेगा और वही लोग देंगे, जिन्होंने पहले दिया था। पूरियाँ खा–पीकर दोनों तृप्ति का अनुभव करते हैं और यह विश्वास प्रकट करते हैं कि बुधिया अवश्य बैकुण्ठ में जायेगी क्योंकि मरकर भी उसने दोनों की ज़िन्दगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर दी। नशे के सरूर में दोनों गाने लगते हैं–'ठगिनी क्यों नैना झमकावे।' गाते–गाते नशे में मदमस्त होकर वहीं गिर पड़ते हैं। कहानी यहीं समाप्त हो जाती है।

ऊपर से देखने पर कथानक अतिरंजित और अविश्वसनीय लगता है। आज भी ऐसे पतित मनुष्यों की कल्पना नहीं की जा सकती, जो कफ़न के पैसे से शराब पीने लगें किन्तु प्रेमचन्द जिस बात को उभारना चाहते थे वह यह कि मनुष्य के स्वभाव और चरित्र के निर्माण में समाज के आर्थिक ढाँचे की भूमिका ही निर्णायक होती है। अतः कहानी की कथावस्तु इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण भी है और सफल भी।

2.4 कहानियों के पात्रों का चरित्र चित्रण

'पूस की रात' कहानी के पात्रों का चरित्र चित्रण

'पूस की रात' कहानी में हल्कू और जबरा कुत्ता ये दो ही मुख्य पात्र हैं। तीसरा पात्र है हल्कू की पत्नी मुन्नी। सहना नामक एक लेनदार पात्र भी कहानी में आया है। उसका इस दृष्टि से विशेष महत्व है कि हल्कू द्वारा मजदूरी में से काटकर एक–एक पैसा जोड़े तीन रुपये लेनदारी में लेकर सहना नामक यह पात्र कथावस्तु की नींव रख जाता है। पात्र प्रकल्पित होते हुए भी जीवन के घोर यथार्थ पर आधारित हैं। कहानी के सभी पात्र वर्गगत चरित्र वाले हैं। प्रतीकात्मक रूप में सहना ग्रामीण व्यवस्था में शोषक वर्गो का एक वर्ग–प्रतिनिधि है, तो हल्कू और मुन्नी शोषक–पीड़ित श्रमिक किसान वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले पात्र हैं। इसी प्रकार जबरा कुत्ता भी अपने विशिष्ट पशु वर्ग की समस्त वर्गगत मान्यताओं एवं विशेषताओं को सम्पन्न भाव से उजागर करने वाला पात्र है।

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से हल्कू , मुन्नी आदि पात्र सहज मानवीय धैर्य के प्रतीक होते हुए भी गतिशील चरित्र वाले पात्र कहे जा सकते हैं। सहना इन धैर्य रखने वाले पात्रों के विपरीत मानवीयता को खोकर जड़ हो चुका है। हल्कू से पैसा–पैसा जोड़कर कम्बल खरीदने के लिए रखे तीन रुपये लेकर वह अपनी निम्नतम जड़ता का ही परिचय देता है।

हल्कू किसानों की दारूण नियति का शिकार पात्र है। उसकी असमर्थता यह है कि जाड़े से बचाव के लिए मात्र तीन रुपये का कम्बल नहीं खरीद सकता। सर्दियाँ आने पर हर बार उसकी सोच, उसकी चेतना महज ठिठुरकर ही रह जाते हैं। कहानीकार ने वस्तुतः उसे व्यवस्था दोष का शिकार बताया है। यह व्यवस्था रहते हल्कू इसी प्रकार की दयनीय दशा झेलते रहने को विवश है। जबरे की ठण्डी पीठ अपने ठण्डे पड़े हाथों से सहलाते हुए वह जो कुछ कहता है उसे हम उसके वर्गगत चरित्र का दर्पण कह सकते हैं। वह कहता है–"कल से मत आना मेरे साथ, नहीं तो ठण्डे हो जाओगे। यह राँड पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिए आ रही है। उठूँ, फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात तो कटे।" इस प्रकार हल्कू परम्परागत किसान के रूप में ही दिखाया गया है।

मुन्नी व्यवस्था के प्रति विद्रोही चरित्र के रूप में उभर कर सामने आती है। सहना के आने पर आक्रोश भरे स्वर में कहती है–"न जाने कितने बाकी हैं जो किसी तरह चुकने ही नहीं आते।" न चाहते हुए भी उसे संभाल कर रखे तीन रुपये देने ही पड़े। खेती तो जाती ही है मजदूरी करके संभाल कर रखे पैसे भी चले जाते हैं। यह मुन्नी की वेदना को उजागर करता है।

चरित्र–चित्रण की दृष्टि से कहानी बड़ी मार्मिक बन पड़ी है। सजीव पात्रों के चयन ने कहानी में यथार्थ की अभिव्यक्ति की है।

'कफ़न' कहानी के पात्रों का चरित्र चित्रण

'कफ़न' कहानी में प्रमुख पात्र हैं घीसू और माधव जबकि बुधिया की कराहने की आवाज ही उनके होने का अहसास करवाती है। घीसू और माधव पिता–पुत्र हैं और बुधिया माधव की पत्नी है। पिता–पुत्र दोनों जघन्य आलसी, अकर्मण्य कामचोर, भूख–परस्त हैं। जब फ़ाके के दिन आते हैं तो ही वे पेड़ की लकड़ियाँ बेचने जाते हैं। उनके दिल में जैसे मनुष्यता मर चुकी है। प्रेम, दया, करुणा, आत्मसम्मान, औरत की मर्यादा आदि समस्त मानवीय गुण जैसे अफीम की पिनक में सोये पड़े हैं। झोपड़ी के अंदर बुधिया दम तोड़ रही है किन्तु इनका दिल नहीं पिघलता, बड़े मजे से बैठकर गरम–गरम आलुओं को निगलते हैं। बुधिया से बढ़कर उनके लिए आलू की कीमत ज्यादा है।

माधव ऐसा पात्र है जिसे यही डर है कि अगर वह प्रसव से छटपटाती हुई पत्नी के पास चला गया तो उसका बाप उससे अधिक आलू चट कर जायेगा। दोनों यही सोचते हैं कि बुधिया कितनी जल्दी मरे ताकि वे आराम से सो सके। दूसरी तरफ घीसू के लिए भी जीवन में और कुछ भी महत्त्वपूर्ण नहीं है। उसे साठ वर्ष की लम्बी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी और ताजी याद अगर कोई है तो वह बीस वर्ष पहले की ठाकुर की बारात। मनुष्य के जीवन की महत्वपूर्ण घटना ही उसकी सबसे बड़ी याद होती है। अभी तक घीसू के नाक में पूरियों और कचौरियों की भीनी–भीनी सुगन्ध महक रही है। ज़िन्दगी में पहली बार उसको ऐसा भोजन भर–पेट मिला था। माधव बेचारा सुनकर ही आनन्द लेता है। उसे तो यह भी नसीब नहीं हुआ। भर–पेट भोजन ही उनकी सबसे अधिक सुखप्रद स्मृति है–यही उनका स्वप्न भी। बुधिया के कफ़न की कमाई ने उनके सभी अरमान पूरे कर दिये–शराब की बोतल और भर–पेट दावत। घीसू और माधव, प्रेमचन्द के अन्य पात्रों की ही भाँति मात्र उनकी कल्पना की उपज नहीं हैं। वर्तमान समय में समाज में हमें ऐसे पात्रों का परिचय होता है। घीसू और माधव न तो हमारे क्रोध के पात्र हैं और न घृणा के। इन पर तो हमें दया आती है कि शोषण ने इनको कितना वीभत्स बना दिया है।

बुधिया के कराहने की आवाज़ और प्रसव–वेदना से तड़प–तड़प कर मर जाना ही उसके प्रति दया की भावना भर देता है। बुधिया की मृत्यु दैन्य की द्रावक तस्वीर प्रस्तुत करती है। अपनों के होते हुए एक गर्भवती स्त्री का प्रसव–वेदना में तड़पकर मरना एक लज्जाजनक हादसा है। अतः चरित्र–चित्रण की दृष्टि से 'कफ़न' कहानी में इन पात्रों के माध्यम से प्रेमचन्द ने कटु यथार्थ से पाठकों को अवगत करवाया है।

2.5 निर्धारित कहानियों की संवाद योजना

'पूस की रात'

'पूस की रात' कहानी की संवाद योजना भी अनेक दृष्टियों से महत्वपूर्ण है। संवाद कथावस्तु को क्रमिक

विकास देने में सहायक होते हैं और इस कहानी में भी संवाद पूर्ण रूप से कथावस्तु के स्वरूप के संयोजक और उद्‌घाटक हैं।

इस कहानी के संवाद अन्तः बाह्य स्थितियों को उद्‌घाटित करते हैं। वक्ता पात्रों की समग्र मानसिकता को भी पाठकों के सामने सहज स्वाभाविक रूप से उद्‌घाटित करके रख देते हैं। उदाहरण स्वरूप मुन्नी का निम्न संवाद देखें जहाँ पति द्वारा बची तीन रूपये की पूँजी को वह नहीं देना चाहती–मुन्नी उसके पास से दूर हट गयी और आँखें तरेरती हुई बोली–कर चुके दूसरा उपाय। जरा सुनूँ कौन उपाय करोगे ? कोई खैरात दे देगा कम्बल ? न जाने कितनी बाकी है, जो किसी तरह चुकने ही नहीं आती। मैं कहती हूँ , तुम क्यों नहीं खेती छोड़ देते ? मर–मर काम करो, उपज हो तो बाकी दे दो, चलों छुट्टी हुई।

संवाद कथा को क्रमिक विकास देकर चरमोत्कर्ष एवं चरम परिणति तक पहुँचाने वाले भी हैं। इस के प्रमाण स्वरूप कहानी के अन्त में दिए गए संवाद उदाहरण स्वरूप देखें–

मुन्नी ने चिन्तित होकर कहा–'अब मजदूरी करके माल–गुजारी भरनी पड़ेगी।'
हल्कू ने प्रसन्न मुख से कहा–'रात की ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।'

मनुष्य और बेजुबान पशु के मध्य सरल, सहज एवं आत्मीय संवाद भी इस कहानी के महत्त्वपूर्ण अंग हैं जिससे कथा के कई पहलू उभर कर सामने आए हैं। खेत में हल्कू किसान और जबरा कुत्ता किस प्रकार ठण्ड में आत्मीय संवाद करते हैं–

हल्कू–'आज और जाड़ा खा लें। कल से मैं यहाँ पुआल बिछा दूँगा। उसी में घुसकर बैठना, तब जाड़ा न लगेगा।'

जबरा ने अगले पंजे उसकी घुटनियों पर रख दिये और उसके मुँह के पास अपना मुँह ले गया। हल्कू को उसकी गर्म साँस लगी। अतः इस कहानी में संवाद कहानी की सफलता के परिचायक हैं।

'कफ़न'

'कफ़न' कहानी के संवाद पात्रों की मनः स्थिति को स्पष्ट रूप से अभिव्यक्त करते हैं। माधव और घीसू के स्वार्थपरक संवाद का उदाहरण देखें–

घीसू ने कहा–'मालूम होता है बचेगी नहीं। सारा दिन तड़पते हो गया। जा देख तो आ।'

माधो दर्दनाक लहजे में बोला–मरना ही है तो जल्दी मर क्यों नहीं जाती। देख कर क्या करूँ।

पात्रों की स्थिति को उजागर करते ये संवाद पाठकों को भी झिंझोड़ते हैं। घीसू और माधव के ये संवाद कथा को गति तो देते ही हैं साथ ही उनके चरित्र को परत–दर–परत स्पष्ट करते जाते हैं। बाजार में पहुँचकर घीसू बोला–लकड़ी तो उसे जलाने भर को मिल गयी है। क्यों माधो ?

माधो बोला–"हाँ लकड़ी तो बहुत हैं। अब कफन चाहिए। तो कोई हल्का–सा कफ़न ले लें।"

"हाँ और क्या। लास उठते–उठते रात हो जायेगी। रात को कफन कौन देखता है।"

"कैसा बुरा रिवाज है कि जिसे जीते जी तन ढाँकने को चीथड़ा भी न मिला उसे मरने पर नया कफ़न चाहिए।

कफ़न लास के साथ जल ही तो जाता है।"

कथा चरम पर पहुँचती है तो संवाद भी चरम स्थिति पर पहुँचता है। कफ़न के लिए इकट्ठे किए पैसों को चट कर जाने पर उनका संवाद देखें–

"तू कैसे जानता है उसे कफ़न न मिलेगा ? तू मुझे ऐसा गधा समझता है। मैं साठ साल दुनिया में क्या घास खोदता रहा हूँ। उसको कफ़न मिलेगा और उससे बहुत अच्छा मिलेगा जो हम देते।" घीसू और माधव के संवाद कथा को गति देने में सहायक हुए हैं। अतः कफ़न कहानी के संवाद संक्षिप्त, पात्रानुकूल और प्रभावोत्पादक है।

2.6 निर्धारित कहानियों का वातावरण

'पूस की रात'

'पूस की रात' कहानी वातावरण प्रधान कहानी है। कहानी का शीर्षक ही वातावरण को दिखाता है क्योंकि जो भी घटनाएं कहानी में उजागर की गई हैं वे पौष मास की ठण्डी रात्रि में घटित होती हैं । वातावरण को पात्रों के संवादों ने भी उचित मोड़ दिया है जिससे उनकी क्रियाएं और प्रतिक्रियाएं घटित होती हैं। कहानी में वातावरण का सृजन करते शब्द देखिए–

"पूस की अंधेरी रात। आकाश पर तारे भी ठिठुरते हुए मालूम होते थे। हल्कू अपने खेत के किनारे ऊख के पत्तों की एक छतरी के नीचे बाँस के खटोले पर अपनी पुरानी गाढ़े की चादर ओढ़े काँप रहा था। खाट के नीचे उसका संगी कुत्ता जबरा पेट में मुँह डाले सर्दी से कूं–कूं कर रहा था। दो में से एक को भी नींद न आती थी।"

सजीव और यथार्थ चित्रण इस कहानी के वातावरण को और भी दृढ़ता देता है। वातावरण सृष्टि में संवाद भी सहायक हुए हैं। इस प्रकार का एक उद्धरण भी देखिए–

"हल्कू ने कहा–अब तो नहीं रहा जाता जबरू! चलो बगीचे में पत्तियाँ बटोरकर तापें। टाँठे हो जायँगे, तो फिर आकर सोएँगे। अभी तो रात बहुत है।"

"जबरा ने कूं–कूं करते सहमति प्रकट की और आगे–आगे बगीचे की ओर चल दिया ?"

इस प्रकार सभी स्तरों पर वातावरण की सृष्टि अत्यन्त सजीव, सन्तुष्ट, साकार एवं यथार्थ बन पड़ी है।

'कफ़न'

'कफ़न' कहानी की वातावरण सृष्टि में भी प्रेमचन्द ने छटपटाती इंसानियत का चित्रण किया है। जाड़े की रात में झोंपड़े के बाहर बुझे अलाव के सामने घीसू और माधो का महज जबानी जमा खर्च करते हुए बैठे रहना है, वह भी इस नाते कि उनमें से कोई अलाव के पास से हटा तो दूसरा अलाव की बुझी आग के नीचे की गर्म राख में भुनते हुए आलुओं को अकेला ही खा जायेगा। उदाहरण स्वरूप कहानी की ये पंक्तियाँ देखिए–

"झोंपड़े के द्वार पर बाप और बेटा दोनों एक बुझे हुए अलाव के सामने चुपचाप बैठे हुए हैं और अन्दर बेटे की जवान बीवी बुधिया प्रसव–वेदना से पछाड़ खा रही थी। रह–रहकर उसके मुँह से ऐसी दिल हिला देने वाली आवाज़ निकलती थी, कि दोनों कलेजा थाम लेते थे जाड़ें की रात थी, प्रकृति सन्नाटे में डूबी हुई, सारा गाँव अन्धकार में लय हो गया था।"

वातावरण को उद्घाटित करता एक और संवाद देखिए जिसमें घीसू को ठाकुर की बारात याद आई–"घीसू को उस वक्त ठाकुर की बारात याद आई जिसमें बीस साल पहले वह गया था। उस दावत में उसे जो तृप्ति मिली थी, वह उसके जीवन में एक याद रखने लायक बात थी, और आज भी उसकी याद ताजी थी।"

2.7 निर्धारित कहानियों की भाषा शैली

'पूस की रात'

'पूस की रात' कहानी सरल और स्वाभाविक साहित्यिक भाषा को संजोए हुए है। साहित्यिक भाषा होते हुए भी इसमें कुछ स्थानीय या आंचलिक कहे जाने वाले शब्दों का समावेश हुआ है। जैसे–हार, सहमत, ऊख, दोहर, टाँटे, भाषा–शैली ने इस कहानी की व्यंजना को रंगों से भर दिया है। पूस की रात की ठंड में कुत्ते के साथ वार्ता का इतना सुन्दर वर्णन हुआ है कि पाठक मुग्ध हो जाता है। वस्तुतः शैली के कारण ही कहानी की मार्मिकता बरकरार रही है। ठंड में जबरा कुत्ते को हल्कू द्वारा डांटना कहानी की रोचकता को बनाए रखता है।

हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा–क्यों जबरा जाड़ा लगता है ? कहता तो था, घर में पुआल पर लेट रहा तो यहाँ क्या लेने आये थे। अब खाओ ठण्ड, मैं क्या करूँ। जानते थे मैं यहाँ हलुवा–पूरी खाने आ रहा हूँ दौड़े–दौड़े आगे–आगे चले आये। अब रोओ नानी के नाम को।

दूसरी तरफ ठण्ड की जकड़न को व्यक्त करते शब्द देखें–

"पूस की अन्धेरी रात। आकाश पर तारे ठिठुरते हुए मालूम होते थे।

"यह रांड पछुआ न जाने कहाँ से बरफ लिए आ रही है। उठूं फिर एक चिलम भरूँ। किसी तरह रात

तो कटे। .... यह खेती का मजा है। और एक भागवान ऐसे पड़े हैं जिनके पास जाड़ा जाय तो गर्मी से घबरा कर भागे। तकदीर की खूबी है। मजदूरी हम करें मजा दूसरे लूटे।"

कहानी में काव्यमय प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है। जैसे–

"बगीचे में घुप अंधेरा छाया हुआ था और अन्धकार में निर्दय पवन पत्तियों को कुचलता हुआ चला जाता था। वृक्षों से ओस की बूंदों टप–टप नीचे टपक रही थीं।"

"कफन"

"कफन" कहानी में प्रेमचन्द की भाषा में बहुत से परिवर्तन देखने को मिले। भाषा पूर्ण रूप से परिस्थिति के अनुकूल है। लोक भाषा के शब्दों के साथ–साथ उर्दू के शब्दों का प्रयोग भी कहानी में हुआ है। जैसे। फ़िज़ा (वातावरण), गर्क (डूबा हुआ), जज़्ब (निमग्न), मुतलक़ (तनिक भी), तकल्लुफ़ात (आदर–सत्कार)

घीसू बीस साल पहले खाई दावत का ब्यान करता है तो भाषा की सटीकता का आभास होता है। बोला–"वह भोज नहीं भूलता। तब से फिर उस तरह का खाना और भरपेट नहीं मिला। लड़कीवालों ने सबकों पूड़ियाँ खिलायी थीं। सबको। छोटे–बड़े सबने पूड़ियाँ खायी और असली घी की। चटनी, रायता, तीन तरह के सूखे साग, एक रसेदार तरकारी, दही, चटनी, मिठाई।"

2.8 निर्धारित कहानियों का नामकरण

'पूस की रात'

'पूस की रात' कहानी का नामकरण मूल कथ्य की समग्र अन्तः बाह्य योजना को ध्यान में रखकर किया गया प्रतीत होता है। पौष मास की भयावह ठण्डी रात के इर्द–गिर्द कहानी का घटनाक्रम बुना गया है। उसी रात के दारूण यथार्थ को उजागर करती यह कहानी किसान वर्ग के पीड़ित और शोषित जीवन पर प्रकाश डालती है। 'पूस की रात' उस व्यवस्था का प्रतीक बनकर भी उभरी है जो समाज में हर प्रकार के सामान्यजनों का शोषण करना जानती है। इस प्रकार इन मूल तथ्यों की सृष्टि के आधार पर कहा जा सकता है कि नामकरण 'पूस की रात' पूर्णतः सार्थक और कथानुरूप है।

'कफन'

'कफ़न' कहानी का नामकरण भी कथा के अनुसार ही किया गया है। प्रेमचन्द ने इसमें जीवन के नग्नतम यथार्थ का चित्रण किया है। घीसू और माधव जो कुछ करते हैं, वह यथार्थ न होते हुए भी आप उसे यथार्थ मानने पर मजबूर होते हैं। सम्पूर्ण कहानी की एक ही संवेग घटना है– कफ़न के पैसों का कफन न खरीद कर दो क्षुधित प्राणियों का खुलकर समाज के सम्मुख अपने यथार्थ रूप में आ जाना। कहानी की मूल संवेदना यह है कि आर्थिक व्यवस्था में सर्वहारा वर्ग का प्राणी कितना पतित हो सकता है। अतः कहानी का नामकरण पूर्णतः सफल है।

2.9 निर्धारित कहानियों का उद्देश्य

'पूस की रात'

'पूस की रात' कहानी का मूल उद्देश्य है व्यवस्था दोष को उजागर करते हुए आम जन की निरीहता और विवशता को दिखाना। हल्कू और जबरा के क्रिया–कलाप, मुन्नी का आक्रोश और सहना का व्यवहार सभी इसी उद्देश्यमूलक तथ्य की ओर संकेत करते हैं। जबरे की मौत वस्तुतः पशुवत मनुष्य की मौत की प्रतीक है। व्यवस्था की विषमता रूपी नीति ने आम जन को शोषित होने के लिए विवश तो किया ही है दूसरी तरफ खेतों के उजड़ जाने पर हल्कू का खुश होना आम जन में व्यवस्था दोष के कारण आ गई पलायन की प्रवृत्ति को भी उजागर किया है।

'कफ़न'

'कफ़न' कहानी में प्रेमचन्द यह दिखाना चाहते हैं कि हमारे समाज में क्रूरता और कपट के वास्तविक उत्स कहाँ हैं। घीसू और माधव पैदा करनेवाली व्यवस्था कैसी है ? आज भी हम अपने आस–पास गौर से देखेंगे, तो कई घीसू–माधव दिखायी पड़ जायेंगे। प्रेमचन्द ने घीसू और माधव पर कटाक्ष नहीं किया था, अपने समय के दुष्ट–शोषक पण्डितों, लालाओं, बनियों आदि पर भी व्यंग्य किया है। यह उनकी एकमात्र कहानी है, जिसमें उन्होंने हमारे सामाजिक यथार्थ के अन्तर्विरोध को बड़े ही चौंका देनेवाले रूप में व्यक्त किया है। इस कहानी के माध्यम से प्रेमचन्द व्यवस्था की विसंगतियों और विडंबनाओं को उधेड़कर सामने रखना चाहते थे। वे ऐसा कर सके हैं। पाठक को बेचैन और विक्षुब्ध कर सके हैं।

2.10 प्रेमचन्द की कथा – शैली

शैली से दो प्रकार के अर्थ लिए जाते हैं। एक सामान्य और दूसरा व्यापक अर्थ। शैली के अन्तर्गत इसके व्यापक पक्ष में कहानी के तीन भाग आरम्भ, विकास और चरम सीमा का अध्ययन किया जाता है। सामान्य पक्ष में कहानी के अन्य तत्वों का उल्लेख किया जाता है। इसके अतिरिक्त इस शैली के व्यापक पक्ष के अन्तर्गत दो दृष्टियों से विचार करेंगे। अर्थात् लेखन की विभिन्न शैलियों की दृष्टि से तथा कहानी के आरम्भ–विकास–चरम सीमा की दृष्टि से। लेखन की विभिन्न पद्धतियों के अन्तर्गत–हम यह अध्ययन करेंगे कि प्रेमचन्द ने प्रमुख रूप से कितने प्रकार की शैलियों या पद्धतियों में कहानी रचना की अर्थात् ऐतिहासिक, डायरी, पत्र शैली, आत्मकथात्मक शैली, रूपक शैली, अथवा मिश्र शैली आदि में कहानी की रचना की गई है।

प्रेमचन्द ने लगभग सभी प्रकार की 'शैली' में कहानियाँ लिखी हैं। संक्षिप्त में हम कह सकते हैं कि उनकी सभी प्रकार की पद्धतियों में कहानी लिखने की कलापूर्ण प्रतिभा थी। प्रत्येक शैली में वे सफल उतरे हैं। प्रेमचन्द की उत्कर्ष कालीन कहानियों में शैली की दृष्टि से कतिपय सुन्दर कहानियाँ हैं। आरम्भकालीन, विकासकालीन एवं उत्कर्ष कालीन अपनी कहानियों में प्रेमचन्द ने लगातार शैलीगत प्रयोग किया है।

ऐतिहासिक शैली

इस शैली के अन्तर्गत उनकी अधिकांश कहानियाँ आ जाती हैं क्योंकि प्रेमचन्द को अपनी बात कहने का अधिक अवसर इसी प्रकार की शैली में मिलता है। लगभग आधी कहानियों में इसी शैली का सहारा लिया गया है। कतिपय प्रसिद्ध कहानियों–'मृत्यु के पीछे', 'आभूषण', 'आत्माराम', 'बड़े घर की बेटी', 'महातीर्थ', 'मर्यादा की वेदी', 'विक्रमादित्य का तेगा', 'विस्मृति', 'प्रारब्ध', 'कजाकी', 'ईश्वर न्याय', 'इस्तीफा' तथा 'पिसनहरी का कुआँ' आदि में ऐतिहासिक शैली है। ऐतिहासिक शैली वस्तुतः उपयुक्त नामकरण नहीं है। यह सबसे सरल प्रचलित शैली है। जिस रीति से इतिहास लिखा जाता है उसी रीति से इन कहानियों को लिखा जा सकता है। इनमें अधिकतर अन्य पुरुष का प्रयोग किया जाता है। ऐतिहासिक कहानियों और ऐतिहासिक शैली में लिखी कहानियों में पर्याप्त भिन्नता होती है। वर्तमान युग की आज के दिन की कोई कहानी ऐतिहासिक शैली में लिखी जा सकती है–परन्तु उसे ऐतिहासिक नहीं माना जाता।

डायरी शैली

दैनन्दिनी के पृष्ठों में कभी–कभी अत्यन्त महत्वपूर्ण अथवा रोचक घटनाएँ अंकित हो जाया करती हैं। इसी तथ्य का आधार लेकर कहानी लिखने के लिए इस शैली का प्रयोग प्रचलित हुआ है। प्रेमचन्द ने इस शैली में मात्र एक कहानी लिखी है। इसमें कुछ स्थानों में डायरी शैली का पूर्ण निर्वाह नहीं हुआ है। यह कहानी है–'पंडित मोटेराम की डायरी'।

पत्र शैली

सापेक्षतः अप्रचलित किन्तु विधान की दृष्टि से पर्याप्त महत्त्वपूर्ण, कहानी लिखने की यह एक आधुनिक शैली है। इस प्रकार की कहानियों का सम्पूर्ण ढाँचा पत्रों से बनता है। कहानी के समस्त तत्व या तो एक ही पत्र में सिमटे हुए होते हैं या कई पत्रों में अभिव्यक्त होते हैं। प्रेमचन्द की उल्लेख योग कहानी 'दो सखियां' है– जो एक मात्र पत्र शैली में लिखी गई है। इस कहानी में शैली के अनुसार एक बाधा यह है कि स्वतन्त्रता पूर्वक वार्तालाप प्रस्तुत किए गये हैं– जिनसे कथा में कहीं–कहीं विकास रुकता सा अनुभव होता है। यह कहानी १३ (13) पत्रों में विभक्त है। इस कहानी की लम्बाई ६७ (67) पृष्ठ है।

आत्मकथात्मक शैली

इस प्रकार की कहानियों में एक पात्र में लेखक 'मैं' की संज्ञा देता है। परन्तु इसका सदा यह अर्थ नहीं होता कि उस 'मैं' में लेखक का व्यक्तित्व निहित रहता है। यह सारी कहानी मूलतः ऐतिहासिक शैली में चलती है। प्रेमचन्द ने इस शैली में कई कहानियाँ लिखी हैं। 'शांति' (मा० स० भाग–7) 'बौढ़म', 'शाप', 'हार की जीत', तथा 'यह मेरी मातृ भूमि' है। 'बौढ़म' कहानी लेखक स्वयं 'मैं' के रूप में प्रस्तुत हुआ है। अन्य कहानियों में अन्य पात्रों को रखा गया है। 'हार की जीत' में कुछ भिन्नता है। इसमें कहीं–कहीं परिच्छेदों में पात्रों के नाम इस तरह दिया गया है :– 5 : शारदाचरण आदि। परन्तु पूर्ण रूप से आत्म–कथात्मक शैली में नहीं रखा जा सकता।

मिश्र शैली

इस प्रकार की कहानियों में से ऊपर विवेचना किये दो या अधिक विधानों को मिला दिया जाता है अर्थात् ऐतिहासिक और पत्र शैली को मिला दिया या अन्य किन्हीं दो शैलियों के मिश्रण से नवीन शैली बना दी। इस प्रकार की कहानियाँ प्रेमचन्द की कई हैं। पत्रों और चिन्तन को मिलाकर 'धर्म संकट' आदि की रचना की गई है। आत्मकथा और ऐतिहासिक शैलियों में मिश्रित कहानी 'ब्रह्मा का स्वांग' आदि है।

रूपक शैली

इसमें प्रेमचन्द ने कम कहानियों की रचना की है। 'मार्ग', 'ज्वालामुखी', 'अधिकार चिन्ता' आदि कुछ कहानियाँ उल्लेखनीय हैं।

कथोपकथन शैली

इसके अन्तर्गत उन कहानियों की गणना की जाती है जिनमें संवादों को अधिक महत्व प्रदान किया जाए। तथा सारी की सारी कथा का विकास–अन्त कथोपकथन में ही हो। प्रेमचन्द की 'जादू' 'मनोवृत्ति' कहानियाँ कथोपकथन शैली की सुन्दर कहानियाँ हैं।

इसके अतिरिक्त नाटकीय शैली, भाषण शैली, लघु कथात्मक शैली आदि कई शैलियों में प्रेमचन्द ने कहानियों की रचना की है। परन्तु प्रमुख रूप से ऐतिहासिक एवं मिश्र शैली का आश्रय लिया।

अब हम कहानियों की तीनों अवस्थाओं पर विचार करेंगे। अर्थात् कहानी के प्रारम्भ विकास तथा अन्त पर दृष्टिपात करेंगे। इस दृष्टि से हमें उनकी कहानियों में तीन कालों में विभिन्न स्थितियाँ मिलती हैं। आरम्भिक युगीन कहानियों में प्रेमचन्द न तो सफल आरम्भ ही कर पाते हैं न ही उसका विकास न अन्त ही। विकास काल की कतिपय कहानियाँ इस दृष्टि से सफलतम हैं तथा उत्कर्ष काल में आकर प्रेमचन्द अपनी कहानियों के संघर्ष और चरम सीमा को प्रस्तुत करने में अतिशय सफलता अर्जित करते हैं।

प्रारम्भ :

आरम्भिक कहानियों का प्रारम्भ परिचयात्मक है। इस प्रकार की कहानियों में प्रेमचन्द पहले पात्रों का तथा बाद में परिस्थितियों का परिचय देते हुए कथापात्र को आगे बढ़ाते हैं। यही नहीं पात्रों का परिचय संक्षिप्त नहीं होता अपितु भूमिका हित विस्तृत रुप से परिचय प्रस्तुत किया जाता है। 'सप्त सरोज' एवं नवनिधि की कोई भी कहानी ऐसी नहीं जिसमें इस प्रकार का आरम्भ प्रस्तुत न किया गया हो। प्रेमचन्द की यह भी घोषणा थी कि पात्रों के परिचय के साथ ही साथ उसकी परिस्थितियों का भी परिचय आवश्यक रूप से कहानीकार को देना चाहिये। यही प्रवृति उनकी आरम्भिक युग की कहानियों में दृष्टिगत होती हैं। इस प्रकार वे आरम्भ में ही बता देते हैं कि पाठक को कुछ सोचने के लिए शेष नहीं रहता। पूर्ण संवेदना में पात्रों की स्थिति स्पष्ट हो जाती है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं–

"अपनी माधव सिंह गौपुर गाँव के जमींदार थे। उनके पितामह किसी समय बड़े धान्य से सम्पन्न थे। गाँव का पक्का तालाब और मन्दिर, जिन की अब मरम्मत मुश्किल थी, उन्हीं के कीर्ति स्तम्भ थे कहते हैं इस दरवाजे पर हाथी झूमता था, उसकी जगह पर एक बूढ़ी भैंस थी, जिसके शरीर में पंजर के सिवा और कुछ न रहा था। पर दूध शायद बहुत देती, क्योंकि एक न एक आदमी हाँडी लिए उसके सर पर सवार ही रहता था। बेनी माधव सिंह अपनी आधी से अधिक सम्पत्ति सेलों की भेंट कर चुके थे। उनकी वर्तमान आय वार्षिक एक हजार से अधिक न थी। ठाकुर साहब के दो बेटे थे।"

यह था 'बड़े घर की बेटी' का प्रारम्भ। इसमें हमें परिस्थितियों का पात्रों का परिचय मिल जाता है। अर्थव्यवस्था का भी अनुमान लगा लेते हैं। इसी प्रकार प्रारम्भ हुआ 'पंचपरमेश्वर', 'नमक का दारोगा', 'ममता', 'राजा हरदौल' आदि कई कहानियों का प्रारम्भ हुआ है।

"जुम्मन शेख और अलगू चौधरी में गाढ़ी मित्रता थी। सांझे में खेती होती थी। कुछ लेन देन में भी सांझा था। एक को दूसरे पर अटल विश्वास था। जुम्मन जब हज़ करने गये थे, तब अपना घर अलगू को सौंप गये थे और अलगू जब कभी बाहर जाते तो जुम्मन पर अपना घर छोड़ जाते थे। उनमें न खान पान का नाता था न धर्म का नाता, केवल विचार मिलते थे। मित्रता का मूलमंत्र भी यही है।"

"जब नमक का नया विभाग बना और ईश्वरदत्त वस्तु के व्यवहार करने का निषेध हो गया, तब लोग चोरी छिपे इसका व्यापार करने लगे। अनेक प्रकार के छल प्रपंचों का सूत्र पात हुआ, कोई घूस से काम निकालता था, कोई चालाकी से। अधिकारियों के पौ बारह थे। पटवारी गिरी का सर्व सम्मानित पद छोड़–छोड़ कर लोग इस विभाग की परकन्दाजी करते थे।" इसमें आगे आने वाली कथा की भूमिका दी गई है।

विकास कालीन कहानियों में प्रेमचन्द इस दृष्टि से अपेक्षाकृत आगे बढ़े हुए हैं। परन्तु अब भी पुरानी आदत के कारण कुछ कहानियों का आरम्भ उसी प्रकार का है। परन्तु कुछ कहानियों का आरम्भ बिल्कुल परिवर्तित एवं नवीन है। 'आत्मा राम', 'नैराश्य लीला' 'लोक मत का सम्मान' आदि कहानियों का आरम्भ पूर्व की तरह ही है। परन्तु कुछ कहानियों में भूमिका और पात्रों का परिचय नहीं दिया जाता। कुछ बिल्कुल नये ढंग से शुरु हुई हैं। भूमिका रहित कहानियों में–'दफ्तरी', 'नागपूजा', 'शतरंज के खिलाड़ी', आदि का प्रारम्भ एवं नितान्त नवीन ढंग से प्रारम्भ की गई है। 'मैकू', 'शान्ती' आदि का उल्लेख किया जा सकता है। दोनों के उदाहरण द्रष्टव्य है। "प्रातःकाल का आषाढ़ का पहला दौंगड़ा निकल गया था। कीट पतंग चारों तरफ रेंगते दिखायी देते थे। तिलोत्तमा ने वाटिका की ओर देखा तो वृक्ष और पौधे ऐसे निखर गये थे। जैसे साबुन से मैला कपड़ा निखर जाये। उन पर एक विचित्र आध्यात्मिक शोभा छायी हुई थी मानो योगीवर आनन्द में मग्न पड़े हों। चिड़ियों में आसाधारण चंचलता थी।"

"जब मैं ससुराल आई तो, बिल्कुल फूहड़ थी। पहनने ओढ़ने का सलीका न बातचीत करने का ढंग। सिर उठा कर किसी से बातचीत न कर सकती थी। किसी के सामने जाते शर्म आती। स्त्रियों तक के सामने बिना घूघंट झिझक होती थी।" – पहला उदाहरण 'नाग पूजा' और दूसरा 'शान्ति' से है।

उत्कर्ष कालीन कहानियों के आरम्भ और विकास, दोनों में अन्तर करना कठिन है। दोनों ही मिले हुए हैं। 'कफ़न', 'मनोवृति', 'जादू' आदि कहानियों में आरंभ और विकास अलग–अलग नहीं मिलते। "झोपड़ी के द्वार पर बाप और बेटा दोनों बुझे अलाव के सामने चुपचाप बैठे हैं और अन्दर बेटे की जवान पत्नी बुधिया प्रसव पीड़ा से पछाड़ खा रही थी"। यहाँ पर कहानी का आरम्भ और विकास दोनों मिलते हैं।

प्रेमचंद की कहानियों का विकास

आरम्भ और चरम सीमा के बीच हमें प्रेमचन्द की कहानियों के विकास के दर्शन तीन भिन्न कालों में तीन भिन्न विकास मिलते हैं। प्रारम्भिक कहानियों में विकास धीरे–धीरे होता है। यह विकास चार अवस्था क्रमों में होता है। (1) मुख्य घटना की तैयारी। (2) मुख्य घटना की निष्पति (3) व्याख्या (4) घात–प्रतिघात। इन कहानियों में उपस्थित किया गया संघर्ष सत् और असत् का संघर्ष होता है। उसी संघर्ष की समाप्ति पर कहानी चरमसीमा स्थल पर आ जाती है। प्रेमचन्द 'व्याख्या' में घटित घटना के विषय में अपना वैचारिक दृष्टिकोण व्यक्त करते हैं।

विकास कालीन कहानियों में प्रेमचन्द ने इस दिशा में बहुत सफलता प्राप्त की है। यद्यपि इस युग की कई कहानियों में वही पहले की सी दशा है। नवीन और विकसित अवस्था क्रम इस प्रकार मिलता है। (1) समस्या का संकेत (2) समस्या उद्घाटन (3) संघर्ष–परिसमाप्ति से पूर्व दशा। इस प्रकार के 'विकास' में प्रेमचन्द व्याख्या और घात प्रतिघात को स्थान नहीं देते। अब घटना का स्थान एक मनोभाव ने ग्रहण कर लिया है। अब अनावश्यक विस्तार नहीं मिलता। 'शतरंज के खिलाड़ी' 'मैकू' 'विध्वंस' कहानियों में अवस्था क्रम इसी प्रकार का है।

उत्कर्ष कालीन कहानियों में विकास की अवस्थाओं को सूक्ष्म रूप से ढूँढना असम्भव है। अब आरम्भ के साथ ही साथ विकास हो जाता है। कालान्तर में घटना की उत्तेजना में वृद्धि होती है। तथा फिर घात–प्रतिघात होता है। यह घात प्रतिघात मानो जगत में होता है। क्योंकि इस युग की श्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक कहानियों में सामान्य रूप से यही देखने को मिलता है। 'कफन' की कहानी में प्रेमचन्द ने कहानी का विकास क्रम बहुत तीव्र दिखाया है। इस तरह विकास की अवस्थाओं की दृष्टि से आरम्भ की और उत्कर्ष कहानियों में पर्याप्त अन्तर आ गया है।

चरम सीमा : उपसंहार : अन्तः परि समाप्ति

चरम सीमा की दृष्टि से भी तीनों युगों में भिन्नता मिलती है। 'सप्तसरोज' की कहानियों में चरम सीमा और उपसंहार दोनों मिलते हैं। 'बड़े घर की बेटी' में चरम सीमा आनन्दी का देवर को रोक लेना है। इसके पश्चात आता है उपसंहार। इसे ही हम अन्त भी कह सकते हैं। कई कहानियों में–यद्यपि अपवाद स्वरूप एक आध ही प्राप्य हैं–मात्र चरम सीमा ही है–फिर शीघ्र ही अन्त हो जाता है। इन कहानियों के अन्त सदा आदर्शवाद पर टिके रहते हैं। प्रेमचन्द उपसंहार के अन्तर्गत उपदेश देने लगते हैं। इस कारण इसमें कलागत दोष आ जाता है। कहानी का सारा सौन्दर्य–सारा प्रभाव नष्ट हो जाता है।

विकास कालीन कहानियों में कुछ दूर तक प्रेमचन्द यही परम्परा लिए चलते हैं परन्तु अब उस तरह के दोष का परिहार एक सीमा तक कर लिया गया है। चरम सीमा और उपसंहार अब भी मिलता है–परन्तु अब उसमें कलागत विशेषता आ गई है। अब उसमें किसी उपदेश को प्रसारित नहीं किया जाता। अपितु अब तो उपसंहार कहानी के प्रभाव को एक सीमा तक आगे बढ़ाने वाला, मार्मिक बनाने वाला–नुकीला बनाने वाला, सिद्ध होता है। 'शतरंज के खिलाड़ी' इस प्रकार का अच्छा उदाहरण है–"चारों ओर सन्नाटा छाया हुआ था। खंडहर की टूटी रुई मेहरावे, गिरी हुई दीवारें और धूल धूसरित दीवारें इन लाशों को देखती और सिर धुनती।"

उत्कर्ष कालीन कहानियों में यह स्थिति कम पाई जाती है। अब यहाँ की कहानियों की चरम सीमाएँ और अन्त मिले हुए हैं। साथ ही साथ कहानियों की चरम सीमा किसी न किसी मनोवैज्ञानिक सत्य पर प्रतिष्ठित हुई है। मनोवैज्ञानिक अनुभूति अब अधिक सक्रिय हो उठी है। यह चरम सीमाएँ नितान्त कलात्मक हुई हैं। साथ ही साथ उपदेश का अवतरण या उपसंहार का अवतरण नहीं जोड़ा जाता।

अब अन्त अधिक व्यंजक होता है। कहानी पाश्चात्य कहानियों की तरह समाप्त होती है। अन्त कुतूहल पूर्ण होता है। पाठक पर स्थायी प्रभाव रहता है। 'कफन' का अन्त अद्वितीय रूप से सफल है। "तब दोनों न जाने किस देवी प्रेरणा से एक मधुशाला के सामने आ पहुँचे। साहु जी एक बोतल हमें भी दे देना। .... फिर दोनों नाचने लगे। उछले भी। कूदे भी। गिरे भी। भटके भी। भाव भी बनाए। अभिनय भी किये। और आखिर नशे में मदमस्त होकर वही गिंर पड़ें।"

नशा कहानी का शिल्प एवं चरित्र

कथानक :– 'नशा' कहानी में लेखक का चिन्तक एवं विचारक सजग है। यही कारण है कि कहानी का ताना–बाना सुनियोजित एवं सुगठित लगता है। कहानी वस्तुतः ईश्वरी एवं बीर, दो मित्रों के वैचारिक टकराव से शुरू होती है तथा अन्त तक पहुंचते–पहुंचते मोहभंग को प्रदर्शित करती है। जमींदार का बेटा ईश्वरी तथा एक गरीब क्लर्क का पुत्र बीर। दोनों प्रयाग में पढ़ते हैं। दोनों में खूब छनती है। सुख–सुविधा एवं संपन्नता में पला ईश्वरी तर्क करता है कि समाज की पांचों उंगलियां कभी एक समान नहीं हो सकतीं। अमीर और गरीब का भेद सदा बना रहा है तथा बना रहेगा। बीर जमींदारों को शोषक कहकर उनकी तुलना जोंक से करता है, जो परजीवी बनी रहती है।

दशहरे की छुट्टियों में बीर ईश्वरी के आमंत्रण पर उसके साथ गांव चला गया। अपने घर जाने के लिए उसके पास पैसे नहीं थे। ईश्वरी ने उसे समझाया कि वह उसके घर जाकर जमींदारी की निंदा न करे। वे दोनों सेकण्ड क्लास रेलगाड़ी में गये। मुरादाबाद पहुंचे तो स्टेशन पर रियासत अली और रामहरख ईश्वरी के स्वागत के लिए खड़े थे। साथ पांच बेगार भी आए थे। ईश्वरी मित्र का परिचय एक रईस पुत्र के रूप में करवाता है और सादगी का कारण इस प्रकार बताता है । "महात्मा गांधी के भक्त हैं साहब। खद्दर के सिवा कुछ पहनते ही नहीं। पुराने सारे कपड़े जला डाले। यों कहो कि राजा हैं। ढाई लाख सालाना की रियासत है, पर आपकी सूरत देखो तो मालूम होता है, अभी अनाथालय से पकड़कर आये हैं। वह अपने मित्र की गरीबी पर लीपापोती करके उसे बड़ा दिखाता है। पहले तो बीर को यह सब सुनने में संकोच होता है परन्तु उसके घर पहुंचकर वह ईश्वरी जैसा ही व्यवहार करने लगता है। कहार ईश्वरी के पांव धोता

है, तो वह भी अपने पांव आगे कर देता है। इसी प्रकार कुंवर मेहमान अपने हाथ से बिस्तर कैसे बिछाए। ईश्वरी अपनी माता से बात कर रहा था दूसरे कमरे में। रात के दस बजे नौकर का बिस्तर लगाने की सुधि आई। बीर तो रईसों की तरह बिफर पड़ा।

एक और घटना का जिक्र है। बीर लैम्प भी खुद क्यों जलाए, यह तो बड़े लोगों को अच्छा नहीं लगता। उसने रियासत अली को फटकार लगा दी और कहा – "तुम लोगों को इतनी भी फिक्र नहीं कि लैम्प तो जला दो। मालूम नहीं यहां कामचोर आदमियों का कैसे गुजर होता है। मेरे यहां घंटे भर निर्वाह न हो।" वस्तुतः वह पराए रईसी ठाठ–बाट की चकाचौंध में, नशे में तैरने लगा था।

महात्मा गांधी के परम भक्त ठाकुर से भी वह झूठ बोलता है और उसे भविष्य में ड्राइवरी सिखाकर अपने पास रखने की डींग मारता है। इसी प्रसंग में दोनों सुराज की बात भी करते हैं। ठाकुर पूछता है – "लोग कहते हैं यहां सुराज हो जायेगा तो जमींदार नहीं रहेंगे।"

बीर अपनी पुरानी धुन में फूट पड़ा – "जमींदारों के रहने की जरूरत ही क्या है, यह लोग गरीबों का खून चूसने के सिवा और क्या करते हैं?"

बीर की शरण मिलने का आश्वासन पाकर ठाकुर तरंग में आ गया। भंग पीकर उसने अपनी पत्नी को पीटा तथा महाजन से लड़ने को भी तैयार हो गया।

छुट्टियां समाप्त हो गईं। रेलयात्रा के लिए वापसी का टिकट तो था परन्तु भीड़ बहुत होने के कारण उन्हें तीसरे दर्जे के डिब्बे में ही चढ़ना पड़ा। बुरा हाल था। बीर को फंसे फंसे जाना अब अखर रहा था। वह दरवाजे के पास खड़ी एक सवारी से भिड़ गया और उसे तमाचे जड़ दिये। सवारी घबराई लेकिन दूसरे लोगों ने बीर को दबोच लिया और धुनाई कर दी। उसका सारा नशा काफूर हो गया। ईश्वरी ने भी उसको अंग्रेजी में इडियट कहकर दुत्कारा।

अब तक सत्ता के नशे पर सवार आसमान में उड़ रहा बीर एकाएक पृथ्वी पर आ गिरा ... उसे अपनी औकात का भान हो गया था।

कथानक एकदम सुविचारित एवं संगठित है तथा व्यवहार में परिवेशगत परिवर्तन के थपेड़े खाकर आगे बढ़ता है।

पात्र एवं चरित्र चित्रण – कहानी में मुख्य पात्र दो ही हैं – ईश्वरी तथा बीर। इन दो पात्रों के अतिरिक्त कुछ पात्र क्षणभर के लिए उपस्थित होते हैं। परन्तु अपनी अमिट छाप छोड़ जाते हैं। रियासत अली और रामहरख ऐसे ही पात्र हैं। उन्हें प्रथम दर्शन में बीर की रईसी पर विश्वास नहीं होता परन्तु सारी बात को ईश्वरी संभालता है। एक अन्य पात्र ठाकुर भी बड़ा प्रभावशाली है। सुराज की चर्चा से वह अपने असंतोष को व्यक्त करता है तथा उस युग की प्रतीक्षा लगाए बैठा है, जब भूमि का आवंटन गरीब–अमीर में समान रूप से हो जाएगा।

बीर का चरित्र मनोवैज्ञानिकता से सम्पृकत है। साधनहीन व्यक्ति को जब कोई बड़प्पन दर्शाने, वह छद्म ही क्यों न हो, का अवसर मिलता है, तो वह उसी में धंसता चला जाता है। उसे पुनः चेतना तब प्राप्त होती है जब

वह यथार्थ की भूमि पर पटक दिया जाता है। यह उसके मोहपाश में फंसने की कहानी भी है तथा साथ ही अंत में अपनी औकात में लौटने का सच भी। यह निर्धन की नियति, ललक एवं फटकार की श्रेष्ठ रचना है। ईश्वरी का चरित्र तो एक पारम्परिक रईस का खाका है, जो अपने वर्ग को दैवी अधिकार का हकदार मानता है तथा सामाजिक विषमता को एक स्वाभाविक एवं परमावश्यक सत्य स्वीकार करता है।

संवाद – 'नशा' कहानी के संवाद बड़े चुटीले एवं अर्थ–गर्भित हैं। साधारण से साधारण पात्र भी सटीक संभाषण में तल्लीन दृष्टिगत होता है। यथा – ठाकुर ने फिर पूछा –तो खुशी से दे देंगे। जो लोग खुशी से न देंगे, उनकी ज़मीन छीननी ही पड़ेगी। हम लोग तो तैयार बैठे हुए हैं।

शब्दों में ठाकुर की लार सहज ही टपकती दिखाई पड़ती है। यहीं संवादों की सार्थकता है। संक्षिप्त होते हुए भी ये चुटीले हैं।

कहानी बीर के माध्यम से आत्म–कथ्य में लिखी गई है, इसलिए नायक का मनन एवं चिंतन व्यवहार एवं वास्तविकता उसके संवादों से ही टपकती है।

भाषा – पात्रों के अनुकूल है। कहीं कहीं उर्दू के शब्दों का प्रयोग मिलता है, जो रियासत अली जैसे पात्र के मुंह में सटीक लगता है और कहीं–कहीं लेखक की अप्रत्यक्ष टिप्पणी से निःसृत जान पड़ता है। गुस्से में आकर ईश्वरी अंग्रेजों के एक वाक्य का भी प्रयोग करता है – बीर को डांटने के लिए, उसे स्थिति की भयावहता से परिचित करवाने के लिए।

कहानी की शैली सपाट न होकर दृष्टांत की है। पहले से अमीर–गरीब की खाई का विचार लेखक के मन में है। इसी के प्रतिपादन के लिए स्थितियों का चयन किया गया है, जिसमें फंसकर नायक पुनः अपनी औकात को पहचानता है। शैली की रोचकता ने कहानी के तथ्य को बल प्रदान किया है।

उद्देश्य :– प्रेमचंद की सभी कहानियां सोद्देश्य हैं। उनका उद्देश्य समाज की विसंगतियों को उखाड़कर आस्थावादी संदेश देना होता है। झूठ एवं छद्म के मोहपाश में फंसकर वास्तविकताओं को भूलना जीवन में त्रासद स्थितियों को उत्पन्न करता है। बीर अपने ही जाल में फंसता चला जाता है। पहले उसे संकोच होता था। एक गरीब क्लर्क का बेटा पैसे के बल पर किसी को नाच नहीं नचा सकता। परन्तु ईश्वरी के वैभव के कंधे पर चढ़कर उस पर नशा छाने लगा। नौकरों को ईश्वरी के अंदाज में डांटना उसे सुहावना लगा। रेलवे कैंटीन में खानसामों का उसे उपेक्षा की दृष्टि से देखना बेहद बुरा लगा। ईश्वरी की संगत में उसकी भी इच्छा होती है कि उसके साथ रईसों सा व्यवहार हो परन्तु यह तो मिथ्या आकांक्षा थी। यही कारण है कि अन्त में वह गरीब बीर की आत्मा में लौट आता है। उसका नशा काफूर हो जाता है।

लेखक ने सामाजिक वैषम्य पर प्रहार तो किया है परन्तु कहानी का चरम उत्कर्ष इस बात की ओर भी संकेत करता है कि इस खाई को पाटना इतना सहज एवं सरल नहीं। शताब्दियों से खड़ी हुई धनवान एवं निर्धन की दीवारें अभेद्य हैं। कभी सुराज के माध्यम से लेखक यह कहना चाहता है कि संभव है समान बंटवारे का समय आए। महात्मा गांधी का सपना सकार हो लेकिन अभी देश और काल की स्थितियां परिपक्व नहीं ...उनमें परिवर्तन में अभी समय लगेगा।

इस प्रकार यह कहानी आदर्श की ओर अग्रसर होने के लिए लालायित होती हुई भी मोहभंग की कहानी बन गई। तंद्रा में बीर स्वप्न देखता रहा, क्षणभर के लिए ईश्वरी के घर में सुख–सुविधाएं भोगता रहा परंतु कब तक। वह मोहपाश से बाहर आते ही बिफर जाता है। यह निर्मम यथार्थ की सशक्त कहानी बन गई है ... केवल कल्पना से ही कुछ प्राप्त नहीं होगा ... अभी संघर्ष की यातना बाकी है। प्रेमचंद कहानी की चरम परिणति को प्रश्न चिह्न की स्थिति में लाकर खुला छोड़ देते हैं। इससे कहानी का अर्थ–गाम्भीर्य और भी बढ़ गया तथा यह कहानी कलात्मकता से परिपूर्ण हो गई है।

2.11 कठिन शब्द

1. अतिरंजित 2. निष्प्रभावी 3. प्रखरता 4. नग्नतम 5. विपर्यय 6. मार्मिकता

2.12 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. 'पूस की रात' कहानी की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

2. 'कफन' की कथावस्तु पर प्रकाश डालिए।

3. 'नमक का दरोगा' कहानी असत्य, अन्याय और अनैतिक आचरण को उद्घटित करती है – स्पष्ट कीजिए।

4. 'पूस की रात' कहानी का हल्कू किस वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है – स्पष्ट कीजिए ।

5. घीसू और माधव पात्रों के माध्यम से कफन कहानी में प्रेमचन्द एक कटु यथार्थ चित्रण से अवगत कराता है – इस पर प्रकाश डालिए।

6. 'ईदगाह' कहानी का हामिद बाल मनोविज्ञान को अभिव्यक्त करता है – स्पष्ट कीजिए।

7. 'पूस की रात' 'कफन' 'नमक का दरोगा' कहानियों की संवाद योजना पर प्रकाश डालिए।

8. 'नमक का दरोगां' 'पूस की रात' की भाषा शैली पर प्रकाश डालिए।

9. 'पूस की रात' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

10. कहानियों की कथा शैली पर प्रकाश डालिए।

11. प्रेमचन्द की कहानियों में आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग हुआ है – स्पष्ट कीजिए।

12. प्रेमचन्द की कहानियों का प्रारम्भ हुआ है – स्पष्ट कीजिए।

13. प्रेमचन्द की कहानियों के विकास पर प्रकाश डालें।

14. नशा कहानी के शिल्प एवं चरित्र पर प्रकाश डालें।

2.13 पठनीय पुस्तकें

1. कफ़न : एक पुनः पाठ – सं पल्लव
2. प्रेमचन्द : एक विवेचन – डॉ. इन्द्रनाथ मदान
3. कहानीकार प्रेमचन्द रचनादृष्टि और रचना शिल्प – शिवकुमार मिश्र
4. प्रेमचन्द साहित्य में हाशिए का समाज –डॉ शुभ्रा सिंह
5. प्रेमचन्द – सं. सत्येन्द्र
6. कथाकार प्रेमचन्द – जाफ़र रज़ा

*****

पाठ्यक्रम में निर्धारित प्रेमचन्द की कहानियों की मूल संवेदना

3.0 रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 'कफन' कहानी की मूल संवेदना

3.4 'पूस की रात' कहानी की मूल संवेदना

3.5 'नशा' कहानी की मूल संवेदना

3.6 निष्कर्ष

3.7 कठिन शब्द

3.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

3.1 उद्देश्य

- कहानीकार के रूप में प्रेमचन्द के आदर्शवादी एवं यथार्थवादी विचारधारा को समझेंगे।
- प्रेमचन्द ने जीवन में जो भोगा, जो समाज में देखा उसे निष्कपटता के साथ लेखनी के माध्यम से पाठक वर्ग के सामने लाया।

3.2 प्रस्तावना

जब–जब कहानी की बात उठती है तो प्रेमचन्द का नाम निश्चय ही आदर के साथ लिया जाता है। प्रेमचन्द ने जो भोगा है, जो देखा है उसे निष्कपटता के साथ शब्दों में साकार कर दिया है। प्रेमचन्द ने जीवन के अनुभवों से

शिक्षा प्राप्त की और सच्चे अर्थों में यही वास्तविक शिक्षा होती है जो व्यक्ति को परिपक्व बनाती है। उनका सम्पूर्ण साहित्य उनके जीवनगत अनुभवों का निचोड़ ही है।

भाव के क्षेत्र में प्रेमचन्द की आरम्भिक कहानियाँ भावना प्रधान और आदर्शवादी हैं। वे प्रत्येक स्थिति में कैसे ऊँचे आदर्श पर जाकर समाप्त होती है, उनका प्रभाव भावुकतापूर्ण और उपदेशात्मक सा प्रतीत होता है। जिन कहानियों में प्रेमचन्द जी ने किसी आदर्श का चित्रण नहीं किया है, उदाहरण के लिए 'कफन', 'पूस की रात', नशा' आदि उन कहानियों में भी मुख्य प्रभाव परिस्थिति के विरुद्ध विद्रोह करने का ही रहा है।

'कफन' में दो तथ्य महत्वपूर्ण हैं – एक ग्रामीण परिवेश का जीवन्त और घटनापूर्ण चित्र तथा दूसरा है – आर्थिक शोषण की पृष्ठभूमि। पहला कथा के आरम्भ में ही स्पष्ट है – "झोंपड़े के द्वार पर बाप बेटे दोनों एक बुझे हुए अलाव के सामने चुपचाप बैठे हुए हैं और अन्दर बेटे की जवान बीवी बुधिया प्रसव–वेदना से पछाड़ खा रही है। वस्तुतः प्रेमचन्द ने सामजिक वास्तविकता को घीसू के इस कथन के मध्यम से फलीभूत कर दिया है – "कफन लगाने से क्या मिलता है? आखिर जल ही तो जाता है। कुछ बहू के साथ तो न जाता और दोनों बाप–बेटे कफन बेचकर दारु पी रहे हैं और आलू खा रहे हैं।" यह हमारी उस शोषण व्यवस्था को प्रतिबिम्बित करता है जो अपने चरम रूप में पहुँच गई है कि इतना शोषण हो चुका है निम्नवर्ग इतना क्षुधातुर है कि वह कुछ भी करने को तैयार है, संवेदना मर चुकी है।

जीवन की इस विरूपता को सामने रखकर वस्तुतः लेखक सामंजस्य को पाने की चेष्टा करता है जो हमारे युग की अनिवार्यता है। आज जो अमानवीयता व्याप्त है उसका प्रतिकार होना चाहिए। घीसू माधव की तरह वर्तमान में जीना कोई निदान नहीं है। बुधिया की त्रासदी वस्तुतः इसी तथ्य को उजागर करती है।

प्रेमचन्द एक महान यथार्थवादी लेखक थे। यथार्थ उनके लिए एक अविभाज्य वस्तु थी, जिसमें व्यक्ति और समाज तथा परिवेश और मन का जैसा अलगाव न थ जैसा प्रायः मान लिया जाता है। 'पूस की रात' मानव यातना की कहानी है, लेखक ने विस्तार से उसमें दिखलाया है कि कड़ाके की ठण्ड वाली रात में हल्कू कैसे अपनी इच्छाओं को वश में करके यातना पाता है और अन्त में जब जानवर सारा खेत चर जाते हैं तब हल्कू प्रसन्न होता है, उसे रात को पहरेदारी नहीं करनी पड़ेगी। इस तरह कहानी एक मनोवैज्ञानिक अनुभव के साथ समाप्त होती है। पाठक यह जानकर अचंभित सा हो जाता है। लेखक इसकी परवाह नहीं करता है, क्योंकि यह सत्य है और यही यथार्थ चित्रण की कसौटी भी। यहाँ लूकाच की एक बात महत्वपूर्ण हो जाती है कि यथार्थ प्रतीति के माध्यम से ही नहीं अभिव्यक्त हो सकता है। इसलिए साहित्य अमूर्त यथार्थ का ही नहीं, मूर्त घटनाओं और पात्रों का भी महत्व है। इसलिए प्रेमचन्द चरित्र अथवा मनोगति को अधिक महत्व देते हैं और इसी से उनकी कहानियों का यथार्थ खण्डित नहीं होता, अपितु अखण्डित ही रहता है।

'नशा' प्रेमचन्द की ही नहीं, हिन्दी की श्रेष्ठ कहानियों में अन्यतम है। अपनी यथार्थवादी संवेदना के नाते व परिस्थितियों से संघर्ष करने वाले चरित्रों को सबसे अधिक सहानुभूति देते थे। नशा के पात्र वीर की विडम्बनापूर्ण स्थिति का चित्रण किया गया है। अपनी स्थिति को भूल वह अपने मित्र ईश्वरी जैसा मान–सम्मान और आदर पाना चाहता है।

इसी के चलते वह ईश्वरी के गाँव पहुँचकर नौकरों के साथ उद्धण्डतापूर्ण व्यवहार करता है। दूसरी ओर राष्ट्रवादी जमींदार होने का दंभ भरता है। गाँधीभक्त ठाकुर से डींग हाँकता है –"हम लोग तो तैयार बैठे हुए हैं, ज्यों ही स्वराज्य हुआ, अपने सारे इलाके असामियों के नाम हिला कर देंगे।" यह कथन उनकी सारी मनोभिलाषाओं को प्रकट कर देता है। मनोविज्ञान के आधार पर बहुत ही प्रमुख सत्य को उद्घाटित किया है प्रेमचन्द ने।

3.3 'कफन' कहानी की मूल संवेदना

'कफन' सामन्तवादी शोषण का शिकार भूमिहीन किसानों की पीड़ा और अमानवीकरण की भयावह त्रासदी को सामने लाती है।

मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण पर आधारित समाज व्यवस्था में घीसू और माधव जैसे व्यक्ति विपन्नता और महंगाई से परम संतुष्ट हैं क्योंकि जिस समाज में वे रहते हैं वह सामन्ती मूल्यों वाला समाज है जिसमें परिश्रम का कोई मूल्य नहीं अपितु परिश्रम दूसरों के लाभ के लिए किया जाता है। यह सोचकर कि श्रम करना श्रम न करने से किसी भी मायने में बेहतर नहीं। वे श्रम और उसके फल के प्रति लगाव खो बैठते हैं और धीरे–धीरे निकम्मेपन का शिकार हो जाते हैं।

जिस समाज में रात दिन मेहनत करने वालों की हालत उनकी हालत से बहुत अच्छी न थी और किसानों के मुकाबले में वे लोग जो किसानों की दुर्बलताओं से लाभ उठाना जानते थे, कहीं ज्यादा संपन्न थे। वहाँ इस तरह की मनोवृत्ति का पैदा हो जाना कोई अचरज की बात न थी हम तो कहेंगे घीसू किसानों से कहीं ज्यादा विचारवान था, जो किसानों के विचारशून्य समूह में शामिल होने के बदले बैठकबाजों की मंडली में जा मिला था, हाँ उसमें यह शक्ति न थी कि बैठकबाजों के नियम और नीति का पालन करता। इसलिए जहाँ उसकी मंडली के और लोग गाँव के सरगना और मुखिया बने हुए थे। उस पर सारा गाँव उँगली उठाता था। फिर भी उसे यह तस्कीन तो थी ही कि अगर वह फटेहाल है तो कम से कम उसे किसानों की सी जी तोड़ मेहनत तो नहीं करनी पड़ती। उसकी सरलता और निरीहता से दूसरे लोग बेवजह फायदा तो नहीं उठाते।

निकम्मेपन से भले ही घीसू और माधव शीर्षको को अंगूठा दिखा दे किन्तु विडंबना यह है कि भूख के सर्वग्रासी आक्रमण में वे संपूर्ण मानवीय गुणों से वंचित हो जाते हैं। त्रासदी यह है कि उनकी मानवीय चेतना इस हद तक जड़ हो जाती है कि बुधिया की प्रसव संवेदना की पछाड़ और दिल हिला देने वाली चीखों से निरपेक्ष बाप–बेटा चोरी के भुने हुए आलुओ पर टूट पड़ने की फिराक में था। माधव को डर था कि वह कोठरी में गया तो घीसू आलुओं का बड़ा भाग साफ कर देगा। बोला मुझे वहाँ जाते डर लगता है।

ओझा को एक रुपया देने की संभावना से भी क्षुब्ध घीसू माधव इस प्रतीक्षा में है कि बुधिया मर जाये तो ये आराम से सोयें और माधव की पत्नी धनाभाव के कारण मर जाती है। उसकी दाह क्रिया के लिए समाज चन्दा के तौर पर पाँच रुपये माधव को देता है। वे दोनों कफन और लकड़ी खरीदने की लिए बाजार जाते हैं। सर्वप्रथम वे निश्चय करते हैं कि चन्दे में लकड़ियों के आ जाने के कारण अब लकड़ी खरीदने की आवश्यकता नहीं। कई बाजारों की दुकानें देखने के पश्चात् वे दोनों अनायास ही मानो किसी दैवी प्रेरणा से एक मधुशाला में पहुँच जाते हैं। घीसू

इस सुख का आनंद लेते हुए कहता है। कफन लगाने से क्या निकलता? आखिर जल ही जाता वह बहू के साथ तो न जाता।

माधव आसमान की तरफ देखकर बोला, मानो देवताओं को अपनी निष्पाप का साक्षी बना रहा हो। दुनिया का दस्तूर है, नहीं तो लोग बामनों को हजारों रुपये क्यों देते हैं। कौन देखता है, परलोक में मिलता है या नहीं। बड़े आदमियों के पास धन है, चाहें तो फेंके। हमारे पास फूंकने को क्या है। लेकिन लोगों को जबाव क्या दोगे? लोग पूछेंगे नहीं कफन कहाँ है? घीसू हँसा, अब कह देंगे कि रुपये कमर से खिसक गये। लोगों को विश्वास तो न आयेगा, लेकिन फिर वही रुपये देंगे।

घीसू और माधव के अंतर के नग्नतम यथार्थ का उद्घाटन बेलाग होकर लेखक करता है। न जाने कब के भूखे–प्यासे आशान्वित और दुखी माधव और घीसू अपने पास रुपयों के आते ही एकाएक अपनी सारी झूठी मर्यादाओं, मान्यताओं को भूलकर अपनी आत्मा की यथार्थतम भूमि पर उतर पड़ते हैं। किन्तु यहाँ प्रेमचन्द की खूबी इस नग्न यथार्थ मात्र का उद्घाटन नहीं है और न ही घीसू और माधव के अमानवीय होने की प्रक्रिया का तटस्थ चित्रण है। प्रेमचन्द एक संवेदनशील कलाकार हैं। यहाँ उनके आक्रोश का केन्द्र बिन्दु मनुष्य मन की दुष्प्रवृत्तियाँ और कुरीतियां नहीं हैं। केन्द्र बिन्दु हैं वह कुव्यवस्था जिसके कारण यह सब होता है। विपरीत और विषम परिस्थितियों में श्रमजीवी पिसकर इतना टूट जाता है कि उसका कर्तव्यबोध लुप्त हो जाता है उस पर विडंबना यह है कि वह इस बात के प्रति स्वयं सचेत नहीं होता। क्योंकि उनके पास वे सुख–सुविधायें नहीं है, सामर्थ्य नहीं है कि वे उनमें से कुछ का त्याग कर महानता का अनुभव कर सके। वे जानते हैं कि वे समाज पर निर्भर हैं और उनकी निरीहता और सरलता शोषण को बनाये रखने के लिए अनिवार्य है। ये लोग संख्या में तो बहुत हैं पर वे विचारशून्य समूह के अलावा कुछ भी नहीं। कारण कि इस सामन्ती समाज में शोषण का तन्त्र इतना कठोर व निर्मम है कि विचारशून्यता उसका अनिवार्य परिणाम है। विचारों से ही मनुष्य, मनुष्य बनता है। और विचारहीन मनुष्य पशु के समान है। यदि इस समाज में असंख्य श्रमजीवी लोगों को मनुष्य की तरह जिन्दा रहने दिया जाता तो उनमें विचार होता और जब विचार होता तो उन्हें यह अहसास होता कि उनका शोषण हो रहा है। तब वे एक होकर स्वाभिमानी मनुष्य की तरह जीवित रहने की कोशिश करते। इन श्रमजीवियों की दुर्दशा देखकर ही घीसू, माधव निकम्मे कामचोर और काहिल हो गये हैं। नैतिकता, प्यार, त्याग, कर्तव्यबोध आदि ऊँचे सामाजिक गुणों से रहित हो गए हैं। या कहें वे समाज के नियम कानून उनके लिए नहीं हैं। उनको मार–मारकर वहाँ खदेड़ दिया गया है जहाँ परावलंबी बनने के लिए वे विवश हैं। मार खाना, गाली सुनना, कर्ज से लदकर भी चिन्तामुक्त रहना उनकी प्रवृत्ति बन गई है। सदियों से घीसू, माधव जैसे व्यक्ति को इस दुर्गति को अंगीकार करने के अभ्यस्त हैं और निरन्तर अभ्यास प्रवृत्ति बन जाती है, संस्कार बन जाता है। इस पर अन्तर्विरोध यह कि इस समाज के विधायकों को शोषण के साथ दया करने का भी अभ्यास है क्योंकि उनकी उच्चता के अहसास के लिए समाज में ऐसे लोगों का अस्तित्व जरूरी है जिन पर दया माया दिखाई जा सके। सत्ता संपन्न दया कर सकें और दूसरे विपन्न उस दया पर खुशी–खुशी निर्भर कर सकें।

उसका प्रत्यक्ष प्रमाण कहानी में लेखक उस समय देता है जब माधव चिंतित होकर कहता है कि बचवा हो गया तो क्या होगा। उस समय घीसू उसे आश्वासन देता है। सब कुछ हो जायेगा भगवान दें तो। जो लोग अभी एक

पैसा नहीं दे रहे हैं वे ही कल बुलाकर रुपये देंगे। मेरे नौ लड़के हुए, घर में कुछ न था, मगर भगवान ने किसी तरह बेड़ा पार ही लगाया। प्रकट रूप में पनपता दया का यह मानवीय रूप वस्तुतः शोषण का वीभत्स अस्तित्व ही है। कारण कि यह दया शोषण की उच्चता के अहंकार को पुष्ट करती है। उनकी गर्दन को ऊँचाई देती है कि असंख्य लोग उनकी प्रजा हैं। यह समाज इन गुलामों को न ठीक से जीने देता है न ठीक से मरने देता है। क्योंकि उनका जिन्दा रहना उनकी उच्चता बनाये रखने के लिए जरूरी है और ठीक से जीवित रहने देने का मतलब है स्वाभिमान के साथ जीवित रहने का अधिकार देना। जबकि शोषक समाज के लिए मानवीय चेतना व मानवीय स्वाभिमान एक खतरनाक चीज है। इस चेतना को पैदा होने ही न दिया जाये। लोगों की आत्मा को उनके स्वाभिमान को, उनकी मनुष्यता को, इस तरह कुचल डाला जाये कि उनको अहसास ही न हो कि वे मनुष्य हैं।

माधव और उस सरीखे के लोग इतने समर्थ नहीं कि प्रत्यक्षतः इस व्यवस्था का विरोध कर सके, पर अप्रत्यक्षतः प्रतिकार और प्रतिशोध की चेतना ही उन्हें शराबखाने की ओर ले जाती है। वे कफन के पैसों से कफन न खरीद शराब पीकर समाज में इस महान पुण्य की अवहेलना करके मस्ती की दुनिया में डूब जाते हैं। दार्शनिकता की तरंग में वे स्वर्ग–नर्क का विवेचन करते हैं और उनकी अन्तरात्मा की सच्चाई निर्भीक भाव से कह उठती है।

हां बेटा! बैकुण्ठ में जायेगी। किसी को सताया नहीं, किसी को दबाया नहीं, मरते–मरते हमारी जिन्दगी की सबसे बड़ी लालसा पूरी कर गयी। वह न वैकुण्ठ में जायेगी तो क्या ये मोटे–मोटे लोग जायेंगे, जो गरीब को दोनों हाथों से लूटते हैं और अपने पाप को धोने के लिए गंगा में नहाते और मंदिरों में जल चढ़ाते हैं। यहां है विरोध चेतना की चिंगारी, जो शोषण के पहाड़ के नीचे दबी गरीबों की आत्मा में कहीं धीमे–धीमे सुलग रही है, जो घीसू के मुँह में सच्चाई के रूप से निकलकर चमक उठती हैं। शोषण और अन्याय की राख का पहाड़ इस विरोध की चिंगारी को दबाये हुए है, पहले उसे हटाना पड़ेगा तभी यह अन्यायी व्यवस्था समाप्त हो सकेगी। अन्यथा घीसू माधव की चेतना शराबखाने में धाराशायी होती ही रहेगी।

3.4 'पूस की रात' कहानी की मूल संवेदना

पूस की रात प्रेमचंद की यथार्थवादी कहानियों में अग्रणी है। 1930 ई. में रचित यह कहानी प्रेमचन्द द्वारा आदर्शोन्मुख यथार्थवाद के रास्ते को छोड़कर यथार्थवादी दृष्टिकोण को अपना लेने की घोषणा करती है। यह उस यात्रा की शुरूआत है जो 1936 में कफन कहानी में चरम यथार्थ पर जाकर पूर्ण होती है। किसान वर्ग प्रेमचन्द की चिंताओं में शीर्ष पर है। पूस की रात कहानी उनकी इसी चिंता का प्रतिनिधित्व करती है। कहानीकार ने इसमें किसान के हृदय की वेदना को कागज के पन्ने पर उतारा है।

पूस की रात की मूल समस्या गरीबी की है, बाकी समस्याएँ गरीबी के दुष्चक्र से जुड़ कर ही आई है। जो किसान राष्ट्र के पूरे सामाजिक जीवन का आधार है उसके पास इतनी ताकत भी नहीं है कि पूस की रात की कड़कती सर्दी से बचने के लिए एक कंबल खरीद सके। दूसरी ओर समाज का एक ऐसा वर्ग है जिसके पास साधनों की इतनी अधिकता है कि उन्हें वह खर्च भी नहीं कर पाता है। यही है आवारा पूंजीवाद का चरम विकृत रूप जिसकी वजह से समाज में आर्थिक विषमता की दरार दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। अर्थव्यवस्था की इसी फूहड़ता एवं विकृति पर

यह मार्मिक कहानी व्यंग्य करती है। प्रेमचंद ने सर्दी को प्रतीक के रूप में इन दोनों वर्गों की तुलना दिखाते हुए समाज की कड़वी हकीकत को उकेरा है – "हल्कू ने घुटनियों को गर्दन में चिपकाते हुए कहा – ''क्यों जबरा, जाड़ा लगता है? कहता तो था घर में पुआल पर लेट रह तो यहाँ क्या लेने आये थे। अब खाओ ठण्ड, मैं क्या करूं। मैं यहाँ हलुआ, पूरी खाने आ रहा हूँ दौड़े–दौड़े आगे चले आये ... कल से मत आना मेरे साथ नहीं तो ठंडे हो जाओगे। ... यह खेती का मजा है। और एक भगवान ऐसे पड़े हैं, जिनके पास जाड़ा जाय तो गर्मी से घबड़ाकर भागे मोटे–मोटे गद्दे लिहाफ–कम्मल। मजाल है, जाड़े का गुजर हो जाय। तकदीर की खूबी। मजूरी हम करें मजा दूसरे लूटें।" ये सिर्फ हल्कू की वेदना नहीं है बल्कि भारतीय किसान के ह्रदय की वेदना है जो आज भी किसी मुक्तिदाता का इन्तजार कर रही है।

हल्कू तो सिर्फ एक माध्यम भर प्रतीत होता है। यह हल्कू की ही नहीं बल्कि हल्कू के माध्यम से कृषिप्रधान देश में रह रहे अरबों लोगों का पेट भरने वाले उस अन्नदाता किसान की ह्रदयविदारक कथा है जो सूरज के उदय होने से पहले ही खेतों में आ जाता है और अस्त होने के बाद भी खेत की मेड पर बैठकर अपने सपनों की फसलों के माध्यम से पूरा करने का अरमान सजा लेता है। लेकिन वह अरमान पूरा कहाँ होता है? एक समस्या से निकले नहीं कि दूसरी आकर सर पे खड़ी हो जाती है, एक भँवर से निकले नहीं कि दूसरा उन्हें अपने चपेटे में ले लेता है। इसी जद्दोजहद में उसकी पूरी उम्र कट जाती है और एक दिन वह इस संसार को हमेशा–हमेशा के लिए छोड़कर अनंत यात्रा पर चला जाता है। वास्तव में पूस की रात में जो दुर्दशा हल्कू की है, वही आजादी के सत्तर साल बाद भी है। किसानों की जो भी आज दिन–हीन दशा है, उसका कारण उनकी सामाजिक–आर्थिक वर्गीय स्थिति है। भारतीय समाज में राजनीति, राजनेता, पूँजीपति, अधिकारी, पटवारी, शासन–सत्ता के तथाकथित एवं स्वघोषित रहनुमाओं का पहला और आखिरी निशाना यही मासूम भारतीय किसान बनता है। महंगाई की मार हो या प्राकृतिक आपदा हो सबसे पहले इसका आसान शिकार किसान ही होता है।

पूस की रात किसान के जीवन संघर्ष की कहानी है। पूस की रात का हल्कू जिन स्थितियों से गुजर रहा है, वे इतनी कठिन हैं कि मरजाद का विचार निरर्थक हो गया है। कहानी का अंत इसी नाटकीय मोड़ पर हुआ है जहाँ हल्कू किसानी छूटने से खुश नजर आता है –

> "दोनों खेत की दशा देख रहे थे। मुन्नी के मुख पर उदासी छायी थी, पर हल्कू प्रसन्न था।
>
> मुन्नी ने चिंतित होकर कहा – अब मजूरी करके मालगुजारी भरनी पड़ेगी।
>
> हल्कू ने प्रसन्न–मुख से कहा – रात को ठण्ड में यहाँ सोना तो न पड़ेगा।"

3.5 'नशा' कहानी की मूल संवेदना

मुन्शी प्रेमचन्द की कहानी 'नशा' के प्रमुख पात्र दो विद्यार्थी हैं जो एक ही कक्षा में पढ़ते हैं और एक ही होस्टल में रहते हैं। एक छात्र ज़मीदार का अमीर बेटा है और दूसरा बेहद गरीब परिवार का। फिर भी दोनों में गहरी दोस्ती है। गरीब छात्र (बीर) हमेशा जमींदारी की कटु आलोचना करता रहता है और उन्हें समाज का शोषण करने वाला

बता कर उनके विरुद्ध बोलता है। इस विषय पर अक्सर उनका आपस में विवाद हो जाता है। यों तो ईश्वरी के मिजाज़ में जमींदारी के सारे तेवर हैं, पर बीर के प्रति उसका व्यवहार मित्रों वाला है। बीर द्वारा की गई ज़मींदारों की आलोचना पर भी वह कभी उत्तेजित नहीं होता। एक बार गर्मी की छुट्टियों में ईश्वरी बीर को अपने साथ अपने घर ले जाता है। वह बीर का परिचय ऐसे धनवान के रूप में करवाता है जो कि महात्मा गांधी का भक्त होने के कारण धनवान होते हुए भी निर्धन का सा जीवन व्यतीत करता है। इस परिचय से बीर की धाक जम जाती है, लोग उसे 'गाँधी जी वाले कुंवर साहब' के नाम से जानने लगते हैं। ईश्वरी के साथ बीर का भी भरपूर स्वागत सत्कार किया जाता है।

ईश्वरी तो ज़मीदारी विलास का अभ्यस्त था परन्तु बीर झूठ मूठ में मिली अमीरी का आनन्द महसूस करता है। वह जानता है कि ईश्वरी ने उसका झूठा परिचय कराया है। पर स्वागत सत्कार में अन्धा होकर वह अपना आपा खो बैठता है। उसे नशा हो जाता है। पहले जिन बातों के लिए वह जमींदारों की निन्दा किया करता था जैसे नौकरों से अपने पैर दबवाना, नौकरों से सारे काम करवाना – अब वह स्वयं भी उन आदतों में लिप्त होने लगता है। ईश्वरी चाहे थोड़ा काम अपने आप भी कर ले पर गांधी जी वाले कुंवर साहब नौकरों का काम भला अपने हाथों से कैसे करता? नौकरों से ज़रा भी भूल हो जाती तो कुंवर साहब उन पर आगबबूले हो उठते। इस प्रकार उस गरीब छात्र पर जमींदारी का नशा सिर चढ़ कर बोलने लगता है और कल तक जिन जमींदारों को समाज का शोषक और दुश्मन बताया करता था आज मौका मिलते ही उन्हीं की तर्ज पर उनसे भी बुरा अत्याचार नौकरों पर करने लगता है। झूठ–मूठ के कुंवर साहब का नशा टूटते देर नहीं लगती। ईश्वरी के घर से लौटते समय रेलगाड़ी खचाखच भरी हुई होती है। अब नए–नवेले कुंवर साहब को ऐसी असुविधा कैसे बर्दाश्त होती? क्रोध में आकर वह अपने पास बैठे एक यात्री की पिटाई कर देते हैं, जिससे पूरे डब्बे में हंगामा मच जाता है। ईश्वरी झल्ला कर बीर को फटकारता है, "व्हाट ऐन ईडियट यू आर, बीर।"

प्रेमचन्द की यह कहानी मनोरंजक तो है ही, इसमें समाज एवं मानव व्यवहार की वास्तविकताओं का भी भरपूर चित्रण है। जिसके पास धन, सत्ता, संसाधन, सुविधा है, वह उनका उपभोग अवश्य करता है। जिसके पास यह नही है, वह इस उपभोग की निन्दा करता है, उसको अनैतिक बताता है। और अधिकतर वह निन्दा इसीलिए करता है क्योंकि उसको वह सुविधा उपलब्ध नहीं है, यदि किसी कारण वह सुविधा उपलब्ध हो जाती है, तो बीर की तरह निन्दक भी उसके उपभोग में पीछे नहीं रहता।

कहानी 'नशा' एक अन्य पहलू की ओर भी संकेत करती है वह है समाज के शीर्षकों तथा सम्मानों के सामने मनुष्य का अन्धापन। 'गांधी जी वाले कुंवर साहब' अपने नशे में एक गरीब आदमी को अपने पास नौकरी देने का आश्वासन दे देते हैं। खुशी में पागल वह आदमी उस रात को शराब पीता है, अपनी पत्नी को पीटता है, और महाजन से लड़ाई करता है। बीर ईश्वरी से उसका असली परिचय न बताने का कारण पूछता है, तो ईश्वरी मुस्कुरा कर जबाव देता है, "इन गधों के सामने यह चाल जरूरी थी, वरना सीधे मुँह बोलते भी नहीं।"

अतः मानव स्वभाव के चितेरे मुंशी प्रेमचन्द की इस कहानी से यही सीख मिलती है कि मौका आने पर व्यक्ति का मूल स्वभाव प्रकट होता है और व्यक्ति की सामाजिक–आर्थिक पृष्ठभूमि से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। अर्थात

यह जरूरी नहीं कि गरीब व दबे–कुचले वर्ग से आने वाला व्यक्ति प्रतिष्ठित होने पर उन्हीं लोगों के तौर–तरीके नहीं अपनाएगा जिनकी वह आलोचना करता था।

3.6 निष्कर्ष

प्रेमचन्द की कहानियां सामाजिक विसंगतियों को परत दर परत उघाड़ती चलती हैं। यथार्थ की भूमि पर टिकी कथावस्तु विभिन्न पात्रों के माध्यम से वांछित उत्कर्ष की ओर अग्रसर होती हैं। कहीं भावावेग तथा कहीं घटना की विलक्षणता को मोड़ देती हैं और कहीं संवादों में आविष्ट विचार तन्तु को खोलने में सक्षम होते हैं। प्रेमचन्द आस्थावादी कहानीकार हैं परन्तु किन्हीं कहानियों में वे अपने पात्रों को निर्मम यथार्थ की कठोर भूमि पर ला पटकते हैं।

3.7 कठिन शब्द

1. उत्तेजित, 2. स्वागत–सत्कार, 3. अनैतिकता, 4. निन्दक, 5. उपभोग, 6, सम्मान, 7. आश्वासन, 8. चितेरा, 9. पृष्ठभूमि, 10 उत्कर्ष।

3.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. 'कफन' कहानी की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए।

____

____

____

____

____

____

2. 'पूस की रात' कहानी की मूल संवेदना पर चर्चा कीजिए।

____

____

____

____

—————————————————————————————

—————————————————————————————

3. 'नशा' कहानी की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए।

—————————————————————————————

—————————————————————————————

—————————————————————————————

—————————————————————————————

—————————————————————————————

—————————————————————————————

3.9 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मानसरोवर, भाग–1 – प्रेमचन्द।
2. समकालीन कहानी : सोच और समाज – पुष्पपाल सिंह।

*****

मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय

रूपरेखा

4.1 उद्देश्य

4.2 प्रस्तावना

4.3 मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय

4.4 निष्कर्ष

4.5 कठिन शब्द

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थावली

4.1 उद्देश्य :– प्रस्तुत आलेख को पढ़ने के उपरान्त आप – मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय से परिचित हो सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना:– अज्ञेय अपनी सृजनात्मक प्रक्रिया में बहुमुखी प्रतिभा संपन्न कलाकार थे। साहित्य जगत में अपना एक ठोस व्यक्तित्व स्थापित करने वाले अज्ञेय समय की छाप ग्रहण करते हुए अपनी प्रतिभा को उभारते हुए नजर आते है। उनकी कहानियों में मनोविज्ञान गहराई से रचा – बसा है। अज्ञेय एक कुशल रचनाकार है, वे व्यक्ति के अंतर्मन में झांककर, उनकी मनःस्थिति को समझकर, मन की ऊहा–पोह की पड़ताल करते हैं। अज्ञेय ने कई गम्भीर मनोवैज्ञानिक ग्रंथों का अध्ययन किया और उनका उपयोग अपनी कहानियों में कहानी की मांग पर किया।

4.3 मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय :

मनोविज्ञान मानव मन का विज्ञान है। वह मानव के भावों, विचारों, कामनाओं एवं अंतर्संघर्षों का परिचय देने वाला शास्त्र है। साहित्य का केन्द्रबिन्दु भी मानव जीवन है। व्यक्ति मन की मूल प्रेरणाओं से साहित्य और मनोविज्ञान उन संघर्ष के मूल कारणों को व्यक्त कर देता है। फ्रायड, एडलर, युंग आदि मनोवैज्ञानिकों के विभिन्न पद्धतियों का प्रभाव मनोवैज्ञानिक कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता है। अज्ञेय की लगभग सभी कहानियों को मनोविज्ञान के प्रयोग की दृष्टि से देखे तो सम्भवतः एक भी कहानी इससे रहित नहीं है। रचना के अन्य तत्वों की श्रेष्ठता के साथ अज्ञेय अपने सम्पूर्ण कथा–सृजन के संदर्भ में अत्यन्त सफल एवं श्रेष्ठ मनोविश्लेषक हैं।

अज्ञेय ने कई गम्भीर मनोवैज्ञानिक ग्रंथों का अध्ययन किया और उनका उपयोग अपनी कहानियों में किया है। अज्ञेय के समग्र कथा–साहित्य में मनोविज्ञान दो स्तरों से अभिव्यक्त हुआ है – प्रथम –व्यापक सामाजिक स्तर से तथा द्वितीय, व्यक्तिगत स्तर से। पहले स्तर पर अज्ञेय का कहानीकार प्रमुख है जो अपनी दृष्टि समाज, देशकाल उसकी विभिन्न प्रवृत्तियों पर केन्द्रित रखता है तथा उनका मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण प्रस्तुत करता है जैसा कि रोज़, सभ्यता का एक दिन, शरणदाता आदि कहानियों में हुआ है।

अज्ञेय–पूर्व कहानीकारों में प्रसाद, प्रेमचन्द तथा जैनेन्द्र ऐसे कृती कलाकार हैं जिसके पीछे अनेक श्रेष्ठ अनेक कहानीकारों की परम्परा जुड़ी हुई है तथा जो अपने–अपने युग का प्रतिनिधित्व करते हैं। अज्ञेय ने अपनी कहानियों का गहन एवं सूक्ष्म मनोविश्लेषण किया है। व्यक्तिगत स्तर पर अज्ञेय का व्यक्ति प्रमुख है जो सदा–सर्वदा व्यष्टिवादी दृष्टि से ही जीवन का अध्ययन करता है। अहं ऐसी कहानियों में एकान्त रूप में व्याप्त है। अज्ञेय की प्रायः समस्त कहानियों में व्यक्ति–चरित्र ही प्रमुख रूपेण चित्रित है। इसका एकमात्र प्रमुख कारण यह है कि मूलतः वह कवि की दृष्टि रखते है; किसी समालोचक, सुधारक की वृत्तियां उनमें नहीं हैं। अतः मनुष्य का स्वयं में एक पूर्ण इकाई के रूप में जितना सफल और कलात्मक अंकन अज्ञेय ने अपनी कहानियों में किया है, सम्भवतः आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य में अन्यत्र दुर्लभ है।

अज्ञेय का मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण एकांतिक रूप से फ्रायड से ही प्रभावित है। इनकी कहानियों में फ्रायड के अनेक मनोवैज्ञानिक सिद्धांत प्रतिपादित हुए है। किन्तु अज्ञेय की विशिष्ट मेधा में इन सिद्धान्तों को आत्मसात् करके नितांत स्वभाविक रूप में अपने कथा–चरित्रों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। स्पष्ट रूप से ऐसा कहीं भी नहीं लगता कि विशिष्ट मनोवैज्ञानिक मान्यता को स्थापित करने हेतु कहानी की रचना की गई है। स्वप्न सिद्धान्त, इच्छापूर्ति का सिद्धान्त, प्रक्षेपण, उदात्तीकरण, मनोवैज्ञानिक नियतिवाद, ईगो, इड, सुपरईगो, लिबिडो आदि विभिन्न फ्रायडीय मनोवैज्ञानिक मान्यताओं एवं सिद्धान्तों का प्रतिपादन अज्ञेय की कहानियों में मिलता है। 'कोठरी की बात' का नायक सुशील विद्रोही है। वह विदेशी सरकार के प्रति क्रांति के अपराध में बंदी बनाया गया है। उसने राजद्रोह किया है। वह तो आन्तरिक रूप से ही द्रोही है। विद्रोह तो उसकी आत्मा में व्याप्त है। सुशील के व्यक्तित्व का फ्रायडिन मनोविज्ञान का मनोवैज्ञानिक नियतिवाद को रूपायित करता है।

'अमरवल्लरी' तथा 'रोज़' आदि कहानियों में फ्रायड का स्वप्न एवं इच्छापूर्ति का सिद्धांत विद्यमान है। 'रोज'

कहानी एक उच्चकोटि की चरित्र प्रधान कहानी है, जिसमें आंतरिक घटनाएं अपना असर दिखाती है। कहानी की पात्र 'मालती' एक रस और यंत्रनुमा बनी हुई है। फ्रायड के अनुसार व्यक्ति–मानस की चेतना के तीनों स्तरों–ईगो, इड और सुपरईगो– का तो अज्ञेय की प्रायः हर कहानी में ही प्रस्तुतीकरण हुआ है। इनमें ईगो, अज्ञेय की चेतना में अत्यन्त प्रबल एवं सशक्त तथा विराट रूप में विद्यमान है। अतः उनकी क्रांतिकारी जीवन से संबंधित कहानियों में विशेषतः तथा अन्य प्रायः सभी कहानियों में सामान्यता इसका अत्यन्त कलात्मक और स्वाभाविक चित्रण हुआ है।

व्यक्तिमन की अपूर्ण इच्छाओं के परिणामस्वरूप उसमें जो कुंठा उत्पन्न हो जाती है तथा जिसके कारण वह यत्किंचित् उच्छृंखल और असामाजिक हो जाता है – इस मानसिक प्रक्रिया का बड़ा ही प्रभावोत्पादक अंकन अज्ञेय ने शरणार्थी– समस्या से सम्बन्धित कहानियों में किया है। अंततः कहा जा सकता है कि अज्ञेय की कहानियों में मनोविज्ञान का प्रयोग अत्यंत पटुतापूर्वक किया गया है जोकि सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन के अन्तः प्रदेशों के विश्लेषण में अत्यन्त सहायक सिद्ध हुआ है।

यों तो हिन्दी कहानियों में मनोविज्ञान का प्रयोग प्रेमचन्द की कहानियों से ही प्रारम्भ हो गया था, किन्तु यदि यथार्थतः देखा जाए तो उसकी पूर्ण अभिव्यक्ति जैनेन्द्र की कहानियों से ही प्रारम्भ होती है। जैनेन्द्र के परवर्ती काल का प्रायः समग्र कहानी–साहित्य परोक्ष–अपरोक्ष रूप से मनोविज्ञान से ही प्रभावित है। इस काल के मनोवैज्ञानिक कथा–सर्जकों में अज्ञेय का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। अतः कहा जा सकता है कि अज्ञेय सर्वश्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक कथाकार है।

मानव–मन का चाहे सैद्धांतिक दृष्टि से और चाहे व्यवहारिक दृष्टि से या चाहे दोनों से –जितना पूर्ण विश्लेषण अज्ञेय की कहानियों में हुआ है, उतना आधुनिक हिन्दी कहानीकारों में किसी की कहानियों में सम्भंवतः नहीं हुआ है।

4.4 निष्कर्ष :– अतः कहा जा सकता है कि आज के फैशन और बौद्धिक तथा नैतिक स्तरहीनता के युग में अज्ञेय की विशुद्ध मनोवैज्ञानिक कहानियों के अध्ययन से आधुनिक आलोचकों एवं पाठकों को कहानी–कला के सम्बन्ध में जो अपूर्व चेतना प्राप्त होती है वह उनकी प्रमुख उपलब्धि है। कथानक, चरित्र, वातावरण, घटना, उद्देश्य तथा भाषा–शैली कहानी–रचना के प्रायः हर तत्त्व को अज्ञेय ने अपनी अधिकृत मनोवैज्ञानिक दृष्टि के योग से एक महत्त्वपूर्ण अतः उल्लेखनीय सीमा तक उठाया है।

4.5 **कठिन शब्द** : 1. नियतिवाद 2. मनोविज्ञान 3. समाजालोचक 4. राजद्रोह 5.उदात्तीकरण

4.6 **अभ्यासार्थ प्रश्न :–**

प्र०1. 'अज्ञेय एक मनोवैज्ञानिक कहानीकार हैं' स्पष्ट करें।

उ०: ______________________________

____

प्र॰2. मनोवैज्ञानिक कहानीकार अज्ञेय पर प्रकाश डालें।

उ॰:

4.7 सन्दर्भ ग्रंथावली :–

1. अज्ञेय का कथा–साहित्य – ओम प्रभाकर।
2. कवि कहानीकार अज्ञेय और मुक्तिबोध : संवेदना और दृष्टि – डॉ. भरत सिंह।

*****

रोज़, विपथगा, शरणदाता कहानियों की मूल संवेदना

5.0 रूपरेखा

5.1 उद्देश्य

5.2 प्रस्तावना

5.3 'रोज' कहानी की मूल संवेदना

5.4 'शरणदाता' कहानी की मूल संवेदना

5.5 'विपथगा' कहानी की मूल संवेदना

5.6 निष्कर्ष

5.7 कठिन शब्द

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.9 सन्दर्भ ग्रन्थावली

5.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप –

– अज्ञेय की 'रोज', 'विपथगा', 'शरणदाता' कहानियों की मूल संवेदना से परिचित हो सकेंगे ।

5.2 प्रस्तावना :–

सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय मूलतः कवि थे । अज्ञेय ने 6 कहानी संग्रह लिखे हैं । अज्ञेय एक मनोवैज्ञानिक कहानीकार हैं। संवेदना मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है इसकी अनुभूति आन्तरिक होती है। यह ज्ञान–प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है, जिसमें स्वयं और पर दोनों की समान अनुभूति करना ही संवेदना है। अज्ञेय एक कुशल रचनाकार है वह व्यक्ति मन में झांककर, उनकी मनःस्थिति को समझकर मन की ऊहा–पोह की पड़ताल करते हैं ।

5.3 'रोज़' कहानी की मूल संवेदना :–

यह अज्ञेय की सर्वाधिक चर्चित कहानी है क्योंकि इसमें संबंधों की वास्तविकता का एकांत वैयक्तिक से अलग ले जाकर सामाजिक संदर्भ में देखा है । मध्यवर्ग के पारिवारिक एकरसता को जितनी मार्मिकता से यह कहानी व्यक्त कर सकी है वह उस युग की कहानियों में विरल है। कहानी का पूरा परिवेश और उस परिवेश को व्यक्त करने वाले सभी मध्यमवर्ग परिवार को एकरसता और 'बोरड़म' की बड़ी जटिल सूक्ष्मता से व्यक्त करते हैं। मालती यहां रहती है, वहां एक गांव में सरकारी डिस्पेंसरी का कवार्टर है। इसमें तीन प्राणी रहते हैं और उनका बच्चा – जिसे टीटी के नाम से पुकारा जाता है। इनका जीवन निर्दिष्ट ढर्रे पर चलता है। यह जीवन ढर्रा सकारात्मक उत्साही जीवन पद्धति का सूचक नहीं है, बल्कि 'एकरस', 'उबाऊ', 'यात्रिक दिनचर्या' का पर्याय है ।

यहां की डिस्पेंसरी में गैंग्रीन के मरीज आते है। ''यही गैंग्रीन का हर दूसरे चौथे दिन एक केस आ जाता है।'' कांटा चुभने से यह बीमारी होती है, मवाद पड़ता है और लापरवाही के रूप में यह भयानक रूप धारण कर लेती है। नतीजा रोगी की टाँग काटनी पड़ती है। डॉ० महेश्वर को रोज ऐसे ही मरीजों का साक्षात्कार करना पड़ता है ।

'मालती' और 'टीटी' इस घर के स्थायी प्राणी हैं, ये घर से बाहर नहीं निकलते । निष्क्रिय प्रस्तर दीवारों की तरह मालती का जीवन ढ़र्रेदार यांत्रिकता युक्त व्यस्तता का परिचायक है । उसके प्रत्येक क्रियाकलाप में एक ठंडी उदासीनता और उत्साहविहीन यांत्रिकता परिलक्षित होती है। लेखक मालती के जीवन यांत्रिकता के माध्यम से आधुनिक समाज में व्यक्तियों में व्याप्त यांत्रिकता को बताना चाहता है ।

मालती पति के साथ पहाड़ी गांव में आ गई है। पहाडी गांव में जीवन बड़ा जटिल है। यहां सब्जियां आसानी से नहीं मिलती, 'पंद्रह दिन हुए हैं, जो सब्जी साथ लाए थे, वही अभी बरती जा रही है।' घर में नौकर की नियमित व्यवस्था नहीं। बर्तन भी खुद मांजने पड़ते हैं और पानी भी कभी वक्त पर आता नहीं । मालती का पति उसके साथ घर के काम में मदद भी नहीं करता है। चाहे मालती रात के 11 बजे या 12 बजे तक काम करती रहे । उसे बस समय पर चाय–भोजन चाहिए ।

कहानी वाचक मालती के घर आता है, उसकी स्थिति देखकर परेशान होता है। घर में किताबें नहीं, अखबार भी नहीं है। वाचक देखता है जिस कागज में बांधकर कल आम आए थे, मालती उस कागज़ को बड़े गौर से पढ़ रही है। ये मालती आज पढ़ने के लिए कागज़ के एक टुकड़े के लिए तरस गई है। लेकिन जब उसके पढ़ाई के दिन थे, तब वह पढ़ती नहीं थी, उसके माता–पिता उससे तंग थे। वही उद्धत मालती आज कितनी दीन और शांत हो गई है।

मालती रोज़ वही अपने पति से मरीजों की कहानी सुनती है। मालती बिलकुल अनैच्छिक, अनुभूतिहीन, नीरस यंत्रवत और पानी के नल की टिपटिप पर उसके दिल की धड़कन चलती है। कहानी का नाम रोज़ बड़ा ही सार्थक है। महेश्वर रोज ही एक की तरह का इलाज–आपॅरेशन करते हैं, रोज वही बखान, वही मानसिक दबाव । रोज–रोज एकरस जीवन जीने से मालती यंत्र बन गई है। वह अपनी विषमताओं से और समस्याओं से कुंठित हो गई है। उसका सारा परिवेश और बाहय क्रियाकलाप उसके अंतर्मन को गहनता से प्रभावित करके उसे तोड़ चुका है। किन्तु इस कहानी में कुंठित अहं जितना उभरता है उतनी ही मध्यम वर्ग की स्त्री की घुटन और पीड़ा भी प्रकट होती है। यह मालती एक व्यक्ति न होकर वर्ग दिखाई देने लगती है ।

5.4 'शरणदाता' कहानी की मूल संवेदना :–

'शरणदाता' कहानी देश विभाजन की त्रासदी पर लिखी गई हिंदी कहानियों में सर्वोत्कृष्ट रचना मानी गई है। इस कहानी में एक मुस्लिम युवती अपने परिवार में शरणार्थी बने एक हिंदू की जान बचाती है और अपने ही घर में परिवार के धर्मांध व्यक्तियों द्वारा भोजन में विष दिये जाने के षड़यंत्र को उजागर करके मानवता के उच्च गुणों की प्रतिष्ठा करती है।

देविंदरलाल एक शरणार्थी है, जो रफिकुद्दीन वकील के घर में शरण लेते हैं । वकील साहब शरण देना अपना इन्सानी फर्ज़ मानते है : ''मैं तो इसे मेजारिटी का फर्ज़ मानता हूँ कि वह माईनारिटी की हिफाज़त करे और उन्हें घर छोड़–छाड़ कर भागने न दे। हम पड़ोसी की हिफाज़त न कर सके तो मुल्क की हिफाज़त क्या खाक करेंगे ? और मुझे पूरा यकीन है कि बाहर की खैर बात ही क्या, पंजाब में कई हिंदू भी जहां उनकी बहुतायत है, ऐसा ही सोच और कर रहे होंगे । आप न जाइये, न जाईए, आपकी हिफाज़त की जिम्मेदारी मेरे सर बस।''

परन्तु रक्षक ही देविंदरलाल का दुश्मन बन जाता है। वकील साहब पर मुस्लिम फिरकापरस्तों का दबाव पड़ता है। देविंदरलाल इस मकान के पिछवाड़े की कोठरी में पड़ा हुआ कुछ शब्दों को ही पकड़ पाता है । बेवकूफी, गद्दारी, इस्लाम कौम के रहनुमा एक काफिर को खाने में जहर मिलाकर मार देने का फतवा देकर चले जाते हैं। देविंदरलाल को जब खाना भेजा जाता है उसमें 'तीन फुलकों की तह के बीच कागज की एक पुडिया' भी है जिस पर लिखा है : 'खाना कुत्ते को खिलाकर खाईएगा जैबू ।'' जैबू के माध्यम से लेखक ने इंसानियत का चित्रण किया है । जैबू की होशियारी और इंसानियत को देखकर देविंदरलाल का मन ग्लानि से उमड़ आया । देविंदर का विवेक उद्बुद्ध होकर आगाह करता है : ''दुनिया को खतरा बुरे की ताकत के कारण नहीं, अच्छे की दुर्बलता के कारण है। भलाई की साहसहीनता ही बड़ी बुराई है। घने बादल से रात नहीं होती सूरज के निस्तेज़ हो जाने से होती है ।''

कहानी की मूल संवेदना देविंदरलाल से जुड़ी है। देविन्दर लाल के माध्यम से लेखक ने विभाजन के दौरान लोगों को जान बचाने के लिए जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उसी का चित्रण शरणार्थी कहानी में हुआ है।

देविंदरलाल किसी तरह अपनी जान बचाकर भारत आ जाते हैं । एक–डेढ़ महीने के बाद अपने घर का पता लेने के लिए देविंदरलाल अपना पता देकर दिल्ली रेडियो से अपील करवा रहे थे तब एक दिन उन्हें लाहौर की मुहरवाली एक छोटी सी चिट्ठी मिली थी ।

''आप बचकर चले गये, इसके लिए खुदा का लाख–लाख शुक्र है । मैं मानती हूँ कि रेडियों पर जिनके नाम आपने अपील की है, वे सब सलामती से आपके पास पहुंच जाएं। अब्बा ने जो किया या करना चाहा उसके लिए मैं माफी मांगती हूँ और यह भी याद दिलाती हूँ कि उसकी बात मैंने ही काट दी थी। अहसान नहीं जताती। मेरा कोई अहसान आप पर नहीं है सिर्फ यह इल्तज़ा करती हूँ कि आपके मुल्क में अकलीयत का कोई मजलूम हो तो याद कर लीजिएगा। इसलिए नहीं कि वह मुसलमान है, इसलिए कि आप इन्सान है।''

अतः इंसान का पतन चाहे कितना भी हो जाए, परन्तु इंसानियत मरती नहीं है। यह कहानी अज्ञेय जी की धर्मनिरपेक्ष मानवतावादी दृष्टि का मौलिक दस्तावेज़ है।

5.5 'विपथगा' कहानी की मूल संवेदना :–

अज्ञेय स्वयं सक्रिय क्रांतिकारी भी रहे और जेल भी गये । बहुत सी अज्ञेय ने क्रांतिकारी कहानियाँ लिखी हैं। अज्ञेय की कहानी में कला से अधिक विप्लव और क्रांति की भावना मिलती है। क्रांति संबंधी कहानियों में 'विपथगा' प्रथम और उनकी प्रौढ़ रचना है। इस कहानी में एक सशक्त, जीवंत और साहसी क्रांतिकारी स्त्री मेरिया इवानोठना अपने देश रूस की दुर्दशा पर क्षुब्ध है। मेरिया कातिल है, खूनी क्रांति की पक्षधर है ।

इस कहानी में मार्क्सवाद का प्रभाव परिलक्षित होता है। क्रांति का उद्देश्य इसमें परहित है। इसलिए वैयक्तिक सुख के तिरस्कार की प्रवृत्ति भी इनमें निहित है। विपथगा कहानी में लेखक ने क्रांतिकारी जीवन की विषमताओं, निस्वार्थ बलिदानों, प्रेम के उत्सर्ग और आत्मबलिदान का चित्रण किया है ।

अज्ञेय ने देशी तथा विदेशी दोनों परिवेशों का चित्रण अपनी कहानियों में किया है। अज्ञेय सैनिक और क्रांतिकारी दोनों रहे हैं । जोखिम और खतरों के खिलाड़ी अज्ञेय ने सेना को चुना, सक्रिय क्रांतिकारी रहे और योद्धा भी, पर वे मूलतः हिंसा के विरोधी थे। इसलिए 'विपथगा' में वे हिंसा का विरोध करते हैं। वे युद्ध को बर्बर कर्म की संज्ञा देते है । "मैं क्रांतिवादी हूँ पर हत्यारा नहीं हूँ । इस प्रकार की हत्याओं से देश को लाभ नहीं, हानि होगी । सरकार ज्यादा दबाव डालेगी, मार्शल – लॉं जारी होगा, फांसियाँ होगी । हमारा क्या लाभ होगा ।"

कथावाचक के माध्यम से साम्यवादी विचारों को उजागर किया गया है। लेखक शासक और शासित का भेद मिटा देना चाहता है। वह संसार में साम्य लाना चाहता है।

कहानी में क्रांतिकारी स्त्री मेरिया इवानोठना क्रांतिकारी स्त्री है, जो बिना किसी स्वार्थ के अपना कार्य करती है। कथावाचक से वह कहती है कि "तुम भी अपने आप को क्रांतिकारी कहते हो, हम भी । किन्तु हमारे आदर्शों में कितना भेद है। तुम चाहते हो, स्वतन्त्रता के नाम पर विश्व जीत कर उस पर शासन करना और हम ! हम इसी की चेष्टा में लगे हैं कि हम अपने हृदय इतने विशाल बना सके कि विश्व उनमें समा जाय।"

क्रांतिकारी व्यक्ति अपने देश के लिए अपना सब कुछ त्याग देता है। मेरिया ने भी अपना घर बार, माता–पिता, पति तक को छोड़ कर धक्के ही धक्के खाये हैं। सौभाग्य बेचकर अपने विश्वास की रक्षा की। स्वत्व बचाने के लिए अपने पिता की हत्या की और अपना स्त्री रूप बेचकर देश के लिए भिक्षा माँगी है। क्रांतीकारी मेरिया व्यथित व्यक्ति के दुख को अपना समझती है। वह कहती है कि – "एक–एक प्राणी को पीड़ित देखकर हमारे हृदय में सहानुभूति जगती है – एक हूक सी उठती है... किन्तु जाति, देश, राष्ट्र। कितना विराट होता है। इसकी व्यथा, इसके दुख से असंख्य व्यक्ति एक साथ ही पीड़ित होते हैं। इसमें इतनी विशालता, इतनी भव्यता है कि हम यही नहीं समझ पाते कि व्यथा कहाँ हो रही है, हो भी रही है या नहीं ।"

क्रांतिकारी व्यक्तियों के लिए अपने देश या राष्ट्र से बढ़कर कुछ नहीं होता है। मेरिया अपने देश व अपने क्रांतिकारी साथी को छुडाने के लिए अपनी जान की परवाह भी नहीं करती । वह अपने राष्ट्र के हित के लिए अपने प्राण भी गंवा बैठती है ।

5.6 निष्कर्ष :–

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि रोज, शरणदाता और विपथगा अद्वितीय कहानियाँ हैं। जिनमें तीव्र संवेदनशील, बुद्धिमान और चिंतनशील समृद्ध व्यक्तित्व को तिलतिल कर टूटने के लिए विवश होना गहन अवसादमय बोध है। यहाँ पर व्यक्ति और समाज का टकराव अप्रत्यक्ष है । देश व राष्ट्र की रक्षा हेतु तथा समाज में साम्यवाद लाने के लिए शोषक व शोषित का अन्तर मिटाने की सोच कहानी में परिलक्षित होती है।

5.7 कठिन शब्द :–

1. यांत्रिक–यंत्र के समान काम करने वाला
2. उद्धत – उग्र, प्रचंड
3. यंत्रवत – यंत्र की तरह

5.8 अभ्यासार्थ प्रश्न :–

प्र1. अज्ञेय की कहानियों की मूल–संवेदना क्या है ?

____

____

____

____

____

____

____

____

____

प्र2. 'रोज़' कहानी की संवेदना पर आलेख लिखिए ?

____

____

____

____

____

____

____

प्र3. 'विपथगा; कहानी की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए ?

प्र4. 'शरणदाता' कहानी की संवेदना को स्पष्ट करें ?

5.9 संदर्भ ग्रंथावली :–

1. कवि कहानीकार अज्ञेय और मुक्तिबोध : संवेदना और दृष्टि – डॉ. भरत सिंह
2. अज्ञेय का कथा साहित्य – ओम प्रभाकर
3. आत्मनेपद – अज्ञेय

*****

रोज, विपथगा, शरणदाता कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

6.0 **रूपरेखा**

6.1 उद्देश्य

6.2 प्रस्तावना

6.3 'रोज़' कहानी का शिल्प एवं चरित्र

6.4 'विपथगा' कहानी का शिल्प एवं चरित्र

6.5 'शरणदाता' कहानी का शिल्प एवं चरित्र

6.6 निष्कर्ष

6.7 कठिन शब्द

6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

6.9 सन्दर्भ ग्रन्थावली /पुस्तकें

6.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त पाठक/विद्यार्थी –

– 'रोज़', विपथगा और शरणदाता कहानियों के शिल्प से अवगत हो सकेंगे ।

– निर्धारित कहानियों के चरित्रों संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

– अज्ञेय की कल्पनाशीलता और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की क्षमता तथा शिल्प कौशल से अवगत हो सकेंगे।

6.2 प्रस्तावना :–

अज्ञेय मुख्यतः कवि है, परन्तु उन्होंने उपन्यास, कहानियाँ, यात्रा–वृतांत, आलोचना, ललित निबंध भी लिखे

हैं। अज्ञेय ने कुल मिलाकर 67 कहानियां रची है। उन्होंने कहानियाँ क्रांतिकारी जीवन, प्रेम, मनोवैज्ञानिकता, सामाजिकता व सेक्स एवं रोमांस संबंधित कहानियाँ लिखी है।

अज्ञेय प्रेमचंद परवर्ती कथा – साहित्य के प्रतिनिधि कहानीकार है। प्रतिनिधि इसलिये कि उनके कहानी सृजन में युग की प्रायः समस्त प्रवृत्तियां अपनी सम्पूर्ण विशिष्टताओं के साथ प्रतिबिम्बित हुई हैं। अज्ञेय की कहानियां आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य में विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं । अज्ञेय की कहानियों के शिल्प को कहानी रचना के विविध तत्वों – कथानक, चरित्र, कथोपकथन, देशकाल और भाषा–शैली के आधार पर पृथक्–पृथक् विवेचन प्रस्तुत करेंगे ।

6.3 'रोज़' कहानी का शिल्प एवं चरित्र :–

अज्ञेय आधुनिकता बोध संपन्न मनोवैज्ञानिक कथाओं के सफल लेखक हैं। वह घटनाओं के कोरे वर्णन के बजाए मानव के अंतर्मन की परतों को उघाड़ने में अधिक रूचि लेते हैं। 'रोज़' सामाजिक आधार पर रची कहानी है। मध्यवर्ग के पारिवारिक एकरसता को जितनी मार्मिकता से यह कहानी व्यक्त कर सकी है वह उस युग की कहानियों में 'विरल' है। कहानी का पूरा परिवेश और उस परिवेश और 'बोरडम' की बड़ी जटिल सूक्ष्मता से व्यक्त करते हैं। एकांत पहाड़ी वातावरण, सूना बँगला, नल के पानी की निरंतर टिप–टिप, बीमार बच्चे की रिरियाहट, और इस 'युवती माँ' का गजर के हर चोट के साथ थकी आवाज़ 'तीन बज गए' या इस असह्य एकरसता को स्वीकार कर लेने की विवशताः 'रोज ऐसा ही होता है।'' कहानी की पात्र मालती जिस घर में रहती है वह किसी 'शाप की छाया' से ग्रस्त है।

उनकी कहानियां प्रायः चरित्र प्रधान होती है। 'रोज़' भी एक चरित्र प्रधान कहानी है, जिसमें एक विवाहिता युवती मालती के यांत्रिक जीवन को आधार बनाया है। कहानी के पात्र डॉ० महेश्वर, उनकी पत्नी मालती, बेटा टीटी और कथावाचक है। मुख्य पात्र मालती ही है। कहानी में आये पात्रों का चित्रण इस प्रकार है :–

क) डॉ० महेश्वर :–

महेश्वर डाक्टर है। एक पहाड़ी गांव में सरकारी डिस्पेंसरी में नियुक्त है। वह जिस घर में रहते हैं सरकारी डिस्पेंसरी का कवार्टर है। महेश्वर ''प्रातः काल सात बजे डिस्पेंसरी चले जाते हैं और डेढ़ दो बजे लौटते हैं। उसके बाद दोपहर भर छुट्टी रहती है। केवल शाम को एक दो घण्टे चक्कर लगाने के लिए चले जाते हैं, डिस्पेंसरी के साथ छोटे से अस्पताल में पड़े हुए रोगियों को देखने और अन्य जरूरी हिदायतें करने–उनका जीवन बिल्कुल एक निर्दिष्ट ढ़र्रे पर चलता है।'' यह जीवन ढर्रा सकारात्मक उत्साही जीवन पद्धति का सूचक नहीं है, बल्कि एकरस, ऊबाऊ, यांत्रिक दिनचर्या का पर्याय है। नित्य वहीं काम, उसी प्रकार के मरीज, वही हिदायत, वहीं नुस्खे, वही दवाईयाँ । यही वजह है कि 'वे अपनी फुरसत के समय में भी सुस्त रहते हैं ।''

घर आकर वह मालती का हाथ नहीं बंटाते। कभी कभार बच्चे को संभालते, नहीं तो मालती को स्वयं संभालना पड़ता । महेश्वर पलंग पर बैठे चांदनी का आनन्द लेता है और मालती रसोई को सम्भालते हुए, बच्चे की चिंता करती है।

ख. मालती का चरित्र :–

इस कहानी में लेखक ने मालती के यांत्रिक जीवन को आधार बनाया है। कहानी के प्रारंभ में ही मालती के यन्त्रवत् जीवन की झलक मिल जाती है। जब वह घर में आए अतिथि का स्वागत केवल औपचारिक ढंग से करती है। अतिथि उसके रिश्ते का भाई है, जिसके साथ वह बचपन में खूब खेलती थी। पर वर्षों बाद आए भाई का स्वागत मालती उत्साहपूर्वक नहीं कर पाती, बल्कि जीवन की अन्य औपचारिकताओं की तरह एक और औपचारिकता निभा देती है। विवाह से पूर्व उत्सुकता, उत्साह, जिज्ञासा या किसी बात के लिए उत्कंठा थी भी तो वह दो वर्षों के वैवाहिक जीवन के बाद शेष नहीं रही, जिसे उसका रिश्ते का भाई भाँप लेता है। अतः मालती का मौन उसके अहं या अवहेलना का सूचक न होकर वैवाहिक जीवन की उत्साहीनता, नीरसता और यान्त्रिकता का ही सूचक है ।

मालती यंत्रवत पूरा दिन काम करती रहती और पति के घर आने के उपरान्त ही कुछ खाती है, कहानीकार ने इस पर टिप्पणी जड़ी है – ''पति ढाई बजे खाना खाने आते हैं, इसलिए पत्नी तीन बजे तक भूखी बैठी रहेगी ।''

महेश्वर हर रोज़ डिस्पेंसरी से घर लौटने के बाद मालती को अस्पताल की स्थिति सुनाता है। हर दूसरे चौथे दिन वहां गैंग्रीन का रोगी आ जाता है, जिसकी टांग काटने की नौबत भी आ जाती है। मालती पति पर व्यंग्य करती है ''सरकारी हस्पताल है न, क्या परवाह है। मैं तो रोज़ ही ऐसी बातें सुनती हूँ । अब कोई मर मुर जाए तो ख्याल ही नहीं होता।'' मालती अपने जीवन की नीरसता को प्रायः चुपचाप सहती रहती है और पति से उसकी बातचीत भी कम होती है, पर सरकारी अस्पताल की दुर्दशा और रोगियों के मरने के प्रसंग को लेकर पति पर किए गए उसके व्यंग्य से उसकी संवेदनशीलता एवं जिजीविषा का पता चलता है।

कहानीकार की दृष्टि का केन्द्र मालती और उसके जीवन की जड़ता ही है। उसका पति और अतिथि पलंग पर बैठकर गपशप करते रहे और मालती घर के अंदर बर्तन मांजती रही, क्योंकि नल में पानी आ गया था। उसकी नियति घर के भीतर खटना ही थी, बाहर की खुली हवा का आनन्द लेना नहीं । लेखक एक मामूली प्रसंग की उद्‌भावना से मालती की आन्तरिक इच्छा को चित्रित करता है। बर्तन धोने के बाद मालती को पति का आदेश मिला 'थोड़े आम लाया हूँ, वे भी धो लेना।'' आम अखबार के कागज़ में लिपटे थे। मालती आमों को अलग कर के अखबार के टुकड़े को खड़े–खड़े पढ़ने लगी। अखबार के टुकड़े को पढ़ने में उसकी तल्लीनता इस तथ्य की सूचक है कि वह बाहर की दुनिया के समाचार जानना चाहती है, पर वह अपनी सीमित दुनिया में बंद है।

उसके जीवन का एक और अभाव उजागर होता है और वह है अखबार का अभाव। अखबार मालती को बाहर की दुनिया से जोड़ने का काम कर सकता है, परन्तु वह उससे भी वंचित है। कथावाचक याद करता है कि मालती बचपन में पढ़ने से बहुत कटती थी। ''एक दिन उसके पिता ने उसे एक पुस्तक लाकर दी, और कहा कि इसके बीस पेज रोज पढ़ा करो। हफ्ते भर बाद मैं देखूँ कि उसे समाप्त कर चुकी हो। नहीं तो मार–मार कर चमड़ी उधेड़ दूंगा। मालती ने चुपचाप किताब ली, पर क्या उसने पढ़ी ? वह नित्य ही उसके दस–बीस पेज़ फाड़कर फेंक देती जब आठवें दिन उसके पिता ने पूछा, 'किताब समाप्त कर ली ?' तो उत्तर दिया, 'हाँ कर ली।' पिता ने कहा लाओ, 'मैं प्रश्न पूछूंगा।'

तो चुप खड़ी रही। पिता ने फिर कहा तो उद्धृत स्वर में बोली, 'किताब मैंने फाड़कर फैंक दी है मैं नही ंपढ़ूंगी।'' वही उद्धत मालती आज कितनी दीन और शांत हो गई है और एक अखबार के टुकड़े को तरसती है।

मालती 'बिल्कुल, अनैच्छिक, अनुभूतिहीन, नीरस, यंत्रवत वह भी थके हुए यंत्र' के समान जीवन जीती है। घड़ी की टिकटिक और पानी के नल की टिपटिप पर उसके दिल की धड़कन चलती है। उसके जीवन की गाड़ी भी मंद गति से चलती है। 'रोज़' कहानी मालती के समझौते और सहनशीलता की कहानी है। वह सब कुछ सहकर गृहस्थी की गाड़ी धकेलती रहती है।

अज्ञेय की कहानियों के कथोपकथन आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य के आदर्श कथोपकथन है। मनः स्थिति का उद्घाटन, लाघव, भाषा की परिनिष्ठता, दार्शनिकता, परिष्कृति एवं नाटकीयता अज्ञेय के कथोपकथनों की प्रमुख विशिष्टता है। अज्ञेय की 'रोज़' कहानी का देशकाल पहाड़ी गांव का जीवन है।

अज्ञेय ने अपनी कहानियों की मांग के अनुसार शब्दों का प्रयोग किया है। जिस कहानी का परिवेश जैसे है, उनके संवादों में उसी क्षेत्र की भाषा के शब्दों का प्रयोग होता है। इस कहानी में जनपदीय शब्दों का प्रयोग हुआ है, जैसे – खटखटाए, उकताए, खनखनाहट ।अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग भी इस कहानी में हुआ है – डिस्पेंसरी, नोटबुक, स्पीडोमीटर ।

अतः इस कहानी का शिल्प व चरित्र उत्कृष्ट है। यह अज्ञेय की सर्वश्रेष्ठ कहानी है । इसमें संबंधों की वास्तविकता को एकांत वैयक्तिकता से अलग ले जाकर सामाजिक संदर्भ में देखा ।

6.4 विपथगा कहानी का शिल्प एवं चरित्र :–

विपथगा कहानी की पृष्ठभूमि रूसी है। चारित्रिक विश्लेषणपूर्ण कथानकों वाली कहानियों में एकांतिक रूप से किसी चरित्र के अन्तर्बाह्य विश्लेषण पर कथानक का आरम्भ एवं विकास आधारित रहता है। ऐसी कहानियों के कथानक प्रायः मनोवैज्ञानिक एवं व्यक्ति चरित्र के आश्रित होकर रह गए हैं। कोई नितांत गौण घटना चरित्र के मानस को प्रेरित कर देती है और कहानीकार उसके अन्तर्बाह्य विशलेषण के द्वारा कथानक का निर्माण करता जाता है। उस मनोविश्लेषण में उक्त चरित्र के गत जीवन की कतिपय अन्य घटनाएं भी उद्घाटित हो जाती है जो कथानक को गति प्रधान करती है । विपथगा ऐसी ही एक कहानी है।

अज्ञेय मूलतः कवि हैं, अतः उनकी दृष्टि एकांतिक रूप से व्यष्टिपरक दृष्टि है। अतः उनकी कहानियों के चरित्र प्रमुख रूप से व्यक्ति चरित्र होते है। 'विपथगा' कहानी की 'मेरिया' जीवन के विभिन्न स्तरों से अपनी आत्मा में व्याप्त विद्रोह के स्वर को बुलन्द करती है। इस कहानी में कथावाचक से आरंभ होता है और मेरिया इवानोठना इस कहानी की प्रमुख पात्र है ।

मेरिया इवानोठना :– 'विपथगा' एक क्रांति संबंधी कहानी है। यह एक क्रांतिकारी स्त्री मेरिया इवानोठना की कहानी है। एक सशक्त और जीवंत और साहसी क्रांतिकारी स्त्री मेरिया इवानोठना अपने देश रूस की दुर्दशा पर क्षुब्ध है। मेरिया कातिल है, खूनी क्रांति की पक्षधर है । कहानी की नायिका 'मेरिया इवानोठना है, जो ऐसे परिवार की लड़की है जिसमें क्रांतिकारी अपनी साथियों पर विश्वास करते हैं, किन्तु वे सदस्य पर विश्वास नहीं करते, जो शोषक

समाज के परिवार का अंग रहा हो। मेरिया अपने वंश में पहली क्रांतिकारिणी है, फिर भी क्रांतिकारियों में परित्यक्ता सी बनी रहती है। जैसे उसे त्याग दिया हो – ऐसा बर्ताव उसके साथ होता रहता है। वह अपने साथियों में विश्वसनीय तब बनती है जब उसका सौभाग्य नष्ट हो जाता है। वह किसी का आधार बनकर भी निराधार बन गई। उसे अपने पिता की हत्या करनी पड़ी ।

मेरिया के अनुसार क्रांति आन्दोलन, सुधार, परिवर्तन कुछ भी नहीं है। क्रांति विश्वासों का, रूढ़ियों का, शासन और विचार प्रणालियों का घातक, विनाशकारी और भयंकर विस्फोट है। इसका न आदर्श और न ध्येय है। क्रांति एक विपथगा है। 'विपथगा' कहानी में कथानक 'अशांति के बीज' को बोने के साथ समाप्त हो जानी चाहिए, परन्तु मेरिया इस कहानी में अशांति का बीज़ बोकर इस कहानी को आगे बढ़ाती है। वह उस अशांति के बीज़ को अंत तक दबा नहीं सकती। मेरिया निस्वार्थ भाव से अपने राष्ट्र के लिए कार्य करती है। वह किसी को बताये बिना अपने क्रांतिकारी साथियों को बचाने में प्रयासरत रहती है। अंत में अपनी जान गंवाकर, राष्ट्र के लिए अपने प्राणों की आहुति देती है।

कथोपकथन की दृष्टि से अज्ञेय की कहानी परम श्लाघनीय है तथा अज्ञेय एक समर्थ एवं सफल कथोपकथन लेखक है। कहानी में दार्शनिकतापूर्ण कथोपकथन पर्याप्तरूपेण उपलब्ध है। 'विपथगा' कहानी का देशकाल रूस का है। इसमें पाश्चात्य राजनीतिक – क्रांतिपूर्ण वातावरण को अंकित किया गया है।

भाषा के माध्यम से कहानीकार अपनी रचनाओं का निर्माण करता है। उसकी भाषा उसकी संवेदना, प्रयोजन और संस्कार के अनुरूप स्पष्ट होती है। अज्ञेय की इस कहानी में तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी शब्दों का प्रयोग मिलता है। 'विपथगा' में तत्सम शब्दावली प्रयुक्त हुई है – लावण्य, भीषण, तुषारमय, अस्त्र, शस्त्र, झंझावत, भावातिरेक, सदिच्छा, विध्वंसिनी हेमवर्ग, विषादयुक्त आदि।

विपथगा कहानी में तद्भव शब्दों का भी प्रयोग हुआ है – कविता (सं० काव्य), तुम (सं – त्वम), गला (सं– ग्रीवा) ।

'विपथगा कहानी में – फैशन, ओवरकोट, लेक्चरर, टेलीफोन आदि अंग्रेजी शब्दावली प्रयुक्त हुई है।

अतः विपथगा कहानी क्रांति संबंधी एक सर्वश्रेष्ठ रचना है। इस कहानी में हिंसा का विरोध हुआ है। कथा के अनुसार भाषा का प्रयोग हुआ है।

6.5 'शरणदाता' कहानी का शिल्प एवं चरित्र :–

कहानी रचना के क्षेत्र में, जहां अज्ञेय ने युवावस्था के आरंभ में ही प्रवेश किया, उन्होंने किसी भी देशी या विदेशी कथा लेखक को अपने आदर्श के रूप में ग्रहण नहीं किया और कहानी के रूप और शिल्प की दिशा में खुद अपने रास्ते खोजते रहे । अज्ञेय क्रांतिकारी आंदोलनों के प्रभाव स्वरूप सक्रिय राजनीति में आए। जेल में जो कहानियाँ लिखी, वे क्रांतिकारी विचारों से ओत प्रोत है।

'शरणार्थी' कहानी में हिंदू मुस्लिम दंगों की पृष्ठभूमि है। इसके संपूर्ण कथानक पर विचार करे तो स्पष्ट होता है कि इसकी कथा के पांच सोपान है। प्रथम सोपान में रफिकुद्दीन और देविन्दरलाल के घनिष्ठ संबंधों के संकेत हैं, जो हिन्दू–मुसलमानों के पारस्परिक संबंधों की घनिष्ठता का पर्याय है। परन्तु इसके विरोध में दंगे और भगदड़ की

स्थिति आशंकाएं और शत्रुता उस घनिष्ठता में दरार पैदा करती है। यह सोपान भूमिका का कार्य करता है। दूसरे सोपान में भगदड़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है । रफिकुद्दीन में शिथिलता दिखाई दे रही है। तीसरे सोपान में देविन्दरलाल जेल जैसे आउट हाउस में छिपने को विवश वह अकेलेपन, असुविधाओं और असुरक्षा से समझौता करते दिखाई देते हैं। चौथा सौपान अत्यंत कलात्मक है, जहां देविन्दरलाल आत्मरक्षा के कारण विषाक्त भोजन का परीक्षण अपने प्रिय 'बिलार' (कुते का नाम) पर करता है। पांचवे सोपान में कथानक में व्याप्त अमानुषिकता को किंचित संतुलित करने का प्रयास किया है। जेबू का पत्र और संकटग्रस्त अल्पसंख्यक की सहायता करने का आग्रह मानवीय मूल्यों के प्रति आस्था प्रकट करने के उद्देश्य से है।

पात्र–योजना और चरित्र, सृष्टि की दृष्टि से भी 'शरणदाता' कहानी अज्ञेय की उत्कृष्ट रचना है। अज्ञेय का महत्व मानव–मन की गहराइयों में झांकने और वहां की गतिविधियों और अनुभूतियों को सशक्त ढंग से अभिव्यक्त करने में है। इस कहानी के सभी पात्र अपनी–अपनी चरित्रगत विशेषताओं के कारण पाठकों को प्रभावित करते हैं। इस कहानी में रफिकुद्दीन, देविन्दरलाल और जेबु आदि पात्र है ।

क. रफिकुद्दीन :

रफिकुद्दीन और देविंदर लाल दोनों एक दूसरे के प्रति विश्वस्त, ईमानदार, एक दूसरे के सुख–दुख के साथी है। विभाजन की विभीषिका के बीच भी दोनों का यह मैत्री भाव बना रहता है परन्तु दहशत और वहशत इन्हें भी अपना ग्रास बना लेती है। कहानी के आरंभ में देविंदर लाल परेशान है, परन्तु आश्वस्त है कि उनका कुछ नहीं बिगडेगा । रफिकुद्दीन बहुसंख्यक समुदाय के सदस्य है और अपने इस विश्वास पर दृढ़ है कि उनके रहते उनके दोस्त का कोई कुछ नहीं बिगाड़ पायेगा। परन्तु परिस्थितियों के परिवर्तन के साथ–साथ उनकी दृढ़ता दुर्बल होती जाती है, आश्वासन का स्वर मंद होने लगता है। घटना सुनाकर रफीकुद्दीन ने कहा, ''आखिर तो लाचारी होती है अकेले इंसान को झुकना ही पड़ता है। और फिर धर्म के ठेकेदारों के समझाने डराने पर लज्जा रूखाई और ग्लानि और अधिक बढ़ गई।

ख. देविंदरलाल :

देविंदरलाल की स्वभावगत रेखाएं अत्यंत कलात्मक और सूझ–बूझ के साथ स्पष्ट की गयी है। सांप्रदायिक उन्माद के उस विषाक्त वातावरण में अल्पसंख्यक समुदाय के देविंदरलाल का भयभीत रहना अत्यंत स्वभाविक है। जब उनके समुदाय के सभी लोग अपने–अपने ठिकानों से उखड रहे हैं तब उस मुहल्ले में एक मात्र देविंदरलाल ही बचते हैं जो वहां टिके रहते हैं। प्रतिष्ठित नागरिक व मित्र रफीकुद्दीन के आश्वासन के कारण वह वहां रूके थे। परन्तु जब शरण देने वाले मित्र पर ही संकट मंडराने लगते हैं तो वे वहां से जाने का निश्चय करता है। यहां पर लेखक ने देविन्दरलाल की मानवीयता, करूणा और कर्तव्यनिष्ठा के भाव पर बल दिया है।

देविंदरलाल अत्यंत संवेदनशील हैं। जीवन और स्थितियों की उन्हें अच्छी परख है। वे कोई भी कार्य या निर्णय आवेश में नहीं करते । धैर्य उनके व्यक्तित्व की विशेषता है। चारों ओर घट रही घटनाओं का परीक्षण उनकी बाह्य सतह के आधार पर नहीं करते वरन उनके अंदर तक पैठने का प्रयत्न करते हैं। उनके चिन्तन से उनकी इस प्रवृत्ति के

दर्शन होते हैं – ''देविंदरलाल को अचानक लगता है कि वह और रफीकुद्दीन ही गलत है जो बैठे हुए हैं जबकि सब कुछ भड़क रहा है। उफ्फ़न रहा है, झुलस और झल रहा है।''

देविंदरलाल अपनी सूझबूझ और जैबू की मदद से अपनी जान बचाने में कामयाब हो जाता है तथा अपने लोगों में पहुंच जाता है।

देविन्दरलाल और रफीकुद्दीन के अतिरिक्त कुछ और पात्र भी इस कहानी में हैं। शेख अताउल्लाह, उनकी पत्नी, उनकी माँ, उनका बेटा आबिद और बेटी जेबुनिसा उर्फ जैबु। इन पात्रों की उपस्थिति मात्र शब्द रूप में ही है। उनकी आवाज़ों के माध्यम से ही उनकी चारित्रिक रेखाओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है।

'शरणदाता' कहानी वातावरण सृष्टि की विशेषता के कारण चर्चा का विषय रही है। प्रस्तुत कथा में उस समय का वातावरण चित्रित किया गया है जब देश स्वतंत्र हुआ था और विभाजन की विभीषिका को झेलने के लिए सभी भारतवासी अभिशप्त थे।

'शरणदाता' कहानी की भाषा की मुख्य विशेषता उसकी बिंब विधायिनी शक्ति है। अधिकांश दृश्य बिंबात्मक है। शब्दों बिम्बों का प्रयोग लेखक ने पात्रों के स्वभाव को व्यक्त करने के लिए किया है। इस कहानी में अंग्रेजी शब्दावली का प्रयोग हुआ है – ड्राइवर, गैराज, हेड क्लर्क आदि। इसमें उर्दू के शब्द भी प्रयुक्त हुए है – खाहमखाह, दुश्मन, मुहल्ले, तन्खा, मरीज़, दाद, ज़लील, फिरकापरस्ती ।

अतः यह कहानी संपूर्ण रूप से विश्वस्त परिस्थितियों के निर्माण के द्वारा, जिसमें उतने ही विश्वास्य चरित्रों की उपेक्षा होती है, एक ऐसी बोधात्मक चेतना उपस्थित करती है जो भावना के स्तर पर विषय वस्तु से तालमेल स्थापित करने में सफल है। भारत–विभाजन की एक सामयिक घटना पर आधारित होते हुए भी इसकी प्रासंगिकता बाधित नहीं होती ।

6.6 निष्कर्ष :

अतः अज्ञेय ने अपनी कहानियों के सन्दर्भ में मनोवैज्ञानिकता, यथार्थवादिता, दार्शनिकता, स्वस्थ संवेदनशीलता अद्भुत शैली–शिल्प तथा आदर्श भाषा–शैली आदि विशिष्टताओं से युक्त होकर आधुनिक हिन्दी कथा–साहित्य के एक अत्यन्त सफल समर्थ एवं सच्चे प्रतिनिधि कहानीकार है।

6.7 कठिन शब्द :

1. औपचारिक – मात्र दिखावे के लिए किया जानेवाला
2. जड़ता – निर्जीव, स्थिर होने की अवस्था
3. श्लाघनीय – प्रंशसनी, सम्मानीय
4. उन्माद – पागलपन, सनक
5. विषाक्त – विषैला, जिसमें विष मिला हो

6.8 अभ्यासार्थ प्रश्न :

प्र1. अज्ञेय की 'शरणार्थी' कहानी के शिल्प पर प्रकाश डालिए ।

प्र2. देविन्दरलाल के चरित्र पर प्रकाश डालिए ।

प्र3. 'विपथगा' कहानी का शिल्प एवं चरित्र लिखिए ।

प्र4. 'रोज़' कहानी के शिल्प का चित्रण करें।

प्र5. 'रोज़' कहानी के पात्रों का चित्रण करो ।

6.9 संदर्भ ग्रंथ :

1. कवि कहानीकार अज्ञेय और मुक्तिबोध ' संवेदना और दृष्टि – डॉ० भरतसिंह
2. अज्ञेय का कथा – साहित्य – ओम प्रभाकर

*****

चिन्तनपरक कहानीकार भीष्म साहनी

7.0 रुपरेखा

7.1 उद्देश्य

7.2 प्रस्तावना

7.3 चिन्तनपरक कहानीकार भीष्म साहनी

7.3.1 सामाजिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी का चिन्तनपरक दृष्टिकोण

7.3.2 राजनीतिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी का चिन्तनपरक दृष्टिकोण

7.3.3 आर्थिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी का चिन्तनपरक दृष्टिकोण

7.4 सारांश

7.5 कठिन शब्द

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/पुस्तकें

7.1 **उद्देश्य** : भीष्म साहनी की कहानियों में जन सामान्य का जीवन और अंतविर्रोध किस रूप में अभिव्यक्त हुआ है, यह जान सकेंगे।

भीष्म साहनी के चिंतन पर किस विचारधारा का प्रभाव है। भीष्म साहनी ने अपने युग की परिस्थितियों को किस सीमा तक आँका है और प्रगतिशील विचारों से ओतप्रोत साहनी जी के रचना संसार में सामाजिक चेतना और दायित्व किस स्तर तक व्याप्त है, यह जान सकेंगे।

7.2 प्रस्तावना : भीष्म साहनी का समस्त साहित्य ही भारतीय जीवन के सुख–दुःख में शामिल अनुभव है। प्रगतिशील विचारों से प्रभावित वे सदा ही मेहनत करने वाल वर्ग और शोषण की शिकार जनता के साथ खड़े होते हैं। वे उन तमाम लोगों से जुड़े हुए हैं जो जीवन में संघर्ष करते हुए जी रहे हैं। उन्होंने जीवन में मनुष्य और चीज़ों के बीच उपस्थित द्वंद्व को समझने की कोशिश की है। मध्यवर्ग और निम्न वर्ग की जनता के जीवन को, उसके संघर्ष और यातना को समझने की चेतना उनकी कहानियों में झलकती है।

7.3 चिन्तनपरक कहानीकार भीष्म साहनी : भीष्म साहनी अपने युग के एक ऐसे रचनाकार रहे हैं जिनका समाज के प्रति दृष्टिकोण बड़ा स्वस्थ और स्पष्ट रहा है। मूलतः समाजवादी चेतना से जुड़े रहने के कारण समाज के प्रति उनकी दृष्टि प्रगतिशील रही है। यही कारण है कि समाजवाद की समष्टि चिंतनधारा के प्रभुत्व कहानीकार के रूप में भीष्म साहनी का नाम एक सशक्त कथाकर के रूप में उभरता है। उनकी कहानियों में जन–समान्य का जीवन और अंतर्विरोध बड़े सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुआ है।

किसी भी विचार दर्शन या चिंतन के प्रभाव को एक विशिष्ट सीमा तक ही भीष्म जी ने ग्रहण किया है। यह सच है कि प्रगतिशील विचारधारा के प्रमुख कहानीकारों में उनका नाम लिया जाता है पर गौर से उनके साहित्य का अवलोकन करने से स्पष्ट होगा कि मूलतः वह मानवतावादी है। इनका मानवतावाद मार्क्सवाद चिंतन और समाजवादी दर्शन से प्रभावित है।

भीष्म साहनी की कहानियों का मुख्य प्रतिपाद्य इस देश का मध्य और निम्न–मध्यवर्गीय समाज है। भारतीय दर्शन और चिंतन का प्रभाव कहीं–कहीं उनकी कहानियों पर स्पष्ट लक्षित होता है। हिन्दी के जिन कहानीकारों ने प्रेमचन्द की परम्परा को स्वीकारा है या आत्मसात किया है उनमें भीष्म जी अलग से पहचाने जाते हैं क्योंकि बनावट नाम की कोई भी चीज़ साहनी में कहीं भी नहीं है। इनकी कहानियों में आधुनिकता बोध और यथार्थवादी विचारधारा के अंतर्विरोधों को सामाजिक और पारिवारिक प्रसंगों में व्यक्त किया है। लेखक की कहानियों में कहीं भी दैववाद या अद्भुत शक्ति पर लेखक का विश्वास नहीं है। उनके लिए तो मानव जीवन और मानवीय जीवन के सुख दुःख ही सब कुछ है। भीष्म साहनी के सन्दर्भ में बलराज साहनी का कहना है कि ''भीष्म के मिजाज़ में एक और खूबी मैंने यह देखी है कि उसमें जल्दबाज़ी नहीं है। सोचकर और थोड़ा बोलते हैं। कहानी की कथावस्तु का चुनाव भी वह बड़े धीरज से करता है। साधारण लोगों के जीवन की छोटी–छोटी बातें वह खुद अपनी आँखों से देखता है। उन लोगों की सामाजिक और व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओं का अध्ययन करता है। पात्रों को कल्पना से नहीं जीवन से खोजता और चुनता है। लिखते समय भी वह यथार्थ में ज़्यादा और अपनी कल्पना से कम काम लेता है।''

7.3.1 सामाजिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी का चिन्तनपरक दृष्टिकोण : मूलतः इनकी कहानियाँ मध्यवर्गीय सामाजिक परिवेश, खोखली मर्यादाओं, झूठी नैतिकता और बाह्य आडम्बर जैसे विषय को अपनी मार्मिक शैली के माध्यम से अभिव्यक्त करने का सफल प्रयास किया है। भीष्म जी की कहानियों में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक विषमताओं का चिंतनपरक यथार्थ अभिव्यक्त हुआ है।

भीष्म साहनी का आगमन जिस युग में हुआ वह युग सामाजिक परिस्थितियों के लिए बड़ा चर्चित एवं

चिन्तनपरक रहा है। देश–विभाजन की त्रासदी ने समाज को झकझोर डाला, वहीं आज़ादी के बाद बदलती परिस्थितियों से जनता के मोहभंग की स्थिति ने सामान्यजन एवं रचनाकारों को प्रभावित किया। भीष्म साहनी की कहानियों में भी इन्हीं स्थितियों की अभिव्यजंना हुई है। सामाजिक जीवन की समस्त समस्याओं के प्रति भीष्म साहनी ने चिंतन–मनन किया है। स्वतन्त्रता के बाद की कहानियों ने विस्तृत जीवन परिवेश लिया है और उसके विविध पक्षों के उभरे दबे कोनों को उजागर करने का प्रयत्न किया है। औद्योगीकरण, मशीनीकरण के प्रभाव से जो परिवर्तन हुआ इस परिवर्तन को रोका नहीं जा सकता है और परिणामस्वरूप जीवन के मूल्यों में भी परिवर्तन आया है। परिस्थितिजन्य जीवन मूल्यों के प्रति भीष्म साहनी बहुत सजग दिखाई देते हैं, इनकी कहानियों में परिवर्तित जीवन मूल्यों को सटीक अभिव्यक्ति मिली है। प्रगतिशील विचारक भीष्म साहनी के लिए मनुष्य में स्नेहभाव, साहचर्य और विश्वास अधिक महत्वपूर्ण है। वह एक ऐसे धर्म की स्थापना करना चाहते हैं जिसमें सत्य, न्याय और समानता को स्थान दिया जाए।

लेखक ने मध्यवर्गीय लोगों के बदलते जीवन मूल्यों को उद्‌घाटित करने के साथ–साथ उनके फूहड़पन व्यवहार को भी दर्शाया है। रचनाकार मध्यवर्गीय लोगों की प्रगति से प्रसन्न तो है ही, लेकिन लेखक चिन्ता भी दर्शाता है कि प्रगति के साथ–साथ वह निरन्तर अपने दायित्वों को भूलता जा रहा है, उनमें स्नेह जैसे भाव का लुप्तीकरण होता जा रहा है, परिवार का विघटन होने के साथ, घर में बुजुर्गों के प्रति प्रेम के बजाये उपेक्षा भाव जागृत हो रहा है। जिस समाज में पैसे के तराजू पर प्रसन्नता तोली जाती हो, प्रेम का भाव एवं सहानुभूति तोली जाती हो, प्रेम का भाव एवं सहानुभूति एक दूसरे के प्रति न हो तो ऐसा समाज विकसित समाज नहीं कहलाया जा सकता है।

'चीफ की दावत' कहानी मे शामनाथ नाम का एक व्यक्ति है, जिसके घर शाम के वक्त चीफ की पार्टी है। शामनाथ की माँ बहुत ही बूढ़ी और बेडौल शरीर की निरक्षर देशी औरत है। यद्यपि शामनाथ को पढ़ाने–लिखाने और एक ओहदेदार बनाने में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर देती है। शामनाथ और उसकी पत्नी इस बात से परेशान है कि चीफ की दावत के समय माँ को कहाँ कर दिया जाए, ताकि उसकी नज़र से माँ को बचाया जाए और मेरी भद्दगी न हो पाए। परन्तु जिस बात से शामनाथ सबसे ज़्यादा परेशान था, अंत में वही होता है। चीफ को उस पूरी पार्टी में यदि कोई पसन्द आता है तो माँ के द्वारा बनाई गई फुलकारी। बेटे के व्यवहार से तंग माँ हरिद्वार जाने का निश्चय कर लेती है, परन्तु पार्टी की सफलता का सबसे बड़ा कारण माँ को पाकर आलिंगन में भर लेता है। लेकिन जब माँ को यह पता चलता है कि एक नई फुलकारी बनाकर चीफ को भेंट कर देने से मेरे बेटे की पदोन्नति हो जाएगी तो हरिद्वार जाने का विचार त्याग कर वह एक बार पुनः बेटे के भविष्य के लिए अपनी रोशनी की अंतिम किरण भी उस पर समर्पित कर देती है। मध्यवर्गीय जीवन का यथार्थ जो आज़ादी के बाद देश में विकसित हुआ, उसमें इस जीवन की आंतरिक और बाह्य स्थिति, विसंगतियों, विचित्रताओं और अमानवीयता से लथपथ हो गई है। चीफ की दावत कहानी का उदाहरण दृष्टवय है – ''और माँ, आज जल्दी सो नहीं जाना। तुम्हारे खर्राटों की आवाज़ दूर तक जाती है। माँ लज्जित–सी आवाज़ में बोली, क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी में उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।'' 'चीफ की दावत' कहानी का मूल स्वर इसी विडंबना को उद्‌घाटित करना है कि 'शामनाथ' जैसे चरित्र हमारे मध्यवर्गीय की देन है।

साहनी जी की बहुचर्चित कहानियों में वांङ्चू का स्थान भी सर्वश्रेष्ठ है। 'वांङ्चू' एक ऐसे बौद्ध भिक्षु की कहानी है, जो चीन से भारत बौद्ध धर्म को जानने, समझने और महाप्राण की जन्मस्थली में रहकर उसके संबंध में कार्य करने

आया है। भारत के बौद्ध धर्म संबंधी अवशेषों और संस्थाओं में घूमने वाला भावुक चीनी बौद्ध वांङ्चू समकालीन जीवन–प्रवाह से बिल्कुल कटा हुआ रहता है। लगभग उसकी पन्द्रह वर्षों के बाद अपने देश लौटने की इच्छा होती है और वह चीन कुछ दिनों के लिए चला जाता है। दुर्भाग्य की बात यह होती है कि भारत के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण राजनीतिक सामाजिक परिवर्तनों से ही वह निर्लिप्त नहीं रहता बल्कि चीन की गतिविधियों से भी अनजान बना अपने ध्येय में मग्न रहता है। शायद इसी वजह से भारत और चीन जाना और चीन से पुनः भारत लौटने का अव्यावहारिक निर्णय लेता है। फलस्वरूप चीन के अधिकारी उसे भारत का जासूस समझते हैं और भारत के अधिकारी उसे चीन का। वांङ्चू इसी शक के दोनों पाटों में बुरी तरह से पिसता रहता है। वांङ्चू जिस रोज कलकत्ता पहुँचता है, उसी दिन सीमा पर चीनी और भारतीय सैनिकों के बीच मुठभेड होती है और दस भारतीय सैनिक मारे जाते हैं। वह देखता है कि लोग उसे घूर–घूर कर देख रहे हैं। वह स्टेशन के बाहर अभी निकला ही था, कि दो सिपाही आकर उसे पुलिस के दफ्तर ले गये और वहां घण्टे भर एक अधिकारी उसके पासपोर्ट और कागज़ों की छानबीन करता रहा। पुलिस से छूटने के पश्चात वह समाज की बेरुखी एवं सन्देहपूर्ण दृष्टि का शिकार भी होता है। वांङ्चू जैसे ही रेल के डिब्बे में बैठता है कि लोग गोली–काण्ड की चर्चा कर रहे थे जैसे ही उन्होंने वांङ्चू को देखा तो वह उसे सन्देह भरी दृष्टि से देखते हैं एक बंगाली बाबू उचककर उठकर हाथ झटककर कहने लगता है कि " या तो कहो कि तुम्हारे देशवालों ने विश्वासघात किया है, नहीं तो हमारे देश से निकल जाओ.... निकल जाओ..... निकल जाओ!" भीष्म साहनी ने इस सन्दर्भ के माध्यम से स्पष्ट किया है कि व्यवहारिक राजनीति से प्रेरित तथा नियंत्रित, आज के युग में आदमी आदमी के रूप में नहीं, अपने देश–कालगत राजनीतिक, भौगोलिक, धार्मिक तथा नीतिगत सम्मतियों के आधार पर पहचाना जाता है और उन्हीं के चलते पुरस्कृत या दंडित होता है। राष्ट्रों की राजनीति कितनी निर्मम और अमानवीय होती है, इसे भारत तथा चीन के बीच के तनावपूर्ण संबंधों की चपेट में पिसते हुए वांङ्चू नामक एक ईमानदार, निष्ठावान तथा सही अर्थों में एक सार्वभौमिक जीवन जीने वाले बौद्ध शोधकर्ता की त्रासदी भरे जीवन के माध्यम से उभारा गया है।

बदलती हुई सामाजिक स्थितियों के परिणाम स्वरूप ही भीष्म साहनी की कहानियों में नारी के आधुनिक और बदले हुए रूप का चित्रण हुआ है। समाज आज भी उसे परनिर्भर मानता है, लेकिन कहानीकार ने नारी की बदली हुई मानसिकता को परिलक्षित किया है। 'तस्वीर' कहानी की विधवा नारी अपने ससुर की हर यातना को सहन करती है, उसके साथ ही अपने ही बच्चों द्वारा किए गए उपेक्षणीय व्यवहार को भी झेलती है। बीती हुई बातों को याद करते हुए वह कहती है कि "अपने बाप की तरह वह भी कड़वा बोला करता था। एक ही छत के नीचे रहते हुए भी एक–दूसरे से कोसों दूर थे और दिन–प्रतिदिन दूर होते जा रहे थे। मैं नहीं जानती, उसने मुझे कभी प्रेम किया था या नहीं। प्रेम शब्द ही इतना बेतुका और निरर्थक जान पड़ता है।" लेखक ने भारतीय समाज की गहरी पितृसत्तात्मक मानसिकता एवं पाखण्डी सोच को बार–बार उजागर किया है। नारी को दोयम दर्जे का मानने की परम्परा समाज में आजादी के बाद भी समाप्त नहीं है। आज़ादी के बाद औरत सचेत ज़रूर हुई है। समाज में स्त्री ने अपनी चेतनपूर्ण दृष्टिकोण की पैठ जरूर जमाई है और पुरुष प्रधान समाज को अपने होने का अहसास करवाया है। तस्वीर कहानी की विधवा स्त्री ससुर की प्रताड़ना का विरोध बड़ी ही सहजता के साथ करती नजर आती है। ससुर द्वारा उसे बार–बार घर के सामान को बेचने का रोब जमाया जाता लेकिन एक दिन वह ससुर को अपना निर्णय देती है इस बात की पुष्टि माँ के साथ घृणा करने वाली संतान से होती है। बच्चे पापा की तस्वीर के समक्ष जाकर कहते हैं कि – "पापा, माँ कुर्सियाँ–मेज नहीं बेचेगी। तुम्हारी

चीजें घर में ही रहेंगी। पापा, दादाजी ने माँ को बहुत डांटा, बहुत डांटा, मगर माँ नहीं मानी। पापा, हम यहीं पर रहेंगे तुम माँ को पैसे देकर भी नहीं गए, वह इतनी गरीब है।" 'तस्वीर' कहानी के माध्यम से लेखक ने स्पष्ट किया है कि पारम्परिक विधवा बहु भी प्रगतिशील विचारों को स्वीकार कर विद्रोह कर सकती है। 'तस्वीर' कहानी भारतीय नारी के बदलते तेवर को दर्शाती है।

राजनीतिक सन्दर्भ में भीष्म जी का चिन्तनपरक दृष्टिकोण

1960 के बाद राजनीतिक स्थितियों ने जो करवटें ली और उसमें जो परिवर्तन आये उसने भीष्म जी की चेतना को प्रभावित किया है। मूलतः साठोत्तरी कहानी राजनीतिक स्थितियों की दृष्टि से स्वप्न भंग की ही कहानी है। आजादी के बाद का वातावरण भी विषैला एंव दमघोंटू ही था। जिनके भी हाथों में राजनीतिक सत्ता आई उसने ही भारतीय जनता को कोरे आश्वासनों की खेरात बांटी। भीष्म की कहानियाँ स्पष्ट करती है कि आज़ादी के बाद जनता का भ्रम टूट गया। देश के आम आदमी को समझ में आ गया कि आज़ादी मूलतः देश के पूंजीपतियों, भ्रष्ट नेताओं, रिश्वतखोर अफसरों और सुविधा भोगियों के लिए है। आम आदमी पहले से ज्यादा संकटग्रस्त हुआ। सरेआम जनता पर ही शक किया जाने लगा। प्रेम की भाषा बोलने वाली आम जनता के सपनों को तोड़ा गया। राजनीतिक विवादों में जनता पहले भी पिसती रही और आज़ादी के बाद भी पिसती रही। लेखक ने राजनीतिक परिप्रेक्ष्य एवं व्यवस्था का चेहरा 'वाङ्चू' कहानी में बेनकाब किया है। इस समाज में वह भी राजनीति का शिकार होता है जो राजनीति से बिलकुल अनभिज्ञ है। आपसी राष्ट्रों के मतभेदों से किस प्रकार सामान्य वाङ्चू जैसे बौद्ध भिक्षु राजनीति का शिकार होते हैं, इसका चित्रण भीष्म साहनी ने बड़ी बारीकी से किया है। बौद्ध ग्रन्थों के अध्ययन हेतु भारत में आए वाङ्चू को न श्रीनगर में आने वाले नेहरु जी में रुचि रखता है और न ही अपने देश की राजनीति में। श्रीनगर में नेहरू जी के आने पर लोग उत्सुक थे, वहीं वाङ्चू संग्रहालय में जाने की रूचि को दर्शाता है। लेखक के एक साथी ने वाङ्चू से पूछा कि नेहरू जी कैसे लगे। लेकिन वह विशेष रूचि न दिखाकर केवल अच्छा कहकर संग्रहालय की ओर रूखस्त करने में ज़्यादा रूचि दिखाता है। तभी लेखक का मित्र कहता है कि "यार, किस बूदम को उठा लाये हो ? यह क्या चीज़ है ? कहाँ से पकड़ लाये हो इसे ? ...... वाह, देश में इतना कुछ हो रहा हो और इसे रूचि ही न हो। .... अरे बाढ में जाये ऐसी पढ़ायी! वाह जी, जुलूस को छोड़कर म्युज़ियम की ओर चल दिया है।"

भारत के परिवेश से प्रेम करने वाला, सारनाथ को अपनी आत्मा मानने वाला वाङ्चू भारत और चीन की आपसी मुठभेड़ में पिस जाता है। सबसे मार्मिक स्थिति यह है कि आपसी राष्ट्रों के मतभेदों में एक ईमानदार व्यक्ति गुमनाम मर जाता है और समाज में एक दो व्यक्ति को छोड़ उस पर आँसू बहाने वाला कोई नहीं होता है। कहानीकार ने कहानी में कहा भी है 'कैंटीन का रसोइया' संसार में शायद यही अकेला जीव था जिसने वाङ्चू की मौत पर आंसू बहाए थे। युद्व की आड़ में वाङ्चू जैसे कई सामान्यजन पिस कर मर जाते होंगे शायद ही उनकी मृत्यु पर कोई आँसू बहाने वाला होता होगा। लेखक इस कहानी के माध्यम से राजनीति के घिनौने चेहरे को बेनकाब करना चाहता है। राजनीति में मानवीयता का स्थान नहीं के बराबर होता है। इसलिए ही भारत और चीन में बार–बार आवाजाही के लिए वाङ्चू पर शक किया जाता है। राजनीति की इस व्यवस्था में वाङ्चू की शोध से भरी ट्रंक भी उसकी नहीं रहती है और उस ट्रंक के कागज़ों को बनारस से दिल्ली भेजा जाता है। कागज़ों को बड़ी गहराई से देखा जाता है कुछ न मिलने पर भी उन कागज़ों पर बार–बार शक

किया जाता है। वाङ्चू को जब पता चलता है कि उसके कागज़ों को दिल्ली भेज दिया है तो वह सिर से पैर तक काँप जाता है। पुलिस–अधिकारी और वाङ्चू का संवाद दृष्टवय है "वे मेरे कागज आप मुझे दे दीजिए। उन पर मैंने बहुत कुछ लिखा है, वे बहुत ज़रूरी हैं। मुझे इन कागज़ों का क्या करना है, आपके हैं, आपको मिल जायेंगे।" वाङ्चू कहानी राजनीति के अमानवीय चेहरे को बेनकाब करने वाली कहानी है।

आर्थिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी की कहानियों का चिन्तनपरक दृष्टिकोण

भीष्म साहनी की कहानियों में स्वातंत्र्योत्तर भारतीय जनजीवन के आर्थिक पक्ष का भी चित्रण मिलता है। बदलते परिवेश में आर्थिक स्थितियों ने जीवन मूल्यों में भी परिवर्तन लाया है। वर्तमान समय में पैसा जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण मूल्य बन गया है। पैसे की भाषा बोली जाती है। पैसे के आधार पर ही सम्बन्ध बन और बिगड़ रहे हैं। बदलते आर्थिक मूल्यों के कारण संयुक्त परिवार की संकल्पना ही समाप्त होती जा रही है। व्यक्ति के जीवन और व्यवहार में मान्यताओं के मानदंड आज अर्थसत्ता ही तय करने लगी है। बढ़ते हुए अर्थकरण का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण भीष्म की चीफ की दावत कहानी में झलकता है। कहानी में शाम नाथ आर्थिक मोह में इतना तल्लीन हो चुका है कि वह अब रिश्तों की मिठास और माँ के वात्सल्य प्रेम को भी भूल चुका है। वात्सल्य की प्रतिमूर्ति शामनाथ के लिए वस्तु बन जाती है इसलिए बूढ़ी मां को और वस्तुओं की भांति ही सजाने और संवारने में पति पत्नी चिन्तित दिखाई देते हैं। शामनाथ जिस कम्पनी में काम कर रहा है वह अमेरिकन कंपनी है जो भारत से मुनाफा कमा कर विदेश ले जा रही है। भारत का नवोदित मध्यवर्ग उसमें काम करके उसी तरह 'सुखसाज' महसूस कर रहा है जिस तरह भारतेंन्दू हरिशचंद्र ने अपनी मशहूर रचना, भारत दुर्दशा में दर्ज किया था 'अंग्रेज़ राज सुख साज सजे सब भारी। धन विदेश चलि जात इहै अति ख्वारी।' भीष्म जी की कहानी में शामनाथ ऐसी ही कंपनी में प्रमोशन के लिए अपने बॉस को दावत देकर उसे खुश करने की जुगत कर रहा है। "आखिर पाँच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज़, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल, सब बरामदे में पहुँच गये। ड्रिंक का इन्तज़ाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलँगों के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गयी, माँ का क्या होगा?

शामनाथ तरक्की एवं पैसे के पीछे इतना अन्धा हो चुका होता है कि माँ का व्यवहार ही उसे पसन्द नहीं आता है। बेटे की बेरुखी को देखकर माँ हरिद्वार जाने का निर्णय करती है। लेकिन बेटा हरिद्वार बदनामी के डर से मना करता है। प्रमोशन के अपने अवसर को और अधिक मज़बूत करने के इरादे से ही वह मां को वृद्वावस्था में भी, चीफ के लिए 'फुलकारी' बना देने को मजबूर करता है, "माँ तुम मुझे धोखा देके यूं चली जाओगी। मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा तो मुझे तरक्की मिलेगी!" इस कहानी के माध्यम से लेखक ने स्पष्ट किया है हमारे समाज में एक ऐसा वर्ग है जो रिश्तों को जीता है, इन्हें निभाने के लिए हर संघर्ष का सामना करता है। जैसे बेटे की तरक्की की खातिर नज़रें कमज़ोर होते हुए भी फुलकारी बनाने का प्रण करती है। वही दूसरा वर्ग हमारे समाज का पढ़ा–लिखा मध्यवर्ग है जो तरक्की और पैसे की मज़बूती हेतु रिश्तों को बाज़ार में लाता है।

'वाङ्चू' कहानी का पात्र भी आर्थिक रूप से कमज़ोर था। कहानी में वाङ्चू लेखक को सरकार से अनुदान का छोटा–मोटा प्रबन्ध करने के लिए पत्र लिखता नज़र आता है। लेखक दिल्ली से उसके अनुदान का प्रबन्ध करवाता भी है।

'तस्वीर' कहानी के माध्यम से लेखक ने स्त्री की आर्थिक कमज़ोरी को दर्शाया है। आर्थिक रूप से कमज़ोर स्त्री की परनिर्भरता स्वभाविक है। सदियों से आज तक नारी को आर्थिक कमज़ोरी ने ही दूसरों पर निर्भर रहने पर अत्याधिक मजबूर किया है। लेखक विधवा स्त्री के माध्यम से सम्पूर्ण स्त्रियों को जागरूक करने का पक्षधर है लेखक का मानना है कि आर्थिक परनिर्भरता महिलाओं को कभी भी अपने पैरों पर खड़ा नहीं होने देगी। 'तस्वीर' कहानी की विधवा स्त्री गरीबी के कारण दो जून की रोटी हेतु तथा बच्चों के पोषण हेतु ससुर पर निर्भर रहती है। आर्थिक कमज़ोरी के कारण ही वह ससुर द्वारा मानसिक प्रताड़ना सहने को मजबूर है। ससुराल में वह उपेक्षणीय व्यवहार को सहन करती ही है, लेकिन संतान का प्यार भी प्राप्त नहीं कर पाती है। विधवा स्त्री के बच्चों को भी यही लगता है कि माँ ही गलत है, वह पापा से प्रेम नहीं करती है इसलिए उनकी मृत्यु के बाद घर का समान भी बेच रही है। माँ की मनःस्थिति को छोटे बच्चे नहीं समझ पाते हैं। पापा की तस्वीर के समक्ष जाकर माँ की शिकायत लगाते हैं, इस तरह माँ का हृदय गरीबी की हालत में और छलनी होता है। आर्थिक रूप की विवशता ही विधवा स्त्री को चुप रहने को मजबूर करती है, लेखक ने इस पात्र के माध्यम से स्पष्ट किया है कि आधुनिक स्त्री चुप रहने वाली नहीं है और न ही विवशता की टोकरी सिर पर लाद जीवन का निर्वाह कर सकती है। ससुर द्वारा बार–बार पैसों से सम्बन्धित तंज कसना विधवा स्त्री को सहन नहीं होता है और कहानी के अन्त में बड़ी सहजता से ससुर के व्यवहार के प्रति विरोध करती है। बच्चों का पापा की तस्वीर के समक्ष का संवाद माँ की गरीबी को इस प्रकार व्यक्त करता है "पापा, माँ कुर्सियाँ–मेज़ नहीं बेचेगी। .... तुम्हारी चीजें घर में ही रहेंगी। पापा, दादाजी ने माँ को बहुत डांटा, बहुत डांटा, मगर माँ नहीं मानी .... पापा, हम यहीं पर रहेंगे ..... तुम माँ को पैसे देकर भी नहीं गए, वह इतनी गरीब है।" भीष्म साहनी के कहानियों के पारम्परिक स्त्री पात्र अन्याय नहीं सहते हैं, इसलिए विद्रोह के भाव उनमें बड़ी ही सहजता से पैदा हो जाते हैं। लेखक की चेतना इस बात का भी प्रमाण है कि स्वतन्त्रता के बाद की स्त्री अपने पैरों पर खड़े होना जानती है, इसलिए ससुर के किसी भी प्रकार के तानों को सहन करने के पक्ष में नहीं है। कहानी के प्रारम्भ में आर्थिक रूप से कमज़ोर होने के कारण विधवा स्त्री शोषण को सहन करती है लेकिन जागरूक होने के पश्चात विद्रोह का बिगुल भी बजाती है।

कहानी में ससुर गुज़ारा चलाने के लिए उसे घर की सारी चीज़ें बेच देने के लिए आदेश देते हैं। तब वह विधवा स्तब्ध रह जाती है। साहनी जी विधवा के प्रति सहानुभूति रखने वाले सुधारवादी दृष्टिकोण के कहानीकार थे। उन्होंने इस प्रसंग को इस विधवा नारी के मुख से इस रूप में प्रस्तुत कराया है – "जी नहीं, मैं छोटा–मोटा काम ढूँढ लूँगी।" यहां पर साहनी ने विधवा के प्रति थोड़ी सहानुभूति व्यक्त करते हुए, यह बताने का प्रयत्न किया है कि वह परिजनों के आतंक के साथ कर्मठ बनकर अपने बच्चों का पालन और जीवन यापन करना चाहती हैं। लेखक विधवा नारी के विडंबनापूर्ण जीवन से अवगत करवाने के साथ–साथ उसकी आर्थिक विषमता को भी चित्रित करते हैं।

भीष्म साहनी मानवतावादी कहानीकार हैं। वह परंपरित मूल्यों एवं संस्कृति के पुजारी हैं। साहनी अपनी मानवता को विश्व की मानवता का अंग समझते हैं। ईश्वर एवं धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण वैज्ञानिक है। वे किसी भी अनिर्वचनीय, अलौकिक सत्ता पर विश्वास नहीं करते हैं और न ही वे रूढ़िगत धर्म के उपासक हैं। मनुष्यता ही उनका सबसे बड़ा धर्म है और भारतीय संस्कृति की वह ही आधारशिला है। भीष्म साहनी की सभी कहानियाँ मानवता की कहानियाँ हैं। 'वाङ्चू' कहानी के द्वारा लेखक विश्व प्रेम की स्थापना करता है। भीष्म साहनी संस्कृतियों के आदान–प्रदान के द्वारा प्रेम को बांटने के पक्षधर है। 'वाङ्चू' एक ऐसा पात्र है जो बौद्व धर्म के ग्रन्थों का अध्ययन करता रहता है। वह भारत में मतवाला

बना घूमता रहता है। महाप्राण की भक्तिपूर्ण कल्पना में इतना डूब चुका था कि वह सारनाथ में ही रहने लगा था। 'वाङचू' संस्कृति से प्रेम करने वाला ईमानदार व्यक्ति था। वह एक ऐसे शोधार्थी के रूप में उभरता है जो भारत एवं चीन के सांस्कृतिक सम्पर्क की बहुमूल्य कडी को जोड़ता है। 'वाङचू' जब चीन जाता है तो वहां के लोग भारत की संस्कृति के बारे में उत्सुकता दिखाते हैं – '' वहाँ 'वाङचू' देर तक लोगों को भारत के बारे में बताता रहा। लोगों ने तरह–तरह के सवाल पूछे, रीति–रिवाज के बारे में, तीर्थों, मेलों–पर्वों के बारे में, 'वाङचू' केवल उन्ही प्रश्नों का उत्तर दे पाता, जिनके बारे में वह अपने अनुभव के आधार पर कुछ जानता था।'' भारत–चीन के बीच 'वाङचू' गौण रूप से मानवता के धर्म का पालन कर रहा था। लेकिन 'वाङचू' को इस धर्म के अनुपालन का खतरा भी उठाना पड़ता है कि प्रशासन द्वारा उस पर सन्देह किया जाता है।

7.4 सारांश :

मूलतः भीष्म साहनी की कहानियों के माध्यम से स्पष्ट होता है कि भीष्म साहनी ने अपने युग की परिस्थितियों को समझा है। कहानीकार का दृष्टिकोण मानवतावादी है। वह भारतीय समाज के मध्यवर्गीय समाज के अन्तर्विरोध को व्यक्त करता है। लेखक ने मध्यवर्गीय समाज के बदलते जीवन मूल्यों को अभिव्यक्त किया है और साथ ही में आर्थिक मोह में संलिप्त होने के कारण अपने दायित्वों को भूलते जा रहे मध्यवर्गीय समाज के प्रति चिन्ता जताई है।

7.5 कठिन शब्द :

1. अंतर्विरोध
2. धीरज
3. निरक्षर
4. दृष्टवय
5. चिन्तनपरक

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. भीष्म साहनी एक चिन्तनपरक कहानीकार हैं। सिद्ध कीजिए।

2. भीष्म साहनी की कहानियों में कहानीकार के चिन्तन पर प्रकाश डालिए।

3. सामाजिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी जी के चिन्तनपरक दृष्टिकोण को रेखांकित कीजिए।

4. राजनीतिक एवं आर्थिक सन्दर्भ में भीष्म साहनी की कहानियों के चिन्तन पर प्रकाश डालिए।

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ ....

1. आलोचना त्रैमासिक पत्रिका : भीष्म स्मृति अंक – 2004, अंक – 17–18, अप्रैल–सितम्बर
2. भीष्म साहनी की कहानियों में मानवीय संबंध – डॉ. संजय गडपायले
3. भीष्म साहनी की प्रमुख कहानियों में 'व्यवस्था' का चित्रण – डॉ. के. श्याम सुन्दर
4. हिन्दी कहानी रचना और परिस्थिति – सुरेन्द्र चौधरी
5. भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य – डॉ. विवेक द्विवेदी
6. भीष्म साहनी के उपन्यासों में संवेदना और शिल्प – डॉ. शर्मिष्ठा आई. पटेल

*****

'चीफ की दावत', 'वाङ्चू', 'तस्वीर' कहानियों की मूल संवेदना

8.0 रुपरेखा

8.1 उद्देश्य

8.2 प्रस्तावना

8.3 भीष्म साहनी की कहानियों की मूल संवेदना

8.3.1 'चीफ की दावत' कहानी की मूल संवेदना

8.3.2 'वाङ्चू' कहानी की मूल संवेदना

8.3.3 'तस्वीर' कहानी की मूल संवेदना

8.4 सारांश

8.5 कठिन शब्द

8.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ/पुस्तकें

8.1 उद्देश्य :

– संवेदना के विषय में जान सकेंगे।

– भीष्म साहनी की कहानियों की मूल संवेदना के विषय में जान सकेंगे।

– भीष्म साहनी की कहानियों में बिखरते मानवीय सम्बन्धों की पड़ताल की जा सकेगी और वर्तमान समय में सम्बन्धों में बिखराव के कारण क्या है और व्यक्ति समय की इस दौड़ में संवेदनहीन क्यों होता जा रहा है, यह भी जान सकेंगे।

8.2 प्रस्तावना – भीष्म साहनी प्रगतिवादी विचारधारा के कहानीकार हैं। मानवीयता ही उनके साहित्य का प्रमुख स्वर रहा है। इन्होंने भारतीय समाज के पिछड़े वर्ग की संवेदनाओं को व्यापक रूप में अपनी कहानियों में अभिव्यक्त किया है। भारतीय मध्यवर्ग जीवन का खोखलापन, उसकी विकृतियां और विसंगतियाँ इनकी कहानियों में बेनकाब हुई है। भीष्म जी का समस्त जीवन उनकी गहरी निष्ठा का प्रतीक है। नवीन जीवन मूल्यों को स्वीकारती उनकी कहानियों में अपूर्व क्षमता है। आज का व्यक्ति जिन कठिन स्थितियों से गुज़र रहा है और जिन अंतर्विरोधी ज़िंदगी की पीड़ाओं को लेकर जी रहा है, भीष्म जी की कहानियाँ उसी ज़िंदगी के जीवन–मूल्य और मानवीय संबंधों की खोज है, मानवीय संबंध और संवेदनाओं को अंकित करने वाली इनकी कहानियों में जीवन–मूल्यों को बड़ी सूक्ष्मता और गहराई से चित्रित किया है।

8.3 भीष्म साहनी की कहानियों की मूल संवेदना – 'संवेदना' शब्द आज मनोविज्ञान और साहित्य, दोनों क्षेत्रों में विशेष प्रचलित शब्द है। दोनों क्षेत्रों में इस शब्द के भिन्न–भिन्न अर्थ लिए जाते हैं। मनोविज्ञान में संवेदना का अर्थ – 'ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव' ऐसा होता है। साहित्य में इस शब्द का अर्थ 'मानव–मन की गहराइयों में हिन्दी उदात वृत्तियाँ' ऐसा एक विशाल अर्थ लिया जाता है यह वृत्तियाँ ही मूलतः मनुष्य की अनुभूति हैं जो ज्ञानेन्द्रियों की अनुभूतियों तक ही सीमित नहीं हैं। संस्कृत शब्दकोश में संवेदना का अर्थ–जीवन का व्यापक अनुभव, ज्ञान या अनुभूति ही संवेदना है। अतः संवेदना व्यापक अर्थ में 'अनुभूति' का भी व्यंजक शब्द है। हिन्दी शब्दकोश में डॉ. हरदेव बाहरी ने संवेदना का अर्थ – 'सुख–दुःख की अनुभूति या प्रतीति' माना है।

मनुष्य मूलतः संवेदनशील प्राणी है। संवेदना मानव के अंतर्मन की सर्वाधिक पवित्र भावना है। व्यक्ति के व्यक्तिगत अनुभव को उसकी वैयक्तिक संवेदना कह सकते हैं। यदि जीवन में संवेदना न हो तो मनुष्य पाषाण हो जाता है। दूसरों के सुख–दुःख को कोमलता से महसूस करनेवाला हृदय ही न रहा तो मनुष्य के पास मनुष्य कहलाने के लिए कुछ भी नहीं बचेगा। संवेदना मानवहृदय की अमूल्य संपदा है। संवेदना मनुष्य की पहचान है।

साहित्य की संवेदना से सीधा अभिप्राय हम उस अनुभूति से लेते हैं जो परिस्थिति विशेष में सर्जक के हृदय को द्रवीभूत करती है और परिवेश की भयावह स्थितियों को दूर करने के लिए प्रेरित करती है। मूलतः साहित्य मनुष्य की भावात्मक अभिव्यक्ति है। मनुष्य की यही भावात्मक संवेदना या मनुष्यगत संवेदना साहित्य में संवेदना कही जा सकती है। बिना संवेदना के साहित्य सृजन नहीं होता। संवेदनशील मनुष्य का ज्ञान, चिंतन, दर्शन, विज्ञान सब जीवन में आत्मसात होता है, फिर वह मानव संवेदना का अंग बनकर शक्तिशाली साहित्य के रूप में उभरता है। साहित्य मानव हृदय से सम्बन्धित होता है, क्योंकि साहित्यकार की संवेदना हृदय से निकलती है और पाठक के हृदय तक पहुँचती है। एक हृदय से दूसरे हृदय तक की इस यात्रा में संवेदना की अहम भूमिका रहती है। हृदयगत अनुभूति के विस्तार का माध्यम साहित्य है।

भीष्म साहनी संवेदनशील कहानीकार हैं। वह एक ऐसे प्रगतिशील विचारक हैं जो प्राचीन और नवीन पीढ़ी के बीच खड़े हैं। अनुभूत सत्यों को लेकर चलने वाली उनकी कहानियों में सामाजिक और वैयक्तिक स्तर पर मानवीय सम्बन्धों की पहचान व्यक्त हुई है। इनकी कहानियों के पात्र अपनी पीड़ा, अभावों और आकाक्षाओं को बखूबी छिपाते हुए सामान्य जन के बहुत करीब पहुँच जाते हैं। इनकी कहानियाँ न सिर्फ हमें जीवन के दर्शन कराती हैं बल्कि साथ–साथ

में हमें सचेत भी करती जाती हैं। हमारे भीतर दायित्व बोध की भावना को जाग्रत करती चलती हैं। हमारी अनुभूतियों को और संवेदनशील बनाती हैं। चीफ की दावत, वाङ्चू और तस्वीर अत्यधिक संवेदनशील कहानियाँ हैं। यह तीन कहानियाँ व्यक्ति को भीतर तक झंकृत करती हैं।

8.3.1 **'चीफ की दावत' कहानी की मूल संवेदना** – भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' मध्यवर्गीय समाज के परिवेश और मानसिकता को वास्तविकता के साथ अभिव्यक्त करती है। इस कहानी के माध्यम से लेखक ने बुजुर्गों की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है। आधुनिक दौर में किस तरह परिवार में बुजुर्गों को हाशिये पर धकेला जा रहा है। आधुनिक दौर के मध्यवर्ग का व्यक्ति आगे बढ़ने की चाह में दौड़ता जा रहा है और आगे बढ़ने की होड़ में पारिवारिक एवं सामाजिक सम्बन्धों की बलि चढ़ाता जा रहा है। (पैसे) अर्थ की लालसा में व्यक्ति संवेदनहीन बनता जा रहा है। मशीन और बिजनेस के इस युग में व्यक्ति भी मशीन बन चुका है।

नगरों–महानगरों के लोग पारिवारिक मूल्यों की खिल्ली उड़ाते नज़र आते हैं। ऐसे में वे भूल जाते हैं कि जीवन कितना खोखला होता चला गया है। बुजुर्गों एवं परम्परा के प्रति असंवेदनशीलता से उनके जीवन में ममता, दया, करुणा, सहानुभूति जैसे जीवन के मूलभूत तत्व लुप्त होते जा रहे हैं। चीफ की दावत, वाङ्चू और तस्वीर कहानी इसी यथार्थ को उभारती हैं और मध्यवर्ग की कुण्ठाओं, घुटन, बिखराव को यथार्थ के धरातल पर रेखांकित करती हैं। खोखली मर्यादाओं, बाह्य आडम्बरों और आरोपित नैतिकता के प्रति भीष्म साहनी का दृष्टिकोण व्यंग्यपूर्ण रहा है। 'चीफ की दावत' कहानी आधुनिक दौर में बुजुर्गों की पीड़ा को वाणी देती है। मध्यवर्गीय व्यक्ति की अवसरवादिता, उसकी महत्वकांक्षा में पारिवारिक रिश्ते के विघटन को उजागर करना इसका मुख्य उद्देश्य है। लेखक इस कहानी के माध्यम से स्पष्ट करता है कि आज व्यक्ति उच्च वर्ग में शामिल होने के अवसरों की तलाश में रहता है। ऊँचा बनने और अत्यधिक पैसे प्राप्त करने की चाह ने व्यक्ति को भीतर से खोखला बना दिया है। इस कहानी में आधुनिकता और परम्परा का द्वन्द्व सहज ही देखा जा सकता है। एक ओर नए–नए आधुनिक बने बाबू शामनाथ और उसकी पत्नी है, वहीं दूसरी ओर फालतू सामान की हैसियत में तब्दील माँ है। मध्यवर्गीय जीवन का एक विचित्र अंतर्विरोध है कि वह परम्पराओं को छोड़ नहीं पाता और आधुनिक बनने की ओर ललचाई नज़रों से निहारता है। बड़े–बूढ़ों के प्रति अतिसंवेदनशीलता, ममता, दया, करुणा के लोप से जीवन का वास्तविक अर्थ ही अर्थहीन होता जा रहा है। 'अर्थ' को जीवन का शगल मानने वाले श्रवण कुमार शामनाथ की उस मानसिकता का अर्थ व्याख्यायित किया गया है जिसमें पुत्र मां को पहले तो अर्थहीन समझकर अपने मुताबिक में सेट करना चाहता है परन्तु जब बॉस उसे माँ का अर्थ समझाता है तो शामनाथ माँ का महत्त्व अपने स्वार्थ की कसौटी पर ही समझता है। शामनाथ के लिए माँ प्रमोशन की सीढ़ी मात्र है। निःसंदेह वह अभी तक माँ के अर्थ को नहीं समझ पाया था। भीष्म जी की पैनी दृष्टि एक मार्मिक चित्र खींचती है– ''शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आये और माँ को आलिंगन में भर लिया। – ओ मम्मी! तुमने तो आज रंग ला दिया!'' ''साहब तुमसे इतना खुश हुआ कि क्या कहूँ। ओ अम्मी! अम्मी।'' कहानी का केन्द्र बिन्दु शामनाथ की समस्या तरक्की की नहीं बल्कि तरक्की के आगे आने वाली 'समस्या' मां है। उसकी यह चिंता है कि प्रदर्शन के अयोग्य माँ को प्रदर्शन की वस्तु कैसे बनाया जाये। शामनाथ का व्यवहार इस बात का द्योतक है कि वह संस्कारों की भी प्रदर्शनी लगाने

में विश्वास रखता है। शामनाथ को लगा कि घर में माँ को छिपाया नहीं जा सकता और उसे पड़ोस की विधवा के घर भेजने से भी उसकी नाक कट जाएगी, तब उसे यह चिन्ता सताने लगी कि चीफ के आने पर माँ कहाँ बैठेगी, कौन से कपड़े पहनेगी और कौन–सा ज़ेवर पहनेगी। माँ के साथ उसकी बातचीत बड़ी रोचक एंव अर्थगर्भित है– "और माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना, फिर जब हम यहाँ आ जायें, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना। माँ अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगी। फिर धीरे से बोली – अच्छा बेटा।" शामनाथ के लिए माँ कठपुतली बन चुकी थी। जिसे वह अपने हिसाब से बैठाना, संवारना और बुलवाना चाहता था। शामनाथ का अपनी माँ के प्रति व्यवहार हृदय को द्रवित करने वाला है। जिसे माँ ने अपने ज़ेवर बेचकर शामनाथ को इतनी दूर पहुँचाया, आज उसी बेटे के लिए वही माँ महत्त्वहीन बन चुकी है। वर्तमान समय में सम्बन्धों को स्वार्थ के तराजू पर तौला जाता है, चाहे वह फिर माँ ही क्यों न हो।

प्रस्तुत कहानी बहू और बेटे के फूहड़ व्यवहार एवं क्षुद्र सोच को दर्शाती है। इतना पढ़ लिखकर आज का व्यक्ति बुद्धिहीन होता जा रहा है। संवेदनहीन होता जा रहा है, वह प्रेम की भाषा के अलावा स्वार्थ की भाषा बोलता है। जब शामनाथ और उसकी पत्नी घर को डेकोरेट करने के लिए माँ को उचित स्थान पर सेट करने को व्यग्र होता है। संपन्नता एवं प्रदर्शन हेतु माँ को कुर्सी पर कैसे बैठाने के साथ–साथ माँ को सफेद सलवार कमीज़ और चूड़ियाँ पहनने का निर्देश देता है। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले "आओ माँ, इस पर ज़रा बैठो तो। माँ माला संभालती, पल्ला ठीक करती उठीं, और धीरे–धीरे से कुर्सी पर आकर बैठ गयीं। यूँ नहीं, माँ टाँगें ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते, यह खाट नहीं है। माँ ने टाँगें नीचे उतार लीं।" जिस माँ ने बेटे को अपनी पहली ऊँगली पकड़ाकर चलना सिखाया, सहारा दिया, दुनिया को पहचानने की समझ दी, उस बेटे को आज पैसे के लोभ और अंग्रेज़ियत मिजाज़ ने इतना अन्धा बना दिया है कि उसे जीवन का सही अर्थ समझ नहीं आ रहा है।

शामनाथ की एक समस्या हल होती और दूसरी समस्या की गठरी खुल जाती। वह सम्पन्नता प्रदर्शन के द्वारा चीफ पर अपनी धाक जमाना चाहता है, इसलिए वह माँ को सफेद सलवार–कमीज़ और चूड़ियाँ पहनने को मजबूर करता है। माँ और बेटे का संवाद, पुत्र की बुद्धिमत्ता और मां की स्थिति की मार्मिकता को दर्शाता है – "चूड़ियां कहां से लाऊं बेटा, तुम तो जानते हो, सब ज़ेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए' यह वाक्य शामनाथ को तीर की भांति चुभा। वह उत्तर में कहता है, "जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।" भौतिकता की इस आँधी के थपेड़ों से माँ रूपी परम्परा ज़ख्मी हो रही है। संवेदनशीलता के साथ लेखक परम्परा के महत्त्व को स्थापित करता है। यह कहानी पाठक को सोचने पर विवश कर देती है कि अर्थ के इस युग में संस्कार और नवीन मूल्यों को कितना समझा जा सका है। तथाकथित विकसित, आधुनिक सभ्य समाज का जो यांत्रिक युग चल रहा है उसमें सब कुछ इमेडिएट (तत्काल) प्राप्त करना ध्येय बनता जा रहा है। पैसे को ही जीवन का अर्थ समझने वाला सुपुत्र माँ को गुसलखाने से भी एक पायदान नीचे का दर्जा देने से भी नहीं हिचकता है।

शामनाथ की इस चीफ की दावत में माँ उपहास का माध्यम बनती है। पूंजीवादी आधुनिकता बोध और

यथार्थवादी विचारधारा के अन्तर्विरोध यहाँ खुलते हैं। शामनाथ द्वारा दी गई दावत में पुरुष और महिलाएं बेहिचक शराब पीते हैं। यहां तथाकथति अभिजात्य समाज की मर्यादाएं और सदाचार को तार–तार कर दिया जाता है। माँ को उपहास का केन्द्र बनाते हुए भी शामनाथ को लाज नहीं आती। जब वह माँ को आदेश देता है "माँ हाथ मिलाओ!" बात यहीं नहीं समाप्त होती। पराकाष्ठा का चरम बिंदु "हो डू डू" और बरामदा तालियों से गूंज उठा। साहब तालियां पीटना बन्द ही नहीं करते थे। शामनाथ की माँ के प्रति खीझ प्रसन्नता और गर्त में बदल उठी। मां ने पार्टी में नया रंग भर दिया था। माँ की विवशता शामनाथ के लिए प्रसन्नता और गर्व का कारण बनी थी।

देर रात तक पार्टी में से आती ठहाकों की आवाज़ों से माँ का गला रुदने लगा। माँ का अन्तर्मन शामनाथ की दावत से छिल चुका था। बुढ़ापे के समय में वह अपनी पीड़ा कहती भी तो किसे कहती। अपनी संतान ने ही भरी सभा में माँ को उपहास का पात्र बनाया। अपने आप को फालतू महसूस समझने वाली माँ कोठरी के किवाड़ बन्द करके रोने लगी। आसूओं की बाढ़ को पोंछने वाली कोठरी में कोई न था। जीवन भर अपनी खुशियों को परे धकेल अपनी संतान की तरक्की चाहने वाली माँ को बुढ़ापे के समय उपेक्षित व्यवहार झेलना पड़ता है।

दावत की गुडनाइट के पश्चात माँ की जिस दशा का वर्णन भीष्म जी ने किया है वह अत्यन्त मार्मिक है। उन्होंने माँ के घुटन भरे वातावरण को चित्रित किया है। "मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों से छल–छल आंसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार–बार उन्हें पोंछती, पर वे बार–बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बांध तोड़कर उमड़ आए हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझाया भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार–बार आँखें बंद की, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही नहीं आते थे।" इस सन्दर्भ से अनुमान लगाया जा सकता है कि बूढ़ी माँ बेटे के घर में घुट–घुट कर जी रही थी। इस घुटन भरे वातावरण से मुक्ति पाने के लिए वह बेटे से हरिद्वार भेज देने का प्रस्ताव रखती है परन्तु शामनाथ अपनी बदनामी के डर से स्वीकार नहीं करता और तरक्की की लिप्सा तो थी ही उसे।

शामनाथ के साहब को माँ की पुरानी फुलकारी बहुत पसन्द आती है। साहब की चाहत हुई कि उसे भी वैसी ही फुलकारी माँ बनाकर दे। लेकिन माँ की नज़र इस बुढ़ापे में साथ नहीं दे रही थी। माँ को जैसे ही मालूम हुआ कि फुलकारी बनाने से बेटे की प्रमोशन हो जायेगी तो वह तुरन्त बेटे को हाँ करती है। हरिद्वार जाने के प्रस्ताव को भी भूल जाती है। अंतस् को छील देती पंक्तियां माँ के अर्थ को अर्थमान बनाती हैं – "क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कहा है? कहा नहीं मगर देखती नहीं, कितना खुश गया है। कहता था जब तेरी माँ फुलकारी बनाना शुरु करेगी, तो मैं देखने आऊंगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया तो मुझे इससे बड़ी नौकरी मिल सकती है, मैं बड़ा अफसर बन सकता हूं!" मां के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे–धीरे उसका झुर्रियों भरा मुंह खिलने लगा। आँखों में हल्की–हल्की चमक आने लगी।

इस कहानी में शामनाथ की माँ वात्सल्य की प्रतिमा के रूप में चित्रित हुई है और शामनाथ मध्यवर्ग के एक दुनियादार, महत्त्वकांक्षी, खुशामदी, प्रदर्शन–प्रिय, अवसरवादी व्यक्ति के रूप में दिखाई देता है।

8.3.2. 'वाङ्चू' कहानी की मूल संवेदना – वाङ्चू एक संवेदनशील बौद्ध भिक्षु है वह चीन से भारत आया था। वह चीनी शोध छात्र है भारत में वह बौद्ध धर्म के अध्ययन हेतु आया है। वह एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने देश चीन की क्रांतिकारी घटनाओं से बेखबर है। वर्षों से भारतीय बौद्ध विहारों में एकान्त साधना में मग्न रहता है। समसामयिक राजनीतिक घटनाओं और हलचलों से अलिप्त रहकर वह एकांत साधना में रहता है। वह अपनी साधना में इतना आत्मलीन हो जाता है कि बाहर क्या हो रहा है इसका उसे पता भी नहीं होता है। उसकी शोधवृत्ति से प्रभावित होकर भारत में उसे लोगों की सहानुभूति और प्रेम प्राप्त होता है। भारत का प्रेम वाङ्चू को वापिस भारत बुलाता है। संवेदनशील, प्रेम की भाषा बोलने वाला वाङ्चू राजनीतिक व्यवस्था में खूब पिसता है। बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन करने वाला वाङ्चू जब वापिस चीन जाता है तो उसे गहरे तनाव का सामना करना पड़ता है। चीन में वाङ्चू के ऊपर नज़र रखी जानी आरम्भ हो गई। मित्तभाषी वाङ्चू को एक दिन एक आदमी ग्राम–प्रशासन केन्द्र में ले गया। ग्राम–प्रशासन–केन्द्र में पहुँचते ही उससे भारत और उससे सम्बन्धित विभिन्न सवाल पूछे जाने लगे – ''तुम भारत में कितने वर्षों तक रहे ? वहां पर क्या करते थे ? कहाँ–कहाँ घूमे ? आदि आदि। फिर बौद्ध धर्म के प्रति वाङ्चू की जिज्ञासा के बारे में जानकर उनमें से एक व्यक्ति बोला ''तुम क्या सोचते हो, बौद्ध धर्म का भौतिक आधार क्या है?'' वाङ्चू जिस देश में पैदा हुआ वहां उसका दिल नहीं जम पा रहा था। चीन–भारत युद्ध के छिड़ने के बाद अपने मित्रों की सलाह से वह अपने देश चीन को लौट जाता है। पर उसे भारत से लौटता हुआ देखकर चीन की सरकार उसे संदेह के घेरे में ले लेती है। प्रेम को आधार बनाकर जीने वाला वाङ्चू राजनीति की चक्की में पिसता जाता है। अपने देश में ही उसे ऊब होने लगती है। वह वापिस भारत चला आता है लेकिन भावनाओं में संलिप्त वाङ्चू को वापिस भारत में आकर मुँह की खानी पड़ती है। भारत–चीन युद्ध छिड़ जाने के कारण वाङ्चू को चीन का भेदिया समझकर भारत की पुलिस पकड़ लेती है। चीनी होने की हैसियत से वह भारतीय पुलिस द्वारा संदेह की नज़रों से देखा जाता है। बदलते समय और परिस्थितियों के प्रति वाङ्चू इतना अबोध रहता है कि उसकी समझ में नहीं आता कि यह सब क्या चल रहा है। इन अवांछित और विपरीत परिस्थितियों के कारण वाङ्चू की सारी एकांत साधना व्यर्थ होती जा रही थी। इतना ही नहीं अपितु उसके विपत्ति का कारण भी वह बनती है। वाङ्चू के शोधपत्र, किताबों को ज़ब्त कर लिया जाता है। उस पर कड़ी निगरानी रखी जाती है। वाङ्चू अपने कागज़ों के बिना अधमरा हो जाता है। गैर–मौजूदगी में पुलिस के सिपाही उसकी कोठरी से उसकी ट्रंक ले जाते हैं। सुपरिंटेण्डेण्ट के सामने जब कागज़ों की पोटली को खोला गया तो वाङ्चू के शोध पर गहरा सन्देह किया गया। भीष्म साहनी ने व्यवस्था के सन्देह से परिपूर्ण चित्र बड़ी मार्मिकता से उकेरे हैं। ''कहीं पाली में तो कहीं संस्कृत भाषा में उद्धरण लिखे; लेकिन बहुत सा हिस्सा चीनी भाषा में था। साहब कुछ देर तक तो कागज़ों को उलटते–पलटते रहे, रोशनी के सामने रखकर उनमें लिखी किसी गुप्त भाषा को ढूँढते रहे, अन्त में उन्होंने हुक्म दिया कि कागज़ों के पुलिन्दे को बाँधकर दिल्ली के अधिकारियों के पास भेज दिया जाये, क्योंकि बनारस में कोई आदमी चीनी भाषा नहीं जानता था।''

चीन–भारत की लड़ाई बन्द होने के बाद कोई एक महीने के बाद वाङ्चू पुलिस हिरासत से मुक्त हुआ। पुलिस ने उसका ट्रंक वापिस किया। उसमें कोई भी कागज़ात न पाकर वाङ्चू बड़ा हतप्रभ हुआ। पुलिस से

गिड़गिड़ाया– मुझे मेरे कागज़ात वापस कर दीजिए, उन पर मैंने बहुत कुछ लिखा है, वे बहुत ज़रूरी हैं, तो पुलिस वालों ने कहा – ''मुझे उन कागज़ों का क्या करना है, आपके हैं, आपको मिल जायेंगे।'' प्रशासन के इस क्रूर व्यवहार के कारण वह बीमार होता चला गया। वह बीमार तो था ही लेकिन पुलिस अधिकारियों के रवैये से और अधिक मानसिक 'रूप से बीमार होता गया। महीने भर बाद लेखक को खबर मिलती है कि वाङ्चू की मौत हो गई। इससे स्पष्ट होता है कि राजनीति दो देशों के बीच के मानवीय और सांस्कृतिक संबंध को नहीं देख पाती है, हालांकि राजनीति का आधार इसी तरह का सम्बन्ध होना चाहिए। डॉ. किरणबाला के शब्दों में कहें, तो 'वाङ्चू' न चीनी था, न भारतीय, वह मात्र मनुष्य था और इसलिए वह चीनी भी था और भारतीय भी। इस बात को गलत राजनीति ने नहीं समझा और मानवमूल्य की उपेक्षा की गई। राजनीति की इस निर्मम संवेदनशीलता का शिकार बनती है सबसे पहले आदमी के आदमी होने की निष्ठा। सारा ज्ञान, सारी जिज्ञासाएँ उच्चतर लक्षणों के प्रति अर्पित जीवन की सारी ईमानदारी और निःस्वार्थ चेष्टाएँ इस निर्मम राजनीति के समक्ष संदिग्ध बनती हैं।

वाङ्चू को याद करकर रोने वाले बहुत ज़्यादा लोग नहीं थे। लेखक ने जब वाङ्चू की मौत की खबर सुनी तो सबसे पहले उन्होंने सारनाथ जाने का मन बनाया। फिर सोचा गया कि वहां उसका कौन हो सकता है, जिसके सामने जाकर वह अफसोस जतलाए। लेकिन फिर भी लेखक वहां गया और वहां पर उससे मिलने सारनाथ के मंत्री भी आए। मंत्री जी ने कहा – वाङ्चू बड़ा नेक दिल आदमी था, सच्चे अर्थों में बौद्ध भिक्षु था। कैंटीन का रसोइया आया वह भी कहने लगा – बाबू आपको बहुत याद करते थे। बहुत भले आदमी थे कहते–कहते वह रूआंसा हो गया। कहानीकार ने कहा है कि संसार में शायद यही अकेला जीव था जिसने वाङ्चू की मौत पर आंसू बहाए थे। कहानीकार ट्रंक और कागज़ों का पुलिन्दा लिए दिल्ली लौट जाते हैं। लेखक का रास्तेभर वाङ्चू की पाण्डुलिपियों से सम्बंधित सोच विचार अत्यन्त मार्मिकता से भर देता है – ''इस पुलिन्दे का क्या करूँ? कभी सोचता हूँ, इसे छपवा डालूँ, पर अधूरी पाण्डुलिपि को कौन छापेगा? पत्नी रोज़ बिगड़ती है कि मैं घर में कचरा भरता जा रहा हूँ! दो–तीन बार वह फैंकने की धमकी भी दे चुकी है, पर मैं इसे छिपाता रहता हूँ। कभी किसी तख्ते पर रख देता हूँ। कभी पलँग के नीचे छिपा देता हूँ। पर मैं जानता हूँ, किसी दिन ये भी गली में फेंक दिये जायेंगे।''

दो देशों के बीच गलत राजनीति के कारण मानवीय एवं सांस्कृतिक संबंधों की जो स्थिति होती है, यह कहानी उसका सबूत है। इस कहानी में जिस भोले–भाले यात्री का चित्रण किया गया है उसकी सहजता और सरलता मात्र कल्पना से निर्मित नहीं की जा सकती है। जिस ढंग से भीष्म जी ने वाङ्चू के चरित्र को गड़ा है उसे पढ़कर लगता है, ''भीष्म जी कहानी नहीं लिख रहे, भारत और भारत की पुरानी संस्कृति के प्रति अपरिमित जिज्ञासा रखने वाले एक भोले–भाले चीनी यात्री से हमें मिलवा रहे हैं। कहानी के अंत में उसके विश्वास का टूटना या उसका 'हक्का–बक्कापन' कहीं–न–कहीं खुद हमें कचोट जाता है।''

कहानी का अंत होने पर पाठकों के मन में इस संसार की नीरवता और हताशा से गहरा साक्षात्कार होता है जहां किसी की भावनाओं और संवेदनाओं का कोई अर्थ नहीं रह गया है। सारा कुछ भौतिकवादी और उपयोगितावादी

दृष्टि पर ही केन्द्रित हो आया है। वाङ्चू को त्रासदमयी पीड़ा से गुज़रना पड़ा। राजनीति की बिसात पर कुछ सड़े–गले फालतू से कानून कायदों के लिए भोले–भाले वाङ्चू की बलि चढ़ा दी गई। यह कहानी इस का बात का प्रमाण है कि वक्त की कोई भी गर्दिश वाङ्चू को धूमिल नहीं कर पाई। वाङ्चू एक ऐसा पात्र है जो वक्त की भट्ठी में तप कर कुन्दन हो चुका है।

8.3.3. 'तस्वीर' कहानी की मूल संवेदना – 'तस्वीर' कहानी एक ऐसी नारी की विडम्बनापूर्ण करूणा को उजागर करती है जो पति के देहान्त के पश्चात् ससुर की झिडकियों एवं उपेक्षा की शिकार होती है। उसके खुद के बच्चे भी उसकी उपेक्षा करते हैं। अर्थ के अभाव में पारिवारिक जीवन टूटने लगता है। एक ही छत के नीचे रहते हुए भी घर के लोग एक–दूसरे से कोसों दूर हो जाते हैं। पति की मृत्यु के तेरह दिन बाद जब घर खाली हो गया तो इस विधवा की तकलीफें और बढ़ती गई। वह इस सन्दर्भ में कहती है कि "उसके मरने के बाद मैं और भी त्रस्त हो उठी थी। निराश्रय और त्रस्त। छोटे से कद का मेरा ससुर दुबला–पतला, घुटनों तक लम्बा कोट पहने और सिर पर बड़ी सी पगड़ी रखे आगे–आगे चल रहा होता, बगल में कागज़ों की फाइल दबाए, और मैं पीछे घिसटती जाती। मेरा ससुर बड़ी बेरुखी से बोलता था।... उसे विश्वास था कि मैं उसके बेटे की मौत का कारण बनी हूँ।" पति की मृत्यु के पश्चात् ससुर को चाहिए था कि वह बहू के प्रति सहानुभूति के भाव रखे। लेकिन वह आए दिन बहू पर दबाव बनाता रहता। कभी वह मकान को बेचने की बात करता, कभी घर की चीज़ों को बेचने की बात करता रहता है। ससुर बहु का सहारा बनने के बजाए उसका मानसिक शोषण करता रहता। वह हमेशा उसके साथ तीखे शब्दों में बात करता है। दिन भर की कड़वी बातों से बहू डरी–सहमी रहती है। वह पहले से भी और अधिक भयभीत रहती। वह इस कहानी में अपनी विवशता को प्रस्तुत करती है – "मेरी ज़िंदगी की बागड़ोर, जो पहले मेरे पति के हाथ में थी, अब ससुर मुझे हांकने लगा था, जिस भांति उसके जीते–जी मैं उसका मुँह ताका करती थी, उसके चले जाने के बाद ससुर का ताकने लगी थी।" इससे स्पष्ट होता है, भारतीय विवाहिता नारी किस विवशता में जीती है, और कैसे सारी स्थितियों के साथ समझौता करते हुए जीवन व्यतीत करती है, लेकिन उसके प्रति सहानुभूति कोई नहीं रखता है।

ससुर द्वारा उपेक्षित व्यवहार को सहन करने वाली की स्थिति और अधिक पीड़ादायक तब बनती है जब पिता की तस्वीर के समक्ष उसके स्वयं के बच्चे शिकायत करते हैं। आर्थिक विवेचना से भरी घर की स्थिति, बच्चों की परेशानी, ऊपर से ससुर की यातना इन सबसे जूझते–जूझते यह स्त्री यही सोचने लगती है, "उधर उसकी जगह मैं चली जाती तो अच्छा था।" विधवा नारी का इस तरह सोचना स्वभाविक हो जाता है जब वह परिवार एवं समाज में उपेक्षित महसूस करती है।

कहानी का सबसे मार्मिक दृश्य तब उभरता है जब बच्चों का माँ के प्रति दृष्टिकोण बदलता है। वह हमेशा माँ को गलत समझते रहते और घर में पिता की तस्वीर के समक्ष शिकायत लगाते जाते और माँ को दोषी करार देते जाते। लेकिन जब वह ससुर और माँ के विवाद को अपने कान से सुनते हैं तब पिता की तस्वीर के आगे माँ की दयनीय दशा का वर्णन अपनी भाषा में ंकरते हैं – "पापा माँ कुर्सियां–मेज़ नहीं बेचेगी। माँ ने कह दिया तुम्हारी चीज़ें घर में

ंही रहेंगी। पापा, दादा जी ने माँ को बहुत डांटा, माँ नहीं मानी।'' बच्चे यथार्थ स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि ''तुम पैसे देकर नहीं गये, वह इतनी गरीब है......''। बच्चों का स्नेह देखकर माँ की ममता फूट पड़ती है। एक स्त्री को अपने बच्चे के हृदय में अपने प्रति अपार स्नेह के अलावा और क्या चाहिए, लेखक ने नारी की सहनशक्ति का परिचय प्रस्तुत कहानी की नायिका के चरित्र चित्रण के द्वारा दिया है। लेखक ने नारी की भीतरी पीड़ा को तथा पुरुष प्रधान समाज में हो रही नारी की उपेक्षा को कलात्मक ढंग से व्यक्त किया है। तस्वीर से कहानी का आरम्भ होता है और तस्वीर की मुस्कुराहट के साथ ही कहानी का अन्त होता है। पतिहीन नारी की दयनीय परिस्थिति का चित्रण कहानी में सशक्त रूप से हुआ है।

8.4. सारांश : भीष्म साहनी एक संवेदनशील कहानीकार हैं। इन्होंने चीफ की दावत के माध्यम से बुजुर्गों की उपेक्षा, वाङ्चू के माध्यम से व्यवस्था का भ्रष्ट व्यवहार, तस्वीर कहानी के माध्यम से नारी की पीड़ा को बड़े ही कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त किया है। लेखक जितना संवेदनशील होगा उसकी रचना उतनी विश्वसनीय होगी, इस दृष्टि से भीष्म साहनी एक सफल एवं संवेदनशील कहानीकार के रूप में उभरते हैं।

8.5 कठिन शब्द

1. संवदेना
2. वैयक्तिक
3. उदात्त
4. ज्ञानेन्द्रिय
5. अभिव्यक्ति

8.6. अभ्यासार्थ प्रश्न

1. विवेच्य कहानियों की मूल संवेदना को रेखांकित कीजिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

2. मूल संवेदना के सन्दर्भ में भीष्म साहनी की कहानियों का विवेचन कीजिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

3. भीष्म साहनी एक संवेदनशील कहानीकार हैं, सिद्ध कीजिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

4. भीष्म साहनी की कहानियों में मूल मार्मिक स्थलों पर प्रकाश डालिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

5. भावनात्मक धरातल पर भीष्म साहनी की कहानियों पर प्रकाश डालिए।

____

____

____

____

____

____

____

____

8.7. सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. आलोचना त्रैमासिक पत्रिका : भीष्म स्मृति अंक – 2004, अंक – 17–18, अप्रैल–सितम्बर
2. भीष्म साहनी की कहानियों में मानवीय संबंध – डॉ. संजय गडपायले
3. भीष्म साहनी की प्रमुख कहानियों में 'व्यवस्था' का चित्रण – डॉ. के. श्याम सुन्दर
4. हिन्दी कहानी रचना और परिस्थिति – सुरेन्द्र चौधरी
5. भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य – डॉ. विवेक द्विवेदी
6. भीष्म साहनी के उपन्यासों में संवेदना और शिल्प – डॉ. शर्मिष्ठा आई. पटेल

*****

भीष्म साहनी की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

9.0 रूपरेखा

9.1 उद्देश्य

9.2 प्रस्तावना

9.3 कहानियों का शिल्प

9.3.1 देशकाल और वातावरण

9.3.2 रूप

9.3.3 भाषा

9.3.4 चरित्र शिल्प

9.4 चरित्र

9.4.1 शामनाथ

9.4.2 वाङ्चू

9.4.3 विधवा स्त्री

9.5 सारांश

9.6 कठिन शब्द

9.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ

9.1 उद्देश्य :–

– शिल्प का अर्थ जान सकेंगे।

- भीष्म साहनी की कहानियों में शिल्प किस रूप में उभरा है ।
- विवेच्य कहानियों में कहानीकार ने किस कहानी की अभिव्यक्ति हेतु किस शैली को अपनाया है।
- विवेच्य कहानियों को भाषा के भावानुकूल प्रयोग ने प्रभावी बनाया है, यह जान सकेंगे।

9.2 प्रस्तावना :

सौन्दर्य की अभिव्यक्त को कला कहा जाता है। मानव आदिकाल से ही अपने हृदय की भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए छटपटाता चला आ रहा है। भावनाओं की अभिव्यक्ति जब सौन्दर्य के आधार पर होती है, तो इसे कला नाम से पुकारा जाता है। रचनाकार के लिए अपने कथ्य को कहने का माध्यम शिल्प है। पात्र–योजना, वातावरण, संवाद योजना, भाषा शैली आदि कलात्मक लक्षणों को कला में अपनाया जाता है। शिल्पविधान का प्रयोग जितना सशक्त और संजीव होगा, कहानी उतनी ही अधिक आदर्श मानी जाएगी। शिल्प पाठकों की अभिरूचि के अनुसार साहित्य के चुनाव में केवल सहायक ही नहीं होता, अपितु शिल्पगत विशेषताओं के आधार पर उसे स्थायित्व भी प्रदान करता है। सफल रचनाकार वर्ण्य विषय के प्रति पूर्ण न्याय करते हुए जब रचना को सुन्दर शिल्प देता है, तभी वह रचना श्रेष्ठ होती है। सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, आत्मकथात्मक, ऐतिहासिक कहानियाँ लिखने वाले भीष्म साहनी की कहानियों में शिल्प के नये आयाम उभरे हैं। भीष्म साहनी सामाजिक दायित्व को रचना का प्रमुख लक्ष्य मानते हैं।

9.3 कहानियों का शिल्प :

साहित्य में वस्तु तत्त्व की भांति कला और शिल्प का भी अपना विशिष्ट महत्त्व होता है । कोई भी साहित्यिक कृति वस्तु तथा विचार तत्व की वाहिका होते हुए भी कलात्मक इकाई भी होती है । शिल्प एक ऐसा माध्यम है जो कहानीकार के अनुभव के संसार को सार्थक अभिव्यक्ति प्रदान करता है । शिल्प के विषय में कहा गया है कि ''प्रत्येक अनुभूति को अभिव्यक्ति के लिए उसके अनुरूप एक सक्ष्म रूप या माध्यम चाहिए जिससे वह एक प्रभावी कृति या रचना बन सके ।''

अंग्रेजी में 'क्राफ्ट' शब्द जिस अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है उसके पर्यायी अर्थ में हिन्दी में शिल्प का ही प्रयोग किया जाता है । शिल्प का शब्दशः अर्थ होता है किसी चीज के बनाने का ढंग या तरीका। कोश के अनुसार टेक्नीक के लिए ''शिल्प, विधि, पद्धति, रचना प्रणाली आदि का प्रयोग हुआ है।'' इसी प्रकार से मानक अंग्रेजी–शब्दकोष में टेक्नीक के लिए ''प्रविधि, शिल्प विधान का प्रयोग किया गया है।'' अतः कहा जा सकता है कि शिल्प किसी वस्तु को हाथ से बनाने की पद्धति, यही कारीगरी, कौशल्य और विधि है ।

शिल्प के सन्दर्भ में जैनेन्द्र कुमार का कहना है कि ''टेक्नीक ढाँचें के नियमों का नाम है, पर ढाँचे की जानकारी की उपयोगिता इसी में है कि वह सजीव मनुष्य के जीवन में काम आये ।''

डॉ. शेखावत का कहना है कि ''रचनाकार के सामने सबसे बड़ी चुनौती समय और यथार्थ की अनुभूति को अभिव्यक्त करने की है । अब यह अभिव्यक्ति किस तरह उस यथार्थ को समेटकर उसे पूर्णता और प्रभावी रूप दे सके, यह शिल्प का प्रश्न है।'' इन परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि शिल्प या शिल्पविधि वह पद्धति या विधि है जिसके माध्यम से रचना के लक्ष्य की पूर्ति होती है । आज का कहानीकार प्रचलित शिल्प को त्याग कर रचना के ताने–बाने से मानवीय

संबंधों के बदलाव को अभिव्यक्त करता है और फिर भाषा से उसे बुनता है । इसी बुनावट में भीष्म जी की कहानियों का शिल्प है । समकालीन कहानीकार के दौर में भीष्म साहनी जैसे कहानीकारों ने ही नए शिल्प को लेकर कथा साहित्य की जड़ता को तोड़ा है। कहानी को ठोस सामाजिक आधार देने का कार्य भीष्म जी ने किया है। वे एक प्रगतिशील चेतना सम्पन्न कहानीकार हैं। उनकी समस्त कहानियों में मध्य और निम्नवर्ग के जीवन का चित्रण किया गया है । इन्होंने मध्य और निम्नवर्ग की धार्मिक, आर्थिक, सामाजिक समस्याओं को अपनी कहानी का प्रतिपाद्य बनाया है । इन्होंने सामाजिक, विसंगतियों, संकीर्णताओं और विषमताओं से निराश होकर पलायनवादी रुख अपनाने के स्थान पर उनसे सक्रिय असहमति व्यक्त कर, उनके कारणों की ओर इशारा करने वाली उनकी कहानियों का केन्द्र बिंदु 'व्यक्ति' नहीं बल्कि 'मनुष्य' है। कहानियों में इन्होंने सामंतवादी समाज के इतिहास की खोज की है। इनकी कहानियों का हर पात्र आरोपित संस्कार से संघर्ष करता है और उसका यह संघर्ष समूचे परिवेश से जुड़ जाता है। स्वयं कहानीकार ने स्वीकार किया है कि कहानी का मूल आधार जीवन के यथार्थ का अनुभव है ।

भीष्म साहनी की कहानियों का शिल्पगत विवेचन इस प्रकार है :–

9.3.1 देश काल और वातावरण :

देश काल और वातावरण का चित्रण भावों को जागृत करने में विशेष सहायक होता है । वातावरण की सफल अभिव्यक्ति कहानी का गुण है। कहानी में वातावरण–चित्रण के अनेक पक्ष हैं । इसके अंतर्गत प्रकृति–वर्णनों द्वारा मानसिक परिस्थितियों का वैषम्य या साम्य कथन कहानी के बीच–बीच में बाह्य वातावरण के संकेत और पात्रों की परिस्थितियों का चित्रण व्यापक अर्थ में परिस्थिति–योजना प्रकृति, सज्जा और देशकाल चित्रण तीनों को वातावरण कहा जाता है । वातावरण के कारण ही पाठक का मन कहानी में रमता है, इसी के फलस्वरूप उसका मन भूत से वर्तमान या भविष्य की ओर झुक जाता है । वातावरण का महत्त्व इतना अधिक होता है कि जिस प्रकार रात के अंधेरे में रस्सी में साँप की प्रतीति होती है । उसी प्रकार यथार्थ वातावरण के कारण एक कल्पित कथा भी सत्य की घटना प्रतीत होती है। देशकाल और वातावरण के अन्तर्गत किसी भी समाज की सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, आचार–विचार, रहन–सहन, रीति–रिवाज़ तथा व्यक्ति का आतंरिक संसार–कुण्ठा, काम, भय, अह्म आदि जटिल परिवेश का परिचय मिलता है ।

भीष्म जी की कहानियों में देश, काल और वातावरण भी अपना विशेष महत्त्व रखते हैं । कहानी में देश, काल और वातावरण कहानी के गठन को अस्त–व्यस्त नहीं होने देते हैं। साथ ही कहानी के पात्रों का सीधा संबंध उन स्थितियों से होता है जिस स्थान से वे जुड़े होते हैं । कहानीकार स्वयं पंजाब की मिट्‌टी से जुड़ा हुआ है इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि पंजाब की मिट्‌टी की गंध उनकी कहानियों में है । 'चीफ की दावत' कहानी में पंजाबियत का रंग उभरकर आया है । बूढ़ी माँ के द्वारा गाया गया पंजाबी लोक गीत, 'हरिया जी माये, हरिया नी भैणे, हरिया ते भागी भरिया है' ! और 'फुलकारी' का वर्णन पंजाबी लोगों के रहन सहन और वेश–भूषा को दर्शाता है। भीष्म जी की अनेक कहानियों में पंजाब के साथ–साथ गाँव, नगरों एवं महानगरों के व्यवहार का चित्रण हुआ है। सपाटबयानी जहां उनकी कहानियों के शिल्प का एक अंग है उसी से उनकी कहानियों का शिल्प खुरदुरा है वे कहानी में जो कुछ भी कहना चाहते हैं वह उसी जिन्दगी का है जिसे आज का आदमी जी रहा है । सपाटबयानी 'तस्वीर' कहानी में साफ झलकती है ।

कहानी का आधार वातावरण होता है, लेकिन उसमें वातावरण की सजीवता उसे यर्थाथ रूप प्रदान करती है। आज की कहानी में वातावरण का प्रायः संक्षिप्त और सांकेतिक रूप ही ग्रहण किया जाता है । कहानी में देश, काल और वातावरण कहानी के गठन को अस्त–व्यस्त नहीं होने देता है, साथ ही कहानी के पात्रों का सीधा सम्बन्ध उन स्थितियों से होता है जिस स्थान से वे जुड़े होते हैं। कहानीकार स्वयं पंजाब की मिट्टी से जुड़ा हुआ है । 'चीफ की दावत' कहानी में पंजाबियत का रंग उभरा है। बूढ़ी माँ के द्वारा गाया गया पंजाबी लोक गीत 'हरिया जी गाये, हरिया नी भैणे, हरिया ते भागी भरिया है !' और 'फुलकारी' के वर्णन से पंजाब के लोगों के रहन–सहन और वेश–भूषा को दर्शाया गया है । कहानी के प्रारम्भ में लेखक ने देशगत उपकरणों का चित्रण करते हुए, कमरे का सजीव चित्रण किया है, –''आखिर पाँच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल, सब बरामदे में पहुंच गये । ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में कर दिया गया । अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा।'' इसी प्रकार जब सभी मेहमान शामनाथ के घर पर पहुंच गए तो पार्टी का जो रंग जमा, उसे भी लेखक ने अत्यन्त सजीवता से प्रकट किया है । इसी चित्रण में साहब, मेमसाहब तथा अन्य दोस्तों का व्यवहार और पहनावा आदि का सूक्ष्म एवं यथार्थ चित्रण मिलता है –''दफ्तर में जितना रोब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त–परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेण्ट और पाउडर की महक से ओत–प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की अराधना का केन्द्र बनी हुई थी ।''

लेखक ने पंजाब के साथ–साथ गांव, नगरों एवं महानगरों के व्यवहार का चित्रण भी किया है । इसी कहानी में मध्यवर्गीय लोगों के जीवन की अभिव्यक्ति हुई है । मध्यवर्गीय लोगों का रहन सहन रीति–रिवाज़, खान–पान एवं प्राकृतिक परिवेश का समुचित चित्रण हुआ है । शहरी परिवेश से मध्यवर्ग के लोग जिजीविषाग्रस्त होते हैं । इस परिवेश में जब मेहमानों का स्वागत किया जाता है, तो स्वागत में जिस प्रकार की दावत दी जाती है । उससे स्पष्ट झलकता है कि भारतीय समाज का मध्यवर्ग पश्चिमी सभ्यता की आधी–अधूरी नकल करता हुआ विकसित हो रहा है। इस सन्दर्भ की पुष्टि हेतु कहानी का उद्धरण द्रष्टव्य है ''शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पौंछने की फुर्सत नहीं । पत्नी ड्रेसिंग गाऊन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाये, मुंह पर फैली सुर्खी और पाउडर को भूले और मिस्टर शामनाथ सिगरेट फूँकते हुए, चीजों की फ़ेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ जा रहे थे ।''

वातावरण का बिम्ब अपनी समग्रता के कारण एक पूरा चित्र हमारे सामने उपस्थित कर देता है । इस तरह का वर्णन कहानी को और रोचक एवं स्वाभाविक बना देता है । 'वाङ्चू' कहानी में वाङ्चू के मानसिक वातावरण का चित्रण इस प्रकार है – ''जब वाङ्चू पार्टी – दफ्तर से लौटा, तो थका हुआ था, उसका सिर भन्ना रहा था । अपने देश में उसका दिल जमी नहीं पाया था । ...छप्पर के नीचे लेटा तो उसे सहसा ही भारत की याद सताने लगी। उसे सारनाथ की कोठरी याद आयी, जिसमें दिन–भर बैठा पोथी बांचा करता था, नीम का घना पेड़ याद आया, जिसके नीचे कभी–कभी सुस्ताया करता था।'' भीष्म साहनी की खासियत यह है कि वह समग्र कथा को एक सूत्र में बांधने में सिद्धहस्त है ।

9.3.2 रूप :

रूप की दृष्टि से भीष्म जी की कहानियाँ बहुत ही सुगठित हैं । सुगठित रूप के कारण ही इनकी कहानियों में कहीं भी बनावट नहीं है । इन्होंने अपनी कहानियों में एकालाप, पूर्वदर्शन, संस्मरण इत्यादि पद्वति को अपनाते हुए स्वाभाविकता को बनाए रखा है । इनकी कहानियों में चरम बिंदु आता ही है पर कहानी किसी चमत्कार के लिए चरम बिंदु पर टिकी नहीं होती क्योंकि भीष्म जी की कहानियों का चरम बिंदु कभी इतना सशक्त नहीं हुआ कि वह शेष कहानी पर भारी हो जाए । उनके कहानी – शिल्प में कहानी का रचना–विधान महत्त्व का होता है और फिर जिस शैली को लेकर उन्होंने कहानियाँ लिखी हैं, वह शैली आडम्बर से दूर, सीधी–सादी वर्णनात्मक है । 'तस्वीर' कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''सारा वक्त कमला डरी–डरी–सी पिछले दरवाज़े में खड़ी रही थी । कमला ग्यारह बरस की हो चली थी। उन दिनों वह भी अक्सर अविश्वास की दृष्टि से ही मुझे देखा करती थी । उधर ससुर की फटकार इधर बच्चों की। वह चला गया, तो इसमें मेरा क्या दोष है । उसकी जगह मैं चली जाती, तो अच्छा था । मुझे लगा, जैसे कमला मेरी ओर डर और उपेक्षा से देखे जा रही है।'' इनकी कहानियों की शैली अर्थ की अनेक वक्रताओं को लेकर चलती है, इन वक्रताओं को समझे बिना कहानी के कथ्य को पूरी तरह से नहीं पहचाना जा सकता है।

भीष्म जी की कुछ कहानियाँ तो ऐसी है जिसमें शिल्प–विधान का परिपूर्ण निर्वाह हुआ है जैसे चीफ की दावत, वाङ्चू, तस्वीर, रास्ता, भगौडा, इंद्रजाल आदि कहानियाँ हैं । ये कहानियाँ आकार–प्रकार से विस्तृत हैं पर अधिकतर कहानियाँ लघु हैं । इनकी कहानियों में घटनाओं का सूक्ष्म विश्लेषण हुआ है ।

भीष्म जी की कहानियों के संवादों के माध्यम से चरित्र का उद्घाटन होता है । 'चीफ की दावत' के स्वार्थी बेटे का परिचय इस संवाद से होता है – ''और खुदा के वास्ते नंगे पांव नहीं घूमना । न ही वह खड़ाऊँ पहनकर सामने आना । किसी दिन तुम्हारी वह खड़ाऊँ उठाकर मैं बाहर फेंक दूँगा ।'' साहनी ने अपनी कहानियों में विशेषतः किसी न किसी समस्या को ठोस रूप देने का प्रयत्न किया है । कहानी में पात्रों के मनोभावों तथा क्रिया–कलापों को स्पष्ट करना आवश्यक होता है । 'तस्वीर' कहानी में बच्चों का पिता के प्रति स्नेह बड़ी कुतूहलता के साथ प्रकट हुआ है ''पापा माँ कुर्सियाँ, मेज नहीं बेचेगी। माँ ने कह दिया है । पापा तुम्हारी चीज़े घर पर ही रहेंगी । पापा, दादाजी ने माँ को बहुत डाँटा, मगर माँ नहीं मानी ।'' अतः कहा जा सकता है कि इन्होंने अपनी कहानियों में जिस यथार्थ का चित्रण किया है वह उस यथार्थ को एक ही पक्ष से नहीं उभारते हैं । इसी कारण कहानी में वस्तु को सम्पूर्णता प्राप्त होती है ।

वाङ्चू कहानी में संस्मरणात्मक पद्धति को अपनाया गया है। वर्णनात्मक एवं संवादात्मक शैली का उपयोग कर कहानी को रोचक रूप प्रदान किया है । इस शैली के कारण ही कहानियाँ मानसिक पटल पर टहलती रहती हैं। वह कहीं भी लुप्त नहीं होती हैं । संवादात्मक शैली का उदाहरण द्रष्टव्य – ''तुमने बहुत देर कर दी । सभी लोग तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं । मैं चिनारों के नीचे भी तुम्हें खोज आया हूँ । मैंने कहा । मैं संग्राहलय में था।'' 'वाङ्चू' कहानी में सांकेतिकता का पुट है। यह कहानी कई अर्थ–ध्वनियाँ व्यक्त करती है । दो देशों के आपसी युद्ध के कारण उत्पन्न विभीषिका में एक निरीह निरपराध व्यक्ति पिस जाता है । लड़ती है राजनीति और मारी जाती है शिक्षा–संस्कृति। दो देशों के बीच गलत राजनीति के कारण मानवीय और सांस्कृतिक संबंधों की जो स्थिति होती है, यह कहानी उसका

सबूत है। ''वाङ्चू न चीनी था, न भारतीय । वह मात्र मनुष्य था और इसलिए वह चीनी भी था और भारतीय भी । इस बात को गलत राजनीति ने नहीं समझा और मानव–मूल्यों की अपेक्षा की गयी ।''

9.3.3 भाषा :

साहित्य की सभी विधाओं में भाषा का अपना ही महत्त्व होता है । साहित्य भाषा से ही निर्मित है मानवीय भावों की अभिव्यक्ति का सबसे बड़ा साधन भाषा ही है । प्रत्येक रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से ही व्यक्तिगत अनुभव को जनसामान्य तक पहुंचाने का प्रयोग करता है । प्रत्येक युग में सचेत और सजग रचनाकर अपने युग की भाषा तलाश करता है। जिससे बदलते परिवेश और स्थितियों को भाषिक स्तर पर युगानुरूप अभिव्यक्ति मिले । भीष्म साहनी की कहानियों की भाषा सार्थक सिद्ध होती है । उन्होंने अपनी कहानियों में इस देश के आम लोगों में प्रचलित जन सामान्य की भाषा का ही प्रयोग किया है । इनकी भाषा किसी एक क्षेत्र, स्तर, वर्ग या समाज तक सीमित नहीं है । विभिन्न क्षेत्रों, वर्गों और समाज से जुड़ी हुई इनकी भाषा अभिव्यक्ति की ऐसी शक्ति लिए हुए है जो बहुत कम कहानीकारों में देखने को मिलती है । हर वर्ग एवं स्तर के शब्दों का प्रयोग इनकी भाषा में है । इनकी कहानियों में सहजता, सरलता और सुबोधता भी है । बोल–चाल की भाषा को अपनाकर इन्होंने अपनी भाषा को अत्याधिक प्रभावपूर्ण बनाया । कृत्रिमता या अस्वाभाविकता इनकी भाषा में कहीं नहीं है । पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग कर लेखक ने उर्दू, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पंजाबी आदि भाषाओं पर अधिकार को प्रमाणित किया है। साहनी भाषा की सहजता के समर्थक हैं । इस सन्दर्भ में श्याम कश्यप ने ठीक ही कहा है – ''भीष्म जी की भाषा की सबसे बड़ी खूबी है, उसकी सादगी। इस सादगी का अर्थ सरल और स्पष्ट भाषा का कतई नहीं है, जो अपनी कला–विहीनता के कारण अखबारी भाषा का कुछ जड़ रूप होती है । उनकी सादगी में भी कलात्मक वक्रता और गतिशील तरलता है, वह उनके समकालीनों में बहुत कम देखने को मिलेगी ।

भीष्म साहनी की कहानियों की विषय वस्तु का सम्बन्ध अधिकांशतः मध्यवर्ग है । इसलिए उन्होंने विशेषरूप से पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है । उन्होंने वातावरण और परिवेश की सजीव सृष्टि के लिए हिन्दी, उर्दू, तत्सम, अंग्रेजी का प्रयोग प्रचूर मात्रा में किया है जिससे कहानी की रोचकता में चार चाँद लग गये हैं ।

प्रसंगानुसार भाषा का प्रयोग इनकी कहानियों में मिलता है । ग्रामीण कथावस्तु के अनुसार ग्रामीण भाषा का प्रयोग किया है । शहर के शिक्षित नागरिक पात्रों की भाषा अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी है । साहनी ने प्रसंगानुसार भाषा का प्रयोग किया है – 'चीफ की दावत' कहानी व्यंग्यात्मक है जिसमें माँ पुरानी पीढ़ी की अनपढ़ औरत है जबकि बेटा पढ़ा लिखा शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधि है ।

बिम्ब वह है जो बुद्धि और भावना विषयक पूरे जटिल तंत्र को क्षण मात्र में प्रस्तुत कर देता है । यह अदृश्य विचारों की अन्विति है। भीष्म साहसी की कहानियों में सांकेतिकता व बिम्ब की प्रचुरता नहीं है । फिर भी कुछ कहानियों में बिम्ब उभरकर सामने आते हैं । 'तस्वीर' कहानी में विधवा स्त्री की परिस्थिति के बिम्ब का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''उसकी आँखें बन्द करने की देर थी कि सारा दृश्य बदल गया था । मुझे लगा, जैसे घर के किवाड़ और खिड़कियाँ सब टूट गए हैं, और हू–हू करता अंधड़ घर में चक्कर लगाने लगा है । मुझे लगता, जैसे मेरी आँखों के सामने कोई

नाटक खेला जा रहा है । एक दृश्य वह था, जब वह जीता था, दूसरा दृश्य, जब वह मर चुका था। एक दृश्य के बाद जब दूसरा दृश्य बदला, तो पहला दृश्य झूठा पड़ गया, सपने की तरह झूठा ।''

भावानुकूल भाषा का प्रयोग भी इनकी कहानियों की मूल विशेषता है । भाषा का भावानुकूल प्रयोग कहानी को सहज और प्रभावी बनाता है। ऐसी भाषा मनोरंजक एवं रोचक होने के साथ–साथ पाठकों के ह्रदय पर अपने विचारों का मनोवांछित प्रभाव डालती है और पाठक को कहानी के पात्रों से गहराई से जोड़ती है 'तस्वीर' कहानी का उदहारण द्रष्टव्य है – ''मैं उस रात लेटी, तो मेरे मन में अचानक गहरी टीस उठी । वह मर के भी अच्छा है। मैं दर–दर की ठोकरें खाकर भी बुरी हूँ । उसने जीते जी बच्चों को ऐसा अपने हाथ में किया था कि मरने के बाद भी वे उसके साथ है, उसी को अच्छा समझते हैं। उसके चले जाने के बाद भी बच्चे उसके साथ मेरी तुलना करते हैं'' 'तस्वीर' कहानी में भी भाषा के विविध शब्द लय के साथ आ गये हैं। भीष्म साहनी की कहानियों में कही भी भाषा का पाण्डित्य नहीं उभरता है मूल्तः इनकी भाषा रचनाकर की भाषा है, न कि कलाकार की भाषा है। कलाकार की भाषा का पाठक समुदाय सुशिक्षित होगा । भीष्म की कहानियाँ सबके लिये हैं। अरबी–फारसी शब्द : दफ़्तर, तस्वीर, शिकायत, तौफीक, अंग्रेजी :– बीमा कम्पनी, देशी शब्द : फूहड़, संस्कृत : मुँह, दृश्य आदि ।

'चीफ की दावत' कहानी में भाषा सहज, सरल और अद्वितीय गहनता लिए हुए है। शब्दों में व्यवहारिकता और भावुकता है ही, साथ ही लाक्षणिकता से सुसज्जित है। लेखक ने प्रायः बोलचाल में प्रयुक्त होने वाली अंग्रेजी और पंजाबी भाषा आदि के उन सभी शब्दों को यथोचित रूप में अपनाया है, जो प्रायः मध्यवर्गीय हिन्दी भाषा में प्रचलित है । इतना अवश्य है कि लेखक ने उन शब्दों का अर्थ भी प्रस्तुत करके पाठक को सहज होने में सहायता प्रदान की है। मुकम्मल, डिरंक, अड़चन, अवाक, साक्षात, रौ, रौब आदि शब्द कहानी को उतार–चढ़ाव व सार्थकता प्रदान करते हैं। अंग्रेजी भाषा के शब्दों का प्रयोग कहानी को सहज बनाते हैं–''और जो सो गई तो ? डिनर का क्या मालूम कब तक चले ।''

सरलता, सहजता और सुबोधता कहानी को प्रेषणीय बनाती है ''माँ झिझकते हुए, अपने में मिसटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अन्दर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर । ठीक तरह से नमस्ते भी, न कर पायी । शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे ।'' प्रसंगानुसार भाषा का प्रयोग इनकी कहानियों में मिलता है। ग्रामीण कथावस्तु के अनुसार ग्रामीण भाषा का प्रयोग किया है । शहर के शिक्षित नागरिक पात्रों की भाषा अंग्रेजी मिश्रित हिन्दी है।

भीष्म साहनी ने पात्रानुकूल भाषा को अपनाया है। लेखक का मित्र वाङ्चू के भारत के प्रति रूचि का कारण व्यक्त करने का उद्धरण द्रष्टव्य है –''पसन्द क्यों न होगा । यहां थोड़े में गुजर हो जाती है, सारा वक्त धूप खिली रहती है। फिर बाहर के आदमी को लोग परेशान नहीं करते। जहां बैठा है वही बैठा रहने देते हैं। इस पर उन्हें तुम–जैसे झुड़डू मिल जाते हैं, जो उनका गुणगान करते रहते हैं और उनकी आवभगत करते रहते हैं। तुम्हारा वाङ्चू भी यही पर मरेगा ...।'' 'वाङ्चू' कहानी में विविध भाषाओं के शब्द मिलते हैं – जैसे :– संस्कृत शब्द, संशय, अतिथि, सप्ताह, अरबी–फारसी–सैलाब, जुलूस, खत, अंग्रेजी–सोसाइटी, एलुमीनियम, राइटिंग पैड इत्यादि ।

भीष्म जी की भाषा पर उर्दू का प्रभाव तो है ही पर उसका लहजा पंजाबी अधिक है । इसलिए पंजाब की

आत्मीयता, तरलता स्थान–स्थान पर छलक पड़ती है। अपनी भाषा को समृद्ध बनाने के लिए इन्होंने तत्सम, तद्भव, देशज और विदेशी भाषा के शब्दों का प्रयोग भी किया है। साथ ही साथ जहां आवश्यक है वहां मुहावरों, कहावतों और सूक्तियों का जिस प्रकार का प्रयोग किया है उससे उनकी भाषा की सार्थकता और अधिक बढ़ गई है । इस प्रकार कह सकते हैं कि भीष्म जी की कहानियों का शिल्प अपनी विशेषताओं के साथ परिलक्षित होता है।

9.3.4 चरित्र शिल्प :

कहानी के मुख्य तत्वों में चरित्र–शिल्प का महत्त्व सबसे अधिक है। क्योंकि कहानी की जान संक्षिप्तता है और संक्षिप्त कथावस्तु को आगे बढ़ाने का कार्य पात्रों के माध्यम से ही संभव हो पाता है । आधुनिक कहानी में वही कथा श्रेष्ठ मानी जाती है जिसमें लेखक पात्रों का चरित्र–चित्रण करता हुआ किसी मनोवैज्ञानिक सत्य की व्याख्या करे। सफल चरित्र–चित्रण के लिए यह आवश्यक है कि लेखक को मनोविज्ञान का विशेष ज्ञान हो। कथावस्तु के अनुकूल पात्रों का चयन किया जाना चाहिए ।

9.4 पात्रों का वर्गीकरण :

1. चरित्र के आधार पर
   - वर्गप्रधान
   - व्यक्ति प्रधान

2. स्वभाव के आधार पर
   - स्थिर पात्र
   - गतिशीलपात्र
   - विचित्र पात्र
   - अधमपात्र

3. अध्ययन की सुविधानुसार
   - मुख्यपात्र
   - गौणपात्र

चरित्र–चित्रण की प्रणालियाँ :– चरित्र–चित्रण के लिए चार प्रणालियाँ प्रयुक्त होती है :– 1. वर्णन द्वारा, 2. संकेत द्वारा, 3. वार्तालाप, 4. घटनाओं द्वारा । भीष्म जी ने जिन चरित्रों को उभारा है वे चरित्र पूर्ण या अपूर्ण अथवा अच्छे–बुरे नहीं होते हैं। उनके चरित्र तो इन सबका मिला जुला रूप होते हैं जो पूर्ण और वास्तविक है। साथ ही वे जिस वस्तुगत सत्य को स्थितियों के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं वो सत्य भी समय सापेक्ष होता है। इस दृष्टि से चीफ की दावत, वाङ्चू, तस्वीर, शोभायात्रा, आदि उल्लेखनीय हैं। इन्होंने पात्रों का चुनाव सामान्य जन से किया है इसलिए सहज और स्वाभाविक चरित्रों के कारण ही उनकी विश्वसनीयता बढ़ गई है। उदाहरणतः 'चीफ की दावत' कहानी की

बूढ़ी माँ, वाङ्चू और तस्वीर कहानी की विधवा स्त्री । लेखक की ख़ासियत यह है कि वह प्रत्येक पात्र की विशिष्टता को उसकी चाल–ढाल, वेश–भूषा उसके संवाद आदि के जरिए उभारते हैं ।

'विधवा स्त्री' भारतीय समाज की विडम्बनापूर्ण परम्परा का अनुसरण करने पर मजबूर स्त्री है। ससुराल में उपेक्षित जीवन जीने के साथ–साथ बच्चों की नज़र में भी उपेक्षित है। यह पीड़ित स्त्री पात्र भारतीय समाज की विधवा स्त्री के जीवन का यथार्थ चित्रांकन करती हुई उसकी परिस्थितियों से अवगत करवाती है। 'तस्वीर' कहानी की विधवा स्त्री पात्र विधवा जीवन के त्रासमयी जीवन को बड़े ही सपाट तरीके से स्पष्ट करती हैं। पुरुष प्रधान समाज ने स्त्री को दोयम दर्जे का ही समझा है, इसलिए वह उसकी सुरक्षा करना अपना दायित्व समझता है। पुरुषों ने स्त्री को 'अन्या' ही समझा, इसलिए वह स्त्री के निर्णय का कभी महत्त्व नहीं समझता है – ''तू कौन है फैसले करनेवाली ?'' उन्होंने चिल्लाकर कहा –तेरे पास है क्या ? चुपचाप सामान बाँधो और चलो मेरे साथ । मैं सिर से पाँव तक काँप उठी, पर मैं कुर्सी को कसकर पकड़े रही ।''

विद्रोही पात्र अन्याय, अत्याचार और पाखण्ड का शिकार बने हुए होते हैं। इस प्रकार के पात्र निम्नस्तर के पात्र कहलाये जाते हैं। इनकी कहानियों के स्त्री पात्र ऐसे हैं जो पारम्परिक आदर्श नहीं भूलते हैं, लेकिन अपने अस्तित्व हेतु विरोध करना जानते हैं। 'तस्वीर' कहानी में घर और घर का सामान बेचे जाने का विधवा स्त्री विरोध करती है – ''जी नहीं, मैं यही पर रहूंगी । मैं यहीं बच्ची को लेकर रहूंगी। कोई छोटा–मोटा काम ढूंढ लूंगी। मैं जानती थी कि अब वे जली–कटी कहेंगे, कोसेंगे, चिल्लाएँगे, पर उनकी आवाज़ फिर धीमी पड़ गई ।''

'वाङ्चू' कहानी का पात्र वाङ्चू भी निम्नस्तर का पात्र है जो व्यवस्था की मार झेलने वाला असहाय व्यक्ति है। वह विरोध करने का पहाड़ा नहीं पढ़ा है, इसलिए उसे 'बूदम' भी कहा जाता है, जिस राजनीति में वह कभी ध्यान नहीं देता था, वही गलत राजनीति और भारत से चीन और चीन से भारत की आवाजाही के कारण उसका जीवन संकटग्रस्त हो जाता है। कभी कलकत्ता और कभी बनारस के पुलिस स्टेशन में हाजिरी देता रहता है। वाङ्चू का सच झूठ समझा जाता रहा और अन्ततः वह अपने आप की सफाई देते हुए भारत में मर जाता है। लेखक पात्र वाङ्चू की मृत्यु की खबर सुनकर क्षोभग्रस्त होता है ''मैं फौरन तो सारनाथ नहीं जा पाया, जाने में कोई तुक भी नहीं थी, क्योंकि वहां वाङ्चू का कौन बैठा था, जिसके सामने अफसोस करता, वहां तो केवल ट्रंक ही रखी थी। पर कुछ दिनों बाद मौका मिलने पर मैं गया । ...मैंने मुड़कर देखा, कैंटीन का रसोइया भागता चला आ रहा था। अपने पत्रों में अक्सर वाङ्चू उसका जिक्र किया करता था... सारे संसार में शायद यही अकेला जीव था, जिसने वाङ्चू की मौत पर दो आँसू बहाये थे।'' भीष्म साहनी के पात्रों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह पाठक के मस्तिष्क से ओझल नहीं होते हैं। इनकी यह तीनों कहानियां किसी न किसी जिंदा चरित्र और दैनिक जीवन के यथार्थ का निरुपण करती हैं । यथार्थ का यह निरूपण बिल्कुल सीधा सादा है।

आदर्श पात्र विशेष रूप से परंपरित मूल्यों एवं सत्य से चिपके रहने वाले पात्र होते हैं । ये पात्र किसी भी स्थिति–परिस्थिति में अपनी आस्था को खोने नहीं देते है जैसे 'चीफ की दावत' कहानी की बूढ़ी माँ। बूढ़ी माँ परम्परा से जुड़ी वात्सल्य प्रेम से ओतप्रोत है। वह संतान की तरक्की के मोह को नहीं छोड़ पाती है। चाहे संतान शामनाथ बूढ़ी मां के साथ दुर्व्यवहार करता है। आदर्श पात्र दूसरों के कल्याण में ही अपने जीवन की सार्थकता समझते हैं। वह दूसरों

के रास्ते में कांटे बिछाकर आगे नहीं बढ़ते हैं, बल्कि अपने जीवन की बाजी लगाकर दूसरों के सपनों को पूरा करने की कोशिश करते हैं । आदर्श पात्र मानव कल्याण का सपना देखते हैं और मानवता की भाषा बोलते हैं । बूढ़ी मां स्वार्थी बेटे की तरक्की के लिए नज़र कमज़ोर होते हुए भी उसके चीफ के लिए फुलकारी बनाने का आश्वासन देती है – ''मेरी आँखें अब नहीं हैं, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ। तुम कहीं और से बनवा लो । बनी–बनायी ले लो। ... क्या तेरी तरक्की होगी ? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा ? क्या उसने कुछ कहा है ?''

यथार्थ पात्र युगीन परिवेश में हमारे आस–पास मौजूद होते हैं। ऐसे पात्रों के न तो आदर्श, ध्येय और सिद्धान्त होते हैं। ये पात्र परिस्थितियों से समझौता करने वाले पात्र होते हैं । जैसे – 'चीफ की दावत' कहानी का मिस्टर शामनाथ। वह एक ऐसा पात्र है जो मध्यवर्ग समाज का प्रतिनिधित्व करता है। मध्यवर्गीय समाज कोई आदर्श नहीं रख रहा बल्कि धीरे–धीरे मूल्यहीन बनता जा रहा है। पैसे की होड़ में व्यक्ति दौड़ा जा रहा है और अपने दायित्वों के प्रति सजग भी नहीं है। वह हर एक का उपयोग करना जानता है जिससे भी लाभ होता है। शामनाथ अपना स्वार्थ साधने के लिए अपनी माँ का उपयोग करता है और दावत में बुलाये सभी लोगों के बीच उसे हंसी का पात्र भी बनाता है। शामनाथ बाजार के युग में जीने वाला व्यक्ति है इसलिए रिश्तों को भी बाजार के तराजू पर तौलता है – ''बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कबसे कह रही हूँ। ...क्या कहा माँ ? यह कौन सा राग तुमने फिर छेड़ दिया ? ....तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो ।...तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनायेगा ? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है ।''

9.4 चरित्र :

'चरित्र–चित्रण' कहानी का दूसरा प्रमुख महत्त्वपूर्ण तत्त्व है । चरित्र–चित्रण के द्वारा पात्रों के आन्तरिक और बाह्य व्यक्तित्व पर प्रकाश डाला जाता है। सफल कथाकार के पात्र पाठक के अत्यन्त निकट होते हैं। कभी–कभी तो ऐसा लगता है जैसे वे स्वयं ही हैं ।

कथावस्तु अगर शरीर है तो पात्र या चरित्र उसका प्राण है । यह पात्र किसी विशेष वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। भीष्म साहनी के पात्र गतिशील हैं। इन्होंने पात्रों को समाज के प्रत्येक वर्ग से चुना है जिनका चित्रण बड़ी सफलता पूर्वक किया है ।

9.4.1 शामनाथ :

भीष्म साहनी की कहानी 'चीफ की दावत' में शामनाथ मुख्य पात्र के रूप में उभरता है। शामनाथ एक ऐसा पात्र है जो सामाजिक तथा आर्थिक विडंबनाओं से जूझ रहा है। वह स्वयं को आर्थिक दृष्टि से सुव्यवस्थित करने के लिए कुछ भी कर सकता है। 'चीफ को दावत' पर बुलाना उसे उत्कृष्ट कोटि का भोजन खिलाकर प्रमोशन के लिए अवसर पाने की इच्छा उसके चरित्र के लालचीपन को दर्शाती है। अपनी इस लौकिक उन्नति की इच्छा की पूर्ति हेतु वह हर बंधन को तोड़ सकता है। घर के 'फालतू' समान सी माँ को कैसे दृष्टि से ओझल किया जाए – इसकी हर संभावना उसके मन में कौंधती है। सहेली के घर भेजा जाय, दरवाजा बंद करके उस पर ताला लगा दिया जाए या फिर कुछ और किया जाए यह प्रश्न उसे तमाम तरह से विचलित करते हैं। अन्ततः वह निर्णय लेता है कि ''माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहां बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जायें, तो तुम गुसलखाने के रास्ते

बैठक में चली जाना।'' इस सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि शामनाथ तरक्की हेतु संवेदनहीन होता जाता है और अपनी बूढी माँ को 'फालतू' वस्तु के रूप में आंकता है।

शामनाथ स्वार्थी व्यक्ति है। स्वार्थ साधने के लिए वह किसी भी प्रकार का घृणित कार्य कर सकता है। जब माँ चीफ के आकर्षण का कारण बनती है, तो वह उसे गाना गाने और फुलकारी बनाकर देने के लिए विवश करता है। शामनाथ के कहे शब्द द्रष्टव्य है – ''तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनायेगा, साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है ।'' शामनाथ अर्थ एवं तरक्की की लोलुपता में इतना संलिप्त हो जाता है कि वह सही और गलत की दिशा भूल जाता है।

इस कहानी में शामनाथ एक दिखावटी पात्र के रूप में उभरता है। वह बाहरी ताम–जाम में विश्वास रखता है, इसलिए चीफ को दावत पर आमंत्रित करने पर वह उसे अपने बड़े होने का अहसास कराना चाहता है। वह चीफ को दिखाना चाहता है कि वह किसी से भी कमज़ोर नहीं है। वह स्वंय को सभ्य और पूंजीपति दर्शाने हेतु घर का वातावरण बदल देता है – ''आखिर पांच बजते–बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियां, मेज, तिपाइयां, नैपकिन, फूल सब बरामदे में पहुंच गये। ड्रिंक का इन्तजाम बैठक में किया गया। अब घर का फालतू सामान आलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहस एक अड़चन खड़ी हो गयी, माँ का क्या होगा ?'' शामनाथ का चरित्र ऐसा है कि वह परम्परा के प्रति आदरभाव न रखकर उसके प्रति नकार भाव रखता है। कहने का तात्पर्य यह है कि परम्परा उसके लिए एक फालतू वस्तु की भांति है जिसका समय के उपरान्त उपयोग खत्म हो जाता है। इसलिए वात्सल्य प्रेम से ओत प्रोत माँ उसे फालतू प्रतीत होने लगती है ।

वह मौकापरस्त है। जहाँ भी उसे फायदा मिलता है वह किसी भी तरह का समझौता उस स्थिति से नहीं करता है। इस प्रकृति के कारण वह मूल्यहीन बनता जाता है। आधुनिक समय की दौड़ में वह इतना संलग्न हो जाता है कि वह दायित्वों के प्रति सचेत नहीं रहता है। इसलिए मेहमानों के समक्ष वह अपनी माँ को हास्यस्पद बनाता है। माँ की घुटन को समझने के बजाय वह मौके की फिराक में रहता है कि ऐसी कौन सी स्थिति आए की चीफ उस पर प्रसन्न हो जाए और उसे प्रमोशन मिल जाए । माँ की हास्यस्पद स्थिति का मार्मिक चित्र इस प्रकार है ''माँ, हाथ मिलाओ। पर हाथ कैसे मिलाती। दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में मां ने बायां हाथ ही साहब के दाये हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल ही दिल में जल उठे। देसी अफसरों की स्त्रियां खिलखिलाकर हंस पड़ी।

इससे स्पष्ट होता है कि शामनाथ मध्यवर्ग समाज का प्रतिनिधित्व करने वाला पात्र है। वह स्वार्थी, मौकापरस्त एवं दिखावटी है। वह आधुनिकता के परिवेश में अंधा व्यक्ति है इसलिए जीवन मूल्यों के प्रति कोई दायित्व नहीं समझता है।

9.4.2 वाङ्चू :

वाङ्चू कहानी का मुख्य पात्र वाङ्चू है। सम्पूर्ण कहानी इसी पात्र के इर्द–गिर्द घूमती है। 'मुस्कराहट' उसके चेहरे की विशेषता है। वह समाज की प्रत्येक परिस्थिति में एक सा भाव लिए रहता है। वह मानवता की भाषा बोलने वाला पात्र है। जो प्रेम के बल पर सम्बन्ध बनाता था ।

वाङ्चू मित्त भाषी बौद्ध भिक्षु है। वह कम बोलने में विश्वास रखता है। बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन करना उसे अच्छा लगता है। वह किसी भी विषय पर खुलकर बात नहीं करता है इसी कारण उसे 'बूदम' भी कहा गया। उसे दुनिया के किसी भी विषय में दिलचस्पी नहीं थी। वाङ्चू प्यार का पुजारी था, वह प्रेम की भाषा बोलता और प्यार भरी मुस्कराहट मुँह पर फैलाये रखता था। समाज के किसी भी राजनीतिक मुद्दों पर वार्तालाप करने में कोई रूचि नहीं रखता था । ''मुझे याद नहीं कि उसने हमारे साथ कभी खुलकर बात की हो, या किसी विषय पर अपना मत पेश किया हो। उन दिनों मेरे और मेरे दोस्तों के बीच घण्टों बहसें चला करती, कभी देश की राजनीति के बारे में, कभी धर्म के बारे में, लेकिन वाङ्चू इनमें कभी भाग नहीं लेता था। वह सारा वक्त धीमे–धीमे मुस्कराता रहता और कमरे में एक कोने में दबकर बैठा रहता ।''

महाप्राण के प्रति आस्था भाव :– वाङ्चू महाप्राण के प्रति आस्था भाव रखने वाला भक्त है। महाप्राण का चाहे जन्म स्थान हो, चाहे महाप्राण के प्रवचन हो, चाहे महाप्राण जिस–जिस दिशा की ओर चरण उठे हो, वाङ्चू भक्तिपूर्ण कल्पना में डूबा मन्त्रमुग्ध सा महाप्राण के नाम से स्थापित हर दिशा में घूम आया था। महाप्राण से जुड़े प्रत्येक स्थान से वह संवेदनशील रूप से जुड़ा था। इस सन्दर्भ में कहानी का उद्धरण द्रष्टव्य है – ''जब से श्रीनगर में आया था, बर्फ से ढके पहाड़ों की चोटियों की ओर देखते हुए अक्सर मुझे कहता – वह रास्ता तहासा को जाता है ना, उसी रास्ते बौद्धग्रन्ध तिब्बत में भेजे गये थे। वह उस पर्वतमाला को भी पुण्य–पावन मानता था, क्योंकि उस पर बिछी पगडण्डियों के रास्ते बौद्ध भिक्षु तिब्बत की ओर गये थे ।''

वाङ्चू का प्रेमी रूप :– कहानी में मित्त भाषी वाङ्चू का प्रेमी रूप भी उभरता है। लेखक की छोटी मौसेरी बहन नीलम के प्रति वाङ्चू के ह्रदय में प्रेम के बीज पनप चुके थे। वह उसके प्रति प्रेम भाव रखता है। वाङ्चू का नीलम के प्रति कनखियों से देखना लेखक को शंका में डालता है। वाङ्चू श्रीनगर में कोई एक सप्ताह लेखक के पास ही ठहरा । उन्हीं दिनों उनकी छोटी मौसेरी बहन भी आई थी । शीघ्र ही दोनों में अन्तरंगता बढ़ती गई। अब दोनों में उपहारों का आदान–प्रदान होना आरम्भ होने लगा था। ''और उसने दोनों मुट्ठियाँ खोल दीं, जिनमें चांदी के कश्मीरी चलन के दो सफेद झूमर चमक रहे थे । और वह दोनों झूमर अपने कानों के पास ले जाकर बोली – कैसे लगते हैं ?...उसके अपने कान कैसे भूरे–भूरे हैं ! ...मेरे इस प्रेमी के ...तुम्हें उसके भूरे कान पसन्द हैं ?''

भारत के प्रति प्रेम भाव :

वाङ्चू भारत से चीन वापिस जाता है तो वहां उदास रहने लगता है। चीन में उसका एक भाई रहता था राजनीतिक उथल–पुथल के कारण उससे भी उसका सम्पर्क टूट गया था। वाङ्चू जब चीन के ग्राम प्रशासन अर्थात पार्टी दफ्तर से लौटता है तो अत्याधिक उदास हो जाता है। वह जिस धरती पर पैदा हुआ, उसे वह उदास प्रतीत होने लगती है, क्योंकि उसे जो प्रेम भारत में मिलता है, जो शान्ति उसे भारत में मिलती है, वह उसे चीन में नहीं मिल पाती है। वह मन से भारत में ही रहा था, शारीरिक रूप से वह चीन में था और वह भी खोया हुआ सा। ''जब वाङ्चू पार्टी दफ्तर से लौटा, तो थका हुआ था। उसका सिर भन्ना रहा था। अपने देश में उसका दिल जमीं नहीं पाया था। आज वह और भी ज्यादा उखड़ा–उखड़ा महसूस कर रहा था। छप्पर के नीचे लेटा तो उसे सहसा ही भारत की याद सताने लगी। उसे सारनाथ की अपनी कोठरी याद आयी, जिसमें दिन भर बैठा पोथी बांचा करता था। नीम का घना पेड़

याद आया, जिसके नीचे कभी–कभी सुस्ताया करता था। स्मृतियों की श्रृंखला लम्बी होती गयी। सारनाथ की कैंटीन का रसोइया याद आया, जो सदा प्यार से मिलता था।'' भारत में रहने की मृगतृष्णा उसे वापिस खींच लाती है। जो प्यार, स्नेह अपनापन उसे भारत में मिला उसे चीन में नहीं मिला ।

राजनीति के पाटों में पीसता वाङ्चू :– 'वांङ्चू' कहानी का वाङ्चू एक ऐसे पात्र के रूप में उभरता है जो गलत राजनीतिक व्यवस्था एवं उसके भ्रष्ट रूप का पर्दाफाश करता है । उसके चरित्र से स्पष्ट होता है कि किस तरह किसी भी सामाजिक मुद्दों पर रूचि न रखने वाला व्यक्ति भी राजनीति का शिकार हो जाता है। जो समाज में प्रेम की धारा बहाने के पक्ष में है उसे ही यह अव्यवस्था निगल डालती है। बौद्ध भिक्षु वाङ्चू अव्यवस्था की चक्की में पिसता हुआ गुमनाम की मृत्यु को प्राप्त होता है। दो संस्कृतियों को एक करने वाले वाङ्चू की मृत्यु हृदय को भावविह्वल कर डालती है । वाङ्चू का व्यक्तिगत जीवन राजनीतिक बन जाता है। उसे हर हफ्ते महीने भर में वह कहां जाता है , क्या खाता है, क्या पढ़ता है, क्यों पढ़ता है इत्यादि प्रश्नों से सामना करना पड़ता है। आखिर बुलावा आया और वाङ्चू चिक उठाकर बड़े अधिकारी की मेज के सामने जा खड़ा हुआ। तुम चीन से कब लौटे ? ...कलकत्ता में तुमने अपने बयान में कहा कि तुम शान्तिनिकेतन जा रहे हो। फिर तुम यहाँ क्यों चले आये ? पुलिस को पता लगाने में बड़ी परेशानी उठानी पड़ी है। ...तुम चीन से क्यों लौट आये ? मैं भारत में रहना चाहता हूँ ...। 'जो लौट आना था, तो गये क्यों थे ?'' भारत और चीन की आपसी मुठभेड़ में आम नागरिक राजनीति से अनभिज्ञ रहने वाला वाङ्चू मारा जाता है।

अतः कहा जा सकता है कि वाङ्चू कहानी का मुख्य पात्र है। वह सादगी से भरपूर है, वह संवेदनशील एवं मित्तभाषी है और वह दो देशों की संस्कृतियों को एक कर प्रेम की गंगा बहाने का पक्षधर है। वह मानवता को स्थापित करने में रूचि रखता है ।

9.4.3 विधवा स्त्री :–

'तस्वीर' कहानी की मुख्य पात्र विधवा स्त्री है। वह ससुराल में उपेक्षित जीवन व्यतीत कर रही है। विधवा स्त्री के चरित्र के माध्यम से पुरुष प्रधान समाज के वर्चस्वपूर्ण व्यवहार का उल्लेख मिलता है। 'विधवा स्त्री' गरीबी के कारण उपेक्षणीय जीवन जीने के लिए मजबूर है।

ससुर का रौबिला व्यवहार झेलती स्त्री :– विधवा स्त्री को ससुर की कड़वी बातों को सहन करना पड़ता है। परम्परावादी विचारों को ओढ़कर चलने वाला ससुर बेटे की मृत्यु का कारण बहू को ही मानता है। इसी कारण अपनी सारी कड़वाहट बहू पर निकालने में किसी प्रकार का परहेज नहीं करता है। ससुर के कड़वाहट से भरे शब्द द्रष्टव्य है ''मैं इसी बूढ़ी उम्र में कोई काम धंधा नहीं कर सकता कि तुम्हें और तुम्हारे बच्चों को खिलाऊँ ।... तुम्हारे घर में न भाई है न बाप, सारा बोझ बुढापे में मुझे उठाना पड़ रहा है।... तुम पढ़–लिखकर भी बेवकूफ हो । तुम कुछ करना–धरना जानती होती, तो वह इस वक्त जीता होता।'' ससुर अपनी अकेली पड़ी बहू के प्रति संवेदनशील भाव रखने के बजाय उसे बोझिल समझता है। भारतीय समाज में ससुराल में बहू का महत्त्व तब तक ही समझा जाता है जब तक बेटा जीवित हो। दुर्भाग्यवश यदि बेटे की मृत्यु किन्हीं और परिस्थितियों में हो जाए तो पत्नी को ही उसकी मृत्यु का कारण माना जाता है।

आर्थिक रूप से कमज़ोर :– भारतीय समाज में स्त्री को कमजोर समझा जाता है और यदि दुर्भाग्यवश पति की मृत्यु हो जाए तो वह दुनिया की सबसे असहाय स्त्री कहलाने पर मजबूर हो जाती है। विधवा स्त्री के ऊपर संकट की स्थिति तब बनती है जब वह आर्थिक रूप से मजबूत नहीं होती है। आलोच्य कहानी में विधवा स्त्री का जीवन त्रासमय तब बनता है, जब और आर्थिक रूप से कमजोर होती है। वह गरीबी के कारण ही ससुर पर निर्भर होती है। गरीबी के कारण बच्चों का प्रेम भी प्राप्त नहीं कर पाती है। धीरे–धीरे ससुर घर की सभी चीज़े बेचना आरम्भ कर देता है और वह बहू पर तरह–तरह के दबाव भी बनाता है। विधवा स्त्री की आर्थिक कमी का उद्धरण द्रष्टव्य है ''मेरे अंदर जैसे तूफान घुमड़ने लगा। एक और लाचारगी, दूसरी ओर दिल को सालनेवाला क्षोभ। फ्रिज न बेचूं, तो घर में पैसे कहा से आएंगे। मेरी तौफीक ही क्या है ? मैं स्वयं वेसुध हुई जा रही थी।'' इससे स्पष्ट होता है कि पैसे की कमी स्त्री के अस्तित्व को कमज़ोर कर देती है। विधवा स्त्री अर्थ की कमी के कारण ही चाहकर भी घर की चीज़े ससुर द्वारा बेचने पर विरोध नहीं कर पाती है।

असहाय स्त्री :– विधवा स्त्री के चरित्र से स्पष्ट होता है कि स्त्री कभी स्वतन्त्र नहीं होती है। शादी से पहले पिता पर निर्भर होती है, शादी के बाद पति पर और पति के न रहने पर ससुर या बेटे पर निर्भर रहती है। भारतीय समाज में स्त्री को असहाय ही समझा गया है इसलिए उसे सुरक्षित रखने के तरह–तरह के यतन किए जाते हैं। वह धीरे–धीरे पति के उपरान्त ससुर द्वारा हाँकी जा रही थी – ''मेरी जिन्दगी की बागडोर, जो पहले पति के हाथ में थी, अब मेरे ससुर के हाथ में आ गई थी। जिस भांति मेरा पति मुझे हाँका करता था, अब मेरा ससुर मुझे हाँकने लगा था। जिस भांति उसके जीते जी मैं उसका मुँह ताका करती थी, उसके चले जाने के बाद अपने ससुर का मुहँ ताकने लगी थी।''

वह अपनी स्थिति को अभिव्यक्त करती हुई स्पष्ट करती है कि विधवा स्त्री अत्यन्त असहाय होती है। स्त्री सबसे ज्यादा असहाय की स्थिति में तब पहुंचती है जब मृत्यु के बाद उसके बच्चे भी उसके साथ उपेक्षणीय व्यवहार करते हैं। इस कहानी की मुख्य पात्र पति की ताकत को अभिव्यक्त करती हुई कहती है कि ''मैं उस रात लेटी, तो मेरे मन में अचानक ही गहरी टीस उठी। वह मर कर भी अच्छा है, मैं दर–दर की ठोकरें खाकर भी बुरी हूँ। उसने जीते–जी बच्चों को ऐसा अपने हाथ में किया था कि मरने के बाद भी उसके साथ हैं, उसी को अच्छा समझते हैं। उसके चलने के बाद भी बच्चे उसके साथ मेरी तुलना करते हैं। ...मैं फिर से किसी गहरे कूप में गिरने लगी।''

विद्रोही नारी :– विधवा स्त्री कहानी के अन्त में विद्रोही स्त्री के रूप में उभरती है। विद्रोह के बल पर वह ससुर को अपने 'अस्तित्व' का महत्व समझाती है। ससुर द्वारा धीरे–धीरे घर की चीज़े बेचे जाने पर विरोध जाहिर करती और स्वंय अपने बलबूते पर रोटी कमाने की ठान लेती है। ससुराल द्वारा सवाल उठाये जाने पर वह चुप नहीं रहती है। वह घर को बेचने के पक्ष में नही है। पति की निशानी को बाजार का अंग नहीं बनने देती है। वह ससुर को कहती है कि ''जी नहीं, मैं यहीं पर रहूँगी। मैं यही बच्चों को लेकर रहूँगी । कोई छोटा–मोटा काम ढूँढ लूँगी।'' इससे स्पष्ट होता है कि विधवा स्त्री जीने का संबल अपने भीतर खोजती है, इसलिए वह ससुर के समक्ष कदम जमा पाती है। 'तस्वीर' के समक्ष बच्चों का माँ के प्रति संबोधन द्रष्टव्य है – पापा, माँ कुर्सियां मेज़ नहीं बेचेगी। माँ ने कह दिया है। पापा, तुम्हारी चीज़े घर में रहेंगी। पापा, दादाजी ने माँ को बहुत डांटा, बहुत डांटा, मगर माँ नहीं मानी। वह डरी भी

नहीं। माँ ने उनसे कह दिया, मैं नहीं बेचूंगी, कभी नहीं बेचूंगी और पापा, हम यही पर रहेंगे। और पापा, तुम माँ को पैसे देकर भी नहीं गए, वह इतनी गरीब है...।''

9.5 सारांश :

अन्ततः कहा जा सकता है भीष्म साहनी ने प्रचलित शिल्प को त्यागकर रचना के ताने–बाने से मानवीय सम्बन्धों के बदलाव को अभिव्यक्त किया है। भावानुकूल भाषा का प्रयोग कर अपने विचारों से पाठकों के हृदय को प्रभावित किया है। भाषा का सहज प्रयोग इनकी कहानियों को सम्प्रेषणीय बनाता है।

9.6 कठिन शब्द :

1. वैषम्य
2. प्रतिपाद्य
3. द्रष्टव्य
4. उपेक्षा
5. समक्ष

9.7 अभ्यासार्थ प्रश्न :

प्र1. भीष्म साहनी की कहानियों की शिल्प योजना पर विचार व्यक्त कीजिए ।

प्र2. भीष्म साहनी की कहानियों के देशकाल और वातावरण पर प्रकाश डालते हुए कहानियों की शैली को स्पष्ट करें।

प्र3. रूप की दृष्टि से भीष्म साहनी की कहानियों पर प्रकाश डालिए ।

प्र4. भीष्म साहनी की कहानियों में भाषा के प्रयोग पर प्रकाश डालिए ।

प्र5. भीष्म की कहानियों में चरित्र शिल्प किस प्रकार का उभरा है।

9.8 सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. आलोचना त्रैमासिक पत्रिका; भीष्म साहनी स्मृति अंक – 2004, अंक 17–18, अप्रैल–सितम्बर
2. भीष्म साहनी की कहानियों में मानवीय संबंध – डॉ० संजय गडपायले
3. भीष्म साहनी की प्रमुख कहानियों में 'व्यवस्था' का चित्रण – डॉ० के. श्याम सुन्दर
4. हिन्दी कहानी रचना और परिस्थिति – सुरेन्द्र चौधरी
5. भीष्म साहनी : उपन्यास साहित्य – डॉ० विवेक द्विवेदी
6. भीष्म साहनी के उपन्यासों में संवेदना और शिल्प – डॉ० शर्मिष्ठा भाई पटेल

*****

धर्मवीर भारती की कहानियों की वैचारिक प्रतिबद्धता

10.0 रूपरेखा

10.1 उद्देश्य

10.2 प्रस्तावना

10.3 धर्मवीर भारती की कहानियों की वैचारिक प्रतिबद्धता

10.4 निष्कर्ष

10.5 कठिन शब्द

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

10.7 सन्दर्भ ग्रन्थावली

10.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत आलेख के अध्ययन के अध्ययनोपरान्त आप –

– धर्मवीर भारती की कहानियों की वैचारिक प्रतिबद्धता से संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे ।

10.2 प्रस्तावना :–

हिंदी कथा साहित्य आज जिस रूप में विकसित दिखाई दे रहा है, उसे वर्तमान रूप धारण करने के लिए बहुत लम्बी यात्रा करनी पड़ी है। कथा साहित्य की यह यात्रा भारतेंदु युग से प्रारंभ होकर प्रेमचंद, यशपाल, जैनेंद्र आदि अनगिनत साहित्यकारों के योगदान के बाद स्वतंत्रता के बाद पूरी तरह से प्रौढ़ विधा के रूप में विकसित हुई है। धर्मवीर भारती मूलतः कवि प्रकृति के रहे हैं फिर भी इनकी पांच कहानी–संग्रहों और दो उपन्यासों से इनके समर्थ कहानीकार व उपन्यासकार होने की प्रतीति होती है। भारती जी समाज में व्याप्त अंतर्विरोधों और मानवीय संबंधों की बुनावट में एक प्रमाणिक कहानीकार दिखाई देते हैं। उनकी कहानियों में सामाजिक कुरीतियों में फँसे निम्न मध्यवर्गीय जीवन की घुटन का यथार्थ चित्रण हुआ है । उनकी कहानियों में उनकी वैचारिक प्रतिबद्धता का स्पष्ट बोध होता है।

10.3 धर्मवीर भारती की कहानियों की वैचारिक प्रतिबद्धता :–

धर्मवीर भारती ने निम्न एवं मध्यवर्ग को लेकर श्रेष्ठ कहानियाँ लिखी हैं। उन्होंने कम लिखा है पर निरन्तर बेहतर लिखना ही उनका लक्ष्य रहा है। वस्तुतः वे सामाजिक परिधि की यथार्थता को अभिव्यक्ति देने वाले कहानीकार है। इसलिए उनकी कहानी में समष्टि चिन्तन मिलता है। धर्मवीर भारती जब व्यक्ति की गरिमा एवं उनके व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा जैसे कि 'सावित्री नम्बर दो' कहानी में का प्रयत्न करते हैं, तो वे व्यक्तिवादी हो जाते हैं । भारती जी का दृष्टिकोण समाज सापेक्ष है, पर वे व्यक्ति सापेक्षता की भी उपेक्षा नहीं करते और इन्हीं दोनों बिन्दुओं के मध्य उनकी कहानी कला विकसित होती है ।

धर्मवीर भारती की कहानियाँ नगरीय धरातल पर अधिक टिकी है और वहां के निम्न मध्यवर्ग के जीवन का उन्होंने अत्यंत सूक्ष्म अन्तदृष्टि एवं यथार्थता से चित्रण किया है। वे प्रारम्भ में प्रगतिशील आन्दोलन के साथ रहे हैं और उनकी कहानियों पर इसकी छाप स्पष्ट देखी जा सकती है। पर भारती की कहानियों में अन्य तथाकथित प्रगतिवादियों की भांति सिद्धान्तवादिता अथवा प्रत्येक वाक्य में सत्य के चाँद और सूरज उगाने के बजाय आस्था, विश्वास भरे संकल्प और संघर्षशील क्षमता की प्रवृत्ति प्राप्त होती है, जिसके कारण उनकी कहानियाँ विशिष्टता प्राप्त कर सकी हैं ।

भारती के पास कोई 'सिद्धांत' नहीं है, वे सिद्धान्तवादी हैं भी नहीं – उनके पास एक दृष्टिकोण है, जो युगबोध एवं भावबोध, यथार्थ जीवन परिवेश, आस्था एवं संकल्प तथा प्रगतिशीलता से सम्बन्धित है, जिसके कारण धर्मवीर की कहानियों में एक सजग कलाकार की वह गहरी स्वस्थ जीवन दृष्टि मिलती है, जिसमें सामाजिक विकृतियों एवं असंगतियों के निराकरण और नये सामाजिक रूप विधान की स्थापना की अकुलाहट है, साथ ही व्यक्ति की गरिमा एवं उसके व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा की भावना है।

कुछ कहानियां सदाबहार होती है जो शताब्दियों का सफर तय करने के बावजूद इन्सानी व्यथा से जुड़ी रहती है और लगातार पाठकों के संग यात्रा करती है। भारती जी ने कुछ ऐसे बुनियादी मुद्दों पर कलम उठायी है कि वे कहानियां आज की तारीख का सच करने की क्षमता अपने में रखती है। उन्होंने अपने समाज के कटु यथार्थ को बहुत निकट से देखा, स्वयं झेला और स्वानुभूति के स्तर पर लाकर उसका प्रभावशाली चित्रण भी किया। धर्मवीर भारती की 'यह मेरे लिए नहीं', 'बन्द गली का आखिरी मकान', 'स्वर्ग और पृथ्वी', 'मुर्दों का गांव', और 'सांस की कलम से' चर्चित कहानी संग्रह है।

भारती का दृष्टिकोण युगबोध एव भावबोध यथार्थ जीवन परिवेश, आस्था एवं संकल्प तथा प्रगतिशीलता से समन्वित है, जिसके कारण उनकी कहानियों में एक सजग कलाकार की वह गहरी स्वस्थ जीवन दृष्टि मिलती है, जिसमें सामाजिक विकृतियों एवं असंगतियों के निरकरण और नये सामाजिक रूप विधान की स्थापना की आकुलाहट है, साथ ही व्यक्ति की गरिमा एवं उसके व्यक्तित्व की प्रतिष्ठा की भावना भी है।

उनका प्रगतिशील दृष्टिकोण एक और उन्हें रूढ़ियों, अव्यवहारिक परम्पराओं, अन्याय एवं सामाजिक असमानता से उत्पन्न विसंगतियों के प्रति विद्रोह करने के लिए विवश करता है वहीं आधुनिकता के फैशन में बहकर तथाकथित नवीन जीवन परिवेश को यों ही स्वीकारने के लिए भी प्रेरित नहीं करता ।

भारती जी ने निम्न मध्यवर्ग के बहुविधि जीवन पक्षों समस्याओं एवं स्थितियों का अत्यन्त यथार्थ चित्रण इस कुशलता से किया है कि उनके दृष्टिकोण पूरी सशक्ता से सामने उभरकर आता है, चाहे वही दीनू (यह मेरे लिए नहीं) की पुकार हो, बेबसी हो और परिस्थितियों से ऊपर उठने की छटपटाहट हो, या सावित्री की करूणा हो, जो अनेक प्रश्न उपस्थित करती है और मानवीय उत्पीड़न एवं नियति का क्रूर मज़ाक बन जाती है।

भारती जी ने अपने पात्रों को जीवन के यथार्थ से चुना है और उसी यथार्थता से उन्हें प्रस्तुत भी किया है। उनकी कहानियों के पात्रों में अपूर्व सप्राणता ही नहीं यथार्थ की गहरी पकड़ भी लक्षित होती है। उनकी कहानियों की सर्वाधिक प्रमुख विशेषता यह है कि उनके पात्र एवं स्थितियां यथार्थ जीवन के लोगों एवं स्थितियों सी स्थानापन्न बनकर ही उभरती हैं।

सोद्देश्यता एवं नवीन मूल्यान्वेषण के आधार पर नव मानवतावाद की स्थापना एवं आधुनिक जीवन परिवेश में बनते–बिगड़ते मानव–सम्बन्धों की व्याख्या करना धर्मवीर भारती की कहानियों का मूल स्वर है । भारती जी ने –स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी संग्रह के माध्यम से 'मानव की महानता' व पृथ्वी को सर्वश्रेष्ठ बताया है। जीवन और प्रेम के एकत्व को भारती जी ने लगभग अपनी सभी कहानियों में प्रतिपादित किया है ।

धर्मवीर भारती का 'साँस की कलम से' संग्रह में दो तरह की कहानियां है। एक वे जिसमें जिन्दगी पूरे आव व ताव के साथ नज़र आती है और दूसरा यथार्थ की जिन्दा तस्वीर अपनी पूर्ण कलात्मकता के साथ इन कहानियों में मानवीय सरोकारों से टकराती है। इन कहानियों में व्यंग्य है, वेदना है, छटपटाहट है, आक्रोश है और इन्सानी प्यार है

भारती जी की कहानियाँ अनुराग मन का पाठ है। इनकी कहानियों में परिवेश के रूप में दर्शन वेदान्त, पुराण, इतिहास, मिथ मौजूद है – जैसे 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी ।

10.4 निष्कर्ष :–

अतः भारती जी उन दुर्लभ, असाधारण लेखकों में से थे, जिन्होंने अपनी सर्वतोमुखी से साहित्य की हर विधा को एक नया, अप्रत्याशित मोड़ दिया था। वह एक ऐसी ताजा व मौलिक दृष्टि लेकर आये थे जिसे किसी कलाकार में देखकर उसके लिए 'जीविय शब्द' मन में कौंधता है। उनका दृष्टिकोण समाज सापेक्ष है, पर वे व्यक्ति सापेक्षता की भी अपेक्षा नहीं करते हैं।

10.5 कठिन शब्द :–

1. अंतर्विरोध
2. सशक्त
3. प्रतिबद्धता

10.6 अभ्यासार्थ प्रश्न :–

प्र1. धर्मवीर भारती की कहानियों की वैचारिक प्रतिबद्धता पर प्रकाश डालिये ।

प्र2. वैचारिक प्रतिबद्धता के सन्दर्भ में धर्मवीर भारती की कहानियों को स्पष्ट करें।

10.7 संदर्भ ग्रंथ :–

1. धर्मवीर भारती की साहित्य साधना – सं. पुष्पा भारती ।
2. धर्मवीर भारती – सं प्रभाकर श्रोत्रिय ।
3. धर्मवीर भारती का रचना संसार – डॉ० सुरेश कुमार केसवानी ।

*****

M.A. Semester-II	UNIT - II	Lesson No. 11
C.No. 203		HINDI

कहानियों की मूल संवेदना

'सावित्री नम्बर दो', 'गुलकी बन्नो' एवं 'स्वर्ग और पृथ्वी' की मूल संवेदना

11.0 रूपरेखा

11.1 उद्देश्य

11.2 प्रस्तावना

11.3 'सावित्री नम्बर दो' कहानी की मूल संवेदना

11.4 'गुलकी बन्नों' की मूल संवेदना

11.5 'स्वर्ग और पृथ्वी' की मूल संवेदना

11.6 निष्कर्ष

11.7 कठिन शब्द

11.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

11.9 सन्दर्भ ग्रन्थावली

11.1 **उद्देश्य** :– प्रस्तुत आलेख को पढ़ने के बाद आप – धर्मवीर भारती की 'सावित्री नम्बर दो', 'गुलकी बन्नो' एवं 'स्वर्ग और पृथ्वी' की मूल संवेदना से अवगत हो सकेंगे।

11.2 प्रस्तावना : संवेदना शब्द 'सम्' उपसर्ग 'विद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है – समान भाव से, बराबरी से जानना या महसूस करना। संवेदना मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है, इसकी अनुभूति आन्तरिक होती है। यह ज्ञान–प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है। जिसमें स्वयं और पर दोनों की समान अनुभूति होती है। दूसरे के सुख में सुख तथा दुःख में दुःख का अनुभव करना ही संवेदना है। जो व्यक्ति जितना सहृदय होगा, उसमें संवेदना का जागरण उतना ही सशक्त होगा। यह मानव की मानवीयता और मनुष्यता को जागृत और परिष्कृत करती है। धर्मवीर भारती जी ने अपनी कहानियों के माध्यम से पाठक में मानवीयता और मनुष्यता को जागृत एवं परिष्कृत किया है। रचना की मूल संवेदना सहृदय पाठक को रचनाकार की अभिव्यक्ति के मूल उद्देश्य से तदाकार करती है और वह रचना में आए पात्र, स्थिति तथा घटना के प्रति संवेदित होता है। वास्तव में संवेदना ऐसा भाव अथवा हृदय–संवाद है जिसमें हम रचनाकार के भाव से जुड़ते, भाँपते है अथवा परखते है। पाठ्यक्रम में सावित्री नम्बर दो' 'गुलकी बन्नों, 'स्वर्ग और पृथ्वी' तीन कहानियाँ है, जिनकी मूल संवेदना पर आगे विचार किया जा रहा है।

11.3 'सावित्री नम्बर दो' की मूल संवेदना :– धर्मवीर भारती द्वारा 'बन्द गली का आखिरी मकान' 1969 में प्रकाशित कहानी संग्रह है। 'सावित्री नम्बर दो' इसी संग्रह में प्रकाशित दूसरी कहानी है। इस कहानी में मृत्यु–शैया पर लेटी एक स्त्री की एक–दूसरे से टकराती, लहूलुहान अन्तर्विरोधी भावनाओं को अलग छोड़ हृदय–भेदी पारदर्शिता के साथ उघाड़े है। सावित्री का मोह और शारीरिक वासना, देह का आकर्षण झर जाने की मर्मान्तक पीड़ा, पति के प्रति प्रेम और आक्रोश जैसी एक–दूसरी से गुँथी भावनाओं को भारती जी ने आखिरी बूंद तक निचोड़ा है।

एक बीमार व्यक्ति का क्या जीवन का घटना–चक्र वैसे ही चलता है, जैसा हम उसे देखते हैं। वह थोड़ा–सा बदल जाता है और भारती जी उसके इसी बदलाव को बड़ी ही सूक्ष्मता से इस कहानी में व्यक्त करते हैः ''लम्बी बीमारी में वक्त गुजारने का हिसाब भी अजब होता है। कुछ चीजों को लेकर वक्त जहाँ का तहाँ थम जाता है। जो घटना हुई, बस वही होती रहती है....उस घटना का घटित होना अपने में मुकम्मिल हो गया है। कुछ चीजें ऐसी है जो मशीन की तरह अपने वक्त से होती जा रही हैं....शाम होना, पार्क में बच्चों का इकट्ठा होना, पतंग उड़ाना, सामने की खिड़की से उस लड़की का जवान और चंचल होते चले जाना। सब अपनी जगह चक्के की तरह घूम रहे हैं। कुछ आगे नहीं बढ़ता।''

कहानी का शीर्षक ही हमारा ध्यान सावित्री की ओर आकृष्ट करता है। जो सती सावित्री से भिन्न एक सामान्य स्त्री है। लेखक ने इस कहानी में रोगग्रस्त व्यक्ति की मनोव्यथा का चित्रण किया है। सावित्री अपने पति व परिवार की बड़ी प्रिय थी। परन्तु उसे क्षय रोग लग गया। जिसके कारण उसे ऐसा लगने लगा कि अब वह किसी के लिए काम की नहीं रही। वह अपने पति को प्यार भी करती और आक्रोश में आकर कटु शब्द भी कहती। उसे लगने लगा की वह घर में पड़ी किसी बेकार वस्तु के अतिरिक्त कुछ नहीं है। अपनी इसी सोच के कारण वह अपनी बहन का संबध अपने पति के साथ जोड़ती है और उन दोनों पर शक करती है। पूरे घर में सावित्री

की शंका ने सन्नाटा बना दिया था। भारती जी ने सावित्री के माध्यम से रोग ग्रस्त व्यक्ति की कुंठित मनोवृतियों का चित्रण किया है।

सावित्री के माध्यम से लेखक ने पश्चाताप की भावाभिव्यक्ति भी करायी है। कहानी में मानवीय पश्चाताप की वृत्ति का चित्रण किया गया है। मानव आक्रोश में आकर गलत कदम उठा लेता है परन्तु समय निकलने के पश्चात पछताता है। ऐसी ही स्थिति सावित्री के साथ होती है। सावित्री अपने शरीर को असमर्थन पाते हुए पति को बुरा कहती और और बाद में पश्चाताप भी करती है कि जो व्यक्ति मेरे रोग को जानते हुए भी दिन–रात मेरे साथ है, वह मुझे कुछ नहीं कहता। सावित्री अपने आप को पति के आगे छोटा पाती है क्योंकि उसका पति निस्वार्थ भाव से उसके साथ है और अपनी माँ के कहने पर दूसरी शादी भी नहीं करता। इसी के चलते भी कुंठित सावित्री पति पर आरोप करती है।

इस कहानी में लेखक ने मानव में व्याप्त ईर्ष्या की भावना का चित्रण भी किया है। असाध्य बीमारी की अस्थिर मनःस्थिति के कारण सावित्री अपनी छोटी बहन सित्तों को अपने पति के कंधे से सटकर खड़ा देखकर ईर्ष्या से जल उठती है। वह अपनी माँ, ननद व सास के लिए भी अपशब्दों का इस्तेमाल करती है। अपने रोग के कारण दुखी हो वह सब को गलत कहती और अन्त में चुप होकर स्वयं कोने में पड़ी रहती।

अतः इस कहानी के माध्यम से लेखक ने रोग ग्रस्त सावित्री की पीड़ा को नये कोण से दिखाया है। सावित्री शरीर की पीड़ा के साथ–साथ मन की पीड़ा से ग्रस्त है।

11.4 'गुलकी बन्नों' कहानी की मूल संवेदना :– 'गुलकी बन्नो' कहानी बन्द गली का आखिरी मकान' की प्रथम कहानी है। इसमें लेखक ने परित्यक्त स्त्री का उपेक्षा भरा जीवन, मायके लौट आना, रिश्तेदारों एवं समाज में मिली हिकारत, खासतौर से घेघा बुआ द्वारा सताना, एक मात्र आसरा मकान का ढ़ह जाना, फाके पड़ना, सत्ती के घर में आश्रय और फिर पति के बुलाने पर उससे भी बदतर जिंदगी बिताने के लिए चले जाने का चित्रण किया है। 'गुलकी' के माध्यम से परित्यक्त स्त्री का जीवन चित्रित हुआ है।

गुलकी अपने पिता की अकेली सन्तान है और बाद में पिता की मृत्यु भी हो जाती है। वह संघर्षमय जीवन बिताती है। अपने पति के साथ पांच वर्ष रहने के बाद, पति उसका परित्याग कर देता है। क्योंकि वह एक मृत्यु शिशु को जन्म देती है। गुलकी पति द्वारा प्रताड़ित होती है। उसका पति उसे सीढ़ी पर से धकेल देता है, जिसके कारण वह जिन्दगी भर के लिए कुबड़ी हो जाती है और पति का घर भी छोड़ना पड़ता है।

लेखक ने कहानी में परित्यक्त स्त्री के साथ कटु व छलपूर्ण व्यवहार को चित्रित किया है। समाज में लोग अकेली स्त्री को घृणा की दृष्टि से तो देखते ही हैं, इसके साथ ही उसकी संपति हथिया कर उसका अपमान भी करते हैं। अकेली स्त्री की आजीविका कमाने में मदद करने की वजह, जो कुछ उसका है उसे लेने के प्रपंच रचते है। ड्राइवर बाबू, नीरभल की माँ तथा घेघा बुआ के माध्यम से लेखक ने कपटी व्यक्तियों का चित्रण किया है, जो लोगों की संपति हथियाने के इरादे रखते है। घेघा बुआ पहले तो गुलकी को शरण देती है पैसे के लालच

में। परन्तु जब गुलकी की दुकान नहीं चल पाती और वह बुआ को किराया नहीं दे पायी। तब घेघा बुआ उसे चौतरे से निकाल देती है। वह उसका अपमान करती है और उसकी दुकान को भी बर्बाद कर देती है।

लेखक ने इस कहानी के माध्यम से अस्वस्थ या कुबडे व्यक्ति का समाज द्वारा मज़ाक उड़ाने का चित्रण भी किया है। गुलकी जब वापिस अपने मायके आती है तो मुहल्ले के बच्चे उसे देखकर आश्चर्य चकित हो जाते हैं। अपने खेलने के चौतरे पर गुलकी की दुकान लगते देखकर उन्हें गुस्सा भी आया और वे इसी कारण तंग भी करते है। वे उसे कभी कुबड दिखाने के लिए कहते है। कभी उसे चिढ़ाते हुए कहते– ''कुबड़ी–कुबड़ी का हेराना''। एक बार तो मेवा ने उसकी पीठ पर धूल फेंकी और सब बच्चों ने मिलकर उसे बुरी तरह पीटा भी। इस दयनीय स्थिति के बीच भी वह यही समझती है– ''हमारा भाग ही खोटा है''। वह चुपचाप सबकी बातें सुनती और अपने भाग्य को कोसती।

लेखक ने कहानी में सत्ती के माध्यम से ऐसी स्त्री का चित्रण किया है जो निस्वार्थ भाव से औरों की मदद करते है। पति व समाज द्वारा दुत्कारे जाने के पश्चात सत्ती गुलकी को अपने घर में पनाह देती है और उसे अन्याय के खिलाफ लड़ने को भी कहती है। उसे बुरे लोगों का साथ न देकर, उनके विपक्ष में खड़े होने के लिए समझती है। अन्त में जब उसका पति उसे दोबारा लेने आता है तो वह उसे जूते लगाने को कहती परन्तु वह नहीं लगाती और उसके साथ जाने को कहती है। तब सत्ती खुशी–खुशी गीत गाते हुए उसे विदा करती है। गुलकी तब सत्ती से कहती है कि ''अपनी सगी बहन क्या करेगी जो सत्ती ने किया हमारे लिए।''

लेखक ने गुलकी के साध्यम से ऐसी स्त्री का चित्रण किया है जो शारीरिक व आर्थिक रूप से असमर्थ होने के कारण अन्याय को अपना भाग्य समझ कर अपनाती है। गुलकी एक ऐसी पारंपरिक सोच वाली स्त्री है जो पति द्वारा प्रताड़ित होने के उपरान्त भी पति को नहीं छोड़ना चाहती। चाहे पति जीवन भर उसे कष्ट क्यों न दे।

अतः लेखक की इस कहानी की मूल संवेदना परित्यक्त स्त्री के जीवन संघर्ष से जुड़ी हुई है।

11.5 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी की मूल संवेदना

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी में भारती जी ने कल्पना का विषय प्रस्तुत किया है कि 'कल्पना विस्मय से स्तब्ध थी।'' कल्पना को चारों और से सजाने वाले भारती जी आकाश–पृथ्वी–वर्ग का निष्पाप वातावरण आकाश का निरभ्र सौंदर्य, पृथ्वी को बाधा पहुँचाने वाली कल्पना उसमें निवास करती है। साज–शृंगार से सजी पृथ्वी पर अनेक प्राणियों का निवास है। भारती जी ने स्वर्ग और पृथ्वी का विषय प्रस्तुत करते समय कहा है कि स्वर्ग का वातावरण बहुत सुखमय जीवन का वातावरण है। स्वर्ग के लोग पृथ्वी पर कभी निवास नहीं करते। परंतु पृथ्वी के लोग स्वर्ग में रहने के सपने देखते हैं।

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी में एक मूल–भावना जो निहित है, वह है 'मानव की महानता'। जीवन की

सभी अच्छाइयों और बुराईयों के साथ भी मानव इतना महान् है, इतना ऊँचा है कि देवताओं तक को उसके भाग्य से ईर्ष्या होती है, यही है वह जिसे कि भारती का जागरूक कलाकार इस कहानी के माध्यम से पाठक तक पहुँचाना चाहता है। आज के विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक वादों ने मनुष्य की स्वाभाविक उच्चता को दबा–सा रखा है।

जिस प्रकार के जीवन को लेखक दुनिया में देखना चाहता है, उसका आधार है प्रेम। प्रेम अथवा रागात्मिक वृत्ति के सहारे ही जीवन अपनी सारी कठिनाइयों में भी मनोरम लगता है। मनुष्यत्व दुनिया की सबसे ऊँची सत्ता है। प्रेम ऐसी प्रबल शक्ति का आधार बनने के ही कारण लेखक मनुष्य को इतना ऊँचा स्थान देता है। देवदूत के शब्दों में– ''प्रेम की इतनी भीषण प्रेरणा और जीवन की इस आधार शून्य यात्रा का भार मनुष्य ही वहन कर सकता है।'' रेशम–सी सुकुमार यह कहानी हृदय को स्पर्श करती है और मस्तिष्क को कुछ सोचने के लिए भी देती है। यही इनकी सबसे बड़ी विशेषता है। कहानी के अन्त में 'कल्पना' और 'प्रेम' नर–नारी में समा जाते है। वेदना भी मनुष्य हृदय में समा जाती है। स्वर्ग तथा स्वर्ग के लोग इस वेदना को सहन करने में असमर्थ बताये गये हैं। पृथ्वी पर मनुष्य के पास कल्पना, प्रेम और वेदना होने के कारण ही स्वर्ग के देवता लालायित होते हैं पृथ्वी पर आने के लिए।

अतः इस कहानी में लेखक ने मानव की महानता व पृथ्वी सर्वश्रेष्ठता को दिखाया है।

11.6 **निष्कर्ष** : अतः अन्त में कह सकते है कि धर्मवीर भारती की कहानियों की मूल संवेदना निम्न मध्यवर्गीय समाज की यथार्थता से सम्पृक्त है। रोग ग्रस्त व परित्यक्त स्त्री मन की उत्कंठा को लेखक ने इन कहानियों में उजागर किया है। इसके साथ ही मनुष्य की महता और प्रेम की महत्ता को भी दिखाया है।

11.7 **कठिन शब्द** :– 1. पारदर्शिता 2. अन्तर्विरोध 3. संवेदना।

11.8 **अभ्यासार्थ प्रश्न** :

प्र॰1. धर्मवीर भारती की कहानी 'स्वर्ग और पृथ्वी' की मूल संवेदना लिखें।

प्र०2. धर्मवीर भारती की कहानियों की मूल संवेदना पर प्रकाश डालें।

प्र०3. 'गुलकी बन्नों' कहानी की मूल संवेदना को स्पष्ट करें।

प्र॰4. 'सावित्री नम्बर दो' की मूल संवेदना पर प्रकाश डालें।

11.9 संदर्भ पुस्तकें :

1. धर्मवीर भारती की साहित्य साधना – पुष्पा भारती
2. धर्मवीर भारती की रचना संसार – डॉ. सुरेश कुमार केसबानी।
3. धर्मवीर भारती : सृजन के विविध रंग – डॉ. चन्द्रभानु सोनवणे

*****

धर्मवीर भारती की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

12.0 रूपरेखा

12.1 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.3 निर्धारित कहानियों का शिल्प

12.3.1 'सावित्री नम्बर दो' कहानी का शिल्प

12.3.1.1 कथानक

12.3.1.2 चरित्र

12.3.1.3 देशकाल

12.3.1.4 भाषा

12.3.2 'गुलकी बन्नो' कहानी का शिल्प

12.3.2.1 कथानक

12.3.2.2 चरित्र

12.3.2.3 देशकाल

12.3.2.4 भाषा

12.3.3 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी का शिल्प

12.3.3.1 कथानक

12.3.3.2 चरित्र

12.3.3.3 देशकाल

12.3.3.4 भाषा

12.4 निर्धारित कहानियों के चरित्र

12.4.1 'सावित्री नम्बर दो' कहानी का चरित्र

12.4.2 'गुलकी बन्नो' कहानी का चरित्र

12.4.3 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी का चरित्र

12.5 निष्कर्ष

12.6 कठिन शब्द

12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

12.8 सन्दर्भ ग्रन्थ / पुस्तकें

12.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप –

– धर्मवीर भारती की निर्धारित कहानियों के शिल्प से अवगत हो सकेंगे ।

– धर्मवीर भारती की निर्धारित कहानियों के प्रमुख चरित्रों संबंधित जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

12.2 प्रस्तावना :–

धर्मवीर भारती हिन्दी के जाने माने कहानीकार हैं। साहित्य की अनेक विधाओं में भारती जी को अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई है। उन्हें आधुनिक प्रयोगवादी काव्यधारा के एक प्रमुख आधार स्तम्भ के रूप में जाना जाता है। वे वस्तुतः सामाजिक परिधि की यथार्थता को अभिव्यक्ति देने वाले कहानीकार है। उनकी कहानियों में निम्न एवं मध्य वर्ग के व्यक्तियों का चित्रण हुआ है। उनकी कहानियों की शैली व चरित्र चित्रण निम्न व मध्यवर्ग के जीवन को मुखरित करता है।

12.3 निर्धारित कहानियों का शिल्प :

किसी भी विधा से उसकी विषय वस्तु उसके शिल्प और शैली का परिचालन करती है। शिल्प के अन्तर्गत हम किसी रचना, कथा, कविता का तात्विक विवेचन करते हैं। धर्मवीर भारती सामाजिक परिधि की यथार्थता को अभिव्यक्ति देने वाले कहानीकार हैं। उनकी कहानियों का शिल्प निम्नलिखित है।

12.3.1 'सावित्री नम्बर दो' कहानी का शिल्प :

'बंद गली का आखिरी मकान' संकलन की दूसरी कहानी 'सावित्री नंबर दो' है। कहानी का शीर्षक ही हमारा ध्यान सावित्री नंबर एक की ओर आकृष्ट करता है और नंबर दो की सावित्री को जानने के लिये मन में कुतूहल जगाता है। एक नंबर सावित्री ने अपने पति सत्यवान के लिए मृत्यु को जीता था। किन्तु नंबर दो की सावित्री न तो इतनी पवित्र है और न ही निष्ठामयी, कि वह मृत्यु को जीत सके। इस कहानी में लम्बी असाध्य बीमारी में घुलते हुए एक व्यक्ति की मानसिकता को उपस्थित किया गया है। इस कहानी का शिल्प निम्नलिखित तत्वों से स्पष्ट होता है।

2.3.1.1 कथानक :–

कहानी का कथानक पांच भागों में विभक्त है। सावित्री की माँ ने वट–सावित्री की पूजा की थाली को छूने के लिए कहा, तो सावित्री सुनकर भी अनसुना कर गई। इसी अनसुनी बात से ही कहानी का विस्तार होता है, यहीं से कहानी शुरू हुई है। पहले कथांश में सावित्री ने जिंदगी और मौत के बीच की तीसरी स्थिति की असहनीयता का उल्लेख किया है। दूसरे अंश में पूर्वदीप्ति के अनुसार बीते हुए छह सालों की कहानी है तीसरे अंश में दूसरे दिन की घटनाओं का। चौथे अंश में पहले दो सालों के बीच पनपे राजाराम के संबंधों का विवरण है। पांचवे अंतिम भाग में बहन सितों के बदले हुए रूख और परिणामतः सावित्री के व्यवहार परिवर्तन का उल्लेख है। इसी के अन्त में कहानी के आदि और अंत को जोड़ दिया है।

12.3.1.2 चरित्र :–

कहानी की कथावस्तु किसी भी प्रकार की क्यों न हो, वह किसी न किसी पात्र पर आधारित रहती है। कहानी में जिनके सम्बन्ध में कथा कही जाती है, वे कहानी के पात्र होते हैं। प्रस्तुत कहानी में सावित्री के अतिरिक्त अन्य चरित्र गौण हैं। कहानी में सावित्री का पति आद्यन्त है। इसमें एक पात्र सावित्री की माँ है। अपनी माँ से कुढकर सावित्री उस पर यह आरोप लगाती है कि माँ उससे बचपन से जलती है। सावित्री की बहन सितो कहानी का पात्र है। सितो पर सावित्री शक करती थी और अपने पति के साथ संबंध होने की शंका के कारण अपने पति व बहन को बाते सुनाती है। शेष चरित्रों में आद्यन्त सरल विकास है। केवल सितो के चरित्र में अलग रूप का उभरना महत्त्वपूर्ण है।

12.3.1.3 देशकाल :–

इस कहानी का देशकाल अत्यन्त सीमित है। कहानी में सावित्री के मायके का घर घटनास्थल है। 'पलस्तर उखड़ी हुई खिड़की' के पास उसका पलंग है। पलंग के पास एक खिड़की है, जो राजाराम के प्रसंग के समय बंद कर दी गई थी और 'सावित्री' का क्रोध जब शान्त हुआ तब खोल दी गयी थी। इसमें गिने–चुने दिन की कहानी है। शेष कहानी को स्मृत्संग रूप में ही उपस्थित किया गया है।

12.3.1.4 भाषा :

भाषा के स्वरूप की दृष्टि से भारती की कहानियों में जो बात सबसे पहले ध्यान में आती है वह उसकी तत्सम प्रधानता की है। इस कहानी में औकात शब्द का प्रयोग वाक्य में किया है – ''साला चपरासी का लड़का अपनी औकात भूल गया।'' इसके साथ ही इनकी कहानी में मध्यम और निम्नवर्गीय जीवन की भाषा मिलती है। तद्भव शब्दों का प्रयोग भी हुआ है – हाथ, आँसू, सूत, मौत, मांस, मुँह, मन, होंठ, कायर, पांव, रात, आदि। विदेशज शब्द भी इस कहानी में आये हैं – डॉक्टर, पार्क, मास्टर, फर्स्ट पोजीशन, सिंदूर, मशीन, सब्जी, डियर आदि।

12.3.2. 'गुल्की बन्नो' कहानी का शिल्प :

कहानी के नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह 'गुलकी' की कहानी है। गुलकी अपने पिता की अकेली संतान है। गुलकी का चरित्र ही इस कहानी का सर्वस्व है। गुलकी के पिता इसके विवाह में ही मटियामेट हो गये। किन्तु गुलकी का पति कसाई निकला, उसने रखैल रख ली और गुलकी को घर से बाहर निकाल दिया। उसके उपरान्त जब वह अपने घर लौटती है तो उसे अनेक मुश्किलों का सामना करना पड़ता है और अन्तः गुलकी अपने पति की सभी

गलतियों को नज़र अंदाज कर पुनः उसके साथ घर लौट जाती है। 'गुलकी बन्नो' कहानी का शिल्प इस प्रकार है।

12.3.2.1कथानक :–

प्रस्तुत कहानी का कथानक पांच कथांशों में विभक्त है। कहानी का प्रारम्भ नाटकीय प्रणाली से किया गया है। प्रारंभिक कथांशों के बाद गुलकी के पूर्ववृत्त को उपस्थित करते समय भी नाटकीय प्रस्तुतिकरण हुआ है। कथानक का अंत भावुकतापूर्ण प्रसंग के साथ हुआ है।

12.3.2.2 चरित्र :–

इस कहानी का मुख्य चरित्र गुलकी का है, किन्तु उसके चरित्र को उजागर करने के लिए जिन अन्य पात्रों को कहानी में लाया गया है, उनका स्वरूप उभारने में लेखक को सफलता मिली है। द्येघा बुआ, ड्राइवर बाबू, ड्राइवर बाबू की पत्नी, साबुनवाली सती तथा बच्चों को गुलकी के चरित्र को उजागर करने के लिए कहानी में लाया गया ।

घेघा बुआ अर्थलोलुप्त स्त्री है। यह बात गुलकी को सहायता देने की घटना में छिपी अर्थलोलुपता तब और भी अधिक स्पष्ट हो जाती है, जब वह गुलकी के मकान को मिट्टी के मोल खरीदने में सहायता देकर उसके बदले ड्राइवर बाबू से सौ रूपये लेती है। कहानी में साबुनवाली सत्ती ने अपने दबंग स्वभाव के द्वारा रंग भर दिया है। सत्ती ने गुलकी की निःस्वार्थ भाव से सहायता की है, जिसे स्वीकार करते हुए गुलकी बन्नो कहती है – ''अपनी सगी बहन क्या करेगी जो सत्ती ने किया हमारे लिये।'' वह गुलकी के लिए धेघा बुआ, ड्राइवर बाबू से बहस भी करती है।

12.3.2.3देशकाल :–

कहानी का देशकाल जैसा चाहिए उसे वैसे ही रूप में उपस्थित किया गया है। यह कहानी प्रयाग के एक मुहल्ले में घटित है। इसमें मुख्य घटनास्थल धेघा बुआ का चौतरा है। इसमें गौण रूप से ड्राइवर बाबू का घर तथा द्येद्या बुआ का घर घटनास्थल है। यह कहानी लगभग पूरे वर्ष की कहानी है। पहले कथांश में गरमी का एक दिन है। दूसरे कथांश में बरसात के दो दिनों के प्रसंग है। तीसरे, चौथे और पांचवे कथांशों में जाड़े के चार दिनों की कहानी है।

12.3.2.4भाषा :–

कहानी में यथार्थता लाने के लिए लेखक ने स्थानीय बोली का प्रयोग किया है। इस बोली के कारण चरित्रों को स्वभाविकता प्राप्त हुई है और वातावरण के निर्माण में सहायता भी मिली है। द्येद्या बुआ रास्ते पर पड़ी गुलकी को उठाते हुए बिगड़ कर कहती है – ''औकात रत्ती भनै, और तेहा पौवा भर।'' छोटे बच्चों का अवधी बोली में सवाल–जवाब करते हुए बुढ़िया का खेल खेलना बड़े ही सरस रूप में उपस्थित किया गया है –

''कुबड़ी – कुबड़ी को हे राना ?''

सुई हिरानी

''सुई लैके का करबे ?''

''कथा सीबै ।''

स्थानीय बोली के प्रयोग से इस प्रसंग में हमारा ध्यान द्येद्या बुआ के संवादों की ओर चला जाता है। कहानी की भाषा में स्थानीय भाषा के चिबिड्डी, बिलवोटी, झींसी आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं। भाषा में स्वभाविकता भी दिखाई पड़ती है। इस दृष्टि से मिरवा और मटकी तोतली भाषा बोलते है – 'छलाम गुलाकी' ।

12.3.3 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी का शिल्प :–

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी संग्रह में कुल 14 कहानियाँ है। भाषा की रंगमंचीयता और उड़ान के कारण यह कहानियां परलोक की प्रतीत होती हैं। इस कहानी में लेखक ने मनुष्य जीवन के शाश्वत प्रश्नों को उठाया है। इस कहानी में लेखक ने स्वर्ग से बढ़कर पृथ्वी को बताया है। इस कहानी की मूल भावना मानव की महानता है। जीवन की सभी अच्छाईयों और बुराईयों के साथ भी मानव इतना महान् है, इतना ऊँचा है कि देवताओं तक को उसके भाग्य से ईर्ष्या होती है। इस कहानी का शिल्प इस प्रकार है।

12.3.3.1कथानक :–

कहानी के आरम्भ से ही इस कहानी के कथानक का आभास हो जाता है – ''चाँदनी के सागर के तट पर, स्वर्ग के एक उजाड़ कोने में, हलके सुनहरे बादलों का एक प्रसाद था।'' लेखक की यह कहानी स्वर्ग में घटित है। लेखक ने अपनी कल्पना के धरातल पर स्वर्ग और पृथ्वी पर प्रेम के महत्त्व को दिखाया है। कहानी के अंत में पृथ्वी का वर्णन हुआ है। पूरी कहानी स्वर्ग में चलती है।

अंत में पृथ्वी की ओर प्रस्थान करती है। स्वर्ग के लोग पृथ्वी पर कभी निवास नहीं करते। परन्तु पृथ्वी के लोग स्वर्ग में रहने के सपने देखते हैं।

12.3.3.2चरित्र :–

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी में कल्पना, प्रेम और वेदना चरित्र रूप में चित्रित किये गये हैं। देवराज इन्द्र भी इस कहानी का गौण पात्र है।

कल्पना एक ऐसी पात्र है जो अपने सूनेपन की रानी थी। वह स्वर्ग में रहती हुई भी स्वर्ग से अलग रहती थी। कल्पना अपने ही महल की दुनिया में रहती थी। 'प्रेम' एक देवकुमार था जिसे स्वर्ग से निर्वासित कर दिया गया था। क्योंकि प्रेम किसी भी बंधन को स्वीकार नहीं करता। परन्तु 'प्रेम' कल्पना के देश की नीरवता और एकान्त को भंग करता है। कल्पना प्रेम के प्रति सहानुभूति रखती है। इस पात्र के माध्यम से लेखक ने प्रेम की शाश्वता को दिखाया है। प्रेम निस्वार्थ होता है और कल्पना का आश्रय पाकर 'स्वर्ग' की प्राप्ति कर लेता है।

12.3.3.3 देशकाल :–

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी में स्वर्ग और पृथ्वी का चित्रण हुआ है। एक ऐसा लोक जिसे व्यक्ति मरणोपरान्त पाने की कामना रखता है। हम सब लोग इस पृथ्वी पर वास करते है। स्वर्ग एक कल्पना जगत है। इसमें प्रेम के निर्वासन के उपरान्त कल्पना और प्रेम का स्वर्ग को त्याग कर पृथ्वी की ओर जाने का वर्णन किया गया है।

12.3.3.4 भाषा :

इस कहानी में भाषा की प्रांजलता तथा निखार सराहनीय है। शब्द–योजना सुकुमार होते हुए भी भावों को

वहन करने में पूर्ण समर्थ है। संस्कृतनिष्ठ शब्दावली का प्रयोग इस कहानी में हुआ है। दृश्य–चित्रों की योजना में भारती की भाषा बहुत सफल है। दृश्य–चित्रों के विधान के अतिरिक्त कहीं–कहीं लेखक ने उपमाएं भी बहुत अनूठी दी है। "चंचल लहरों का मन्द स्वर हल्के–हल्के झकोरों के साथ थपकियां देता था। जलपक्षियों का मधुर सुकोमल संगीत उसे लोरी सुनाता था वह पलकें मूंद कर सो जाती थी।" भाषा में कहीं–कहीं लाक्षणिकता का स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित होता है।

अतः कहा जा सकता है कि धर्मवीर भारती की कहानियों में अपूर्व संवेदनशीलता, सामाजिक दायित्व का निर्वाह करने का आग्रह, यथार्थपरक सामाजिक परिवेश के बहुविध पक्षों के सूक्ष्म उद्‌घाटन करने की प्रयत्नशीलता लक्षित होती है। इन तीनों कहानियों की विषय–वस्तु तत्काल जीवन की विविध परिस्थितियों तथा काल्पनिकता के सन्दर्भ में वर्णित की गयी है।

12.4 निर्धारित कहानियों के चरित्र :–

किसी भी कहानी की कथावस्तु जिस भी प्रकार की क्यों न हो, परन्तु वह किसी न किसी पात्र पर ही आधारित होती है। कहानी में पात्रों की संख्या जितनी कम हो उतनी अच्छी मानी जाती है। कहानी के पात्रों में स्वभाविकता, सहजता, सजीवता, मूलभाव और घटना के प्रति अनुकूलता रहनी चाहिए ।

पात्र वे होते हैं, जिनके बारे में कहानी में कथा कही जा रही हो। कहानी में मुख्य पात्र और गौण पात्र होते हैं। मुख्य पात्र को कहानी में नायक कहते हैं। कहानी में जिस प्रकार पात्रों को चित्रित किया जाता है, उसे चरित्र–चित्रण कहते है। निर्धारित तीनों कहानियों के चरित्रों का चित्रण इस प्रकार है।

12.4.1 "सावित्री नम्बर दो' कहानी के चरित्र :–

धर्मवीर भारती ने अपने पात्रों को जीवन के यथार्थ से चुना है और उसी यथार्थता से उन्हें प्रस्तुत भी किया है। 'सावित्री नम्बर दो' कहानी की मुख्य पात्र सावित्री है, जिसका चित्रण कहानीकार ने आत्म–विश्लेषणात्मक प्रणाली से किया है। इस कहानी में सावित्री के चरित्र का विश्लेषण किया गया है।

'बन्द गली का आखिरी मकान' संकलन की दूसरी कहानी 'सावित्री नम्बर दो' का शीर्षक ही हमारा ध्यान सावित्री की ओर आकृष्ट करता है। सावित्री कहानी का प्रधान पात्र है। इसके व्यक्तित्व को उजागर करने के लिए लेखक ने अन्य पात्रों का समावेश किया है। अन्य पात्रों में सावित्री का पति, सास, माँ, सित्तो, राजाराम, माया मौसी आदि का समावेश है।

12.4.1.1सावित्री का चरित्र चित्रण :–

सावित्री इस कहानी का प्रधान पात्र है। असाध्य रूग्ण सावित्री एक साधारण नारी है, जिसे कहानी में अपने जीवन की घटनाओं को आत्मकथा के रूप में प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत कहानी में सावित्री के अतिरिक्त अन्य चरित्र गौण है। इस कहानी में सावित्री की पीड़ा एक नये कोण से उठती है – शरीर की पीड़ा बनाम मन की पीड़ा। सावित्री दो प्रकार के क्षय रोग से लड़ रही है। एक शरीर के क्षय रोग से और दूसरा मानसिक क्षय रोग से जिसमें संस्कारों और परम्परित मूल्यों के रूप समाहित है।

कहानी में सावित्री का पति आद्यन्त सम्बन्धित है। सावित्री पति को बांधे रखने में असमर्थतता का अनुभव करती है। वह क्षय रोग से ग्रस्त होने के कारण अपने पति को खुश रखने में अपने आप को असमर्थ समझती है। सावित्री को विवाह के बाद उसकी सास ने आर्शीवाद देते हुए कहा – ''जैसा नाम वैसी बनो बहू।'' सावित्री ने वैसा बनने का प्रयत्न भी सोत्साह किया था और इसी उत्साह के आवेश में उसने कैप्टन मुरारी के कंधे पर हाथ रखने के कारण तमाचा मारा था। किन्तु परिस्थितियों ने कुछ ऐसा मोड़ लिया कि सावित्री ने अपने पति की मौत तक की कामना की थी। इसीलिये तो आत्मविश्लेषण करते हुए इस दूसरी सावित्री ने सती सावित्री को संबोधित करते हुए कहा – ''मृत्यु की दूसरी गाथा है सावित्री बहन, तुम्हारी गाथा से बिल्कुल पृथक।'' सती सावित्री की मौत सत्यवान की मौत के समान आसान नहीं है, जिसने किसी प्रकार की जटिलता न हो और न ही सत्यवान के समान मृत्यु के द्वार से गौरव भरी वापसी ही है। यह तो एक हाडमॉस के व्यक्ति की मृत्यु गाथा है, जिसे मृत्यु की मर्मांतक प्रतीक्षा करनी पड़ रही है। इस प्रकार की पीड़ा से सत्यवान अछूता रहा था।

मृत्यु की चेतना सावित्री से तब उत्पन्न हुई, जब वह असाध्य रोग के चुंगल में फंस गई। रोग में फंसने से पूर्व उसने लाड़ला बचपन बिताया था। तब उसकी 'माँ' उसे प्यार से 'सवित्तरा' कह कर पुकारती थी। शादी के बाद तो मैके की 'सवित्तरा' पति की 'सावी' बन गई थी। किन्तु हड्डी–हड्डी को गलाने वाले असाध्य रोग के कारण शादी के दूसरे साल में ही परिस्थिति में परिवर्तन प्रारम्भ हो गया ।

सावित्री को लगता है कि रोगग्रस्त होने के कारण अब वह अपने परिवार व पति पर भोज बनकर रह गई है। उसे ऐसे अनुभव होता है कि ''वह उनके गले पड़ा एक अनावश्यक बोझ है जिसे न अब वह ढो पाती है, न उतार पाती है।'' वह रोज देखती की धीरे–धीरे पति के मन से प्यार मरता जा रहा है। उसका पति उससे इसलिये स्नेह रखता है कि इस औरत को अब थोड़े दिन जीना है, तो इसका दिल क्यों दुखाया जाए। इसी आशंका के चलते वह अपने पति पर शक करती है। अपनी ही छोटी बहन का संबंध अपने पति से सोचती है। सावित्री में आत्मविश्वास और संतोष की मनःस्थिति क्षणिक बनकर रह जाती है। असाध्य बीमारी की अस्थिर मनःस्थिति के कारण सावित्री अपनी छोटी बहन सित्तो को पति के कंधे से सटकर देखकर ईर्ष्या से जल उठती है।

सावित्री उद्विग्नता और कड़वाहट से बरती जा रही थी। उसे अपनी बीमारी के कारण ऐसा लगता कि वह अब अपने पति के लिए बेकार वस्तु के समान है। ''क्या इनका प्यार केवल मेरे शरीर का नहीं है ? पर और तो मुझमें कुछ है नहीं। तब तो जिस दिन ये जान जायेंगे कि मैं उस शरीर के अलावा कुछ नहीं, जो गल चुका है तो मैं कितनी छोटी लगूंगी इनके प्यार के आगे।'' इसी सोच के कारण सावित्री अपने पति व अपने ससुराल वालों के लिए अपशब्दों का इस्तेमाल करती है। अपने आप को पति से श्रेष्ठ बनाये रखने के लिए पति पर ताने कसती है।

सावित्री पूरी तरह पतिव्रता स्त्री भी नहीं है। अपनी बीमारी के समय वह 'राजाराम' नामक पुरूष पर आसक्त हो जाती है । राजाराम सावित्री के पिता के दफ्तर के चपरासी का लड़का था। वह सावित्री की सेहत का ध्यान रखता और सावित्री को भी उसके साथ समय व्यतीत करना पसंद था। उनके आपसी संबंध को लेकर आस–पड़ोस व संबंधियों में बातें होती। माया मौसी सावित्री की माँ से शिकायत करती हुई कहती है कि ''राजाराम से तो घुलमिलकर बातें होती हैं और अपना आदमी शाम को आता है तो मुँह लटकाकर बैठ जाती है।'' वह राजाराम के आने का इंतजार

करती तथा उसके आने पर प्रसन्नचित हो उठती है। एक मुहल्ले के लड़के सावित्री को 'राजाराम' के नाम से छोड़ते हैं तो वह आवेश में आकर उनसे झगड़ पड़ती है।

वह अपने आक्रोश में अपने माता–पिता, बहन, पति, सास, ननद के लिए अपशब्दों का इस्तेमाल कर उनका अपमान करती है। वह अपनी बीमारी के कारण मानसिक तनाव से ग्रस्त थी।

12.4.2 'गुलकी बन्नो' कहानी का चरित्र :–

कहानी के नाम से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि यह 'गुलकी' की कहानी है। किन्तु उसके चरित्र को उजागर करने के लिए अन्य पात्रों को कहानी में लाया गया है – घेघा बुआ, ड्राईवर साहब, सत्ती मेला, निर्मल की माँ, मटकी, गुलकी का पति आदि पात्रों को यथोचित स्थान दिया है। परन्तु गुलकी का चरित्र इस कहानी का मुख्य चरित्र है।

गुलकी के चरित्र चित्रण में कहानीकार की कलात्मकता का परिचय मिलता है। गुलकी के माध्यम से कहानीकार ने परित्यक्ता स्त्री का जीवन चित्रित किया है। गुलकी अपने पिता की अकेली सन्तान है। पिता इसके विवाह में ही मटियामेट हो गए। जिससे विवाह हुआ वह कसाई निकला। जब गुलकी को शादी के पांच साल बाद मरा हुआ बच्चा पैदा हुआ, तो उसने गुलकी को सीढ़ी पर से नीचे ढकेल दिया, जिसके परिणामस्वरूप वह जिन्दगी भर के लिए कुबड़ी हो गयी। उसके बाद उसके पति ने रखैल रख ली और गुलकी को घर से निकाल दिया।

पति द्वारा परित्यक्त स्त्री को समाज में सब लोग उपेक्षित दृष्टि से देखते हैं और उसकी मदद करने के स्थान पर उसका सब कुछ हड़पना चाहते हैं। ऐसी ही स्थिति का सामना गुलकी को भी करना पड़ता है। घर से निकाल दिये जाने के बाद जब गुलकी अपने मैके लौटी, तो निर्मल की माँ ने अपने पति ड्राईवर बाबू से कह दिया कि गुलकी को घर की चाभी न दे। क्योंकि उसका घर ड्राईवर के कब्ज़े में था। गुलकी पर थोड़ी–सी सहानुभूति दिखाते हुए घेघा बुआ उसे अपने चबूतरे पर दुकान खोलने देती है। गुलकी सब्जी की दुकान चलाकर अपना गुज़र बसर करती है। परन्तु बाद में घेघा बुआ उसे चबूतरे पर दुकान लगाने से मना कर देती है "पांच महीने से किराया नाही दियो और हियाँ दुनिया भर के अन्धे–कोढ़ी बटुरे रहत है। चलौ उठाओ अपनी दुकान हियां से।" इस प्रकार उसकी रोज़ी–रोटी भी बन्द हो जाती है।

गुलकी अपनी स्थिति के कारण विवशता व आक्रोश से भर जाती है। वह अपना सारा गुस्सा मासूम मटकी पर निकाल देती है। पहले मटकी और मेवा को कुछ न कुछ देती परन्तु सबसे दुत्कार व कपट मिलने के पश्चात वह आक्रोश से भर जाती है। मटकी के उसकी दुकान से फ्रूट उठाने पर गुलकी उसे मारती, वह भला–बुरा कहती है। "वह उबल पड़ी और सड़ासड तीन–चार खपच्ची मारते हुए बोली, चोट्टी। कुतिया ! तोरे बदन में कीड़ा पड़े। क्योंकि वो फ्रूट 10 रूपये का था इसलिये वह मटकी को मारती है।

रोमाण्टिकता का रूप स्वयं गुलकी में दिखाई देता है। 'न दूध की न पूत की, हमारे कौन काम की" कहने वाले पति को गुलकी दोष नहीं देती। वह कहती है – "खोट तो हमीं में है।" इतना ही नहीं, 'एक बार कूबड़ निकाला, अगली बार परान निकलेगा' कहकर, पहले से ही 'दासी बनकर रहे कहते हुए गुलकी को अपने साथ ले जानेवाले पति के नववधू के उल्लास के साथ गुलकी का विदा होना रोमाण्टिकता से युक्त है। वह नादान मेवा से कहती है – "कितना दुबरा गया है" वह पति के पास पान का बीड़ा पहुंचाने के लिए सलज्ज होकर मेवा को समझाती है – "तुझे कसम

है, बताना मत किसने दिया है।'' इस प्रसंग में लेखक ने गुलकी की 'बीभत्स' मुस्कान का उल्लेख किया है। गुलकी का पति–परमेश्वर के प्रति सर्वस्व रूप से समर्पित होने की भावना रोमांटिक प्रतीत होती है।

पति के गलत करने पर भी जब ड्राईवर बाबू और घेघा बुआ गुलकी को वापिस ससुराल जाने को कहते हैं तो वह चुपचाप चली जाती है। गुलकी पति का विरोध तथा उसे सजा देने के स्थान पर उसके पांव में गिरकर रोने लगती है। इससे गुलकी की असमर्थतता व पारम्परिक स्त्री का रूप स्पष्ट होता है।

अतः कहानी में परित्यक्ता स्त्री का उपेक्षाभरा जीवन, मायके लौट आना, रिश्तेदारों एवं समाज में मिली हिकारत, खासतौर से घेघा बुआ द्वारा सताना, गुलकी की दुकान तहस–नहस होना, गुलकी को बच्चों द्वारा सताना, एक मात्र आसरा मकान का ढ़ह जाना, फाके पड़ना, सत्ती के घर में आश्रय और फिर पति के बुलावे पर उससे भी बदतर नरकमय जिंदगी बिताने के लिए चले जाना–मानो लगता है, एक करूण जिंदगी घिसट–घिसटकर चल रही है। गुलकी के माध्यम से कहानीकार ने परित्यक्ता स्त्री का जीवन चित्रित किया है। गुलकी के चरित्र चित्रण के अनेक पहलुओं से परित्यक्ता स्त्री की बेबसी, मजबूरी, असहायता, वेदना, दुख और जीवन संघर्ष चित्रित हुआ है।

12.4.3 'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी का चरित्र :–

इस कहानी में लेखक ने भावों को पात्र रूप में चित्रित किया है। इन पात्रों के माध्यम से मानव की महानता को कहानी में दिखाया है। कल्पना, प्रेम, वेदना और देवराज स्वर्ग में रहने वाले पात्र है और नर–नारी पृथ्वी पर रहते हैं। इन पात्रों के माध्यम से लेखक ने पृथ्वी को सर्वश्रेष्ठ बताया है।

'कल्पना' :–

कल्पना कहानी का आरम्भ 'कल्पना' नामक पात्र से होता है। ''कल्पना ने आश्चर्य में भर कर वातायन के दोनों पट खोल दिये।'' कल्पना अपने सूनेपन की रानी थी। चाँदनी के सागर के तट पर, स्वर्ग के एक उजाड़ कोने में हलके सुनहरे बादलों का एक प्रासाद था। शैशव से ही कल्पना उसमें निवास करती थी। वह स्वर्ग में रहते हुए भी स्वर्ग से अलग रहती। वह एकान्त पर विश्वास करती थी। उसके प्रासाद (राजभवन) के चारों ओर का वातावरण इतना रहस्यमय और दुर्भेद्य था कि क्रीड़ारत चंचल देवकुमार भी उधर जाने का साहस न करते, वह अपने महल की खिड़की को खोलकर चाँदनी, सागर को निहारती और किसी के आने पर बंद कर देती ।

कल्पना में उत्सुकता थी। जब उसे महल में बैठे–बैठे स्वर सुनाई दिया तब वह जिज्ञासा वश वेदना से कहती है कि ''यह स्वर कैसा है ?'' वेदना के उत्तर न देने पर वह उत्सुकता से विकल हो जाती है।

क्रोध और प्रेम का पुट भी कल्पना में देखने को मिलता है। स्वर्ग से निर्वासित देवकुमार जब कल्पना के महल में बिना पूछे चला आता है, तो वह क्रोधित हो उठती है। परन्तु बाद में कल्पना प्रेम वश शान्त हो, उस पर मोहित होती है। उसकी सहेली वेदना के समझाने पर कि ''प्रेम का आगमन अंमगल से पूर्ण है।'' तब भी वह प्रेम को शरण देती है।

वह धैर्य और निड़रता से भरी स्त्री है। वह निर्वासित देवकुमार प्रेम को अपने महल में शरण देती है। देवराज के क्रोध का उसे भय नहीं है। देवराज कल्पना को रोष में आकर कहते है कि तुमने एक विद्रोही को आश्रय दिया है। तब वह निर्वासित राजकुमार से सहानुभूति रखते हुए देवराज और उसके शासन को अन्यायी कहती है। कल्पना

प्रेम को अपनाती है और कहानी के अन्त में स्वर्ग का त्याग कर पृथ्वी पर चली आती है। ''पुरुष के हृदय में समा गई कल्पना।''

प्रेम :–

'स्वर्ग और पृथ्वी' कहानी में भाव के माध्यम से पृथ्वी की महत्ता को स्पष्ट किया है। देवकुमार 'प्रेम' स्वर्ग में रहने वाला एक ऐसा पात्र है, जो किसी भी बंधन को स्वीकार नहीं करता है। देवकुमार को देवराज स्वर्ग से निर्वासित कर देता है। वे देव बालाओं के अज्ञान हृदय, मृगशावकों के भोले नयन में प्रेम प्रवाह करता है।

देवकुमार किसी भी झूठे बंधन को नहीं मानता, वह निडर हो अबाध गति से बहता है। यहां तक कि वह कल्पना के महल में बिना पूछे चला जाता है, यहां कोई नहीं जाता। प्रेम एक ऐसा भाव है जो शासन में रहना नहीं जानता और न ही किसी झूठे दिखावे में जीता है।'' प्रेम ने न शासन में जीवित रहना सीखा है और न प्राण देना। कल्पना की शाखाओं पर किरणों की रोशनी डोर में झूलने की अपेक्षा मैं उन्मुक्त आकाश की स्वतंत्र छाया में चाँदनी की लहरों के साथ मृत्यु–क्रीड़ा करना अधिक उचित समझता हूँ।''

इसी बंधन को अस्वीकार करते हुए प्रेम स्वर्ग को त्याग कर मानव हृदय अर्थात् स्त्री के हृदय में समा गया।

2.5 निष्कर्ष :

अतः इन तीनो कहानियों में लेखक ने सामाजिक परिधि की यथार्थता को अभिव्यक्त किया है। भारती जी की कहानियों 'सावित्री नम्बर दो', 'गुलकी बन्नो' और 'स्वर्ग' और 'पृथ्वी' का शिल्प अत्यन्त प्रभावशाली है। भाषा व शब्द–योजना की दृष्टि से भी यह सशक्त कहानियां है। इन कहानियों का कथानक, चरित्र, देशकाल और भाषा कथा के भाव को पूर्ण रूप से स्पष्ट करती है। चरित्रों के चरित्रांकन पात्रों की स्थितियों के अनुरूप किया गया है।

12.6 कठिन शब्द :–

1. स्वभाविकता
2. नीरवता

12.7 अभ्यासार्थ प्रश्न :–

प्र1. धर्मवीर भारती की कहानियों के शिल्प पर प्रकाश डालें ।

प्र2. 'गुलकी बन्नो' के चरित्र का विश्लेषण करें ।

प्र3. 'स्वर्ग और पृथ्वी' के कथानक को स्पष्ट कीजिए ।

प्र4. 'सावित्री नम्बर दो' शिल्प को संक्षिप्त रूप से लिखें।

12.8 संदर्भ पुस्तकें :–

प्र1. धर्मवीर भारती – सं. प्रभाकर क्षोत्रिय

प्र2. धर्मवीर भारती – सृजन के विविध रंग – डॉ० चंद्रभानु सोनवणे

प्र3. धर्मवीर भारती का रचना संसार – डॉ० सुरेश कुमार केसवानी

*****

आम आदमी के कहानीकार कमलेश्वर

13.0 रूपरेखा

13.1 उद्देश्य

13.2. कहानीकार कमलेश्वर : व्यक्तित्व–कृतित्व

1. कमलेश्वर : व्यक्तित्व

2. कमलेश्वर : कृतित्व

13.3. आम आदमी के कहानीकार कमलेश्वर

1. आम आदमी के जीवन के विविध पक्षों पर प्रकाश डालना

2. नारी के साहस और स्वातंत्र्य का चित्रण

3. पुरुष पात्रों के संघर्ष को चित्रित करना

4. साधारण व्यक्ति को गरिमा प्रदान करना

5. यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति

13.4 निष्कर्ष

13.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

13.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

13.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययन उपरान्त आप

- कहानीकार कमलेश्वर के व्यक्तित्व को जान सकेंगे
- कमलेश्वर की रचनाओं का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे
- कमलेश्वर की दृष्टि में आम आदमी क्या है जान पाएंगे
- कमलेश्वर की कहानी दृष्टि पहचान

13.2. कहानीकार कमलेश्वर : व्यक्तित्व–कृतित्व

1. कमलेश्वर : व्यक्तित्व

बीसवीं शती के सशक्त लेखक के रूप में कमलेश्वर बहुपक्षीय प्रतिभा के स्वामी थे। वे एक साथ उपन्यासकार, कहानीकार, नाटककार, पत्रकार, स्तंभ लेखक, पटकथा लेखक व समीक्षक थे। इनका पूरा नाम कमलेश्वर प्रसाद सक्सेना था और घर का नाम कैलाशनाथ था। इनका जन्म 6 जनवरी, 1932 में कटरा मैनपुरी उत्तरप्रदेश में हुआ। मैनपुरी से ही सन् 1946 में हाई स्कूल की परीक्षा पास कर सन् 1950 में के.पी. इंटर कॉलेज इलाहाबाद से पूरी की और सन् 1954 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से हिन्दी साहित्य में एम.ए. किया। पाँच वर्ष की आयु में ही इनके पिता की मृत्यु हो गई थी तो घर का भार इनकी माता और भाई सिद्धार्थ पर आ गया। असमय सिद्धार्थ की मृत्यु के बाद घर चलाने का बोझ कमलेश्वर पर आ गया। अतः एक खाता–पीता परिवार गरीबी से जूझने लगा। कमलेश्वर स्वयं लिखते हैं– ''एक अमीर कहे जाने वाले घर में गरीबों की तरह रहना। खाना खाकर भी भूखा रहना, अकुलाहट भरे दुःखों के बीच भी हँस सकना, बच्चा होते हुए भी व्यस्कों की तरह निर्णय लेना, यह मेरी आदत नहीं मजबूरी थी।'' वे हर कक्षा में प्रथम आते थे। पढ़ाई के साथ वो छोटे–मोटे काम भी करते थे जिससे घर का खर्चा चलता था। साबुन से लेकर अपनी कलम के लिए स्याही वे खुद बनाते थे। संघर्ष ही इनका जीवन रहा है। इन्होंने अपने जीवन में कई कार्य और नौकरियाँ की हैं। प्रकाश प्रेस, मैनपुरी में प्रूफरीडिंग की तथा 'बहार' मासिक पत्रिका इलाहाबाद में पचास रूपए माहवार पर सम्पादन कार्य किया और 'कहानी' मासिक पत्रिका इलाहाबाद में एक सौ रूपए माहवार पर कार्य किया। राजकमल प्रकाशन में साहित्य सम्पादक रहे। सेंट जोसेफ सेमिनरी में हिन्दी अध्यापन कार्य किया। आल इंडिया रेडियो तथा टेलीविजन में स्क्रिप्टराइटर। सारिका, धर्मयुग, जागरण और दैनिक भास्कर जैसे प्रसिद्ध पत्र–पत्रिकाओं के संपादक भी रहे। दूरदर्शन के अतिरिक्त महानिदेशक के पद पर भी कार्य किया। 27 जनवरी, 2007 में 75 वर्ष की आयु पूर्ण कर फरीदाबाद में अंतिम सांस ली।

उनके कृतित्व के लिए वे समय–समय पर सम्मानित हुए। सन् 2003 में 'कितने पाकिस्तान' उपन्यास के लिए 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार से सम्मानित हुए और 2005 में वे राष्ट्रपति महोदय द्वारा 'पद्मभूषण' से अलंकृत हुए। इसके अतिरिक्त 'शलाका पुरस्कार', 'शिवपूजन सहाय', 'शिखर सम्मान' आदि से भी सम्मानित हुए हैं। 'कितने

पाकिस्तान' से कमलेश्वर एकदम चर्चा में आ गए। उनके लेखन में कई रंग देखने को मिलते हैं। मुम्बई में उनकी टी.वी. पत्रकारिता बहुत महत्वपूर्ण रही। 'कामगार विश्व' नाम के कार्यक्रम द्वारा गरीबों, मज़दूरों की पीड़ा और उनकी दुनिया को अपनी आवाज़ दी।

2. कमलेश्वर : कृतित्व

कमलेश्वर ने अपने 75 वर्षीय जीवन में बारह उपन्यास, सत्रह कहानी संग्रह के साथ नाटक तथा दो यात्रा संस्मरण हिन्दी साहित्य को प्रदान किए।

उपन्यास– 'एक सड़क सत्तावन गलियाँ', 'डाक बंगला', 'तीसरा आदमी', 'समुंद्र में खोया हुआ आदमी', 'काली आंधी', 'आगामी अतीत', 'सुबह... दोपहर... शाम', 'पति–पत्नी और वह', 'रेगिस्तान', 'लौटे हुए मुसाफिर', 'वही बात', 'एक और चंद्रकांता', 'कितने पाकिस्तान', 'अंतिम सफर' उपन्यास अधूरा रह गया था जिसे गायत्री कमलेश्वर के अनुरोध पर तेजपाल सिंह धामा ने पूरा किया।

कहानी संग्रह– राजा निरबंसिया, 'मांस का दरिया', 'कस्बे का आदमी', 'खोई हुई दिशाएँ', 'बयान', 'जार्ज पंचम की नाक', 'आज़ादी मुबारक', 'कोहरा', 'कितने अच्छे दिन', 'मेरी प्रिय कहानियाँ', 'मेरी प्रेम कहानियां'।

नाटक– 'अधूरी आवाज़', 'रेत पर लिखे नाम', 'चारूलता', 'रेगिस्तान', 'कमलेश्वर के बाल नाटक'।

यात्रा संस्मरण– 'खंडित यात्राएं', 'अपनी निगाह में'।

समीक्षा– नई कहानी की भूमिका, नई कहानी के बाद, मेरा पन्ना, दलित साहित्य की भूमिका

आत्मकथ्य– 'जो मैंने किया', 'यादों के चिराग', 'जलती हुई नदी'।

सम्पादन– मेरा हमदम : मेरा दोस्त तथा अन्य संस्मरण, समानान्तर–1, गर्दिश के दिन, मराठी कहानियाँ, तेलुगू कहानियाँ, पंजाबी कहानियाँ, उर्दू कहानियाँ।

फिल्में– इन्होंने लगभग सौ हिंदी फिल्मों का लेखन किया जिनमें 'सारा आकाश', 'आँधी', 'अमानुष', 'मौसम', 'मि. नटवरलाल', 'द बर्निंग ट्रेन', 'राम–बलराम', 'बदनाम बस्ती', 'तुम्हारी कसम' आदि प्रमुख हैं।

इसके साथ–साथ वह एक अच्छे स्क्रिप्ट लेखक थे। दूरदर्शन (टी.वी.) धारावाहिकों में 'चंद्रकांता', 'युग', 'बेताल–पचीसी', 'आकाश गंगा', 'रेत पर लिखे नाम' इत्यादि का लेखन किया।

कमलेश्वर का कथा साहित्य यथार्थ पर आधारित है क्योंकि इनके लिए यथार्थ से हटकर लिखना बेईमानी के बराबर है। जिंदगी इनकी रचनाओं के केन्द्र में है। जिंदगी के सभी स्तर और सभी पक्ष इनके साहित्य में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त इन्होंने आधुनिकता और आधुनिकता बोध के प्रमुख बिन्दुओं को भी चित्रित किया है तथा आधुनिक परिवेश के बनावटीपन को यथार्थ के साथ जोड़ा है।

13.3 आम आदमी के कहानीकार कमलेश्वर

कमलेश्वर नई कहानी के सशक्त कहानीकार हैं। उन्होंने लगभग 200 कहानियां लिखी हैं। उन्होंने नई कहानी के जिस मोड़ पर कदम रखा उसके प्रत्येक कदम के साथ कदम मिलाया। कमलेश्वर ने अपनी कहानी यात्रा के चार पड़ाव बताए हैं। पहला दौर 1952–59 तक चलता है दूसरा 1959–66 तक, तीसरा 1967–77 और काफी लम्बे मौन के बाद वह पुनः कहानी लेखन में संलग्न हुए तथा चौथा दौर 1986–1989 तक माना जाता है। उनकी कहानियों के मुख्य विषय प्रेम, आस्था, आर्थिक विपन्नता, भ्रष्टाचार रिश्वतखोरी, बेरोज़गारी, प्रकृति प्रेम, महानगरीय चकाचौंध, विखंडित होते हुए मूल्य, सांस्कृतिक परम्पराओं के साथ–साथ साम्प्रदायिकता के स्वरों की अनुगूंज से संबंधित हैं। विशेष बात को पहुँचाने के लिए व्यंग्य का सहारा भी लिया है। उन्होंने कहानी को आम आदमी के साथ जोड़ा है। उनकी कहानियां यथार्थ के धरातल पर रची गई हैं। इस संबंध में वे स्वयं कहते हैं– ''कल्पना के स्तर पर कहानी मेरे लिए कठिन विधा है। हर कहानी एक चुनौती बनकर सामने आती है और उसके सब सूत्रों को संभालने में नसें फटने लगती है– यह कठिन परीक्षा का समय होता है... तमाम ऐसी तकलीफें मुझे उसी वक्त सताती हैं और मैं भागता रहता हूँ..

. यह भागना तब तक चलता रहता है जब तक अनुभव अनुभूति में आत्मसात नहीं हो पाता। उसके बाद लिखना मेरी मुक्ति का प्रयास बन जाता है।'' उन्होंने साधारण और सामान्य पात्रों को केन्द्र में रखकर आधुनिक परिवेश की कृत्रिमता और खोखलेपन का पर्दाफाश कर रचना को यथार्थ दृष्टि प्रदान की है। उन्होंने कस्बाई क्षेत्र से बढ़ते हुए महानगरों के जीवन से जोड़ते हुए कहानी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। उनकी कहानियों में आम आदमी के निम्नलिखित पक्ष सामने आते हैं–

1. आम आदमी के जीवन के विविध पक्षों पर प्रकाश डालना

इनकी कहानियों का आधार जीवन को जैसे तैसे जीने वाला व्यक्ति है। वह व्यक्ति जो जीवन जीता है। अपने अधिकारों के लिए चिल्लाता है, अपनी कुछ माँगें रखता है। अपने लिए कुछ दायित्व भी संजोये हुए रखता है। परन्तु वह व्यक्ति आप सब कुछ कर लेना चाहता है। सब कुछ पा लेना चाहता है। इनकी कहानियों में साधारण व्यक्ति के जीवन के विविध पक्ष उभर कर सामने आते हैं। उनकी कहानियों की घटनाएं नयी न होकर वही होती हैं जो जनसाधारण में घटित होती हैं। इसलिए इनमें संवेदनशीलता है। 'राजा निरबंसिया' का जगपती, 'मांस का दरिया' की जुगनू, 'बयान' का फोटोग्राफर, 'मेरी प्रेमिका' की शान्ता, 'नीली झील' का महेसा आदि संवेदनशील पात्र हैं। उनकी कहानियों के चाहे स्त्री–पात्र हैं या पुरुष पात्र वह व्यक्ति पात्र न होकर व्यष्टि बोध करवाते हैं। इनमें कस्बे और शहरों के पात्र हैं जो अपनी कथा कहते हुए प्रतीत होते हैं।

2. नारी के साहस और स्वातंत्र्य का चित्रण

कमलेश्वर की कहानियों के नारी पात्र भी यथार्थ जीवन जीते हैं। इनकी कहानियों में नारी अपनी पूरी गरिमा, वास्तविकता और आत्मसम्मान की भावना के साथ उपस्थित हुई है। उनकी दृष्टि में नारी न केवल सौंदर्य की प्रतिमूर्ति है अपितु वह मानसिक भावों को परखने में अधिक सक्षम है। उनकी कहानियों में नारी जीवन के विविध स्तरों से प्रवेश करती हैं। कस्बे से लेकर शहर तक के नारी पात्र इन कहानियों में हैं। कस्बे की स्त्री परम्पराबद्ध पद्धति से सोचती है

वह पतिव्रता है पर अन्ध श्रद्धालु नहीं, वह घर की मालकिन है पर गुलाम नहीं। वह अपने व्यक्तित्व के प्रति सजग है। इस प्रकार के स्त्री पात्रों में 'राजा निरबंसिया' की चन्दा है जो अपने पति को मौत के मुंह से बचाने के लिए कम्पाउंडर से समझौता करती है और अपने शरीर को समर्पित कर देती है। इसके पश्चात् भी उसका पति उसके शरीर का माध्यम के रूप में प्रयोग करना चाहता है और फिर जब वह उसके चरित्र पर दोषारोपण करता है तो वह विद्रोह करती हुई अपने स्वतन्त्र व्यक्तित्व की घोषणा करती है। 'बयान' कहानी की स्त्री भी अपने बचाव के लिए प्रयासरत दिखाई देती है कि उसके पति की आत्महत्या का दोष उस पर न लगाया जाए। 'नीली झील' की पारबती विधवा होने पर भी घुट–घुट कर जीती नहीं बल्कि निर्भयता से महेसा से विवाह करवा लेती है जिससे उसमें नारी स्वातंत्र्य के दर्शन होते हैं। 'नागमणि' की सुशीला विवाह के तुरंत बाद अपनी मनःस्थिति अपने देवर विश्वनाथ को बतला देती है जिससे उसका विवाह होने वाला था। वह बताती है कि उसने मन ही मन उसे अपना पति मान लिया था इसलिए वह उस बड़ी उम्र वाले व्यक्ति को पति स्वीकार नहीं कर पाती। इस प्रकार कमलेश्वर की कहानियों में नारी चाहे साधारण परिवार से ही संबंध रखती है पर वह परंपरागत नहीं है वह समय की आवश्यकतानुरूप अपने को बदलती है। वह स्वयं निर्णायक है।

3. पुरुष पात्रों के संघर्ष को चित्रित करना

कमलेश्वर की कहानियों में पुरुष पात्र भी आम जीवन से संबंधित हैं वे निम्न मध्यम वर्ग व मध्य वर्ग है। रचनाकार ने पुरुष के संघर्ष को आवाज़ दी है। यह पुरुष पात्र कस्बे, शहर तथा महानगरों से हैं। प्रमुख पुरुष पात्रों में कस्बे से जगपती, वैद्य महेश पांडे, विश्वनाथ, छोटे महाराज तथा शहरी वातावरण से सम्बन्धित पुरुष हैं– चन्दर, फोटोग्राफर, निवेदक, मदनलाल जबकि महानगर से विनोद तथा वीरेन्द्र हैं। यह सभी पुरुष पात्र अपनी परिवेशगत विशिष्टताओं को व्यक्त करते हुए असहाय स्थितियों और टूटते जीवन मूल्यों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

कस्बाई जीवन के संस्कार इनमें अधिक मिलते हैं इस लिए इनके पात्र अधिक यांत्रिक, कृत्रिम और बौद्धिक जीवन नहीं जी सकते हैं जिस तरह 'खोई हुई दिशाओं' का चन्दर, 'कस्बे' कहानी का छोटे महाराज, 'नीली झील' का महेश पांडे इसके प्रमाण हैं। यह पात्र अपने आप को शहर के वातावरण में ढाल नहीं पाते, इस लिए उदास रहते हैं। इन कहानियों के सभी पुरुष पात्र समाज के साधारण आदमी हैं जो अपनी–अपनी समस्याओं से जूझ रहे हैं।

4. साधारण व्यक्ति को गरिमा प्रदान करना

इन्होंने अपने पात्रों की दमित इच्छाओं और कुण्ठाओं का खुलकर चित्रण किया है। परिस्थितियों से जूझते समय पात्रों के भीतर बहुत कुछ मरता है और बहुत कुछ नया निर्मित होता है। निरर्थकता, मूल्यहीनता, संवेदनशून्यता और आधुनिक भावबोध के मूल्य यहाँ उभर रहे हैं। परन्तु ये मूल्य अकेलेपन के एहसास को तीव्र बना देते हैं। इस कारण पात्र या तो आत्महत्या कर लेते हैं या जीवन से निराश रहते हैं। कमलेश्वर की कहानियाँ मानवता के प्रति प्रतिबद्ध हैं। इनमें मानव जीवन के सभी पक्ष और सभी स्तर व्यक्त हुए हैं। इन्होंने जिंदगी को जिंदगी के अनुरूप अनुभव करते हुए उसे संवेदनात्मक स्तर पर व्यक्त किया है। स्वयं लेखक के अनुसार, ''जीवन के प्रति प्रतिबद्ध होना मेरी अनिवार्यता है।

इस टूटते, हारते, अकुलाते मनुष्य की गरिमा में मेरा विश्वास है।'' जीवन और व्यक्ति को केन्द्र में रखकर उन्होंने पराजित और पीड़ित व्यक्ति की मर्म वेदना को चित्रित किया है।

5. यथार्थ जीवन की अभिव्यक्ति

इनकी कहानियों में जिंदगी के दो वर्ग चित्रित हुए हैं निम्न मध्यम वर्ग और मध्यम वर्ग। इन्होंने दोनों वर्गों के आंतरिक तनावों और जीवन की यथार्थता को खोलकर रख दिया है। रचनाकार ने अपनी कहानियों में आम आदमी की आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं को वर्णित कर जिंदगी के यथार्थ से परिचित करवाया है। कमलेश्वर ने आदमी, आदमी के साथ कहानी को जोड़ा है। इन्होंने व्यक्ति की आंतरिक मनःस्थिति और बाह्य परिस्थितियों का सुमेल कर मानवीय संघर्ष एवं व्यथा का चित्रण किया है। 'राजा निरबंसिया' इसी प्रकार की कहानी है। कहानी की विकास यात्रा के साथ–साथ कमलेश्वर की दृष्टि की प्रगतिशील और नवीनता का पुट भरती है। मेरी प्रिय कहानियों की भूमिका में वे लिखते हैं– ''जब से अपने चारों ओर की दुनिया की ओर देखना शुरू किया तो पाया कहीं कुछ नहीं बदल रहा था, इसलिए मुझे बदलना पड़ा मुझे चारों ओर के कटु यथार्थ ने बदल दिया।''

13.4 निष्कर्ष

निष्कर्षतः उन्होंने सामान्य मनुष्यों के दुख दर्द को, उनकी आकांक्षाओं को उनके अभाव और संघर्ष को उसकी मजबूरी और उसकी मानवीयता को पकड़ने का प्रयास किया है। कमलेश्वर की कहानियाँ पाठक को एक आम आदमी की दौड़–धूप, उसकी चिंता, उसकी समस्याओं, उसके संघर्ष एवं नियति के बदलते हुए परिणामों से परिचित करवाती हैं। उनकी कहानियाँ आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक, समस्याओं को मुखरित करती केवल आम आदमी के सच को बयान करती हैं।

13.5 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कमलेश्वर के जीवन संघर्ष पर प्रकाश डालिए।

____

____

____

2. कमलेश्वर के साहित्य के मूल बिंदुओं पर विचार करें।

____

____

____

3. लेखक ने आम आदमी को कहानी का केन्द्र क्यों बनाया।

4. कमलेश्वर की कहानी यात्रा के विभिन्न पड़ावों का उल्लेख करें।

13.6 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. कमलेश्वर के कुल कितने कहानी–संग्रह प्रकाशित हुए हैं?

2. कमलेश्वर द्वारा रचित उपन्यासों के नाम बताएं।

3. राजा निरबंसिया कहानी का प्रकाशन वर्ष लिखिए।

4. नीली झील कहानी कमलेश्वर के किस दौर की कहानी है?

*****

'राजा निरबंसिया' 'खोई हुई दिशाएं' और 'नीली झील' कहानी की मूल संवेदना

14.0 रूपरेखा

14.1 उद्देश्य

14.2 संवेदना का अर्थ एवं अभिप्राय

14.3 'राजा निरबंसिया' कहानी की मूल संवेदना

14.4 'खोई हुई दिशाएं' कहानी की मूल संवेदना

14.5 'नीली झील' कहानी की मूल संवेदना

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

14.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

14.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययन उपरान्त आप

- संवेदना का अर्थ समझ सकेंगे।
- 'राजा निरबंसिया' कहानी की रचना में कमलेश्वर की संवेदना किसके साथ है?
- 'खोई हुई दिशाएं' कहानी में चन्दर कैसे खो जाता है इसे समझ सकेंगे।
- 'नीली झील' कहानी में पक्षी प्रेम के भाव को समझ सकेंगे।

14.2 संवेदना का अर्थ एवं अभिप्राय

संवेदना शब्द 'सम्' उपसर्ग 'विद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है– समान भाव से, बराबरी से जानना या महसूस किया जाना। संवेदना मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है इसकी अनुभूति आन्तरिक होती है। यह ज्ञान–प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है जिसमें स्वयं और पर दोनों की समान अनुभूति होती है। दूसरे के सुख में सुख तथा दु'ख में दु'ख का अनुभव करना ही संवेदना है। जो व्यक्ति जितना सहृदय होगा, उसमें संवेदना का जागरण उतनी ही प्रबलता से होगा। यह मानव की मानवीयता अथवा मनुष्यता को जागृत और परिष्कृत करती है।

रचना की मूल संवेदना सहृदय पाठक को रचनाकार की अभिव्यक्ति के मूल उद्देश्य से तदाकार करती है और वह पात्र, स्थिति तथा घटना के प्रति संवेदित होता है। वास्तव में संवेदना ऐसा भाव अथवा हृदय संवाद है जिसके द्वारा पाठक रचनाकार के भाव से जुड़ते भांपते अथवा परखते हैं।

कमलेश्वर की आलोच्य तीन कहानियों में मूल संवेदना कहीं पात्र, कहीं परिस्थितियां तो कहीं स्थान के साथ जुड़ती हैं। इन कहानियों में संवेदना के स्वरूप पर आगे विचार किया जा रहा है–

14.3 'राजा निरबंसिया' कहानी की मूल संवेदना

'राजा निरबंसिया' कहानी में दो कहानियां साथ–साथ चलती है एक पौराणिक कथा जिसमें राजा निरबंसिया और रानी लक्ष्मी की कहानी थी। दूसरी आधुनिक कथा जो जगपती और चन्दा से संबंधित है।

इस कहानी में कमलेश्वर ने यह स्पष्ट करना चाहा है कि अर्थ प्रधान इस युग में अर्थ के मोह के कारण जगपती किस प्रकार अपनी पत्नी के शरीर की बिक्री करता है। वह व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए किसी भी मूल्य को त्यागने के लिए तैयार है। इस मानसिकता का शिकार चंदा होती है वह किसी भी स्तर पर स्त्री के पत्नीत्व को सुरक्षित रखने का प्रयत्न नहीं करता। इस कहानी की मूल संवेदना को निम्नलिखित बिन्दुओं से जाना जा सकता है–

1. कर्जदार व्यक्ति की मनः स्थिति का यथार्थांकन

इस कहानी के माध्यम से कर्जदार व्यक्ति की परिणति का वर्णन किया है। आज भी बैंक आदि लोन की सुविधा देकर लोगों को कर्ज़दार बनाते हैं फिर उसका सारा जीवन इस कर्ज को चुकाने में ही निकल जाता है और अगर वह नहीं चुका पाता तो उनकी सारी संपत्ति पर बैंक का अधिकार हो जाता है और उस समय ऋणी व्यक्ति अपने आप को इतना विवश मानता है कि वह आत्महत्या करना ही श्रेष्ठ समझता है। इस कहानी में जगपती पहले तो एक वकील के पास मुहर्रिर था पर दुर्घटना के बाद जब वह बेरोज़गार हो जाता है। अपने घायल होने पर वह बचन सिंह से कर्ज़ लेने के लिए चंदा को मना करता है। उसे कर्ज़ से सख्त नफरत है। वह चंदा से कहता है– ''तुम नहीं जानती कर्ज़ कोढ़ का रोग होता है। एक बार लगने से तन भी गलता ही है, मन भी रोगी हो जाता है।'' पर कर्ज़ के इस सैद्धान्तिक विरोध के मूल में जगपती का कोई आदर्श टिक नहीं पाता और वह अपनी बेरोज़गारी दूर करने के लिए बचन सिंह से उधार लेता है। पर उसके पास चन्दा के सिवा कोई दूसरी पूंजी नहीं है। इसलिए वह चंदा को संकेत से कहता

भी है ''वह तो अपना ही आदमी है और आड़े वक्त काम आने वाला आदमी है.... जिससे कुछ लिया जाएगा, उसे दिया भी तो जाएगा।'' अब रोजगार के लिए वह बचन सिंह से कुछ रूपये कर्ज लेता है और उस कर्ज़ के बदले बचन सिंह उसकी पत्नी से संबंध बनाता है। जगपती जानता है उधार की पूंजी चंदा के शरीर से वसूल होने वाली है– फिर भी वह चुप रहता है। वह प्रत्यक्षता इस को सहन नहीं कर पाता क्योंकि जब वह बचन सिंह की उपस्थिति घर में देखता है, अजीब सी घुटन उसके दिल को बांध लेती है और जीवन की तमाम विषमताएं भी उसकी निगाहों के सामने उभरने लगती है। कई बार उसे यह भी लगता है कि इतने बड़े सौदे की क्या सचमुच आवश्यकता थी। पर यह सौदा किस लिए यह सोच उसकी आत्मा में एक नासूर सा बन जाता है। बचन सिंह के सामने उसका अस्तित्व उसे डूबता हुआ लगता है क्योंकि वह जानता है कि अपने काम के लिए उसने अपने परिवार को ही दाव पर लगा दिया है। रचनाकार ने उसकी विवशता को स्पष्ट करते हुए लिखा है ''पता नहीं कौन–कौन से दर्द एक दूसरे से मिलकर तरह–तरह की टीस–चटख और ऐंठन पैदा करने लगते।'' इससे स्पष्ट है कि कर्ज़ का विरोध करने वाला जगपती हर तरह से कर्ज़ में दब गया। तन से, मन से, इज्जत से। वह अपने घर के तिनके–तिनके को बिखरते हुए अपनी आंखों से देखता है। पत्नी के मायके चले जाने पर वह निरन्तर कर्ज़ और पत्नी के संबंध में सोचता रहता है और व्यथित होता है जैसे कि निम्न पंक्तियों से पता चलता है, "करीब के खेत ही मेड़ पर बैठे जगपती का शरीर भी जैसे कांप–कांप उठता। चन्दा ने कहा था, लेकिन जब तुमने मुझे बेच दिया....... क्या वह ठीक कहती थी। क्या बचन सिंह ने टाल के लिए जो रूपये दिए थे, उसका ब्याज इस तरह चुकता हुआ ? क्या सिर्फ वही रूपये आग बन गए, जिसकी आंच में उसकी सहनशीलता, विश्वास और आदर्श मोम–से पिघल गए ?" उसे बार–बार महसूस होता है कि चंदा की बर्बादी के लिए वह खुद जिम्मेदार है। चंदा के चले जाने पर उसे यह स्पष्ट हो जाता है कि जिस 'काम' और 'अर्थ' के लिए उसने चंदा का प्रयोग किया। वह सब निरर्थक है। वह बार–बार सोचता है– ''कितने बड़े पाप में ढकेल दिया चंदा को... वह ज़रूर औरत थी, पर स्वयं मैंने उसे नरक में डाल दिया।''

जब जगपती को पता चलता है कि चन्दा के लड़का हुआ है और वह दूसरा विवाह करने लगी है तो वह अंदर ही अंदर और कुढ़ता है एवं स्वयं को दोषी मानता हुआ कहता है कि मैंने ही चन्दा को यह सब करने के लिए विवश किया। प्रस्तुत शब्दों में जगपती की मनःस्थिति स्पष्ट है, "चन्दा के लड़का हुआ है।...... वह कुछ और जनती, आदमी का बच्चा न जनती।...... वह और कुछ भी जनती, कंकड़–पत्थर! वह नारी न बनती, बच्ची ही बनी रहती, उस रात की शिशु चन्दा!'' अब वह इस बात से भी नफ़रत करता है कि चंदा ने बचन सिंह के बेटे को जन्म दिया है वह इस बात को स्वीकार नहीं करता। इसलिए कहता है चंदा शिशु ही बनी रहती तो यह सब संकट नहीं आते। मैंने उसकी जवानी को देखकर उसका शरीर बेच दिया है वह चंदा के अभाव में अपने आप को अधूरा मानता है। और तब शकूरे के वे शब्द उसके कानों मे गूंज गए, ''हरा होने से क्या, उखड़ तो गया है वह स्वयं भी तो एक उखड़ा हुआ पेड़ है, न फल का, न फूल का, सब व्यर्थ ही तो है।" वह इतना पश्चाताप करता है कि उसे सब कुछ खोखलापन लगता है। अब मृत्यु के सिवा दूसरा कोई पर्याय उसके सम्मुख नहीं है इसलिए वह आत्महत्या का निर्णय लेता है। मरते समय उसके द्वारा लिखे गये पत्र उसकी मानसिक यातना को स्पष्ट करते हैं। उसने चंदा को लिखा– ''आदमी को पाप नहीं पश्चाताप मारता है, मैं बहुत पहले मर चुका था।'' इस एक वाक्य से उसका सारा पश्चाताप सामने आ जाता है। इससे पता चलता है कि जगपती के भीतर का 'आदमी' तो उसी दिन मर गया था जिस दिन उसने चंदा को कर्ज़ चुकाने का माध्यम माना था।

इस प्रकार रचनाकार ने एक कर्ज़दार व्यक्ति की आर्थिक दुरावस्था, उसकी विवशता, उसके संघर्ष, छटपटाहट और स्वयं ही स्वयं के मूल्य रौंदने की पीड़ा का सटीक वर्णन किया है।

2. संतानहीन व्यक्ति की सामाजिक स्थिति का वर्णन

रचनाकार ने समाज में संतानहीन व्यक्ति के सामाजिक स्तर पर भी प्रकाश डाला है कि संतान न होने पर लोग कैसे–कैसे प्रताड़ित करते हैं। समाज में उसका मुंह देखना भी अशुभ माना जाता है। कहानी में राजा निरबंसिया संतानहीन होने पर जब मेहतरानी सुबह–सुबह उसका मुंह देख लेती है तो वह पीटना शुरू कर देती है कि हाये राम आज राजा का मुंह देख लिया पता नहीं खाना नसीब होगा या नहीं। इस से राजा इतना व्यथित होता है कि वह घर छोड़कर ही चला जाता है।

इसी तरह जब जगपती अस्पताल से घर लौटता है तो उसकी चाची भी उस पर व्यंग्य कसती हुई उसे 'राजा निरबंसिया' नाम से संबोधित करती है जैसे कि प्रस्तुत शब्दों से पता चलता है, "जब जगपती के घर का दरवाजा खड़का, तो अंधेरे में उसकी चाची ने अपने जंगले से देखा और वहीं से बैठे–बैठे अपने घर के भीतर ऐलान कर दिया– राजा निरबंसिया अस्पताल से लौट आए...... कुलमा भी आई है।" कहानीकार ने संतानहीन दंपति की उस स्थिति का वर्णन किया है जब स्वयं तो उन्हें संतानहीनता का आन्तरिक दुःख एवं पीड़ा है ही पर दूसरे लोग कैसे उन्हें शब्द बाणों से बेधते हैं।

3. रोगी की मनोवृति का चित्रण

रचनाकार ने रोगी व्यक्ति की उस मनोवृत्ति का वर्णन किया है जब उसके पास धन न होने के कारण दूसरों के सामने हाथ फैलाने पड़ते हैं। ज़िंदगी का मोह तो हर व्यक्ति को होता है और अच्छे स्वास्थ्य के लिए दवाओं की आवश्यकता भी होती है और जब पैसा न हो तो व्यवस्था कैसे हो। यह प्रश्न भी रोगी को विचलित करते हैं। जगपती को अस्पताल में पड़े जब कई दिन हो गये। जगपती भी चाहता है कि जल्दी ठीक हो जाए चंदा बताती है कि कम्पाउंडर साहब दवाईयों की बात कर रहे थे पर वह यह नहीं चाहता कि उधार खाने से उसका इलाज हो। इसलिए वह कहता है– ''नहीं चंदा उधार खाने से मेरा इलाज नहीं होगा चाहे... चाहे एक के चार दिन लग जाएं।'' पर चंदा की कुर्बानी से तीसरे दिन दवाईयां आ जाती हैं। उस समय उसकी प्रतिक्रिया क्या थी निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है–

"और तीसरे रोज़ जगपती के सिरहाने कई ताकत की दवाईयां रखी थीं और चन्दा की ठहरनेवाली कोठरी में उसके लेटने के लिए एक खाट भी पहुँच गई थी। चन्दा जब आई, तो जगपती के चेहरे पर मानसिक पीड़ा की असंख्य रेखाएं उभरी थी, जैसे वह अपनी बीमारी से लड़ने के अलावा स्वयं अपनी आत्मा से भी लड़ रहा हो...... चन्दा की नादानी और स्नेह से भी उलझ रहा हो और सबसे ऊपर सहायता करने वाले की दया से जूझ रहा हो।" फिर न तो वह अच्छी दवाईयों का विरोध करता है और न बचन सिंह की दया का। ठीक होकर जब वह घर आ जाता है तो चन्दा के सिरहाने सोने के कड़े देखता है तो वह अंदर से पूरी तरह से टूट जाता है और सोचता है कि चन्दा ने उससे झूठ क्यों बोला जो कि प्रस्तुत शब्दों से पता चलता है, "चन्दा झूठ बोली! पर क्यों ? कड़े आज तक छुपाए रही।

उसने इतना बड़ा दुराव क्यों किया ? आखिर क्यों ? किसलिए ? और जगपती का दिल भारी हो गया। उसे फिर लगा कि उसका शरीर सिमटता जा रहा है और वह एक सींक का बना ढांचा रह गया..... नितान्त हल्का, तिनके–सा, हवा में उड़कर भटकने वाले तिनके–सा।" फिर कम्पाउंडर का घर में आना–जाना भी उसे खलता है।

इस प्रकार रचनाकार ने रोगी की मनःस्थिति को चित्रित किया है और यह भी बताया है कि जब उसके हाथ से कुछ फिसलता है तो उसकी क्या दशा होती है। जगपती की भी ठीक वही दशा थी।

4. नारी स्वातन्त्र्य पर प्रकाश डालना

कमलेश्वर की मूल संवदेना भारतीय नारी के साथ है। उसकी सभी कहानियों में नारी सक्षम दिखाई देती है। रचनाकार स्वयं स्वतन्त्र, निर्णायक, स्पष्टवक्ता गुणों से युक्त नारी की कामना करता है। रचनाकार चाहता है कि नारी अपने पैरों पर खड़ी हो ताकि उसे कोई अपने अधीन न कर सके। कहानीकार ने इसलिए अपनी कहानियों में ऐसी ही नारियों को वर्णित किया है जो प्रत्येक क्षेत्र में स्वतन्त्र हो, स्वयं निर्णय लेने वाली हो, पतिव्रता हो इत्यादि।

जगपती जब चन्दा के चरित्र पर उंगली उठाता है तो वह स्वयं यह निर्णय ले लेती है कि वह अपने मायके जा रही है वह जगपती से पूछती तक नहीं है बल्कि सीधे अपना निर्णय सुनाती है– "तभी चन्दा ने बड़े सीधे शब्दों में कहा, कल मैं गांव जाना चाहती हूँ। चन्दा फिर बोली, मैंने बहुत पहले घर चिट्ठी डाल दी थी, भैया कल लेने आ रहे है।" और जगपती जब उसके चरित्र पर उंगली उठाता है तो वह दृढ़ता से अपना पक्ष रखती हुई कहती है कि ''तुमने मुझे बेच दिया।'' इसलिए वह ऐसे विवश पति का परित्याग कर रही है।

5. सरकारी अस्पतालों की कार्यशैली का वर्णन

रचनाकार ने राजा निरबंसिया में जगपती के माध्यम से सरकारी अस्पतालों की स्थिति पर भी प्रकाश डाला गया है। यहां पर डॉक्टर तो आते नहीं और अस्पताल कम्पाउण्डर के आसरे पर चलते हैं। जगपती की जांघ पर गोली लगने के कारण उसे अस्पताल में भर्ती करवाया जाता है। यहां पर उसकी देखभाल कम्पाउण्डर ही करता है। कहानी के प्रस्तुत शब्दों से अस्पताल की स्थिति का पता चलता है, "कस्बे का अस्पताल था। कम्पाउण्डर ही मरीजों की देखभाल रखते। बड़ा डाक्टर तो नाम के लिए था या कस्बे के बड़े आदमियों के लिए। छोटे लोगों के लिए तो कम्पाउंडर साहब ही ईश्वर के अवतार थे। मरीज़ों की देखभाल करने वाले रिश्तेदारों की खाने–पीने की मुश्किलों से लेकर मरीज की नब्ज़ तक संभालते थे। छोटी–सी इमारत में अस्पताल आबाद था।"

इस प्रकार रचनाकार ने सरकारी अस्पतालों के सच से परिचित करवाया है यहां पर न तो डॉक्टर की व्यवस्था होती है न दवाई की। जहां तक रोगी ज़्यादा आ जाए तो उन्हें नीचे लेटाने से भी परहेज नहीं किया जाता। कम्पाउंडर रोगियों और उनके घरवालों से कैसा भी व्यवहार करें लोग सहन करते हैं। किसके पास शिकायत की जाए कोई सुनने वाला नहीं होता है।

6. ग्रामीणों की गरीबी का यथार्थांकन

रचनाकार की संवेदना उस परिवेश के साथ भी है जिसमें जगपती रहता था। जिसमें उसे कर्ज़ लेने के लिए पत्नी को दांव पर लगाना पड़ा। क्योंकि वह ऐसे गांव से संबंध रखता है जहां पर बहुत गरीबी है कोई किसी की आर्थिक सहायता करने के लिए तैयार नहीं है और न ही काम दे सकता है। रचनाकार ने मैनपुरी गांव की गरीबी वाले परिवेश का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में किया है– ''मुहल्ले के लोग... जो एक–एक पाई पर जान देते है, कोई चीज खरीदते वक्त भाव में एक पैसा कम मिलने पर मीलों पैदल जाकर एक पैसा बचाते हैं, एक–एक पैसे की मसाले की पुड़िया बंधवाकर ग्यारह मर्तबा पैसों का हिसाब जोड़कर एकाध पैसा जोड़कर, मिन्नतें करते सौदा घर लाते हैं, गली में कोई खोंचे वाला फंस गया, तो दो पैसे की चीज़ को लड़–झगड़कर–चार दाने ज़्यादा पाने की नीयत से–दो जगह बंधवाते है। भाव के ज़रा से फर्क पर घंटों बहस करते हैं, शाम को सड़ी–गली तरकारियों को किफायत के कारण लाते हैं, ऐसे लोगों से किस मुंह से मांगकर वह उनकी गरीबी के अहसास पर ठोकर लगाएं!''

इस प्रकार रचनाकार ने जगपती और चंदा के माध्यम से एक कर्ज़दार व्यक्ति की विवशता का वर्णन तो किया ही है उसके साथ ही अर्थ प्रधान इस समाज में परिस्थितियां कैसे व्यक्ति को घेर लेती हैं इसके प्रति भी चिंता व्यक्त की है। रचनाकार ने ऋण के कोढ़ से भी सचेत किया है।

14.4 'खोई हुई दिशाएं' कहानी की मूल संवेदना

'खोई हुई दिशाएं' कमलेश्वर द्वारा रचित दूसरे दौर की कहानी है। इसकी रचना कथाकार ने इलाहाबाद से दिल्ली आने पर सन् 1959–60 में की। इस कहानी की मूल संवेदना अकेलेपन की पीड़ा और पहचान की समस्या है। इस पूरी कहानी में चन्दर अपनी पहचान पाने के लिए तड़पता रहता है। रचनाकार ने बड़े शहरों में कस्बे से आने वाले आम आदमी की स्थिति को चित्रित किया है कि उसे वहां पर कोई नहीं पहचानता है और मनुष्यों की भीड़ में भी वह अकेला है। इस कहानी की मूल संवेदना के निम्नलिखित बिन्दुओं को स्पष्ट किया जा रहा है–

1. पहचान खोने की विवशता का वर्णन

पहचान की मांग हर व्यक्ति की जीवित रहने का कारण है। व्यक्ति की यह मानसिक भूख भी है। रचनाकार ने व्यक्ति की पहचान की पीड़ा को बड़े ही सटीक ढंग से वर्णित किया है। बड़े शहरों में एक कस्बे से आने वाला व्यक्ति अपनी पहचान के लिए भटक रहा है पर हर स्थान पर पसरा हुआ परायापन उसे त्रस्त करता है।

कहानी का नायक चंदर इलाहाबाद से दिल्ली आया है उसे तीन बरस हो गये हैं इस शहर में आए हुए। वह कस्बों की संस्कृति में पला बढ़ा है। इसलिए वह परिचित आँखों की तलाश में है। बस स्टैण्ड, पार्क चौराहे, कैफे सड़क पर जहां तक कि अपने घर में वह अपनी पहचान को महत्व देता है। दिल्ली की सड़कों पर घूम कर जब वह कैफे में आता है एक अजनबी द्वारा पुकारे जाने पर एक पल के लिए उसे पहचान की आशा होती है परन्तु दूसरे ही पल टूट जाती है जैसे कि प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट है– ''अपने साथ बैठे हुए अनजान दोस्त की तरफ गहरी नज़रों से देखता

है और सोचता है, अजनबी ही सही, पर इसने पहचाना तो। इतनी पहचान भी बड़ा सहारा देती है... चन्दर को अपनी तरफ देखते हुए देख वह साथवाला दोस्त कुछ कहने को होता है, पर जैसे उसे कुछ याद नहीं आता, फिर अपने को संभालकर उसने चन्दर से पूछा, आप... आप तो कामर्स मिनिस्ट्री में हैं, मुझे याद पड़ता है कि ... कहते हुए वह रूक जाता है। चन्दर का पूरा शरीर झनझना उठता है और एक घूंट में बची हुई कॉफी पीकर वह बड़े संयत स्वर में जवाब देता है, नहीं, मैं कॉमर्स मिनिस्ट्री में कभी नहीं था...।''

चन्दर वहां से दुःखी होकर चला जाता है तो रिक्शे वाले द्वारा पहचान भरी नज़रों से देखने पर उसकी आशा फिर से बंध जाती है कि शुक्र है कि कोई तो जानता है और अगले ही पल जब रिक्शे वाला अधिक पैसे की मांग करता है तो उसकी उम्मीद चकना चूर हो जाती है वहां से निराश होकर चन्दर अपनी प्रेमिका इन्द्रा का स्मरण करता है जो अब दिल्ली में रहती है। वह सोचता है कि वह तो मुझे जानती है परन्तु चाय देते समय इन्द्रा उससे पूछती है कि कितने चम्मच चीनी डालूं तो वह भी उसे अजनबी लगती है जैसे कि कहानी के प्रस्तुत शब्दों से पता चलता है– ''और एक झटके से सब कुछ बिखर गया। उसका गला सूखने–सा लगा और शरीर फिर थकान से भारी हो गया। माथे पर पसीना आ गया। फिर भी उसने पहचान का रिश्ता जोड़ने की एक नाकाम कोशिश की और बोला, ''दो चम्मच''। और उसे लगा कि अभी इन्द्रा को सब कुछ याद आ जाएगा और वह कहेगी कि दो चम्मच चीनी से अब गला खराब नहीं होता?''

पर ऐसा कुछ नहीं होता। वह वहाँ से भी भाग जाता है। इसी प्रकार डाकखाना, बैंक तथा अन्य किसी भी सार्वजनिक स्थानों पर लोग तो मिलते हैं पर उनका व्यवहार कृत्रिम और यंत्रवत है उसे कहीं भी इलाहाबाद के समान पहचान की सुगन्ध नहीं आती है। वह केवल अपनत्व पाना चाहता है। वह अपनापन जो लोगों से, सड़कों से और वातावरण से मिलता है जिससे व्यक्ति की पहचान बनती है पर दिल्ली में कोई भी तो ऐसा नहीं है। सभी एक दूसरे को जाने–पहचाने बिना अपने–अपने कार्य में व्यस्त हैं। पूरी कहानी में चन्दर दिल्ली जैसे शहर में अपनी पहचान पाने के लिए छटपटाता है और अंततः इतना बेचैन हो जाता है कि वह अपनी पत्नी से भी यही प्रश्न पूछता है ''मुझे पहचानती हो निर्मला?'' और उसकी आँखें उसके चेहरे पर पहचान ढूंढती रह जाती हैं।

2. अकेलेपन की पीड़ा का वर्णन

शहरी संस्कृति ने हमें अकेलेपन का तोहफा दिया है। शहर में व्यक्ति भीड़ में भी अकेला है। वह यहां कहीं भी जाता है अपने आप को अकेला ही पाता है। कहानी का नायक चन्दर अकेलेपन की पीड़ा से संत्रस्त है। वह बस स्टॉप पर भीड़ में खड़ा है वहां सब एक दूसरे की तरफ अजनबी निगाहों से देख रहे हैं। समय और बस के संबंध में एक दूसरे से पूछने की हिम्मत नहीं होती है कहानी के प्रस्तुत शब्दों से पता चलता है– ''रीगल बस स्टॉप के नीम के पेड़ों से धीरे–धीरे पत्तियां झड़ रही हैं। बसें जूं–जूं करती आती हैं– एक क्षण ठिठकती हैं– एक ओर से सवारियों को उगलती हैं और दूसरी से निगलकर आगे बढ़ जाती है। चौराहे पर बत्तियां लगी हैं। बत्तियों की आंखें लाल–पीली हो रही हैं। आस–पास से सैंकड़ों लोग गुज़रते हैं पर कोई उसे नहीं पहचानता। हर आदमी या औरत लापरवाही से दूसरों को नकारता या झूठे दर्प डूबा हुआ गुजर जाता है।''

वह पार्क में जाता है वहां पर बैंच लगे हैं, लोग बैठे हैं, बच्चे खेल रहे हैं, सभी अपने आप में मस्त हैं कोई किसी की तरफ ध्यान नहीं दे रहा है चन्दर वहां पार्क में भी अकेलेपन को अनुभव करता है उसके प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट है, ''तनहा खड़े पेडों और उसके नीचे सिमटते अंधेरे में अजीब–सा खालीपन है।'' इस प्रकार कस्बे से आया चन्दर हर दिशा में मन की छटपटाहट को लेकर घूम रहा है। अपनेपन से दूर होकर उसे अपना जीवन निरर्थक लगने लगता है। संपूर्ण कहानी में अकेलेपन की अनुभूति ही प्रखर है और यह अकेलापन चन्दर को कहीं भी टिकने नहीं देता। एक स्थान से दूसरे स्थान पर बिना रुके भागता जाता है। दिनभर के सारे अनुभवों के कटु सत्य का सामना करते हुए बेहद अकेलेपन के एहसास को लेकर घर आता है तो घर की वस्तुओं और पत्नी के बीच अपने को पाकर उसे लगता है कि ''वह अकेला नहीं हैं। अजनबी और तनहा नहीं है। सामने वाला गुलदस्ता उसका अपना है पड़े हुए कपड़े उसके अपने हैं, उनकी सुगंध वह पहचानता है।'' और फिर शारीरिक सुख की प्राप्ति के बाद फिर वह पत्नी के होते हुए भी अपने आप को अकेला पाता है वह जिस अपनेपन को पत्नी में ढूंढता है वह उसे पत्नी में नहीं मिलता है ''और चन्दर फिर अपने को बेहद अकेला महसूस करता है, कमरे की खामोशी और सूनेपन से उसे डर लगता है। वह निर्मला के कन्धे पर हाथ रखता है, चाहता है कि उसकी करवट बदल दे, पर उसकी अंगुलियां बेजान होकर रह जाती है।'' और बार–बार के स्पर्श से भी जब निर्मला जागती नहीं तब अचानक उसे लगता है कि शायद निर्मला भी उसे पहचानती न हो। ''चन्दर सुन्न सा रह जाता है... क्या वह उसके स्पर्श को नहीं पहचानती है?'' इस प्रकार अकेलेपन की त्रासदायक स्थितियों का वर्णन हुआ है जिनमें से गुज़रते हुए चन्दर भयभीत सा रहता है।

3. कस्बे और शहरी जीवन का अंतर स्पष्ट करना

ग्रामीण कस्बों में अपनेपन के भाव मिलते हैं और वही राजधानी में सभी एक दूसरे से अजनबियों की तरह व्यवहार करते हैं। ग्रामीण कस्बों में दूर–दूर तक व्यक्ति की पहचान होती है और राजधानी में व्यक्ति की पहचान उसके घर के आगे लगी नंबर प्लेट से होती है।

रचनाकार ने इस कहानी के द्वारा ग्रामीण कस्बों और राजधानी के अंतर को स्पष्ट किया है। चन्दर राजधानी में रहते हुए तालमेल नहीं बना पाता है वह वहां के वातावरण एवं लोगों से परिचय बनाना चाहता है परन्तु कस्बे में मिलने वाला अनजान भी पहचान बढ़ाकर ही आगे निकलते हैं जबकि शहरों में पहचानने वाला व्यक्ति भी समय न होने पर आँखें बचाकर निकल जाता है। बात–बात पर चन्दर को अपना शहर याद आता है। कथाकार ने ग्रामीण और शहरी वातावरण के अंतर को निम्नलिखित में स्पष्ट किया है– ''और तब उसे अपना वह शहर याद आता है, जहां से तीन साल पहले वह चला आया था– गंगा के सुनसान किनारे पर भी अगर कोई अनजान मिल जाता तो नज़रों में पहचान की एक झलक तैर जाती थी और यह राजधानी! जहां सब अपना है, अपने देश का है... पर कुछ भी अपना नहीं है, अपने देश का नहीं है तमाम सड़के हैं जिन पर वह जा सकता है, लेकिन वे सड़कें कहीं नहीं पहुंचाती। उन सड़कों के किनारे घर हैं, बस्तियां हैं, पर किसी भी घर में वह नहीं जा सकता। उन घरों के बाहर फाटक हैं, जिन पर कुत्तों से सावधान रहने की चेतावनी है, फूल तोड़ने की मनाही है और घण्टी बजाकर इंतज़ार करने की मज़बूरी है।'' लेखक ने यह भी स्पष्ट करना चाहा है कि गांवों और कस्बों में हर स्थान पर अपनापन होता है प्रत्येक व्यक्ति परिचित न होते

हुए भी परिचय का संकेत देता है परन्तु शहरों में परिचित भी अपरिचित हो जाता है। शहरों ने मनुष्य के स्नेह और अपनत्व को समाप्त कर दिया है।

इस प्रकार 'खोई हुई दिशाएं' कहानी में कस्बे से आए संवेदनशील युवक चन्दर के मन की छटपटाहट को शब्दबद्ध किया गया है। शहरों में बढ़ती हुई संवेदनहीनता के कारण वह स्वयं को कटा हुआ पाता है और उसे सब कुछ निरर्थक लगने लगता है। पूरी कहानी एक संतप्त मनःस्थिति को लेकर चलती है जिसमें अकेलेपन की अनुभूति ही प्रमुख है। अपने दूसरे दौर की कहानियों के संबंध में कमलेश्वर ने लिखा है– ''व्यक्ति के दारूण और विसंगत संदर्भों को समय के परिप्रेक्ष्य में समझने का' प्रयत्न इस दौर में हुआ है और चन्दर के सम्पूर्ण व्यक्तित्व को उसके दारूण और विसंगत संदर्भों में पहचानने का प्रयास है जिसमें कथाकार को पूर्ण सफलता मिली है।

14.5 'नीली झील' कहानी की मूल संवेदना

'नीली झील' पहले दौर में लिखी गई अन्तिम कहानी है। यह कहानी मानवीय संवेदना को व्यक्त करती है। प्रकृति और पर्यावरण का महत्व बताती हुई यह कहानी पक्षियों से जुड़े मानव मोह को व्यक्त करती है। इसलिए सारी कहानी पक्षियों के इर्द–गिर्द ही घूमती है। इस कहानी का नायक महेसा एक मज़दूर हैं। अशिक्षित है और कानपुर से मिल की नौकरी छोड़कर किसी शहर से थोड़ी दूरी पर स्थित 'नीली झील' की ओर जाने वाले रास्ते पर मज़दूरी करता है। सौंदर्य के प्रति उसकी अनाम सी भूख है। उसे नीला रंग प्रिय है इसलिए नीली झील, नीली साड़ी वाली मैम की ओर आकृष्ट हो जाता है। वह विधवा पंडिताइन से विवाह करवाता है और उसकी मृत्यु के बाद भी उसकी यादों में खोया रहता है। झील पर आए हुए अंग्रेज सैलानियों को पक्षियों का शिकार खेलता देख द्रवित हो जाता है वह पक्षियों को बचाने के लिए झील को ही खरीद लेता है इस कहानी की मूल संवेदना को निम्नलिखित बिन्दुओं में देखा जा सकता है–

1. पक्षियों के प्रति संवेदना व्यक्त करना

रचनाकार ने पक्षियों की प्रजातियों के प्रति चिंता व्यक्त की है। वातावरण में सामंजस्य को बनाये रखने के लिए मानव के साथ–साथ पक्षियों का होना भी आवश्यक है। पक्षी मानव के लिए कई हानिकारक जीवों को आहार बनाकर व्यक्ति को सुरक्षा प्रदान करते हैं इसलिए सम्पूर्ण मानव जाति की सुरक्षा के लिए पक्षी भी प्रकृति का एक अनिवार्य हिस्सा है। आधुनिक मानव अपनी प्रसन्नता और शौक के लिए पक्षियों का शिकार कर उनकी कई प्रजातियों को ही समाप्त कर रहा है। इस कहानी की मूल संवेदना पक्षियों का संरक्षण और पक्षी प्रेम पर आधारित है।

कहानी नायक महेसा पांडे का पक्षियों के साथ विशेष प्रेम है। वह पक्षियों की आवाज़ से पक्षियों को पहचानता है और उनकी ध्वनि से वह उनके सुख–दुख को भी जान जाता है। सारा–सारा दिन वह नीली झील पर व्यतीत करता है क्योंकि विशेष ऋतु में विशेष पक्षी इस झील का मेहमान बनते हैं इसलिए पक्षियों का आकर्षण उसे हर समय उसकी ओर खींचता है पर यह झील अपने प्राकृतिक सौंदर्य और पक्षियों की आवास स्थली होने के कारण सैलानियों के लिए भी आकर्षण का केन्द्र बनी हुई है। वह इस स्थान पर आकर पक्षियों का शिकार करते हैं। अतः महेसा सैलानियों द्वारा

पक्षियों का शिकार करने पर उदासीन हो जाता है। वह नहीं चाहता कि सैलानी इनका शिकार करें। वह पक्षियों को पालने का शौक रखता है इसलिए वह अपनी पत्नी पारबती से चोरी पक्षियों को पालता है। उनके अण्डे भी छुपा कर रखता है। पारबती को दिखाता हुआ कहता है– ''देख पारबती, यह वाक का अण्डा है, यह सारस का और यह सोनापतारी का। महेसा एक–एक अण्डा उठाकर दिखाने लगा।'' वह पक्षियों के संबंध में हर बात का ज्ञान रखता है। जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है, ''आजकल नई–नई चिड़ियां बहुत दिखाई पड़ती हैं, ये चिड़ियां मेहमान हैं... कार्तिक खत्म होते आती हैं और फागुन चैत तक चली जाती हैं।'' पक्षियों का शोर सुनकर उसका मन बहक जाता है। वह एकदम उन्मत होकर उनकी ध्वनि की तरफ खींचा हुआ चला जाता है। वह सोचता है इन पक्षियों को मारने से क्या फायदा है। उसे तो बंद पिंजरे में पक्षियों का पालना भी अच्छा नहीं लगता। वह कितनी–कितनी देर इन पक्षियों को निहारता रहता। जब सैलानी शिकार करते हैं तो एकदम निराश हो जाता है उस पर इसका क्या प्रभाव होता है निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है– ''...फिर एक भयंकर धड़ाके की आवाज़ से वह चौंक उठा। बाईं ओर दलदल से सारसनी की तुरही सी तेज़ चीख आई और गूंजती रही। वह बार–बार चीख रही थी और सारस अकुलाया–सा कुछ ऊपर चक्कर काट रहा था। कभी दलदल में उतर कर चीखता कभी लम्बे–लम्बे डग भरकर इधर–उधर लपकता और वैसी ही तेज आवाज़ में चीखने लगता।'' सारसनी को गोली लगने पर सारस व्याकुल होकर शायद सहायता के लिए पुकारता है। महेश पांडे की आंखों में अश्रु आ जाते हैं जहां तक कि पक्षियों की आवाज़ दिनभर उसे विचलित करती रहती है। ''रात भर उस अकेले घर में उसे बार–बार वही तेज़ आवाज़ सुनाई पड़ती रही।''

उस झील पर सवनहंस पक्षी कार्तिक के अंत में आते हैं और फाल्गुन मास तक फिर वे उड़कर पहाड़ों की ओर चले जाते हैं। महेसा उनके साथ अपना अजीब रिश्ता महसूस करता है उसे लगता है कि शायद ये भी शिकारियों की गोली का शिकार हो जाएंगे। उसे उनकी शिकार में पारबती का अन्त दिखाई देता है। वह मायूसी से सोचते हैं– "फिर सवनहंसों का एक झुंड अपने राग का स्वर मिलाता हुआ झील के दूसरे किनारे पर उतर पड़ा और दो–चार हंस गेहूं और चने के खेत में घुसकर अंकुर खाने लगे। गर्दन उठा–उठाकर वे ऐसे देख रहे थे, जैसे अजनबी हो, और सचमुच वे अजनबी ही है। महेस पांडे का मन न जाने क्यों भर आया! ये सवनहंस अब आए हैं, चार–पांच महीने रहकर पारबती की तरह चले जाएंगे, या फिर किसी शिकार का शिकार हो जाएंगे, जैसे पारबती हो गई। इनके धूसर पंख खून की लकीरों से टंक जाएंगे, और इनके परों को पकड़कर शिकारी ऐसे लटका ले जाएगा जैसे मुर्दा पारबती को अस्पताल के भंगी पलंग से उठाकर उस सूने बरामदे में ले आए थे।"

वह पक्षियों को बचाने के लिए कहानी के अंत में उस नीली झील को ही खरीद लेता है यहां पर सैलानी शिकार खेलने आते है और झील के बाहर बोर्ड लगवा देता है। जिस पर उसने लिखा था, ''यहां शिकार करना मना है। 'और नीचे की पंक्ति थी, 'दस्तखत नीली झील का मालिक, महेस पांडे।" इस प्रकार महेस पांडे द्वारा झील को ही खरीद लेना पक्षियों की सुरक्षा का आधुनिक प्रयास है।

2. अकेलेपन की पीड़ा का वर्णन करना

कमलेश्वर ने अपनी कहानियों में अकेलेपन को कई रूपों में चित्रित किया है। प्रस्तुत कहानी में पंडिताइन

की मृत्यु के बाद महेसा अकेलेपन की एक विचित्र पीड़ा से गुज़रता है। अकेला तो वह विवाह से पहले भी था तब तो उसका अकेलापन फक्खड़ था उसे कोई चिंता नहीं थी। पर अब वह विधुर है और पारबती का पैसा भी उसके पास है। पर वह पारबती के बिना अपने आप को अधूरा मानता है। उसके अकेलेपन की पीड़ा को लेखक ने निम्नलिखित पंक्तियों में चित्रित किया है– ''सूने घर में महेसा आठ–आठ आंसू रोता और उसे पारबती की एक–एक बात याद आती ... चीज़ें देखता तो आँखों में आंसू भर जाते... घर का सूनापन अब उसे काटने को दौड़ता।'' घर का अकेलापन वह सहन नहीं कर पाता है। लोगों ने दूसरी शादी का सुझाव दिया पर वह पारबती की याद में ही जीवन जीना चाहता है। उसका सारा–सारा दिन झील के किनारे कटने लगा। उसे अब इस बात की फिक्र भी थी कि पारबती की अन्तिम इच्छा पूरी की जाए। इसके लिए वह क्रूरता से लोगों से पैसे वसूल करता। फिर वह पारबती के बाद इतना अकेला पड़ जाता है कि उसकी मृत्यु के तीन वर्षों बाद ही वह बूढ़ा लगने लग जाता है। कथाकार लिखता है– ''आदमी बूढ़ा नहीं होता, वक्त उसे बूढ़ा बना जाता है।'' वह इस उधेड़बुन में रहता है कि पारबती मंदिर बनाया जाए या पक्षियों को संरक्षण दिया जाए और अंत में जब वह मन्दिर के पैसों से दलदली नीली झील खरीद लेता है तो लोग कहते हैं इसका दिमाग खराब हो गया है। झील में पक्षियों की सुरक्षा में उसका अकेलापन कटने लगता है।

3. नारी स्वातन्त्र्य पर बल देना

रचनाकार ने इस कहानी के माध्यम से सामाजिक परंपराओं में बंधी हुई स्त्री को उन परंपराओं को त्याग कर स्वयं के लिए निर्णय लेते हुए दर्शाया है। इस कहानी की नायिका पारबती जो विधवा है वह किसी की परवाह किए बिना स्वतन्त्र रूप से यह फैसला करती है कि वह पुनर्विवाह करेगी और वह महेसा से विवाह करती है जो कि आयु में उससे दस वर्ष छोटा है। कहानी के प्रस्तुत उदाहरण से स्पष्ट है, "झील तक वह सड़क तो पूरी नहीं बन पाई, पर महेसा गैंग से बिछुड़ गया, विधवा पण्डिताइन ने उससे शादी कर ली थी। लोगों ने तरह–तरह की बातें कहीं....... किसी का कहना था कि जवान देखकर पण्डिताइन ने फांस लिया और कोई कहता था कि महेसा रूपया–पैसा देखक ढरक गया......।" पंडिताइन न केवल विवाह करती है अपितु वह समाज में प्रचलित इस धारणा का भी खंडन करती है कि पुरुष की आयु स्त्री से बड़ी होनी चाहिए। भारतीय समाज में नारी की स्थिति विदेशी स्त्री के मुकाबले बहुत पिछड़ी हुई है। पिछली शताब्दी तक नारी अपने पति के साथ कंधा मिलाकर नहीं चल सकती थी। वह पुरुष से चार कदम पीछे ही रही। इस कहानी में सैलानी जब स्त्री पुरुष इकट्ठे आते हैं तो ग्रामीणों पर भी इसका प्रभाव पड़ता है और पुरुष भी अपनी स्त्री के साथ चलने में अपनी शान समझने लगा। महेसा भी पंडिताइन को साथ चलने के लिए कहता है जैसे कि उदाहरण से पता चलता है–

"राह में साथ चलते महेसा से पारबती पण्डिताइन कहती, तुम्हें तो ज़रा भी सऊर नहीं है! मरद घरवाली के आगे–आगे चलता है, साथ नहीं! लोग क्या कहेंगे? ...... आगे चलो! और सर पर साफा बांधे महेसा कहता, बड़ी सरम आय गई है! सहर में मेम लोग इसी माफिक चलती हैं, बल्कि बांह में हाथ फंसाके!''

इस प्रकार रचनाकार ने इस कहानी में नारी को सशक्त दिखाकर उसे प्रेरित किया है।

निष्कर्षतः इस कहानी की मूल संवेदना पक्षियों के संरक्षण के साथ जुड़ी है। महेस पक्षियों से प्रेम के कारण मंदिर एवं धर्मशाला के लिए एकत्रित किए धन से नीली झील को खरीद लेता है। इसके साथ ही लेखक ग्रामीणों के प्रति भी विशेष श्रद्धा रखता है इसलिए कहानी में ग्रामीणों की आर्थिक स्थिति पर प्रकाश डालते हुए बताया है कि गांव में गरीबी का राज था और ग्रामीण अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सूद पर पैसे लेते हैं। पारबती का समय–असमय पैसों से लोगों की सहायता करना इसी ओर संकेत करता है। दूसरी ओर रचनाकार ने पंडिताइन का महेसा के साथ विवाह करवाकर पुनर्विवाह को प्रोत्साहित किया है। इसके माध्यम से कथाकार ने एक स्वस्थ समाज की ओर भी संकेत किया है। पति–पत्नी के संबंधों की प्रगाढ़ता चित्रित करते हुए महेस पांडे की पत्नी विरह से भी अधिक उसका पक्षियों के लिए समर्पण बताया है।

14.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कर्ज़दार व्यक्ति की मनोव्यथा का चित्रण कीजिए।

2. कमलेश्वर के नारी संबंधी विचारों पर प्रकाश डालिए।

3. 'खोई हुई दिशाओं' के संदर्भ में अकेलेपन की पीड़ा पर प्रकाश डालिए।

4. 'नीली झील' कहानी के आधार पर पक्षी–प्रेम पर नोट लिखें।

14.7 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. राजा निरबंसिया कहानी में किस कस्बे का वर्णन आता है?

2. 'खोई हुई दिशाएं' कहानी के आधार पर कस्बे और शहरी जीवन का अंतर स्पष्ट करें।

3. 'संवेदना' शब्द की व्युत्पत्ति पर प्रकाश डालिए।

4. 'नीली झील' में महेस पांडे का विवाह किसके साथ होता है?

*****

कमलेश्वर की कहानियों का पात्र चरित्र–चित्रण एवं शिल्प विधान

15.0 रूपरेखा

15.1 उद्देश्य

15.2 पात्र चरित्र–चित्रण

15.2.1 'राजा निरबंसिया' कहानी के पात्र

जगपती

चन्दा

बचन सिंह

15.2.2 'खोई हुई दिशाएं' कहानी के पात्र

चन्दर

15.2.3 'नीली झील' कहानी के पात्र

महेस पांडे

पार्वती

15.3 प्रस्तुत कहानियों का शिल्प–विधान

15.3.1 शिल्प : अर्थ एवं अभिप्राय

15.3.2 राजा निरबंसिया : कहानी का शैल्पिक विधान

15.3.3 'खोई हुई दिशाएं' कहानी का शैल्पिक विधान

15.3.4 'नीली झील' कहानी का शैल्पिक विधान

15.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

15.5 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

15.6 सन्दर्भ पुस्तकें

15.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययन उपरान्त आप

- कमलेश्वर की कहानियों के पात्रों की मानसिकता से परिचित होंगे।
- आज की नारी के संदर्भ में पार्वती का मूल्यांकन कर पाएंगे।
- चन्दर के माध्यम से शहरी परिवेश को जान पाएंगे।
- कमलेश्वर की पर्यावरण संरक्षण दृष्टि को जान पाएंगे।
- कमलेश्वर के रचना शिल्प की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे।

15.2 पात्र चरित्र–चित्रण

कहानी की कथावस्तु किसी भी प्रकार की क्यों न हो, वह किसी न किसी पात्र पर आधारित रहती है। कहानी में पात्रों की संख्या जितनी कम हो उतनी ही अच्छी मानी जाती है। कहानी के पात्रों में सजीवता स्वाभाविकता की अभिव्यक्ति मूलभाव तथा घटना के प्रति अनुकूलता रहनी चाहिए। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल पात्रों के सम्बन्ध में कहते हैं– ''पात्र अतीत, वर्तमान, भविष्य तथा स्वदेश, विदेश जहां के भी हों, उनकी सृष्टि में केवल एक शर्त होनी चाहिए, उनकी सार्थकता और स्वाभाविकता में हमें किसी प्रकार का सन्देह न हो।''

कहानी में जिनके सम्बन्ध में कथा कही जाती है, वे कहानी के पात्र होते हैं। उनमें से मुख्य पात्र को कहानी का नायक कहते हैं। कहानी में जिस प्रकार के पात्रों को चित्रित किया गया है, उसे चरित्र–चित्रण कहते हैं। इसी में कहानी का लक्ष्य या उद्देश्य निहित रहता है।

'राजा निरबंसिया' कहानी के पात्र

जगपती

कमलेश्वर द्वारा रचित 'राजा निरबंसिया' का मुख्य पात्र एवं नायक है जगपती। वह पहले दसवीं पास है

और कस्बे के वकील के पास मुहर्रिर की नौकरी करता था। वह गरीब परिवार से संबंध रखता है और परिश्रमी है। दुर्घटना से वह गोली का शिकार हो जाता है जिसके कारण उसे काफी समय तक अस्पताल और बिस्तर पर रहना पड़ा फलस्वरूप उसकी नौकरी छूट जाती है। आजीविका हेतु वह बचन सिंह कम्पाउडर से कर्ज़ लेकर टाल खोलता है। पत्नी चंदा जिसे पाकर वह बहुत प्रसन्न था। वह उसे भी दांव पर लगा देता है और उसके गर्भवती होने पर वह शक करता है और उसे भला–बुरा कहता है। चंदा उसे यह कहकर कि 'उसने उसे बेच दिया है' उसका घर छोड़कर मायके चली जाती है। उसका अकेलापन उसे इस प्रकार अंदर तक हिला देता है कि हर प्रकार से अपने को दोषी मानकर अंततः आत्महत्या कर लेता है। पूरी कहानी में उसका व्यक्तित्व कई पड़ावों से गुज़रता है जिससे उसके चरित्र एवं व्यक्तित्व की कई विशेषताएँ सामने आती हैं।

1. परिश्रमी

जगपती एक परिश्रमी व्यक्ति है। जिस घर और परिवेश में उसने जन्म लिया है उसने उसे परिश्रम करना सिखा दिया है। ठीक होने बाद वह काम पाने के लिए मारा मारा फिरता है। वह हर घड़ी अपने को काम में खपा देना चाहता है ताकि वह कुछ और न सोच सके। इसलिए वह सोचता है कि उसे करने के लिए कुछ चाहिए। यही उसकी पहली और आखिरी मांग है। उसी के अनुसार, "वह उस घर में नहीं पैदा हुआ, जहाँ सिर्फ जबान हिलाकर शासन करने वाले होते हैं। वह उस घर में भी नहीं पैदा हुआ, जहां सिर्फ मांगकर जीने वाले होते हैं। वह उस घर का है जो सिर्फ काम करना जानते हैं, काम ही जिसकी आस है। सिर्फ वह काम चाहता है काम! ...." और टाल खोल लेने पर उसे ऐसा लगता है कि काम मिल गया है। अतः कथाकार लिखता है, "अब चौबीसों घंटे उसके सामने काम है....... . उसके समय का उपयोग है। दिनभर में वह एक घण्टे के लिए किसी का मित्र हो सकता है, कुछ देर के लिए वह पति हो सकता है, पर बाकी समय ? दिन और रात के बाकी घण्टे...... उन घंटों के अभाव को केवल उसका काम ही भर सकता है....... और अब वह कामदार था......" अतः टाल खोल लेने पर वह दिन–रात काम में इतना व्यस्त रहता है कि अपने सारे गम उसी में भुला देना चाहता है।

2. पत्नी प्रेमी

जगपती अपनी पत्नी चंदा से हृदय की गहराइयों से प्रेम करता है उससे विवाह करके जगपती को जैसे सब कुछ मिल गया हो पर चंदा जब घर छोड़कर मायके चली जाती है तो नितांत अकेला होकर केवल चंदा के विषय में ही सोचता है। मन ही मन कहता है, "वह ज़रूर औरत थी, पर स्वयं मैंने उसे नरक में डाल दिया! वह बच्चा मेरा कोई नहीं पर चंदा तो मेरी है। एक बार उसे ले आता, फिर यहां...... रात के मोहक अंधेरे में उसके फूल से अधरों को देखता...... निर्द्वन्द्व सोए पलकों को निहारता...... सांसों की दूध–सी अछूती महक को समेट लेता।" वह स्वयं इस बात को स्वीकार करता है कि वह चंदा को चाहता रहा, पर उसके दिल में चाहत न जगा पाया। अंततः उसके प्रेम में स्वयं को असफल जान वह आत्महत्या कर लेता है।

3. साहसी

जगपती वीर तथा साहसी है। जब वह अपने रिश्तेदार के यहाँ शादी में गया था तो वहां डाका पड़ने पर वह डटकर डाकुओं का सामना करता है। डाकुओं के विरुद्ध हिम्मत बढ़ाते हुए कहता है, "ये हवाई बन्दूकें इन तेल–पिलाई लाठियों का मुकाबला नहीं कर पाएंगी, जवानो।" अस्पताल में भर्ती होने पर भी वह अपने जख्मों का डटकर मुकाबला करता है। जहां तक कि जीवन में आए सारे संकटों का सामना भी हिम्मत से ही करता है।

4. थोथा आदर्शवादी

वह जगह–जगह चंदा को आदर्शों, नैतिकता की सीख देता है पर स्वयं उन पर चल नहीं सकता है। जब चंदा उसके लिए ताकत की दवाइयाँ मंगवाने की बात करती है तो वह कहता है, "देखो चंदा, चादर के बराबर ही पैर फैलाए जा सकते हैं। हमारी औकात इन दवाइयों की नहीं है।" जब वह कहती है कि वह कम्पाउण्डर साहब को इंतजाम करने के लिए बोलेगी तब वह कहता है, "नहीं चंदा, उधारखाते से मेरा इलाज़ नहीं होगा...... चाहे एक के चार दिन लग जाएं। तुम नहीं जानती, कर्ज़ कोढ़ का रोग होता है, एक बार लगने से तन तो गलता ही है मन भी रोगी हो जाता है।" वह चंदा को उधार लेने के लिए रोकता है पर स्वयं चंदा को ही दांव पर लगाकर बचन सिंह से उधार लेता है। इसलिए वह कहता है, "जो कुछ सोचा, उस पर कभी विश्वास न कर पाया। उसे कहीं से एक पैसा मांगने पर डांटता रहा, पर खुद लेता रहा और आज...... वह दूसरे के घर बैठ रही है। उसे छोड़कर...... वह अकेला है...... हर तरफ बोझ है।" अस्पताल में जब दवाइयाँ आ जाने पर वह व्यथित हो उठता है तो चंदा उसे बताती है कि ये दवाइयां उसने कड़ा बेचकर मंगवाई हैं तब जगपती की मानसिकता उसके खोखलेपन को सिद्ध कर देती है उदाहरणतः ''कड़ा बेचने से तो अच्छा था कि बचन सिंह की दया ही ओढ़ ली जाती। और उसे हलका–सा पछतावा भी था कि नाहक वह रौ में बड़ी–बड़ी बातें कह जाता है, ज्ञानियों की तरह सीख दे देता है।" चंदा भी उसके आदर्शों की गहराई को पहचान जाती है पर वह परिस्थितिवश चुप रहती है।

5. कुंठाग्रस्त

विफलता के कारण होने वाली घोर निराशा कुंठा का रूप धारण कर लेती है। जगपती अपने घर की परिस्थितियों को संभाल नहीं पाता तो वह कुंठाग्रस्त हो जाता है। जब कम्पाउण्डर उसके घर आना शुरू करता है तो अपने लाभ के लिए ही शायद वह उसे मना तो नहीं कर पाता पर अपने घर में बचन सिंह की उपस्थिति उसे बहुत खलती थी जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है– "उस दिन के बाद बचन सिंह लगभग रोज़ ही आने–जाने लगा। जगपती उसके साथ इधर–उधर घूमता भी रहता। बचन सिंह के साथ वह जब तक रहता, अजीब सी घुटन उसके दिल को बांध लेती, और तभी जीवन की तमाम विषमताएँ भी उसकी निगाहों के सामने उभरने लगती।" वह स्वयं से कई प्रकार के प्रश्न करता। जब उसे चंदा के गर्भवती होने का समाचार मिला तो वह तो एकदम पहले सकते में आ जाता है और जब चंदा उसे कहती है कि उसने उसे बेच दिया तो एकदम उस पर क्रोधित हो थप्पड़ जड़ देता है और फिर अपने–आप को कोठरी में बंद करके रातभर उसी कालिख में घुटता रहता है। उसका स्वाभिमान एक–एक

करके ध्वस्त हो जाता है और वह अपने–आप को किसी गहरे कुएं में धंसा हुआ पाता है। यही कुंठा का भाव उसे अंततः जीवन दाह करने के लिए उकसाता है।

6. पश्चातापी

जगपती कथा में पश्चाताप की अग्नि में निरंतर जलता रहता है। उसे इस बात का अहसास हो जाता है कि अपने घर को बर्बाद करने वाला वह स्वयं है। चंदा के आकर्षण तथा कर्ज़ के लिए किए गये समझौते के आधार पर बचन सिंह जब हर दिन उसके घर आने लगा तो वह अपने आप को एक अजीब सी घुटन में घिरा हुआ पाता है और उस समय भी उसकी सोच उसके पश्चाताप का ही परिणाम है जैसे– ''जीवन की तमाम विषमताएँ भी उसकी निगाहों के सामने उभरने लगती है, आखिर वह स्वयं एक आदमी है...... बेकार...... यह माना कि उसके सामने पेट पालने की कोई विकराल समस्या नहीं, वह भूखा नहीं मर रहा है, जाड़े में कांप नहीं रहा है, पर उसके दो हाथ–पैर हैं ..... शरीर का पिंजरा है, जो कुछ मांगता है....... कुछ! और वह सोचता, यह कुछ क्या है ?'' जब उसे इस बात का पता चलता है कि चंदा के घर लड़का हुआ है और वह दूसरे के घर बैठ रही है तब वह बहुत पश्चाताप करता है। उसकी मनःस्थिति निम्नलिखित पंक्तियों से स्पष्ट होती है, "पर चंदा यह सब करने जा रही है ? उसके जीते जी वह दूसरे के घर बैठने जा रही है ? कितने बड़े पाप में धकेल दिया चंदा को .... पर उसे भी तो कुछ सोचना चाहिए। आखिर क्या ? पर मेरे जीते जी तो यह सब अच्छा नहीं। वह इतनी घृणा बर्दाश्त करके भी जीने के लिए तैयार है! या मुझे जलाने को! वह मुझे नीच समझती है, कायर....... नहीं तो एक बार खबर तो लेती।" इसी पश्चाताप की अग्नि में जलते हुए वह आत्महत्या कर लेता है और चंदा को लिखे पत्र में वह स्वीकार करता है– "आदमी को पाप नहीं पश्चाताप मारता है, मैं बहुत पहले मर चुका था।" अतः पश्चाताप जो उसके कर्ज से शुरू हुआ था उसके प्राण लेकर ही रहता है।

7. अपराध बोध से ग्रसित

जगपती अपने आप को निरंतर अपराधी समझता है। उसे चंदा के एक–एक शब्द में अपने गुनाहों के दर्शन होते हैं। जब चंदा ने उसे कहा कि 'तुमने उसे बेच दिया' वह एकदम क्रोध से भर उठता है उसकी आंखों के सामने सारी स्थिति स्पष्ट हो जाती है। रचनाकार ने उसके इस अपराध की स्वीकृति निम्नलिखित शब्दों में दी है, "करीब के खेत की मेड़ पर बैठे जगपती का शरीर भी जैसे कांप–कांप उठता। चंदा ने कहा था, ''लेकिन जब तुमने मुझे बेच दिया क्या...'' वह ठीक कहती थी! क्या बचन सिंह ने टाल के लिए जो रुपए दिए थे, उसका ब्याज इधर चुकता हुआ? क्या सिर्फ वही रूपए आग बन गये, जिसकी आंच में उसकी सहनशीलता, विश्वास और आदर्श मोम–से पिघल गए ? चंदा के चले जाने पर वह स्वयं भी इस बात को स्वीकार कर स्वयं को चंदा का अपराधी घोषित करता है जैसे कि इन शब्दों से स्पष्ट है– "चन्दा के लिए ...... पर उसे तो उसने बेच दिया था। सिवा चंदा के कौन सी संपत्ति उसके पास थी, जिसके आधार पर कोई कर्ज देता। हर तरफ बोझ है, जिसमें उसकी नस नस कुचली जा रही है रग रग फट गई है।" जब मुंशी जगपती को अदालत से बच्चा लेने का उपाय बताता है तो भी उसका अपराध पाठकों के सम्मुख आता है। वह कहता है "अपना कहकर किस मुँह से मांगू, बाबा ? हर तरफ तो कर्ज से दबा हूँ, तन से, मन से, पैसे से, इज्जत से,

किसके बल पर दुनिया संजोने की कोशिश करूँ।'' वह निरंतर अपराध और पश्चाताप में जलता रहता है। खाना खाकर जब वह टाल पर सोने चला जाता है। तब उसे नींद कहां आती है वह तो केवल अपने आप को अपने जुर्मों के आगे बौना महसूस करता है। उदाहरणार्थ – "छप्पर के नीचे तखत पर जब वह लेटता, तो अनायास ही उसका दिल भर–भर आता। पता नहीं, कौन कौन से दर्द एक–दूसरे से मिलकर तरह तरह की टीस, चटख और ऐंठन पैदा करने लगते। कोई एक रग दुखती तो वह सहलाता भी जब सभी नसें चटखती हों तो कहां–कहां राहत को अकेला हाथ सहलाए।" अंततः अपने अपराध को स्वीकार करते हुए वह ज़हर पीकर प्राणान्त कर लेता है और चंदा के नाम पत्र में लिखा था– "चंदा, मेरी अंतिम चाह यही है कि तुम बच्चे को लेकर चली आना।" और कानून के आगे बच्चे को स्वीकारते हुए लिखता है– "मेरी लाश तब तक न जलाई जाए, जब तक चंदा बच्चे को लेकर न आ जाए। आग बच्चे से दिलवाई जाए। बस।"

अतः जगपती एक पढ़ा–लिखा, साहसी तथा परिश्रमी होने पर भी नियति का शिकार हो जाता है और आर्थिक विवशता में मर्यादाओं का अतिक्रमण करते हुए न केवल अपने दाम्पत्य संबधों की मधुरिमा को कड़वाहट में बदलता है अपितु अपने हाथों अपने परिवार को तहस–नहस कर मानसिक पीड़ा से गुजरते हुए स्वयं को भी समाप्त कर लेता है।

चन्दा

चन्दा'राजा निरबंसिया' कहानी की नायिका है। वह जगपती की पत्नी है उसका विवाह हुए छः वर्ष हो गए है पर अभी तक मातृसुख से वंचित है। यह कहानी कर्ज़ के उस यथार्थ को व्यंजित करती है जिसमें कर्ज़दार कर्ज न चुका पाने की स्थिति में अपनी पुश्तैनी सम्पत्ति से भी हाथ धो बैठता है। चंदा का पति जगपति जब दुर्घटना के बाद बेरोज़गार हो जाता हैं तो पुनः काम शुरू करने के लिए कम्पाउंडर बचन सिंह से उधार लेता है और बदले में अपनी पत्नी चंदा को बेच देता है। चंदा जो कि एक पतिव्रता नारी है अपने पति की इस गलती से किस–किस व्यथा से गुजरती है इसका यथार्थांकन हुआ है। इस रचना में उसके चरित्र के विभिन्न पक्ष पाठकों के हृदय में उसके प्रति संवेदना प्रकट करते हैं। पूरे परिवेश में उसके चरित्र पर प्रकाश डालने वाले मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैंः

1. **आकर्षक व्यक्तित्व की स्वामिनी**

चंदा का व्यक्तित्व इतना आकर्षक है कि स्वयं जगपती उसकी सांसों में जीवन का संगीत गूंजता हुआ अनुभव करता है। उसका आकर्षण उसके पति को नवीन स्वप्नों की दुनिया में ले जाता है। वह उसके सौंदर्य पर आसक्त हो जाता है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है– ''बहुत देर बाद स्वयं चंदा के मुख पर आभा फूटकर अपने–आप बिखरने लगी......उसके नक्श उज्ज्वल हो उठे और जगपती की आँखों को ज्योति मिल गई। वह मुग्ध सा ताकता रहा। चंदा के बिखरे बाल, जिनमें हाल के जन्मे बच्चे के गभुआरे बालों की सी महक....... दूध की कचाइयां........ शरीर के रस की सी मिठास और स्नेह सी चिकनाहट और वह माथा जिस पर बालों के पास तमाम छोटे–छोटे, नरम–नरम से रोयें.... .... रेशम से ..... और उस पर लगाई गई सिंदूर की बिंदी का हल्का मिटा हुआ सा आभास...... नन्हें नन्हें निर्द्वन्द्व सोए पलक।" चंदा के व्यक्तित्व में एक विचित्र आकर्षण है तभी तो अस्पताल में उसे देखते ही बचन सिंह का हृदय परिवर्तन हो जाता है। अस्पताल में रोगियों के बीच रहते वह निष्ठुर हो गया था चंदा से मिलते ही रोगियों के दर्द

का अहसास उसे पुनः होने लगता है। बचन सिंह की मानसिकता को रचनाकार ने निम्नलिखित शब्दों में व्यक्त किया है– "बचन सिंह ने उसकी सारी काया को एक बार देखते हुए अपनी आँखें उसके सिर पर जमा दी, जिसके ऊपर पड़े कपड़े के पार नरम चिकनाई से भरे लम्बे–लम्बे बाल थे, जिनकी भाप सी महक फैलती जा रही थी।"

2. कुशल गृहिणी

चंदा इस कथा में एक कुशल गृहिणी के रूप में भी सामने आती है। विवाह के कुछ वर्षों में ही उसने अपने घर को बड़ी कुशलता से संभाल लिया था जहां तक कि उसकी सास ने प्रसन्नता से घर की सारी चाबियाँ उसको सौंप दी और गृहस्थी के सूत्र समझाते हुए उसे और भी निपुण बना दिया। वह अपनी सास का पूरा ख्याल रखती थी इसलिए उसकी सास का समय पूजा–पाठ में निकलने लगा था। सास की मृत्यु के बाद भी वह घर की सारी जिम्मेदारियों को प्रसन्नता से निभाती है। जगपती को घर में उसकी उपस्थिति से विचित्र शांति और सुकून मिलता था। स्वयं उसका मन भी उस घर में इतना रच बस जाता है कि वह बच्चे के अभाव में भी स्वयं को उस घर का अहम् हिस्सा मानती है। कथाकार के शब्दों में– "घर में चारों तरफ जैसे उदारता बिखरी रहती, अपनापन बरसता रहता। उसे लगता जैसे घर की अंधेरी एकांत कोठरियों में वह शांत शीतलता है जो उसे भरमा लेती है। घर की सब कुण्डियों की खनक उसके कानों में बस गई थी, हर दरवाजें की चरमराहट पहचान बन गई थी।" उसकी इसी कार्यकुशलता को देखकर ही उसकी सास जगपती की देखभाल की तरफ से निश्ंचित हो जाती है।

3. पतिव्रता

चंदा एक पतिव्रता नारी है। वह अपने पति का पूरा सम्मान करती है। उसके घायल होने पर वह एकनिष्ठ भाव से उसकी सेवा सुश्रुषा करती है। जब तक जगपती अस्पताल रहता है तब तक वह पूरी तन्मयता से उसकी सेवा करती है और उसे ठीक करने के लिए कम्पाउंडर का एहसान भी उठाती है। ठीक होने पर भी जब जगपती दिन भर रोजगार ढूंढने के लिए फिरता रहता है तो भी उसके प्रति चिंतित रहती है। इसलिए जब कम्पाउंडर बचन सिंह उसके घर आता है तो कहती है, "उन्हें समझाते जाइए कि अभी तन्दुरुस्ती इस लायक नहीं जो दिन–दिन भर घूमना बर्दाश्त कर सके।" अस्पताल में भी उसकी देखभाल के साथ–साथ अच्छी दवाईयों का इंतजाम करने के लिए कम्पाउण्डर को अपना सोने का कड़ा देती है। क्योंकि वह सोचती है– "पति के लिए जेवर की कितनी औकात है।" वह अपने पति के खाने–पीने का भी पूरा ध्यान रखती है इसलिए अब जो उसके पति को पसंद है उसे भी वही अच्छा लगने लगा है जैसे कि उक्त उदाहरण से पता चलता है– ''सिरका अगर इन्हें मिल जाए, तो समझो सब कुछ मिल गया। पहले मुझे सिरका न जाने कैसा लगता था, पर अब ऐसा जबान पर चढ़ा है कि..... इन्हें कागज–सी पतली रोटी पसंद नहीं आती। अब मुझसे कोई पतली रोटी बनाने को कहे, तो बनती ही नहीं, आदत पड़ गई है, और फिर मन ही नहीं करता........" इस प्रकार जब तक वह जगपती के घर में रहती है अपना पतिव्रता धर्म पूर्णता से निभाती है।

4. भावुक एवं संवेदनशील

चंदा एक पतिव्रता होने के साथ–साथ भावुक एवं संवेदनशील नारी भी है। किसी को कष्ट में नहीं देख सकती इसलिए बचन सिंह जब उसके पति की पट्टी बदलने में लापरवाही करता है तो उसकी चीख निकल जाती है। उसकी इस भावुक स्थिति का वर्णन बड़े ही सटीक शब्दों में हुआ है– "चन्दा मुख में धोती का पल्ला खोंसे अपनी भयातुर आवाज़ दबाने की चेष्टा कर रही थी। जगपती एक बारगी मछली–सा तड़पकर रह गया। बचन सिंह की उंगलियां थोड़ी सी थरथराई कि उसकी बांह पर टप से चंदा का आंसू चू पड़ा।" पीड़ा से उसका हृदय इतना संवेदित हो उठता है कि वह काफी समय तक उसकी पीड़ा को शांत करने के लिए उसकी हथेली को सहलाती रही। नाखूनों को अपने पोरों से दबाती रहती है। पति के मना करने पर भी जब वह उसके लिए दवाईयों की व्यवस्था कर लेती है तो जगपती एक विचित्र मानसिक पीड़ा से घिर जाता है उस समय भी उसकी उस स्थिति को वह सह नहीं पाती है। वह भावुक हृदय से उसे सांत्वना देते हुए कहती है– "ये दवाईयां किसी की मेहरबानी नहीं है। मैंने हाथ का कड़ा बेचने को दे दिया था, उसी से आई हैं।"

5. स्वाभिमानी एवं स्पष्टवादी

चंदा किसी भी स्थिति में अपना स्वाभिमान छोड़ती हुई दिखाई नहीं देती जहां तक कि हर कड़वी बात को भी वह बड़ी स्पष्टता से कह जाती है। जगपती के लिए जब बचन सिंह दवाईयाँ ला देता है तो वह बचन सिंह के प्रति कृतज्ञ है पर वह नहीं चाहती कि वह उसके एहसानों से दबे इसलिए वह अपना सोने का कड़ा उसे देने जाती है जैसे कि इस उदाहरण से स्पष्ट है– "दो क्षण रुककर उसने अपने हाथ का सोने का कड़ा धीरे से उसकी ओर बढ़ा दिया, जैसे देने का साहस न होते हुए भी यह काम आवश्यक है।" दूसरी बार उसका स्वाभिमान तब भी पाठकों को प्रभावित करता है जब वह जगपती को उसकी गलती का अहसास करवाती है। चंदा जब मां बनने वाली थी तो उसका पति उसे बैगेरत, बेशर्म कहकर लांछित करता है और उसे इस बात का एहसास दिलाता है कि अस्पताल में भी उसने उसका इलाज अपनी इज्जत को दांव पर रखकर ही करवाया था। वह एकदम सिंहर उठती है और कहती है– ''तब... तब की बात झूठ है......" सिसकियों के बीच चंदा का स्वर फूटा, "लेकिन जब तुमने मुझे बेच दिया।" चंदा को पुरुषों की मानसिकता की परख है इसलिए जब बचन सिंह घर ढूंढता हुआ पहली बार उनके घर आता है तो वह बड़े स्पष्ट शब्दों में अपने पति से कहती है– ''जाने कैसे–कैसे आदमी होते हैं... इतनी छोटी सी जान–पहचान में तुम मर्दों के घर में न रहते घुसकर बैठ सकते हो ? तुम तो उल्टे पैरों लौट आओगे।" इन शब्दों से पता चलता है कि चंदा नहीं चाहती है कि किसी भी हालत में किसी और पुरुष का घर में आना जाना हो।

6. निर्णायक

चंदा चाहे कम पढ़ी–लिखी है फिर भी कभी भी निर्णय लेने पर डगमगाती नहीं है। पति के लिए दवाईयाँ आ जाने पर वह रात को ही कम्पाउंडर को कड़ा देने चल पड़ती है वह यह मानकर चलती है कि वह उसका एहसान क्यों ले। दूसरी बार जब उसका पति बचन सिंह से कर्ज लेता है और बचन सिंह हर रोज़ उसके घर आने लगता

है तो उसे इस बात का एहसास हो जाता है कि उसके पति ने उसे बेच दिया है तो वह एकदम अपने पति को ही छोड़ने का निर्णय कर लेती है चाहे इससे पूर्व वह अपने पति को कितना ही प्रेम करती है। वह उससे पूछती नहीं बल्कि उसे अपने निर्णय से परिचित करवाती हुई कहती है– "कल मैं गांव जाना चाहती हूँ। मैंने बहुत पहले घर चिट्ठी डाल दी थी, भैया कल लेने आ रहे हैं।" और फिर चंदा घर छोड़कर सदा के लिए गांव चली जाती है। उसने पीछे मुड़कर भी नहीं देखा उस घर के साथ उसका कोई संबंध है।

इस प्रकार चंदा एक ऐसी गृहिणी के रूप में उभर कर सामने आती है जो एक पतिव्रता होते हुए भी अपने पति के द्वारा बेचा जाना स्वीकार न करके घर त्याग देती है और समाज तथा पति द्वारा प्रताड़ित होने पर भी अपनी संतान को जन्म देती है। उसकी कर्त्तव्यपरायणतः, उसकी सेवा–सुश्रुषा, उसका आतिथ्य भाव, उसकी निपुणता उसे पाठकों के मनस पटल पर सदा के लिए जीवित कर देती है।

बचन सिंह

बचन सिंह इस कहानी में प्रतिनायक के रूप में सामने आता है वह अस्पताल में कम्पाउण्डर के पद पर कार्यरत है। वह मरीज़ों की देखभाल करता है एवं अपना कर्त्तव्य पूरी निष्ठा से निभाता है। वह जगपती की पत्नी चन्दा की तरफ आकर्षित हो जाता है और उसके पति की धन से सहायता करके उसके साथ अनैतिक संबंध बनाता है। उसके व्यक्तित्व की निम्नलिखित विशेषताएं हैं–

1. अवसरवादी

बचन सिंह हाथ आए मौके को जाने नहीं देता है। वह प्रत्येक अवसर का भरपूर फायदा उठाता है। अस्पताल में चंदा से आकर्षित होकर उस अवसर पर वह दवाईयाँ उपलब्ध करवाता है और चंदा का ध्यान अपनी ओर दिलाता है। चंदा के हृदय में उसके लिए स्थान बना रहे इसलिए वह उसके कड़े भी उसे वापिस कर देता है। चंदा को पति के लिए चिंतित देख दवाईयाँ लाकर देने का आश्वासन इस प्रकार देता है– ''दिल छोटा मत करना... जांघ का घाव तो दस रोज़ में भर जाएगा। कूल्हे का घाव कुछ दिन ज़रूर लेगा। अच्छी से अच्छी दवाई दूंगा। दवाईयाँ तो ऐसी हैं कि मुर्दे को चंगा कर दें, पर हमारे अस्पताल में नहीं आतीं, फिर भी... रहीं दवाईयाँ सो कहीं न कहीं से इन्तज़ाम करके ला दूंगा।'' दूसरी बार जगपती को काम के लिए चिंतित देखकर वह पैसों से उसकी मदद कर टाल खोल देता है उसके इस एहसान से वह चंदा के करीब आने का मौका प्राप्त कर लेता है।

2. नारी सौंदर्य के प्रति आसक्त

बचन सिंह ऐसे व्यक्तित्व के रूप में कहानी में सामने आता है जो दूसरे की पत्नी पर नज़र रखता है और समय आने पर उनकी सहायता भी करता है। चन्दा को पति के स्वास्थ्य के लिए बेचैन देखकर उसे आश्वासन देता है। चन्दा जब बचन सिंह को दवाईयों के बदले कड़ा देने आती है तो जिस तरह बचन सिंह चंदा को देखता है उससे स्पष्ट हो जाता है कि वह चन्दा पर बुरी नज़र रखता है जैसे कि प्रस्तुत शब्दों से प्रत्यक्ष पता चलता है–

''बचन सिंह ने उसकी सारी काया को एक बार देखते हुए अपनी आंखें उसके सिर पर जमा दीं, जिसके ऊपर पड़े कपड़े के पार नरम चिकनाई से भरे लम्बे–लम्बे बाल थे, जिनकी भाप सी महक फैलती जा रही थी।''

3. धैर्य बंधाने वाला

बचन सिंह एक कम्पाउंडर होने के साथ–साथ मनुष्य भी है वह मरीजों को हिम्मत देता है और उनके साथ आए सगे–संबंधियों को भी दिलासा देता रहता है जैसे कि वह चन्दा को धैर्य बंधाते हुए कहता है, ''दिल छोटा मत करना... जांघ का घाव तो दस रोज़ में भर जाएगा। कूल्हे का घाव कुछ दिन ज़रूर लेगा।''

जब चन्दा जगपती को दर्द से कराहता देख उद्वेलित हो उठती है तो बचन सिंह उसे दिलासा देते हुए कहता है कि, ''च..च... रोगी की हिम्मत टूट जाती है ऐसे।''

4. प्रशंसक

बचन सिंह के व्यक्तित्व में ऐसी विशेषता मिलती है जिससे वह सभी के दिल को जीत लेता है और समयानुसार दूसरों को उनके कामों से प्रशंसनीय बना देता है जैसे कि वह चन्दा द्वारा बनाए खाने की तारीफ करते हुए कहता है कि, ''क्या तरकारी बनी है! मसाला ऐसा पड़ा है कि उसकी भी बहार है और तरकारी का सवाद भी न मरा। होटलों में या तो मसाला ही मसाला रहेगा या सिरफ तरकारी ही तरकारी। वाह!वाह! क्या बात है अन्दाज़ की।''

5. कर्त्तव्य परायण

बचन सिंह अपना धर्म पूरी निष्ठा से निभाता है वह सरकारी अस्पताल में कम्पाउंडर है और उस अस्पताल का डाक्टर जो कि ड्यूटी पर नहीं आता है। बचन सिंह ही डाक्टर बन कर सभी मरीजों की मरहम पट्टी करता है। कहानी के प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट हो जाता है, ''कम्पाउण्डर ही मरीज़ों की देखभाल रखते। बड़ा डाक्टर तो नाम के लिए था या कस्बे के बड़े आदमियों के लिए।''

अंत में कहा जा सकता है कि बचन सिंह ऐसा व्यक्तित्व है जो धन के बलबूते पर दूसरों से अपना उल्लू सीधा करता है वह कम जान पहचान पर भी दूसरों के साथ निकटता बढ़ाता है।

15.2.2. 'खोई हुई दिशाएं' कहानी के पात्र

चन्दर

कमलेश्वर द्वारा रचित 'खोई हुई दिशाएं' कहानी का मुख्य पात्र एवं नायक है। वह इलाहाबाद के शहरी कस्बे से संबंध रखता है परन्तु अब वह राजधानी में रह रहा है।दिल्ली में आकर वह सभी में अपनेपन की तलाश करता है पर निराशा ही उसके हाथ लगती है। इसी अपनेपन की तलाश में वह प्रेमिका के घर जाता है जो विवाहित

है लेकिन वहां से भी निराश लौटता है। वह अपने मित्र, रिक्शावाले व पड़ोसियों से अपनी पहचान बनाए रखना चाहता है पर कोई भी लाभ नहीं होता। इसलिए वह अपने आप को जानने के लिए समय तय करता है परन्तु व्यस्तताओं के कारण वह अपने आप से मिल नहीं पाता। पूरी कहानी में वह कई प्रकार की स्थितियों का सामना करते हुए भयभीत दिखाई देता है जिससे उसके चरित्र में निम्नलिखित विशेषताएं सामने आती हैं–

1. अकेलेपन से त्रस्त

चन्दर पत्नी के रहते हुए भी इतने बड़े शहर में अपने आप को अकेला महसूस करता है वह राजधानी के अन्य लोगों में अपने शहर जैसे अपनेपन के भावों को तलाशता है परन्तु उसे वहां अपनापन कहीं नहीं मिलता है उसके स्वयं के शब्दों में, "और यह राजधानी! जहां सब अपना है, अपने देश का है.... पर कुछ भी अपना नहीं है, अपने देश का नहीं है।" उसे अकेलापन इतना त्रस्त करता है कि वह पेड़ों और पक्षियों से अपना खालीपन भरना चाहता है उसे लगता है कि लोग तो नहीं पर शायद यह पेड़ पौधे तो उसे जानते हैं जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है– "तनहा खड़े पेड़ों और उनके नीचे सिमटते अंधेरे में अजीब–सा खालीपन है। तनहाई ही सही पर उसमें अपनापन तो हो।" वह पिछले तीन सालों से दिल्ली में है पर इस खचाखच भरी हुई राजधानी में वह अपने आप को बिल्कुल अकेला पाता है। कस्बे से राजधानी आकर वह राजधानी के जीवन से सामंजस्य नहीं बिठा पाता। वह किसी से बातचीत नहीं करती है इसलिए दिल्ली का हर स्थान उसे सूना और अकेला लगता है। वह विचित्र भावों से गुजरता है, जैसे कि पार्क में उसकी मनःस्थिति का चित्रण करते हुए कहानीकार ने लिखा है– ''शोर–शराबे से भरे उस सैलाब में वह बहुत अकेला–सा महसूस करता है और लगता है कि इन तीन सालों में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ जो उसका अपना हो, जिसकी कचोट अभी तक हो, खुशी या दर्द अब भी मौजूद हो। रेगिस्तान की तरह फैली हुई तनहाई है, अनजान सागर तटों की खामोशी और सूनापन है और पछाड़ खाती हुई लहरों का शोर–भर है, जिससे वह खामोशी और भी गहरी होती है।'' इस प्रकार उसके जीवन में यह रिक्तता हर समय बनी रहती है और इसके कारण हर स्थिति से भागना चाहता है सामना करना नहीं।

2. सच्चा प्रेमी

वह सच्चे प्रेमी के रूप के सामने आता है। वह इन्द्रा से प्रेम तो करता है परन्तु बेरोजगार होने के कारण उसे लगता है कि शायद वह उसके लिए नहीं बना है। पर उसके लिए वह एक सुखमय भविष्य की कामना करता हुआ कहता है, "भरोसा तो बहुत है इन्द्रा, पर मैं खाना–बदोशों की तरह जिन्दगी–भर भटकता रहूंगा..... उन परेशानियों में तुम्हें खींचने की बात सोचता हूँ तो बरदाश्त नहीं कर पाता। तुम बहुत अच्छी और सुविधाओं से भरी ज़िन्दगी जी सकती हो। मैंने तो सिर पर कफन बांधा है...... मेरा क्या ठिकाना।" वह चाहे इन्द्रा से दिल की गहराइयों से प्रेम करता है और इन्द्रा भी उससे कहती है कि 'तुम क्या नहीं कर सकते' पर वह यह बिल्कुल नहीं चाहता कि वह उसका जीवन बर्बाद कर दे इसलिए उसे समझाते हुए कहता है– ''मेरे पास है ही क्या? समझ में नहीं आता कि जिंदगी कहां ले जाएगी इन्द्रा! इसलिए मैं यह नहीं चाहता कि तुम अपनी जिंदगी मेरी खातिर बिगाड़ लो। पता नहीं मैं किस किनारे लगूं, भूखा मरूं या पागल हो जाऊं...'' और फिर जब इन्द्रा का विवाह हो जाता है तो वह उसकी तरफ से

निश्चिंत लगता है। वह दिल्ली आकर उसके घर भी जाता है पर शायद वह उसके सुखी जीवन में उथल–पुथल मचाना नहीं चाहता इसलिए चला आता है।

3. संकोची

चन्दर हमेशा अपनी बात कहने में संकोच करता है न वह रिक्शे वाले के सामने भी अपनी भावनाओं को व्यक्त कर पाता है न ही कैफे वाले आदमी से, न प्रेमिका से और न ही पत्नी से। प्रेमिका के साथ मिलने पर जब वह उसकी खाने पीने की दिनचर्या को भूलकर उसे चीनी वाली चाय प्रस्तुत करती है तो वह उसे कहता कुछ नहीं, संकोच करता है पर इन्द्रा के इस व्यवहार से आंतरिक पीड़ा अनुभव करता है इसलिए वहां से भागना चाहता है क्योंकि उसे लगता है कि इतनी लम्बी दोस्ती के बाद भी इन्द्रा उसे नहीं पहचानती है जैसे कि इन पंक्तियों से स्पष्ट है– "चन्दर का मन कर रहा था कि इन्द्रा के पास से किसी भी तरह भाग जाए और किसी दीवार पर अपना सिर पटक दे।"

वह निरंतर पत्नी के साथ बातचीत करने के बारे में सोचता रहता है कि किस प्रकार वह अपने भावों को प्रकट करेगा। उसके स्वयं के शब्दों में, "किसी बहाने खुराना की तरफ वाली खिड़की को बन्द करना पड़ेगा। घूम–कर मेज के पास पहुंचना होगा और तब पानी का एक गिलास मांगने के बहाने वह पत्नी को बुलाएगा, और तब उसे बाहों में लेकर प्यार से यह कह सकने का मौका आएगा–बहुत थक गया हूँ।" इतना कुछ सोचने के बाद भी वह पत्नी के सामने अपने मन के भावों की अभिव्यक्ति नहीं कर पाता है।

4. निराशावादी

पूरी कहानी में चन्दर एक निराशावादी व्यक्ति के रूप में सामने आता है वह हर व्यक्ति से उम्मीद करता है कि यह मुझे जानता होगा पर ऐसा जब नहीं होता तो निराश हो जाता है क्योंकि रिक्शे वाला जान पहचान से अधिक पैसे को महत्व देता है। कैफे में मिलने वाले व्यक्ति से पहचान की कुछ उम्मीद होती है पर वहां भी उदासी ही उसके पास आती है। वह पूर्व प्रेमिका इन्द्रा से भी उम्मीद करता है कि वह तो मुझे जानती होगी उसे आज भी याद होगा कि दो चम्मच चीनी मेरा गला खराब कर देती है लेकिन जब वह चाय के समय पूछती है कि कितनी चीनी डाल दूं तो चन्दर द्वारा दो कहने पर भी उसे कुछ आशा होती है जो उसके स्वयं के शब्दों से स्पष्ट हो जाता है, "तभी इन्द्रा ने पूछा, चीनी कितनी दूं ? और एक झटके से सब कुछ बिखर गया, उसका गला सूखने–सा लगा और शरीर फिर थकान से भारी हो गया। माथे पर पसीना आ गया। फिर भी उसने पहचान का रिश्ता जोड़ने की एक नाकाम कोशिश की और बोला, दो चम्मच और उसे लगा कि अभी इन्द्रा को सब कुछ याद आ जाएगा और वह कहेगी कि दो चम्मच चीनी से अब गला खराब नहीं होता?" वहां पर भी निराशा ही उसके हाथ लगती है। उसके परिवार में उसकी पत्नी है घर है पर वह उदास है क्योंकि उसकी उम्मीदों पर कोई खरा नहीं उतरता। दिल्ली जैसे महानगर में आकर व्यस्त एवं भागमभाग की जिन्दगी में वह अपनी पहचान खो चुका है इसलिए निराश है। इस शहर में नज़दीक से किसी के बारे में कुछ पता नहीं चलता। इसलिए वह अंदर ही अंदर कुढ़ता रहता है।

5. कुंठाग्रस्त

चन्दर एक कुंठाग्रस्त पात्र है। असफलताओं के कारण वह घोर निराशा का शिकार होकर कुंठित हो जाता है। वह कस्बाई मूल्यों के छूटने के कारण पीड़ित है। दिल्ली शहर के महानगरीय जीवन का अजनबीपन, अकेलापन संबंधों के चुक जाने का एहसास, अलगाव और परायापन उसे कुंठित कर देता है। तन्हाई और जीवन के खोखलेपन में उसके लिए सारे के सारे संबंध सिर्फ औपचारिक होकर रह गये हैं। यहाँ तक कि बरसों पूर्व परिचित इन्द्रा से भी इसे मेहमान–नवाजी मिलती है और उसके प्रत्येक क्षण का हिसाब रखने वाली पत्नी भी उसे अजनबी और अपरिचित लगती है। इस कुठित मनोवृत्ति के कारण वह सड़कों पर, पार्क में इधर–उधर घूमता रहता है पर घर नहीं जाता।

अंततः चन्दर अकेलेपन से जूझता एक ऐसा व्यक्तित्व है जो मित्रों, अनजान व्यक्तियों, प्रेमिका एवं पत्नी में निरन्तर अपनी पहचान खोजता है परन्तु अंत तक उसे निराशा ही मिलती है वह अपनी व्यथा को किसी के आगे स्पष्ट नहीं होने देता है एवं आन्तरिक पीड़ा से ग्रस्त वह अंतहीन तलाश के लिए भागता रहता है एक पल के लिए वह जहां कहीं उसे अपनापन और अपनी पहचान दिखती भी है तो अगले ही पल कुछ ऐसा घटित हो जाता है कि उसकी पहचान का स्वप्न टूट जाता है और वह हताश हो जाता है। अतः इस कहानी में चन्दर निरन्तर भागता हुआ चरित्र है जो कहीं भी रूकने का नाम नहीं लेता। उसके माध्यम से देश का प्रत्येक आदमी अशांत, असंतुष्ट और उद्विग्न दिखाई देता है।

15.2.3 नीली झील कहानी के पात्र

महेस पांडे

महेस पांडे कमलेश्वर द्वारा रचित 'नीली झील' कहानी का मुख्य पात्र एवं नायक है। वह मध्यम वर्ग से संबंध रखता है और परिश्रम कर रोजी रोटी कमाता है। वह अपने से अधिक आयु वाली धनवान विधवा पंडिताइन से विवाह करता है और काम करना छोड़ देता है। वह अपनी पत्नी से बहुत प्रेम करता है इसीलिए वह उसकी अंतिम इच्छा पूरी करने के लिए इच्छानुसार मंदिर एवं धर्मशाला बनवाने के लिए पैसे एकत्रित करता है पर पक्षियों के प्रति मोह होने के कारण वह पक्षियों की आवास स्थली 'नीली झील' खरीद लेता है ताकि वह पक्षियों को सुरक्षा दे सके और उनकी खत्म होती हुई नस्ल को बचाया जा सके। वह समाज में एक नया आदर्श स्थापित करता है। पूरी कहानी महेसा के इर्द–गिर्द घूमती है उसके व्यक्तित्व में निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती है–

1. स्वाभिमानी

महेस स्वाभिमानी व्यक्तित्व का स्वामी है। वह शिकार के लिए आए अंग्रेजों के साथ आई स्त्रियों की सहायतार्थ आगे आता है। लेकिन जब नीली साड़ी वाली स्त्री कहती है कि क्या कोई मज़दूर मिल सकता है? तो वह ठसक से कहता है, "हम लोग सरकारी गैंग के आदमी हैं।" उसके इन शब्दों से स्पष्ट पता चलता है कि वह अपने को मज़दूर न मान कर सरकारी व्यक्ति मानता है जिसमें उसके स्वाभिमानी व्यक्तित्व के दर्शन होते है।

2. सैलानी स्त्रियों के प्रति विशेष आसक्ति

महेस सैलानी स्त्रियों को देख फौरन उनकी तरफ आकर्षित हो जाता है वह काम करते हुए भी चोर निगाह से उनसे आँखें मिलाने की कोशिश करता है और जब नीली साड़ी वाली स्त्री उससे मदद मांगती है तो वह झट से उसका समान उठा लेता है और उसकी सुकुमरता को देखते हुए उससे पानी वाली बोतल भी माँग लेता है। वह इन शहरी स्त्रियों के प्रति विशेष रूप से आसक्त होता है। इसलिए वह अपने आप को रोक नहीं पाता। उसे उनके साथ बातें करने में विशेष आनन्द की अनुभूति होती थी जैसे कि प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट हो जाता है, "पर अब भी, जब वह सैलानी लोगों को झील की ओर जाते देखता और उनके साथ कोई सुन्दर औरत होती, तो वह अपने को रोक न पाता, पीछे–पीछे चला ही जाता और चाहता कि वह औरत उससे बात करे।" उसके हृदय में यह नारी आकर्षण इतना बना रहता है कि वह सारा–सारा दिन उनके पीछे घूमता रहता था। उसके देर से घर आने पर पार्वती भी उससे कई प्रकार के प्रश्न करती है पर वह काम का बहाना कर जाता है।

3. परंपराओं को तोड़ने वाला

महेस निडर स्वभाव एवं परंपराओं की परवाह न करने वाले नायक हैं। समाज में मान्यता है कि बड़ी उम्र का लड़का अपने से छोटी उम्र की लड़की से ही विवाह करता है और विधवा का विवाह विधुर से एवं अविवाहित का विवाह अविवाहित से होता है परन्तु महेस इन सब परंपराओं के बंधन को तोड़कर अपने से बड़ी एवं विधवा पारवती से विवाह करवाता है कहानी के प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट हो जाता है "यों पार्वती से दस साल छोटा था महेस, पर पार्वती की मौत के बाद वह उससे दस बरस बड़ा लगने लगा।'' परंपरा के अनुसार सभी व्यक्ति अच्छे कर्म करते हैं जैसे मंदिर का निर्माण, धर्मशाला इत्यादि बनवाना। महेस की पत्नी भी अव्छे कर्म करने के लिए मंदिर एवं धर्मशाला का निर्माण करवाना चाहती थी परन्तु महेस इन सब की परवाह न करते हुए, मंदिर एवं धर्मशाला के लिए एकत्रित किए पैसो से नीली झील को खरीद लेता है। कहानी के प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट हो जाता है, "पार्वती की याद उसे फिर आई और नीलामी वाले दिन उसने तीन हज़ार की बोली लगाकर चबूतरे के पासवाली जमीन नहीं, दलदली नीली झील खरीद ली।" और वह पक्षियों के लिए मंदिर तथा धरमशाला निर्माण को भी तिलांजलि दे देता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि महेस परंपरा की लीक पर चलने वाला नहीं था वह वही करता था जो उसे पसंद था। वह परंपराओं की परवाह नहीं करता है।

4. लापरवाह

वह लापरवाह स्वभाव का मालिक है वह किसी की बात की तरफ ध्यान नहीं देता है उसे जो अच्छा लगता है वह वही करता है वह अंग्रेज औरतों के पीछे जाता है। दूसरे मजदूरों द्वारा उसे भला बुरा कहने पर भी वह उनकी परवाह किए बिना स्त्रियों की मदद करने जाता है। पंडिताइन से विवाह कर लेने पर लोग तरह–तरह की बातें करते हैं पर वह परवाह नहीं करता है। पूरी कहानी में वह पंडिताइन की देख–रेख और उसके प्रेम में इतना भावविभोर रहता है। ऐसा लगता है कि उसे किसी से कोई मतलब नहीं है। वह सिर्फ उसके साथ जीना चाहता है। कहानी के निम्न

वाक्यों से स्पष्ट हो जाता है, "किसी का कहना था कि जवान देखकर पण्डिताइन ने फांस लिया और कोई कहता था कि महेस रूपया पैसा देखकर ढरक गया......लेकिन महेस ने किसी की परवाह नहीं की।"

अंत में पंडिताइन की अंतिम इच्छा पूरी करने के लिए मंदिर एवं धर्मशाला बनाने के लिए लोगों से पैसे तो एकत्रित करता है परन्तु उन पैसों से वह झील को खरीद लेता है। लोगों द्वारा उसे धोखेबाज इत्यादि नामों से सम्बोधित किया जाता है लेकिन वह किसी को कोई उत्तर न देकर अपने में मस्त रहता है।

5. आदर्श प्रेमी

वह अपनी पत्नी पार्वती से प्रेम करता है उसके कहने पर कलमें बड़ी करवा लेता है, चोटी में मोटी गांठ बांधता है एवं मेले में जाने के लिए बैलों की एक गोई और छोटा सा रब्बा भी खरीद लेता है ताकि अपनी पत्नी को शान से मेले में लेजाए और उसकी सुख–सुविधा का भी ध्यान रखता था। महेस जब भी हाफिज़ जी की दुकान पर जाता था तो पार्वती के लिए कुछ–न–कुछ लेकर ही जाता था जैसे कि पार्वती को फोटो फ्रेम दिखाते हुए महेस कहता है "इसमें मियां बीवी की तस्वीर लगती है। बड़े घरों में लोग इसे रखते हैं। तीसरे ही दिन उसने पार्वती को तैयार कराया, सारे गहने उसे पहनने को मज़बूर किया और खूब तेल लगाकर रामा फोटोग्राफर की दुकान पर जा पहुँचा।" और फोटो को फ्रेम में लगाकर वह ऐसे स्थान पर लगाता है जहाँ घर आते–जाते अपनी पत्नी को देख सके।

वह अंत तक स्वीकार करता है कि जैसा उसका ख्याल पारबती रख सकती है वैसा कोई अन्य नहीं रख सकता है उसके स्वयं के शब्दों में, "पार्वती के बराबर कोई मेरा ख्याल करे तो सोचू भी..... नहीं, तो भी न सोचूं। गलत बात बोल गया। ..... बेकार का मखौल मत किया करो। अब बूढ़ा हो चला।" पत्नी की मृत्यु के बाद वह दूसरा विवाह करवाने की मनाही कर देता है और उसके विरह का प्रभाव उसके शरीर पर दिखाई देने लगता है। वह कुछ ही समय में बूढ़ा दिखाई देने लगता है।

महेस की पत्नी पार्वती अपने पैसे से मंदिर और धर्मशाला बनवाना चाहती थी वह महेस को कहती है कि तुम मंदिर एवं धर्मशाला बनवाने के लिए पैसे और मिस्त्री का प्रबंध करो। फिर वह साथ वाली ज़मीन खरीदने के लिए कहती है ताकि वहां पर धर्मशाला बनाई जा सके। जिससे धर्म कर्म का कार्य हो जाएगा। पार्वती की मृत्यु के पश्चात् महेस के जीवन में एक ही लक्ष्य रहता है कि पत्नी की इच्छानुसार मंदिर और धर्मशाला का निर्माण करना। वह लोगों से पैसे इकट्ठे करना शुरू कर देता है। महेस के स्वयं के शब्दों से स्पष्ट हो जाता है, "बस, यही एक काम करना है हाफिज़ जी! किसी तरह मन्दिर और एक छोटी–सी धरमशाला बन जाए, तो मन को शान्ति मिले। पार्वती यही कहती–कहती मरी थी।''

6. परिवर्तनशील हृदय

महेस का हृदय परिवर्तनशील है। पत्नी पार्वती के कहने पर भी वह किसी को उधार दिए पैसे वसूलने नहीं जाता। पत्नी की मृत्यु उसे झकझोर कर रख देती है वह उसकी इच्छा को पूर्ण करने के लिए लोगों को उधार दिए

पैसे वसूलने जाता है और वह इतना ज्यादा कठोर बन जाता है कि किसी के दुःख दर्द को भी नहीं समझता है। जगन नाई के घर पर पैसे के लिए महेस धरना लगा कर बैठ जाता है तो उसकी औरत के शब्दों में महेस की कठोरता के दर्शन होते है जो इस प्रकार बोलती है, ''पण्डित, तुम तो इतने जालिम हो कि किसी की पत नहीं देखते!...... पार्वती चाची मुँह से चाहे जितना बिगड़े, पर आदमी की मरजाद और इज्जत का तो ख्याल करती थी.......।"

उसके इस परिवर्तित व्यवहार को देखकर लोग तब आराम की सांस लेते हैं जब वह कुछ दिनों के लिए पत्थर देखने बाहर चला जाता है।

7. संवेदनशील

महेस एक संवेदनशील व्यक्ति है वह अपनी पत्नी तथा पक्षियों की चीखों से उदास असंवेदित हो जाता है। पार्वती को अस्पताल में दर्द से कराहते नहीं देख पाता है जब पार्वती अपने अंतिम समय में महेसा को कहती है कि मंदिर जरूर बनवा देना तो महेसा की स्थिति प्रस्तुत शब्दों से स्पष्ट हो जाती है, "मन्दिर! सोचकर ही महेसा का कलेजा फट गया था। आखिरी आस थी उसे, चीखकर बोला था, ऐसा मत कहो पार्वती! बच्चा मर गया तो क्या हुआ, तू तो जीती–जागती है।"

पार्वती अंतिम समय में आंसू बहा रही थी जो महेस से देखे नहीं जाते है। पार्वती की मृत्यु का दुःख उसे अंदर से झकझोर देता है और लोगों द्वारा उसकी स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया जाता है, "बस्ती के आदमियों का यही कहना था कि महेस पगला गया। जो आदमी आदमी का ख्याल नहीं करता, वह पागल नहीं तो और क्या है ? आदमी के दुःख–दर्द को जो नहीं समझता, उसे और क्या कहा जाए ? महेस, वह मुक्त और निश्चित महेस, एकदम बदल गया था।" उसके संवेदनशील स्वभाव का पता तब भी चलता है जब वह पक्षियों का शिकार होते हुए देखकर द्रवित होता है उसे सैलानियों का आना भी अच्छा नहीं लगता है उनके कंधे पर बंदूक देखकर वह उन्मत हो जाता है।

अंग्रजों द्वारा घायल पक्षी की चीखों में उसे पारबती की चीखें सुनाई देती हैं उसके स्वयं के शब्दों में, "झील पर शिकार खेलने के लिए आदमियों की बहुत–सी टोलियां इस बीच आई और गई, और अपने घर पर बैठे या बस्ती में घूमते हुए उसने जब–जब चीत्कार सुने और साहब शिकारियों को नरम परवाली चिड़ियों को लटकाए ले जाते देखा, तब–तब उसे पार्वती की याद आई बेतरह। उसकी हालत भी तो उस सारस के जोड़े की तरह ही थी.....।"

8. पक्षी–प्रेमी

पूरी कहानी महेस के पक्षी प्रेम और पर्यावरण सुरक्षा के कथ्य को लेकर रची गई है। उसका पक्षी प्रेम देखते ही बनता है। घायल पक्षी को देखकर उसके आंसू आ जाते हैं। उसे पक्षियों के बोलने से ही उनकी खुशी, डर और सहम जाने का पता चल जाता है। वह पक्षियों के संबंध में प्रत्येक प्रकार का ज्ञान रखता है उसे झील पर आने वाले प्रत्येक पक्षी का ज्ञान है। सैलानी जब चिड़िया को देख सांप बोलते हैं तो महेसा हँस पड़ता है और उनको इस प्रकार

जवाब देता है, "सभी कौतूहल से देखने लगे। महेसा खिलखिलाकर हंस पड़ा। कैसे समझाए इन साहबों को, वे इतना भी नहीं जानते! वह सिर्फ नीली साड़ी–वाली को ही बताना चाहता था। एकदम बोला, पनिया सांप नहीं है, एक चिड़िया है वह।''

महेस को इस बात का भी ज्ञान है कि कौन सी चिड़िया कब झील पर आती है और कब वापिस जाती है जब पार्वती कहती है कि आजकल मैं नई–नई चिड़िया देखती हूँ वह पता नहीं कहाँ से आ जाती है तो महेस के उत्तर से उसके पक्षी ज्ञान का प्रमाण मिल जाता है, "ये चिड़िया मेहमान हैं..... कार्तिक खतम होते आती है और फागुन–चैत तक चली जाती है।" उसे केवल पक्षियों की ही नहीं उनके अण्डों का भी ज्ञान है। उनकी देखभाल कैसे की जाए वह इसका भी ज्ञान रखता है। उसे हर एक पक्षी के अण्डे की पहचान है वह पार्वती को पक्षियों के अण्डे दिखाते हुए इस तरह बता रहा है, "देख पार्वती, यह वाक का अण्डा है, यह सारस का और यह सोना–पतारी का! महेस एक–एक अण्डा उठाकर दिखाने लगा।"

मौसमानुसार कब पक्षी आते हैं और कब जाते हैं। उसके इस कथन से पता चलता है– "फागुन आते–आते मेहमान पक्षी उड़ गए सवनहंस चले गए, सफेद सुरखाब अपने पुराने घरों में लौट गए। सुअर, संद, करकर्रा और सरप–पच्छी भी चले गए।..... झील बहुत सूनी हो गई थी, पर महेस पांडे को विश्वास था कि ये फिर हमेशा की तरफ अपने झुण्डों के साथ कातिक–अगहन तक वापस आएंगे।" उसे मौसम आने पर पक्षियों के आने की प्रतीक्षा रहती है इसलिए वह दिन में झील के दो–दो चक्कर लगाता है। सैलानी जब पक्षियों का शिकार करने आते हैं तो उनकी सुरक्षा के लिए झील ही खरीद लेता है और झील के बाहर पेड़ पर बोर्ड लगवाता है जिस पर लिखवा देता है, "यहां शिकार करना मना है और नीचे की पंक्ति थी, दस्तखत नीली झील का मालिक, महेस पांडे।"

इस प्रकार उसको पक्षियों के संबंध में सम्पूर्ण ज्ञान था।

10. मार्गदर्शक

पूरी कहानी में वह मार्गदर्शक के रूप में दिखाई देता है वह बाहर से आए सैलानियों को मार्ग दिखाते हुए झील तक छोड़ने जाता है वह नीली साड़ी वाली औरत के साथ आए सभी सैलानियों के साथ–साथ चलता है परन्तु जब वह गलत रास्ते पर जाने लगते हैं तो महेसा उन्हें इस प्रकार सही रास्ता दिखाता है, "...... उसे बोलने का फिर मौका मिला, गलत रास्ते पर मुड़ते देख वह लपककर नीली साड़ी वाली के पास पहुँचा और एकदम उनके अज्ञान पर जैसे चीख पड़ा, आप लोगों को रास्ता नहीं मालूम, हमारे साथ आइए। इधर से दलदल पड़ेगा।''

वह एक अच्छे मार्गदर्शक की तरह उन्हें सही रास्ते का ज्ञान तो देता ही है उसके साथ ही झील की प्रकृति और हर मौसम में आने–जाने वाले पक्षियों का परिचय भी करवाता है। उसे जब पता चलता है कि सैलानी आए हैं तो वह कोई भी काम छोड़कर उनके साथ चल पड़ता है और उन्हें सचेत करने के साथ–साथ कई सूचनाओं से परिचित करवाता है।

अंततः कहा जा सकता है कि महेसा पक्षी प्रेमी, पत्नी प्रेमी, स्वाभिमानी, संवेदनशील इत्यादि विशेषताओं से युक्त है वह पार्वती और अपने बच्चे की रक्षा करने में असमर्थ रहता है परन्तु पक्षियों की रक्षा के लिए झील को ही खरीद लेता है। वह अपने आप में मस्त रहता है। वह किसी की परवाह न कर स्वयं को अच्छे लगने वाले कार्य करता है। उसे उम्मीद है कि कातिक तक वह पक्षी पुनः झील पर आएंगे क्योंकि फागुन आने के कारण वह मेहमान पक्षी वापिस लौट गए थे।

पार्वती

'नीली झील' कहानी की नायिका है। वह महेस से पुनर्विवाह करती है। विवाह के पश्चात् वह अपने पत्नी–धर्म को बखूबी निभाती भी है। गर्भवती होने पर चिंतित दिखाई देती है कि घर पर एवं अस्पताल में उसकी देखभाल कौन करेगा। वह संवेदनशील है जब उससे सोनापतारी का अण्डा टूट जाता है तो वह आशंकित हो जाती है। पेट में बच्चा मरने के कारण उसकी मृत्यु हो जाती है। उसके चरित्र में निम्नलिखित बिंदु दिखाई पड़ते हैं–

1. पतिव्रता

पार्वती एक पतिव्रता नारी है वह अपने पति का पूरा सम्मान करती है। वह अपने पति का पूरी तरह से ख्याल रखती है एवं उसकी प्रत्येक बात को प्रसन्नतापूर्वक मानती है। जब महेसा आधी रात को घर लौटता है तो पार्वती को उसकी चिंता सताती है इसलिए वह उससे देर से आने के बारे में पूछती है, "तो वह सीधेपन से कह देता है, जंगल तक गया था।" यही नहीं जब वह कहीं से देर बाद आता है या कोई अन्य कार्य के लिए इधर–उधर चला जाता है तो वह उसके लिए ही सोचती है उसकी सुख–सुविधाओं का भी ध्यान रखती है। एक बार महेस दो दिन का कहकर चार दिन तक नहीं आता है तो पार्वती उसकी कुशलता की मन्नत मांगती है जैसे कि इन पंक्तियों से पता चलता है– "दीवार पर सगनौती की लकीरें बनी देखकर उसे फिर कुछ याद आया... जब एक बार वह दो दिन के लिए कहकर चार दिन बाद लौट आया था, शायद तभी पार्वती ने गेरू से यह सगनौती उठाई होगी।" इस प्रकार पार्वती जितना समय जिंदा रहती है वह जो कुछ भी करती है केवल अपने पति के लिए ही करती है क्योंकि महेस के बिना उसका कोई नहीं था। वह अपना पतिव्रता धर्म पूर्णता से निभाती है।

2. साहसी

वह परंपराओं को न मान कर साहस करते हुए महेस से पुनर्विवाह करती है। वह लोगों की बातों की परवाह नहीं करती है कहानी के प्रस्तुत शब्दों से इस बात की पुष्टि होती है, "विधवा पण्डिताइन ने उससे शादी कर ली थी। लोगों ने तरह–तरह की बातें कही...... किसी का कहना था कि जवान देखकर पण्डिताइन ने फांस लिया और कोई कहता था कि महेस रूपया–पैसा देखकर ढरक गया......।" पर पार्वती पर इन बातों का कोई असर नहीं होता। वह किसी की परवाह न करते हुए महेस के साथ प्रसन्नतापूर्वक जीवन का निर्वाह करती है।

3. सहायक

पार्वती के पास गांव के दूसरे लोगों के मुकाबले अधिक धन था। गांव के जिन लोगों को धन की ज़रूरत होती थी वह धन देकर उनकी सहायता करती थी। पार्वती के महेस को बोले प्रस्तुत शब्दों से पता चलता है, "रूपया बहुत फैल गया है, वसूल नहीं होता, तुम ज़रा लोगों को डांटो–डपटो।"

जगन नाई की पत्नी के प्रस्तुत शब्दों से भी पता चलता है जो वह कर्ज वसूली करने आए महेस से कहती है, "पार्वती चाची मुँह से चाहे जितना बिगड़े, पर आदमी की मरजाद और इज्जत का तो ख्याल करती थी..... ।"

वह दूसरों को उधार तो देती थी पर उन्हें पूरा मान–सम्मान भी देती थी। वह उधार वापिस लेने के लिए किसी से क्रूरता भरा व्यवहार नहीं करती थी। वह लोगों की समय असमय जरूरत पूरी करती थी इसलिए सारे गाँव वाले भी उसका मान–सम्मान करते थे चाहे पीठ पीछे कितनी भी बातें करते थे। निम्नलिखित पंक्तियों से इस बात की पुष्टि होती है– ''पार्वती रूपये का लेन देन करती और सबकी चोटी अपने पाँव के नीचे रखती। बस्ती में कौन ऐसा था, जिसे वक्त बेवक्त चार पैसे की जरूरत नहीं पड़ती।''

4. धार्मिक वृत्ति वाली

वह एक पण्डिताइन थी इसलिए परमात्मा में विश्वास रखती थी और पूजा पाठ अथवा किसी धार्मिक कृत्य के लिए परंपराओं को भी साथ लेकर चलती है। वह परंपरागत देवी पूजा में विश्वास रखती है। उस क्षेत्र में देवियों की पूजा हेतु मेंहदी और महावर लगाने की प्रथा थी जिसका प्रस्तुत उदाहरण से पता चलता है, "एक दिन देवियों की पूजा के लिए जब पार्वती ने महावर लगाया।"

वह गांव में मंदिर बनवाने की इच्छा रखती है और साथ ही एक धर्मशाला का निर्माण करवाना चाहती है ताकि यात्रियों को रहने की सुविधा मिल सके। इन कृत्यों के प्रति उसकी भावाभिव्यक्ति इस प्रकार है– "अच्छा सुनो! मेरा मन है कि कुछ रुपया लगाके यहां चबूतरे पर एक मंदिर बनवा दिया जाए...... और बन सके तो मुसाफिरों के लिए दो कोठरियां भी बन जाएं। हारे–थके लोगों को आराम मिलेगा और कुछ रूपया धरम के कारज में लग जाएगा।'' उसे विश्वास है कि जब तक मंदिर रहेगा तो लोगों से आशीर्वाद ही मिलेगी इसलिए अस्पताल में उसके अंतिम शब्द भी मंदिर निर्माण से ही सम्बन्धित थे जैसे– "पार्वती की सांसें धीमी पड़ती जा रही थीं, वह एकदम निंश्चित लग रही थी, और उसने महेसा को पास बुलाकर कहा था, अब मन्दिर ज़रूर बनवा देना, पार्वती मन्दिर।"

5. संवेदनशील

पार्वती एक पतिव्रता होने के साथ–साथ संवेदनशील भी है। वह न तो किसी को कष्ट देती है और न ही किसी का अनिष्ट होते देख सकती है। जब महेस उसे पक्षियों के अंडे दिखाता है तो सोनापतारी का अण्डा वह पार्वती के हाथ में पकड़ा देता है जो उसके हाथ से गिर कर टूट जाता है जिस पर वह भयभीत हो जाती है जिसका पता प्रस्तुत शब्दों से चलता है, "महेस एक–एक अण्डा उठाकर दिखाने लगा। वैसे तो पार्वती नहीं छूती, पर उसने सोनापतारी

का अण्डा हाथ में ले ही लिया। घुमाकर देखते ही हाथ से छूटकर वह गिर पड़ा और टूट गया, तो पार्वती के मुंह से चीख निकल गई, ''हाय दइया! ग ग ग पारबती के चेहरे पर काले बादल–से छा गए थे, उसका दिल धक्–से रह गया था'' पशु–पक्षियों के प्रति उसके हृदय में संवेदनशील भाव भरे थे।

6. स्पष्टवक्ता एवं आशंकित

पार्वती किसी भी स्थिति में हर बात को स्पष्ट कह देती है। महेसा को उदास देख उसे लगता है कि महेस उससे विवाह करवा कर पछता रहा है वह महेस से स्पष्ट शब्दों में कह देती है कि, "आज सोच–सोच के बड़ा दुख हुआ। ...... अपने सुख की खातिर हमने तुम्हें खराब कर दिया। पार्वती की आँखों में पनीलापन था, पछतावा तो होता होगा, सच–सच बताना!" पार्वती को निराधार आशंकाएं भी घेरे रहती हैं और वह सदैव नकारात्मक सोचती है फिर उसका परिणाम भी वैसा ही होता है। हाथ से अण्डा छूट जाने पर वह एकदम भयभीत हो जाती है और कहती है ''असगुन हो गया'' तथा वह अपने भविष्य के लिए आशंकित हो उठती है। जब वह गर्भवती होती है तो तब भी अपने गर्भ को लेकर चिंतित रहती है।

इस तरह पार्वती एक अच्छी पत्नी व प्रेमिका होने के साथ–साथ एक भली स्त्री है। वह सुख–दुःख में लोगों की मदद धन से करती है उसका संवेदनशील हृदय सदैव आशंकित रहता है। धार्मिक वृत्ति होने के कारण वह ईश्वर के प्रति आस्था रखती है और मन्दिर बनवाकर समाज को अपना योगदान देना चाहती है।

15.3 प्रस्तुत कहानियों का शिल्प–विधान

15.3.1 शिल्प : अर्थ एवं अभिप्राय

'शिल्प' का अर्थ हैः हस्तकला, हाथ की कारीगरी, किसी कथाकार या रचनाकार द्वारा अपनी रचनाओं में प्रयुक्त किए जाने वाली भावाभिव्यक्ति का विशिष्ट ढंग है जो शैली से अधिक व्यापक माना जाता है। शिल्प का शाब्दिक अर्थ है– निर्माण अथवा गढ़न के तत्व अर्थात शिल्प कर्म एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें एक विशेष प्रकार के कौशल की आवश्यकता होती है। शिल्प एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा रचनाकार रचना की कथा को आगे बढ़ाता है और किसी घटना, पात्र, संवाद, वातावरण का निर्माण एवं चित्रण करते हुए जीवन के किसी आदर्श रूप पर प्रकाश डालता है। ओम प्रकाश शर्मा के अनुसार, ''शिल्प विधि भी है और विधान भी। शिल्प के अंतर्गत वे सभी उपाय विधियाँ, प्रविधियाँ, तरीके क्रियाएं– प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं जिनके द्वारा कलाकार कलात्मक सौंदर्य को सिद्ध करता है'' दूसरे शब्दों में साहित्य में भाषा पर अवलम्बित कला– रूप को ही 'शिल्प' का नाम दिया गया है। इसके अंतर्गत साहित्यकार अपनी कल्पना, संवेदना तथा अनुभूति को शब्दों के कुशल प्रयोग से प्रस्तुत करता है। वस्तुतः शिल्प ही किसी रचना की सफलता–असफलता का मानदंड है। यह वह साधन है जिसके द्वारा रचनाकार अपने विषय की खोज जाँच–पड़ताल और विकास करता है। कमलेश्वर ने लगभग 200 से अधिक कहानियाँ लिखीं हैं और हर कहानी को कथ्यात्मक विचित्रता के साथ–साथ शिल्पगत विशिष्टता प्रदान की है। शिल्प कमलेश्वर की कहानियों का सशक्त पहलू है। उसकी कहानियों की शिल्पगत विविधता तथा शैली की नवीनता कमलेश्वर की विशिष्ट कला का संकेत करती है। उन्होंने अपनी कहानी

कला को शिल्प के सौंदर्य के माध्यम से निखारा है। उन्होंने शिल्प के क्षेत्र में नये प्रयोग किए हैं। दोहरा कथा शिल्प कमलेश्वर की देन है। राजा निरबंसिया दुहरे कथात्मक शिल्प को लेकर लिखी गई कहानी है तो 'खोई हुई दिशाएं' मनःस्थिति पर प्रकाश डालने वाली कहानी को मनोविश्लेषणात्मक शिल्प में गढ़ा है जबकि 'नीली झील' नामानुरूप काव्यात्मक शिल्प की प्रस्तुति है। इसके अतिरिक्त वर्णनात्मक, प्रतीकात्मक, बिम्बात्मक का प्रयोग भी रचनाकार ने कहानी की कथा के अनुसार किया है। आगे कमलेश्वर की उक्त तीनों कहानियों के शिल्प पर प्रकाश डाला जा रहा है–

15.3.2 राजा निरबंसिया : शैल्पिक विधान

'राजा निरबंसिया' कहानी कमलेश्वर की कथा यात्रा में प्रथम दौर की यथार्थवादी कहानी है। पहली बार यह कहानी 'सरस्वती' पत्रिका में 1956 ई. में इलाहाबाद से छपी थी। शिल्प की दृष्टि से राजा निरबंसिया कहानी दो भिन्न–भिन्न युगों की कहानियों को समानान्तर रूप में व्यक्त करती है। इसमें आधुनिक युग के टूटते जीवन मूल्य, आस्थाओं, विश्वासों और मजबूरियों को स्पष्ट किया गया है। संतानहीन दंपत्ती की सामाजिक स्थिति और मानसिक पीड़ा, आर्थिक विवशता, आर्थिकता के कारण दाम्पत्य संबंधों की मधुरिमा को कड़वाहट में बदलने व फिर उन संबंधों के टूटने की बेबसी का वर्णन है। इस कथ्य को प्रभावी बनाने के लिए कथाकार ने लोककथात्मक शिल्प का प्रयोग किया है। कहानीकार ने लोककथा के माध्यम से वर्तमान युग के दुःखदर्द को कुशलता से इस कहानी में उकेरा है। लोककथात्मक शिल्प के साथ–साथ रचनाकार ने वर्णनात्मक, मनोविश्लेषणात्मक, संकेतात्मक शिल्प का प्रयोग भी भावाभिव्यक्ति के लिए किया है। निम्नलिखित कहानी में प्रयुक्त शिल्प–योजना पर प्रकाश डाला जा रहा है–

1. लोककथात्मक शिल्प/दुहरी कथा शिल्प

लोककथात्मक शिल्प के अंतर्गत रचनाकार किसी प्रसिद्ध लोककथा का सहारा लेकर अपनी समसामयिक कथा को कहता हुआ चलता है। राजा निरबंसिया में भी दो विभिन्न युगों की कहानियां एक साथ विकसित हुई। एक ही समय दो कहानियां चलती हैं परन्तु इन कहानियों में घटित घटनाओं की प्रतिक्रिया भिन्न हैं जिसमें युग विशेष की विशिष्टता का पता चलता है। इसमें एक कहानी जो मां सुनाती है राजा निरबंसिया की है तथा दूसरी लेखक के मित्र जगपती की। पहली कहानी परंपरागत दंतकथा है जिसका संबंध आधुनिक युगीन संवेदनाओं से है। दोनों कथाएँ इस प्रकार है–

एक राजा निरबंसिया थे जिसके राज्य में बड़ी खुशहाली थी एक बार राजा को आखेट के लिए गये हुए सात दिन निकल गये। राजा न लौटे तो रानी मंत्री के साथ राजा की तलाश में निकल गई और जब लौटी तो राजा महल में थे। पर राजा को रानी का इस प्रकार मंत्री के साथ जाना अच्छा नहीं लगा। राजा के जहां कोई संतान नहीं थी इसलिए एक दिन राजा जब सैर करने के लिए निकलता है तो सड़क पर झाड़ू लगाने वाली मेहतरानी ने कहा "हाय राम आज राजा निरबंसिया का मुँह देख लिया न जाने रोटी भी नसीब होगी या नहीं।" इस कटाक्ष से उदास होकर राजा वन में चला जाता है। रानी भटियारिन बनकर एक रात राजा के पास एक सराय में रुकती है। कई वर्षो बाद जब

राजा धन कमाकर अपने देश लौटता है तो उसकी गाड़ी का पहिया निकालने में संकट के दिन जन्में बालक उसकी सहायता करते हैं जो वास्तव में राजा के ही पुत्र थे। राजा रानी के सतीत्व की परीक्षा लेता है और दोनों बालकों को अपना लेता है। राजा ने दो बातें की– एक रानी के नाम से बहुत बड़ा मंदिर बनवाया और दूसरी राजा ने नये सिक्कों पर बड़े राजकुमार का नाम खुदवाया और उसे अपना उत्तराधिकारी बनाया।

इस लोककथा के साथ–साथ आधुनिक युग के इलाहाबाद के मैनपुरी कस्बे में रहने वाले जगपती और उसकी पत्नी चंदा की कहानी भी चलती है। जगपती लेखक के बचपन का दोस्त था। मैट्रिक की पढ़ाई के बाद वह कस्बे के वकील के यहां मुहर्रिर बन गया। शादी के चार वर्षों तक भी उसके जहां संतान नहीं होती। उधर अपने रिश्तेदारों के जहां शादी में वह घायल हो जाता है जिसके कारण उसे कस्बे के अस्पताल में भर्ती होना पड़ता है। वहां का कम्पाउंडर बचन सिंह उसकी पत्नी चंदा के सौंदर्य से प्रभावित होकर जगपती के लिए महंगी दवाईयों की व्यवस्था करवा देता है। अस्पताल से ठीक होकर जब जगपती घर लौटता है तो संतान का अभाव और बेकारी उसे बहुत खलती है। इसी बीच बचन सिंह की बदली उसी कस्बे में हो जाती है। वह जगपती के घर आना–जाना शुरू कर देता है। जगपती बचन सिंह से कर्ज़ लेकर लकड़ी की टाल खोल लेता है। बहुत व्यस्त रहने पर भी वह बचन सिंह से किए गुप्त समझौतों की वजह से परेशान रहता है। उधर चंदा के मां बनने की खबर सुनकर वह उदास हो उठता है। फिर चंदा उसे बताती है कि 'उसने उसे कर्ज़ के लिए बचन सिंह को बेच दिया था' इसलिए वह उसे छोड़कर मायके जा रही है। जगपती को सूचना मिलती है कि चंदा के बालक हुआ है और वह किसी और के घर बैठ रही है तो वह सोचता है कि चंदा को इस नरक में डालने का दोषी वही है। जब उसके लिए यह सब सहन करना कठिन हो गया तो वह आत्महत्या कर लेता है। मृत्यु से पहले जगपती दो पत्र लिखकर छोड़ जाता है एक चंदा के नाम जिसमें लिखा था चंदा बच्चे को लेकर चली आए और दूसरा कानून के नाम कि उसे किसी ने नहीं मारा उसने रूपये के कर्ज़ का ज़हर खाया था जिससे उसकी मौत हुई और यह भी कि मेरी लाश को आग मेरे बच्चे से दिलवाई जाए।

इस प्रकार दोनों कथाओं के माध्यम से रचनाकार ने आधुनिक युग के टूटते मूल्यों, आस्थाओं और विवशताओं की त्रासदी का चित्रण किया है जिसमें जगपती की मनोव्यथा साकार हो उठती है। वह निरन्तर संघर्ष करता हुआ निराश और हताश हो जाता है तथा अकेलापन उसे इस हद तक प्रभावित करता है कि उसे केवल आत्महत्या का मार्ग ही सूझता है।

2. वर्णनात्मक शिल्प

इस विधि के द्वारा रचनाकार कथावस्तु का वर्णन विशेष घटनाओं और समस्याओं को केन्द्रित कर वस्तु, स्थान व वातावरण तथा पात्रों के संवादों के द्वारा करता है। कहानी की कथावस्तु जो कि दुहरी रहती है उसे स्पष्ट करने के लिए इस शिल्प का प्रयोग किया जाता है। राजा निरबंसिया कहानी दुहरी कथा लेकर चलती है एक राजा निरबंसिया की कथा तो एक जगपती की। राजा की कहानी को कथा शैली में कहा है तो जगपती की कथा वर्णनात्मात्मक शैली अपनाई है। आधुनिक युग के कस्बे, अस्पताल, समारोहों का वर्णन इसी शिल्प में हुआ है। कस्बे में एक ही अस्पताल है जिसमें सारी सरकारी व्यवस्था कम्पाउंडर के इर्द–गिर्द घूमती है उसका सटीक वर्णन इन पंक्तियों से मिलता है–

"कस्बे का अस्पताल था। कम्पाउंडर ही मरीजों की देखभाल रखते। बड़ा डॉक्टर तो नाम के लिए था या कस्बे के बड़े आदमियों के लिए। छोटे लोगों के लिए तो कम्पाउंडर साहब ही ईश्वर के अवतार थे। मरीजों की देखभाल करने वाले रिश्तेदारों की खाने–पीने की मुश्किलों से लेकर मरीज की नब्ज तक संभालते थे। छोटी सी इमारत में अस्पताल आबाद था। रोगियों की सिर्फ छः सात खाटें थीं। मरीजों के कमरे से लगा दवा बनाने का कमरा था, उसी में एक ओर एक आरामकुर्सी थी और एक नीची–सी मेज़। उसी कुर्सी पर बड़ा डॉक्टर आकर कभी–कभार बैठता, नहीं तो बचन सिंह कम्पाउण्डर ही जमे रहते।''

जगपती को जब पता चलता है कि चन्दा मां बनने वाली है तो उस पर उस समाचार का क्या प्रभाव होता है उसका वर्णन इस प्रकार है– "सुबह यह खबर फैलने से पहले जगपती टाल पर चला गया था पर सुनी उसने भी आज ही थी। दिन भर वह तख्त पर कोने की ओर मुँह किए पड़ा रहा। न ठेके की लकड़ियां चिरवाई, न बिक्री की ओर ध्यान दिया, न दोपहर का खाना खाने ही घर गया। जब रात अच्छी तरह फैल गई, तो वह एक हिंसक पशु की भांति उठा। उसने अपनी अंगुलियां चटकाई, मुट्ठी बांधकर बांह का ज़ोर देखा, तो नसें तनीं और बांह में कठोर कंपन सा हुआ। उसने तीन–चार पूरी सांसें खींची और मज़बूत कदमों से घर की ओर चल पड़ा। मैदान खत्म हुआ. ...... कंकड़ की सड़क आई...... सड़क खत्म हुई, गली आई।"

इस प्रकार रचनाकार ने इस कहानी की प्रत्येक घटना, विचार इत्यादि को विस्तारपूर्वक वर्णित किया है। जिससे कथा का दायरा विस्तृत हुआ है।

3. मनोविश्लेषणात्मक शिल्प

मनोविश्लेषणात्मक शिल्प कहानी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कमलेश्वर ने इस कहानी में मनोविश्लेषणात्मक शिल्प का प्रयोग बहुतायत हुआ है। इस कहानी में चन्दा, जगपती की मनःस्थिति का चित्रण करने के लिए इस शिल्प का प्रयोग हुआ है। चन्दा द्वारा जगपती को घाव के ज़ख्म दवाईयों की ज़रूरत के विषय में बताने पर जगपती उसे मना कर देता है तो चन्दा सोचती है कि उसके पति की कथनी और करनी में कितना अंतर है वह स्वयं तो उधार लेता है परन्तु उसे रोक रहा है। उस समय चंदा के मन में क्या आता है निम्नलिखित पंक्तियों से स्पष्ट हो जाता है, "उसके जी में आया कि कह दे, क्या आज तक तुमने कभी किसी से उधार पैसे नहीं लिए ? पर वह तो खुद तुमने लिए थे और तुम्हें मेरे सामने स्वीकार नहीं करना पड़ा था। इसीलिए लेते झिझक नहीं लगी, पर आज मेरे सामने उसे स्वीकार करते तुम्हारा झूठा पौरुष तिलमिलाकर जाग पड़ा है।"

जब बचन सिंह जगपती को दवाईयाँ लाकर देता है तो दवाईयों को देख जगपती अपने आप को विवश समझता है उसकी विवशता की पीड़ा उसके मुख पर स्पष्ट दिखाई देती है– "जगपती के चेहरे पर मानसिक पीड़ा की असंख्य रेखाएं उभरी थी, जैसे वह अपनी बीमारी से लड़ने के अलावा स्वयं अपनी आत्मा से भी लड़ रहा हो... चन्दा की नादानी और स्नेह से भी उलझ रहा हो और सबसे ऊपर सहायता करने वाले की दया से जूझ रहा हो।"

इसी तरह जब चन्दा उसे बताती है कि उसकी दवाईयों के लिए उसने अपना कड़ा बेच दिया है तो जगपती के लिए

कड़ा खो देने का दुख भी असह्य है उसकी व्यथा को रचनाकार ने इस प्रकार प्रस्तुत किया है, "मुझसे पूछा तक नहीं और ..... जगपती ने कहा और जैसे खुद मन की कमज़ोरी को दाब गया– कड़ा बेचने से तो अच्छा था कि बचन सिंह की दया ही ओढ़ ली जाती। और उसे हलका–सा पछतावा भी था कि नाहक वह रौ में बड़ी–बड़ी बातें कह जाता है, ज्ञानियों की तरह सीख दे देता है।" इस प्रकार रचनाकार ने कहानी में जगपती व चंदा की मनःस्थिति का वर्णन बड़े ही कलात्मक ढंग से किया है जिसके द्वारा कहानी पाठकों को संवेदित करती है।

4. प्रतीकात्मक शिल्प

प्रतीक का अर्थ है – चिह्न, लक्षण, निशान, मुख, मुँह, आकृति, सूरत, रूप। किसी के स्थान पर या बदले में रखी हुई वस्तु प्रतिरूप प्रतीक कहलाती है। रचना में जब किसी मनोद्गार को अभिधा–शक्ति द्वारा प्रस्तुत करना अवांछनीय लगता है तो रचनाकार प्रतीकों की योजना करता है। इस विधि में लेखक पात्रों के भावों, अनुभूतियों, विचारों को भिन्न–भिन्न संकेतों के द्वारा प्रस्तुत करता है। प्रतीक विचारों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। उक्त कहानी में लेखक ने नायक के मन की व्यथा को प्रतीकों के सहारे व्यक्त किया है। जगपती जब इस बात का अनुमान लगाता है कि चंदा के कम्पाउंडर के साथ अनैतिक संबंध है तो कर्ज के समय किये गये समझौते के कारण रोक नहीं पाता। रचनाकार ने उसकी विवशता को अंधेरे के प्रतीक के द्वारा स्पष्ट किया है– ''घर के हर कोने से, अंधेरा सैलाब की तरह बढ़ता जा रहा था।'' इस पंक्ति में अंधेरा उसकी उस बुद्धि का सूचक है जिसमें वह यह नहीं सोच पा रहा है कि स्थिति कैसे उसके हाथ से निकलती जा रही है। इसी प्रकार अन्य प्रतीकों में– "तुम्हारे कभी कुछ न होगा...... न तेल न ... ...।" "हरा होने से क्या, उखट तो गया है। न फूल का, न फल का।" प्रथम पंक्ति में तेल उस कस्बाई वातावरण का संकेत कर रहा है जहां अभी बिजली नहीं पहुँची और दूसरी पंक्ति प्राकृतिक संकेत दे रही है कि घुन लगा वृक्ष चाहे जगपती की तरह हरा लगे पर उस पर फल–फूल नहीं लग सकते। इस प्रकार कहानीकार ने सशक्त प्रतीकों के द्वारा कहानी के कथ्य को पाठकों के सम्मुख रखा है।

अतः कहा जा सकता है कि शैल्पिक दृष्टि से राजा निरबंसिया कहानी दुहरे कथानक के संश्लिष्ट शिल्प में बुनी गई उत्कृष्ट कहानी है। सुरेन्द्र के अनुसार, ''दुहरे कथानक और लोक कथा के संबंध का नए वस्तुबोध के समानांतर उपयोग 'नई कहानी' में हुआ है। लेकिन इस मिज़ाज में चर्चा करने योग्य कहानी अपने पूरे महत्व में कमलेश्वर ही दे पाए हें, 'राजा निरबंसिया उनकी ऐसी ही कहानी है।' कथ्य को प्रभावशाली बनाने के लिए कथाकार ने शिल्प के साथ मनोविश्लेषणात्मक और प्रतीकात्मक शिल्प को भी अपनाया है।

15.3.3 'खोई हुई दिशाएं' कहानी का शैल्पिक विधान

'खोई हुई दिशाएं' कमलेश्वर द्वारा रचित दूसरे दौर की कहानियों में एक सशक्त कहानी है। कस्बे से आया चन्दर दिल्ली नामक शहर की भीड़ में अकेला है। उसके मन में नगरीय जीवन से उत्पन्न असंतुष्टि की छटपटाहट है। उसका अकेलापन, उसकी पहचान की समस्या उसमें वितृष्णा के भाव भर देती है। इसलिए इस कहानी में मनः स्थिति का सूक्ष्म अंकन हुआ है। इस कहानी को कमलेश्वर ने मनोविश्लेषणात्मक शिल्प में गढा है। और मनःस्थिति के स्पष्टीकरण

के लिए वर्णनात्मक संवादात्मक तथा पूर्वदीप्ति शिल्प की सहायता ली है। कहानी की शैल्पिक संरचना निम्नलिखित है–

1. वर्णनात्मक शिल्प

वर्णनात्मक शिल्प में घटनाओं, पात्रों इत्यादि का वर्णन विस्तृत रूप में किया जाता है। इसमें किसी विशेष समस्या को उठाया जाता जो कहानी के आस–पास घूमती है। उस समस्या पर विस्तृत रूप से विचार किया जाता है। घटनाओं, पात्रों, संवादों को बढ़ा–चढ़ा कर वर्णित किया जाता है। कमलेश्वर कृत 'खोई हुई दिशाएं' कहानी में चन्दर के माध्यम से अकेलेपन से संत्रस्त व्यक्ति के जीवन पर प्रकाश डाला है। वह बड़े शहर में रहते हुए भी अपने आप को अकेला पाता है। वह इतना अधिक व्यथित है कि वह घर भी नहीं जाना चाहता और घर में पड़ोसियों की ताक–झांक को भी पसंद नहीं करता है। रचनाकार ने उसकी घर पहुँचने के पहले वह घर परिवेश के विषय में क्या सोचता है इसका वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में किया है– "घर पर निर्मला इन्तज़ार कर रही होगी। वहां पहुंचकर भी पहले मेहमान की तरह कुर्सी पर बैठना होगा, क्योंकि बिस्तर पर कमरे का पूरा सामान सजा होगा और वह हीटर पर खाना पका रही होगी। उन्मुक्त होकर वह हवा के झोंके की तरह कमरे में घुस भी नहीं सकता और न उसे बाहों में लेकर प्यार कर सकता है, क्योंकि गुप्ताजी अभी मिल से लौटे नहीं होंगे और मिसेज़ गुप्ता बेकार में बैठी गप लड़ा रही होंगी या किसी स्वेटर की बुनाई सीख रही होंगी।"

चन्दर टी–हाउस में भी अपना समय व्यतीत करता है। रचनाकार ने टी–हाउस का विस्तृत वर्णन इस प्रकार किया है– "टी–हाउस में बेपनाह शोर है। खोखली हंसी के ठहाके हैं और दीवार पर एक घड़ी है जो हमेशा वक्त से आगे चलती है। तीन रास्ते बाहर से आने और जाने के लिए हैं और चौथा रास्ता बाथरूम जाता है। बाथरूम के पाट्स में फिनाइल की गोलियां पड़ी हैं और गैलरी में एक शीशा लगा हुआ है। हर वह आदमी जो बाथरूम जाता है, उस शीशे में अपना मुंह देखकर लौटता है।" इस प्रकार स्थलों एवं घटनाओं के वर्णन के द्वारा सारा वास्तविक परिदृश्य पाठकों को प्रभावित करता है।

2. मनोविश्लेषणात्मक शिल्प

मनोविश्लेषणात्मक शिल्प कहानी के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इस विधि में रचनाकार विषय–वस्तु विचारों को विशेष रूप से वर्णित करता है। वह पात्रों के इर्द–गिर्द का वर्णन करते हुए उसके आंतरिक विचारों, व्यथा, हर्ष, संघर्ष, तनाव, कुण्ठा, चिंता, आशंकाओं इत्यादि को वर्णित कर कथा में रोचकता उत्पन्न करता है। यह सम्पूर्ण विश्लेषण मन पर आधारित होने के कारण मनोविश्लेषण अध्ययन से भी जाना जाता है। कमलेश्वर की अधिकतर कहानियों के केन्द्र में मनःस्थिति है। इस कहानी में उन्होंने चन्दर की मनःस्थिति से पाठकों को परिचित करवाया है। चन्दर जो कि अकेलेपन से जूझ रहा है वह अकेलेपन को दूर करने के लिए जहां भी जाता है वहां से रचनाकार निराश लौटता है फिर वह अपने भावों को व्यक्त न कर अंदर ही अंदर घुटता रहता है।

रचनाकार ने 'मानसिक स्थिति' की चरमसीमा को चन्दर के अकेलेपन की अभिव्यक्ति की है। चन्दर जब

कस्बे को छोड़कर शहर आ जाता तो अनुभव करने लगता है कि वह यहां मात्र अकेला है। उसकी मानसिकता और अकेलेपन का वर्णन इन पंक्तियों से स्पष्ट होता है– ''इस शहर में आकर चन्दर को तीन वर्ष हो गये हैं। कस्बाई संस्कृति और संस्कारों पर उसका व्यक्तित्व विकसित हुआ है। इसी कारण वह हर स्थान पर परिचित की आँखें ढूंढता है। कृत्रिमता और औपचारिकता से उसे बेहद चिढ़ है। परन्तु जिस दिल्ली शहर में आया है वहां इन दो के सिवा तीसरी स्थिति का सामना ही नहीं होता। चन्दर इतने बड़े शहर में एकदम अकेला पड़ गया है। आसपास से सैंकड़ों लोग गुजरते हैं पर कोई नहीं पहचानता। हर आदमी या औरत लापरवाही से दूसरों को नकारता या झूठे दर्प में डूबा हुआ गुजर जाता है।'' वास्तव में इस कहानी में चन्दर का अकेलापन तब और भी बढ़ने लगता है जब उसे थोड़ी उम्मीद होती है कि कोई तो उसे पहचानता है जैसे– ऑटोरिक्शा वाला सरदार, टी–हाउस का अजनबी और शहर का मित्र पर उनके व्यवहार में अत्यधिक कृत्रिमता और औपचारिकता तथा कटुता उसे अजनबी बना देता है। टी हाउस का वातावरण जिसमें आने वाला प्रत्येक व्यक्ति अजनबी है और अजनबी बनकर ही रह जाता है। किसी को देखने में कोई मतलब नहीं है चन्दर का मन और भारी हो जाता है। ''अकेलेपन का नागपाश और भी कस जाता है।

चन्दर को इस शहर में आए तीन वर्ष हो गये हैं तीन सालों में किसी भी प्रकार का कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ। वह सोचता है– ''इन तीन सालों में ऐसा कुछ भी नहीं हुआ जो उसका अपना हो, जिसकी कचोट अभी तक हो, खुशी या दर्द अब तक मौजूद हो।'' चन्दर को लगता है कि शहर की इस भीड़–भाड़ में वह अपने को भूलता जा रहा है। वह अपने से मिलना चाहता है इसलिए वह सोचता है, ''एक अरसा हो गया। एक जमाना गुजर गया, वह खुद अपने से नहीं मिल पाया।'' उसने अपनी डायरी के हर शुक्रवार के आगे नोट किया कि ''खुद से मिलना है। शाम सात बजे से नौ बजे तक।'' परंतु ''न जाने क्यों वह अपने से मिलने से घबराता है।'' उसकी घबराहट छटपटाहट उसके अंतर्मन की स्थिति का बोध करवाती है जिससे पता चलता है कि चन्दर अपने भीतरी अंश को टटोल रहा है। क्योंकि वह जीवन की सभी दिशाओं को खोता जा रहा है। चन्दर शहर की प्रकृति में अपनापन ढूंढता है पर उसमें भी उसे एक विचित्र खालीपन का एहसास होता है। वह अनुभव करता है– ''तनहा खड़े पेड़ों और उसके नीचे सिमटते अंधेरे में अजीब–खालीपन है। तनहाई ही सही, पर उसमें अपनापन तो है।'' इस प्रकार विचित्र अनुभव और अकेलेपन के भाव को लेकर घर आता है तो अपनी पत्नी को देखकर उसे लगता है कि वह अकेला नहीं है अजनबी और तनहा नहीं है। वह शारीरिक सुख की प्राप्ति करता है और बाद में फिर से अपने को अकेला अनुभव करने लगता है जैसे– ''और चन्दर फिर अपने को बेहद अकेला महसूस करता है। कमरे की खामोशी और सूनेपन से उसे डर सा लगता है।'' उसे लगता है कि अन्य सभी दिशाओं के खो चुकने पर आज पत्नी को भी वह खो रहा है इसलिए वह निर्मला को गहरी नींद से उठाकर पागल की तरह पूछता है– ''क्या तुम मुझे पहचानती हो? मुझे पहचानती हो निर्मल उसकी आँखें उसके चेहरे पर कुछ खोजती रह जाती हैं।'' इस प्रकार कमलेश्वर ने मनोविश्लेषण शिल्प के द्वारा चन्दर की पूरी मनःस्थिति पाठकों के समक्ष रख दी है जो सभी दिशाओं से पहचान की उम्मीद करता हुआ अकेलेपन से जूझता रहता है।

3. पूर्व दीप्ति शिल्प

इस विधि के माध्यम से रचनाकार कथा को प्रवाहित करने के लिए पात्रों को अतीत से जोड़कर वर्णित करता

है जिससे कथा का प्रवाह बना रहता है इस सारी प्रक्रिया में कथा पात्रों के मन में ही चलती हैं इस शिल्प का संबंध बाह्य जगत् से नाममात्र का होता है अर्थात् इस विधि के माध्यम से रचनाकार पात्रों की मनःस्थिति, आंतरिक भावों को व्यक्त करता है। कमलेश्वर ने इस विधि का प्रयोग करते हुए चन्दर के आंतरिक भावों एवं मनःस्थिति का वर्णन कस्बे और शहर के संदर्भ में किया है। उसके शहर इलाहाबाद में सभी एक दूसरे को जानते थे और हमेशा एक दूसरे को बुलाते हैं, चंदर की इलाहाबाद के प्रति या वहां के लोगों के प्रति मनःस्थिति को रचनाकार ने इस प्रकार वर्णित किया है, ''और तब उसे अपना वह शहर याद आता है, जहां से तीन साल पहले वह चला आया था– गंगा के सुनसान किनारे पर भी अगर कोई अनजान मिल जाता तो नज़रों में पहचान की एक झलक तैर जाती थी।''

चन्दर जो कि विवाह के पश्चात् भी मन में अपनी प्रेमिका की यादों को बसाए बैठा है। वह अपने बीते दिनों की स्मृतियों को सजग करते हुए उसके साथ बिताए लम्हों को इस प्रकार याद करता है– ''इन्द्रा ने मुस्कुराते हुए चार बरस पहले की तरह चिढ़ाने के अन्दाज़ में बयान किया था, चन्दर को दूध से चिढ़ है और कॉफी इन्हें धुआं पीने की तरह लगती है, चाय में अगर दूसरा चम्मच चीनी डाल दी गई तो इनका गला खराब हो जाएगा, कहकर वह खिलखिलाकर हंस दी थी और इस बात से उसने पिछली बातों की याद ताज़ी कर दी थी...।''

4. संवादात्मक शिल्प

'खोई हुई दिशाओं' में संवादात्मक शिल्प का प्रयोग रचनाकार ने चन्दर की मनःस्थिति को मुखरित करने के लिए ही किया है ताकि भीड़ भरी इस राजधानी में उसके अकेलेपन की पीड़ा को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया जा सके। जैसे कि चन्दर को जब उसका मित्र आनंद मिलता है तो आनंद चन्दर के पैसों से ही कॉफी पीना चाहता है। इस संदर्भ में वह चन्दर से कहता है–

''किधर से आ रहे हो? डायरी जेब में डालते हुए वह पूछता है। आज तो यूं ही फंस गए, आओ एक प्याला कॉफी हो जाए। आनन्द कहता है, फिर एक क्षण रूककर वह दूसरी बात सुझाता है, या और कुछ... चन्दर इसका मतलब समझकर न कर देता है। वह ज़ोर देता है, चलो फिर आज तो हो ही जाए, क्या रखा है इस ज़िदगी में? कहते हुए वह झूठी हंसी हंसता है और फिर धीरे से हाथ दबाकर पूछता है, प्लीज़ इफ़ यू डोण्ट माइण्ड, कुछ पैसे हैं? उसके कहने में कोई हिचक नहीं है और न ही उसे शरम आती है। बड़ी सीधी–सी बात है, पैसे कम हैं, अच्छा पार्टनर, मैं अभी इन्तज़ाम करके आया, वह विश्वास को गहराता हुआ कहता है, यहीं रूकना, चले मत जाना, और वह जाता है तो फिर नहीं आता।''

रचनाकार ने दिल्ली जैसे बड़े शहर में पहचान की समस्या को वर्णित किया है वहां कोई एक दूसरे को नहीं पहचानता है वहां पर पड़ोस में रहते व्यक्ति भी एक दूसरे के लिए अनजान होते हैं। चन्दर अपनी पहचान के लिए छटपटाता है। जब कैफे में बैठे हुए अनजान व्यक्ति चन्दर की तरफ अपनेपन की नज़रों से देखता है तो वह आशा से भर जाता है परन्तु उस व्यक्ति के कुछ बोलते ही वह निराश हो जाता है जैसे कि शब्दों से पता चलता है, ''चन्दर को अपनी ओर देखते हुए देख वह साथ वाला दोस्त कुछ कहने को होता है, पर जैसे उसे कुछ याद नहीं आता, फिर अपने को संभालकर उसने चन्दर से पूछा, आप... आप तो शायद कॉमर्स मिनिस्ट्री में हैं। मुझे याद

पड़ता है कि... कहते हुए वह रूक जाता है। वह आदमी आगे अटकलें भिड़ाने की कोशिश नहीं करता, सीधे–सीधे इस अनजान सम्बन्ध को मज़बूत बनाते हुए कहता है, ऑल राइट पार्टनर, फिर कभी मुलाकात होगी और सिगरेट सुलगाता हुआ उठ जाता है।''

चन्दर पहचान पाने के लिए तड़पता है वह चाहता है कि इतनी बड़ी आबादी में कम से कम कोई तो उसे जानता हो जिस पर वह गर्व महसूस कर सके, जिसे वह अपना कह सके और जो उसे गहराई से जाने। आटो रिक्शे वाले के देखने के नज़रिए से चन्दर को भ्रम हो जाता है कि वह उसे जानता है क्योंकि चन्दर उसके रिक्शे पर कई बार आया था परन्तु जब आटो वाला अधिक पैसों की मांग करता है तो पल भर में ही उसका भ्रम चकनाचूर हो जाता है जो कि इस प्रसंग शब्दों से पता चलता है, ''हमेशा चार आने लगते हैं सरदार जी! चन्दर पहचान जताता हुआ कहता है, पर सरदार की आंखों में पहचान की परछाई तक नहीं है। वह फिर कहता है, सरदार जी, आपके फटफट पर ही बीसों बार चार आने देकर आया हूँ।'' ''किसे होरने लए होणगे चार आने... असी ते छै आने तो घट नहीं लेंदे बादशाहो! सरदार इस बार पंजाबी में बोला था और उसकी हथेली फैली हुई थी।''

इस प्रकार 'खोई हुई दिशाएं' कहानी की कथा चन्दर की पूर्व स्मृतियों के आधार पर ही विकसित होती है। तभी तो पाठक चन्दर की वर्तमान मानसिकता का विश्लेषण कर सकता है।

15.3.4 'नीली झील' कहानी का शैल्पिक विधान

कमलेश्वर की 'नीली झील' कहानी झील और महेस के इर्द–गिर्द ही घूमती है। इस कहानी में कहानीकार तीस साल पहले की बात सुनाता है। पूरी कथा क्रमानुसार चलती है। आज से तीस साल पहले झील से बस्ती तक का रास्ता बनाने आए मजदूरों में महेसा भी एक मजदूर था। सैलानी महिलाओं के प्रति उसका विशेष आकर्षण था इसलिए उन्हें देखते ही वह उनके साथ–साथ चलने, उनके साथ बातचीत करने, उनके सौन्दर्य में एक विशेष रूप की तृप्ति अनुभव करता था। वह नीली साड़ी वाली सैलानी स्त्री के प्रति विशेष रूप से आकर्षित होता है उसे नीली साड़ी, उसकी नीली आंखों और नीली झील में समानता दिखाई देती है। रचनाकार ने झील पर पक्षियों, वृक्षों का सूक्ष्म वर्णन इस प्रकार किया है, "हलकी–हलकी हवा झील की ओर से आ रही थी और छाया में कुछ सर्दी भी थी। झील के पानी के भीतर बादल तैर रहे थे और नरकुल धीरे–धीरे कांप रहे थे। ... दूर से जिधर पानी उथला था, देवहंसो, मुर्गाबियों और पतारी के झुंडों के चुगने की और पंख फड़फड़ाने की आवाजें आ रही थीं। देवहंस शायद सिवार खा रहे थे और मुर्गाबी घोघे या केकड़े खोजने में मशगूल थे। पेड़ों पर चिड़ियां चहक रही थी।"

महेस अपने से दस साल बड़ी विधवा से विवाह करता है। लोग दोनों के संबंध में बातें बनाते हैं परन्तु वह दोनों पति–पत्नी किसी की परवाह न करते हुए खुशी–खुशी जीवन व्यतीत करते हैं। पार्वती के गर्भवती होने पर बच्चा पेट में ही मर जाता है और इसी कारण पार्वती की भी मृत्यु हो जाती है। तत्पश्चात् महेस पार्वती की यादों में खोया रहता है। अंत में वह पत्नी की इच्छा पूर्ण करने के लिए मंदिर एवं धर्मशाला को बनाने के लिए पैसे एकत्रित करता तो है परन्तु पक्षी प्रेम के कारण वह उन पैसों से झील खरीद लेता है और उसके बाहर एक तख्ती लगवा देता है

जिस पर वह लिखवाता है, "यहां शिकार करना मना है। और नीचे की पंक्ति थी, दस्तखत नीली झील का मालिक, महेस पांडे।" कहानीकार ने इस कथा को बड़े कलात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है जिससे कथा में रोचकता एवं प्रवाहमयता आई है। इस कहानी के विकास में कमलेश्वर ने मुख्यता वर्णनात्मक, मनोविश्लेषणात्मक एवं बिम्बात्मक शिल्प का सहारा लिया है। जिस पर आगे विचार किया जा रहा है–

1. वर्णनात्मक शिल्प

वर्णनात्मक शिल्प के अंतर्गत रचनाकार कथा विकास के लिए कई प्रसंगों, घटनाओं, स्थानों तथा जीवन के पक्षों का विस्तृत वर्णन करता चलता है। प्रस्तुत कहानी में कमलेश्वर ने झील, पक्षियों एवं महेसा के जीवन के कुछ क्षणों का विस्तृत वर्णन किया है। महेस अपने से अधिक आयु वाली विधवा से विवाह करता है एवं उसकी इच्छानुसार अपने में परिवर्तन लाता है तथा पारबती की सुख सुविधा के लिए बैलों की जोड़ी खरीदता है। कथाकार ने महेस पाँडे में आए परिवर्तन और उसकी जिम्मेदारी का वर्णन इस प्रकार किया है, ''पार्वती के कहने से उसने कलमें बड़ी–बड़ी रखवाई थीं, चोटी में मोटी सी गांठ बांधता था और मूंछे छोटी करवा ली थीं। मेले–तमाशे पर जाने के लिए बैलों की एक गोई और छोटा सा रब्बा भी खरीद लाया था। बैलों को खूब सजाकर रखता था। उनके गलों में चालीस घुंघरूओं की माला थी और सींगों पर पालिश। रब्बे की छत के लिए रंगीन झालर पार्वती ने सी थी और गछियां वह दरज़ी से बनवा लाया था। पहियों के ऊपर रथ की तरह हाथ लगवाया था और सन की नहीं, सूत की रंगीन डोरियों से किनारे बुनवाए थे।''

इसी तरह फोटो फ्रेम में फोटो लगाने के लिए महेसा के कहने पर पारबती सज–धज कर फोटो करवाने उसके साथ जाती है। कहानीकार ने फोटो खिंचवाने के दृश्य का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों में किया है। ''साथ–साथ बैठते हुए उसने पार्वती के सर का पल्ला कानों के पीछे कर लिया और अपनी कमीज़ की जेब में सतरंगा रेशमी रूमाल रख लिया। अपने गले का ताबीज़ भी खींचकर ऊपर कमीज़ पर निकाल लिया, ताकि तस्वीर में सब कुछ दिखाई पड़े। अपने पीछे बाग का पर्दा लगवाया, जिसमें दो चिड़िया चोंच में चोंच मिलाए बैठी थीं। पार्वती को भी वह पर्दा पसन्द आया था।''

इस प्रकार कहानीकार ने इस कहानी की हर एक घटना को बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से पेश किया है।

2. मनोविश्लेषणात्मक शिल्प

कहानी रचना में मनोविश्लेषणात्मक शिल्प का महत्वपूर्ण योगदान है। इस कहानी में कमलेश्वर ने महेस उसके मज़दूर साथी एवं उसकी पत्नी पंडिताइन की मनःस्थिति का यथार्थांकन किया है। महेस का पक्षी प्रेम और पक्षियों के लिए चिंतित होना और पक्षियों के लिए उसके मन में व्याप्त भय, क्रोध, प्रेम के भावों का सफल विश्लेषण हुआ है। कहानी के शुरू में ही महेसा की आदतों को देख उसके मजदूर साथियों के मन में उठने वाले ईर्ष्या भाव को रचनाकार ने इस प्रकार वर्णित किया है, "इस साले को मेठ से कहकर निकलवाया जाए! मेम जान पाती तो चमड़ी उतर जाती।... साला आसक बनता है!"

महेस का पक्षियों के प्रति विशेष प्रेम था वह अंग्रेजों द्वारा मारे गये पक्षियों को देख कर त्रस्त होता है। गोली की आवाज़ सुनते ही एक विशेष उदासीनता उसे घेर लेती है। उसकी इस मनः स्थिति का वर्णन निम्नलिखित पंक्तियों से मिलता है– "उधर बंदूक चली थी और गोली की टूटती हुई आवाज बादलों में गूंज गई थी। और उसके बाद पक्षियों का कातर शोर! मन पर चोट सी लगी थी। उसका मन उदास हो आया था। एक क्षण ठिठककर उसने पीछे देखा, दलदल खामोश था और ऊपर से उड़कर भागती हुई चिड़ियों की भयातुर आवाज़ को शालीनता से पीता जा रहा था।'' इस प्रकार जब सैलानी शिकार करते हैं तो वह उन्हें रोक तो नहीं पाता है पर इन पक्षियों का रक्षा का विचार उसे चैन नहीं लेने देता इसलिए रात को सोते समय भी पक्षियों के नरम, कोमल परों की सरसराहट उसे महसूस होती है। उसकी रोज़ की सुबह झील पर ही बीतती है। जब शिकारी शिकार करते हैं तो वह एकदम उचाट हो जाता है और उस स्थान से भाग आता है पर फिर भी उसे शान्ति कहीं नहीं मिलती।

दूसरी ओर पार्वती अपने से दस वर्ष छोटे महेस से विवाह तो कर लेती है पर महेस के लापरवाही वाले व्यवहार को देखकर पछताती है क्योंकि वह सोचती है कि एक उम्र के बाद ही व्यक्ति जिम्मेदारी उठाता है। महेस की उम्र उसके लिए अभी छोटी थी। इसलिए वह उसे कहती भी है कि बहुत लड़कपन है तुममें। वह महेस को मन्दिर बनवाने के लिए कहती है तो वह उसे पूछता है कि मन्दिर बनाना ज़रूरी है वह उसके कहे वाक्यों का अर्थ लगाती हुई पार्वती की मनः स्थिति लेखक ने स्पष्ट की है– ''पार्वती समझ गई थी कि उसके मन की बात यह नहीं है। महेस की आँखों में अभी जो सूनापन देखा था वह कुछ ओर ही कह रहा था। पार्वती उदास हो जाती है कि शायद वह उससे शादी करके पश्चाताप तो नहीं कर रहा है।'' वह महेस से अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति इन शब्दों में करती है– "आज सोच–सोचके बड़ा दुःख हुआ। .... अपने सुख की खातिर हमने तुम्हें खराब कर दिया। पार्वती की आंखों में पनीलापन था, पछतावा तो होता होगा, सच–सच बताना।"

महेस जब पार्वती को पक्षियों के अण्डे दिखाता है तो पार्वती के हाथ से सोनापतारी का अंडा गिर कर टूट जाता है तो वह भयभीत हो जाती है। वह एक दम अपने भविष्य के लिए आशंकित हो जाती है। उसके चेहरे पर निराशा के भाव स्पष्ट झलकने लगते हैं जैसे कि इन पंक्तियों से पता चलता है– "पर पार्वती के चेहरे पर काले बादल–से छा गए थे, उसका दिल धक्–से रह गया था, बहुत धीमे स्वर में बोली, असगुन हो गया और आंचल में मुंह छिपाकर रो पड़ी।" अतः यह कमलेश्वर की उत्कृष्ट कहानीकला ही है कि वह बहुत सी बातें केवल पात्रों के मनोभावों के द्वारा ही कह जाते हैं।

3. काव्यात्मक शिल्प

काव्यात्मक शिल्प के अंतर्गत कहानी या मनोभाव को काव्य भाषा में कलात्मकता प्रदान की जाती है। काव्य शिल्प कथा में सौंदर्य की वृद्धि करता है। मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति इस शिल्प के द्वारा सहजता से की जाती है। 'नीली झील' कहानी कमलेश्वर में इस शिल्प का नवीन प्रयोग किया है। प्रकृति का सौंदर्य और महेस पांडे की सौंदर्यप्रियता का वर्णन इस शिल्प में हुआ है। पक्षियों के साथ उसका लगाव को बड़े काव्यात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है– ''मानसरोवर और कैलास से आए देवहंसों को, जो गंधर्वों के देश से आए थे प्रवास के लिए .... केवल और पवित्र

पक्षी!... हल्की किरणों में सोनापतारी के स्वर्ण–पंख चमचमा उठे। उसका मन उदासी से भर गया। इन पक्षियों से क्या नाता जोड़ना।'' कथाकार ने मेम की आँखों के सौंदर्य की काव्यात्मक अभिव्यक्ति है– ''होय मोमिया तेरी अंखियां बड़ों जुल्म ढायो री...'' इसी प्रकार जलती हुई आग में पेड़ों का सौन्दर्य भी देखते ही बनता है– ''पेड़ों की पत्तियां आग की दमक में तांबे की तरह लग रही थीं और उनके काले, पयोटेदार तने अजगरों की तरह झिलमिला रहे थे। आसमान सीप की पीठ की तरह धुंधला और काला था।'' जलमंजरी तथा दलदल में पैदा होने वाली लताओं का वर्णन इस प्रकार है– ''जलमंजरी के पास ही दलदल शुरू हो जाता था। पानी में तारों की तरह विधी हुई थी और गांठों के पास नन्हें–नन्हीं जड़ें मछली के उजले पंखों की तरह धीरे–धीरे कांप रही थीं।'' इस प्रकार रचनाकार ने विभिन्न उपमाओं के द्वारा अपनी अनुभूति को सफल अभिव्यक्ति दी है। कथ्य की विशिष्टता के कारण ही इसका सृजन कविता और कहानी के धरातल पर हुआ है। डॉ. इन्द्रनाथ मदान के अनुसार– ''राजा निरबंसिया की तरह कमलेश्वर इस कहानी में नये माध्यम की आजमाइश करना चाहते हैं। पहली की रचना प्रक्रिया कहानी में कहानी है और दूसरी का सृजन कविता और कहानी के दो धरातलों पर किया गया है।'' वास्तव में इस कहानी में उभर आई काव्यात्मकता पाठक को अपनी ओर आकर्षित करती है।

4. बिम्बात्मक शिल्प

बिम्ब जिसे अंग्रेजी में 'इमेज' कहा जाता है। उसका उपयोग छाया, प्रति छाया, अनुकृति आदि के रूप में होता है। बिम्ब वह चेतन स्मृतियां है जो विचारों की मौलिक उत्तेजना के प्रभाव में उस विचार को सम्पूर्ण या अंशिका रूप में प्रस्तुत करती है जिसके माध्यम से भावों को अभिव्यक्ति मिलती है। दूसरी ओर रचना को पढ़कर पाठक के मस्तिष्क में बनने वाले चित्र भी बिम्ब कहलाते हैं। प्रस्तुत कहानी में बिम्बात्मक शिल्प का प्रयोग हुआ है। महेस पार्वती को मेम से कम नहीं मानता है और जब पार्वती हंसती है तो उसके सफेद दांतों को देख महेस की आंखों के आगे जो बिम्ब बनता है उसका वर्णन रचनाकार ने इस प्रकार किया है, "और हंसती पार्वती के उजले दांतों को देखकर उसका मन खिल गया। पार्वती के दांत ठीक वैसे ही थे, जैसे उसने कभी देखे थे, हंस के पंखों की तरह धुले हुए। तथा पर्वतों से आए मेहमान पक्षियों के सफेद और सेमल की रूई से सजीले पंख और पार्वती के सफेद दांत।''

पार्वती की मृत्यु के समय उसके नीले पड़ चुके शरीर में भी महेस को चांदनी में दिखाई देने वाली पार्वती दिखाई देती है। जैसे– "और महेस को पार्वती का हलका नीलापन लिए शरीर ठीक वैसा ही लगा था, जैसा कि उस दिन चांदनी में उसने देखा था।"

महेस पक्षियों से प्रेम करता है जब सैलानी पक्षियों का शिकार करते है और मरे हुए पक्षियों को उठाकर ले जाते हुए महेस देखता है तो महेस की आँखों के आगे पार्वती के शव का दृश्य घूम जाता है और वह सोचता है– "ये सवनहंस अब आए है, चार–पांच महीने रहकर पार्वती की तरह चले जाएंगे, या फिर किसी शिकारी का शिकार हो जाएंगे, जैसे पार्वती हो गई। इनके धूसर पंख खून की लकीरों से रंग जाएंगे, और इनके परों को पकड़कर शिकारी ऐसे लटका ले जाएगा जैसे मुर्दा पार्वती को अस्पताल के भंगी पलंग से उठाकर उसे सूने बरामदे में ले जाए थे।"

इस प्रकार सफल बिम्ब योजना के माध्यम से यह कहानी और भी प्रभावशाली बन पाई। कहानी का शीर्षक 'नीली झील' भी बिम्बात्मक शीर्षक है जैसे ''गौर से देखने पर ऊँचे–ऊँचे पेड़ों के बीच में से एक बहुत बड़ा शीशा झलकता दिखाई पड़ता है।'' तथा ''कित्ती खूबसूरत है मेम! इसकी आँखें नीली झील की तरह लगती हैं'' इस प्रकार नीली झील, नीली आँखें और नीली साड़ी वाली औरत इन सभी का वर्णन उस झील की भव्यता, सुन्दरता और स्वच्छता की ओर संकेत करता है।

अतः शैल्पिक दृष्टि में 'नीली–झील' कहानी की संरचना में मनोविश्लेषणात्मक और बिम्बात्मक शिल्प से सुसज्जित कहानी के विभिन्न प्रसंगों का काव्यात्मक वर्णन है।

15.4 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. पहचान की समस्या किस कहानी का मूल स्वर है?

   ....

   ....

   ....

2. राजा निरबंसिया कहानी पहली बार किस पत्रिका में कब प्रकाशित हुई?

   ....

   ....

   ....

3. मुहर्रिर की नौकरी कौन करता है?

   ....

   ....

   ....

4. निर्मला किस कहानी की पात्र है?

   ....

   ....

   ....

5. लक्ष्मीनारायण लाल के पात्रों के सम्बन्ध में क्या विचार हैं?

....

....

....

6. चंदा के व्यक्तित्व की विशेषताएं अपने शब्दों में लिखिए।

....

....

....

15.5 वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. काव्यात्मक शिल्प का प्रयोग किस कहानी में हुआ है?

....

....

....

2. शिल्प का अर्थ और परिभाषा लिखें।

....

....

....

3. लेखक प्रतीकात्मक शिल्प का प्रयोग क्यों और कब करता है?

....

....

....

4. महेस पांडे का जीवन परिचय अपने शब्दों में दीजिए।

....

....

....

5. जगपती की पश्चाताप भावना पर प्रकाश डालिए।

....

....

....

6. कमलेश्वर की किस कहानी का पात्र आत्महत्या कर लेता है?

....

....

....

7. किसी होर ने लए होणगे चार आने.... असीं ते छे आने तों घट नहीं लैंदे बादशाहो... किस कहानी की पंक्तियां हैं?

....

....

....

15.6 संदर्भ पुस्तकें

1. कमलेश्वर, मेरी प्रिय कहानियां, दिल्ली : राजपाल एण्ड सन्ज़, 1972.

2. सूर्यनारायण मा. रणसुभे, कहानीकार कमलेश्वर संदर्भ और प्रकृति, जयपुर : पंचशील प्रकाशन, 1977.

*****

नयी कहानीकार में कृष्णा सोबती

16.0 रूपरेखा

16.1 उद्देश्य

16.2 प्रस्तावना

16.3 महिला कहानीकारों में कृष्णा सोबती का स्थान

16.4 सारांश

16.5 कठिन शब्द

16.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

16.7 पठनीय पुस्तकें

16.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप जानेंगे –

- नयी कहानी में महिला कथाकारों की कौन सी पीढ़ी उभर कर आई।
- महिला कथा लेखन को समुचित मूल्यांकन और मान–प्रतिष्ठा प्राप्त होने लगी थी।
- नयी कहानी की कथाकारों ने अपनी कहानियों में स्त्री–पुरुष सम्बन्धों का नज़रिया पूरी तरह बदल दिया।

- नयी कहानी में पुरूष और महिला दोनों कोटियों के कवियों के कथाकारों ने नारी के प्रति अपने बदले दृष्टिकोण का परिचय दिया।

16.2 प्रस्तावना

हिन्दी महिला लेखन एक व्यापक व्यक्ति चेतना और सामाजिक चेतना के रूप में विकसित हुआ है, जिसमें मनुष्य के जीवन का साक्ष्य है। महिला लेखन में कलाकर्म की अपनी विशिष्टताएँ, विलक्षनाएँ, चुनौतियाँ, संघर्ष, अनुभव और कल्पनाएँ होती हैं, जो पुरूष संसार से भिन्न होती हैं। गुणवता व परिणाम दोनों ही दृष्टियों से हिन्दी महिला कहानीकारों का लेखन अति समृद्ध है। इसमें उनके जीवन यथार्थ के अनेक रूपों को उद्‌घाटन हुआ है।

16.3 नयी कहानीकार कृष्णा सोबती

नयी कहानी में महिला कथाकारों की नयी और ऊर्जावान पीढ़ी उभर कर आयी जिसने हिन्दी कहानी का चेहरा पूरी तरह बदल कर रख दिया। बहुत देर तक उषा प्रियंवदा की 'वापसी' को नयी कहानी की पहली कहानी के रूप में मान्यता मिलती रही। इस तथ्य से यह समझा जा सकता है कि अब से, नयी कहानी के समय से, महिला लेखन को समुचित मूल्यांकन और मान–प्रतिष्ठा प्राप्त होने लगती है। कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा (अब उषा नेल्सन), मन्नू भंडारी, शशिप्रभा शास्त्री आदि ने अपनी उपस्थिति से कहानी में नारी–चित्रण या कहें स्त्री–पुरुष सम्बंधों का नज़रिया पूरी तरह बदल दिया। इनसे पूर्व की कहानी में नारी को एक आदर्शीकृत रूप में काल्पनिकता के सहारे चित्रित किया जा रहा था। नयी कहानी में पुरुष और महिला–दोनों कोटियों के कथाकारों ने नारी के प्रति अपने बदले हुए दृष्टिकोण का परिचय दिया है। राजेन्द्र यादव नारी के प्रति इस बदले हुए दृष्टिकोण का परिचय इस रूप में देते हैं, "नारी को जिन्होंने सचमुच देवी या राक्षसी के रूप में न देख कर यथार्थ मानकर और समान सामाजिक प्राणी के रूप में देखा है, उन्हें मज़बूर होना पड़ा है कि नारी को एक सामाजिक समस्या के रूप में ही देखें–उसके इस विशिष्ट परिवेश के कारण। यही कारण है कि कथाकारों की एकाधिक पीढ़ी इस समस्या के निरूपण और निराकरण पर ही लिखती रही है। नारी होने के उसमें प्राकृतिक और शारीरिक अभिशाप को ले कर समाज को बदल डालने वाली उसकी विराट् शक्तियों, साहस या साहसहीनता को कहानियों का विषय बनाया जाता रहा है, उसकी दुर्दशा के कारणों की खोज–बीन की गयी है। इसलिए प्रेम के नाम पर अधिकांश कहानियाँ नारी सुधार, नारी–जागरण, भारतीय नारी की गरिमा या नारी की आर्थिक पराधीनता की कहानियाँ हैं"–'एक दुनियाः समानान्तर'। इसी सम्बन्ध में वे आगे कहते हैं, "कथाकार ने खुल कर स्वीकार और चित्रित किया है कि नारी और पुरुष का सम्बंध, न तो हवाई–प्रेरणा का शक्ति–स्रोत है, जहाँ सारी सामाजिक और अन्य असंगतियाँ अपने–आप मर जाती हैं, न ही किशोर जिज्ञासा का है, जहाँ नारी का अनावृत शरीर देख कर ही पुरुष आँखें मूंद लेता है या सकुचाया हुआ देखता रह जाता है। वह सम्बंध सामाजिक नीतियों को चुनौतियाँ दे कर सेक्स–संभोग के शरीरी–अशरीरी सुख का भी है, दो आत्म–निर्भर इकाइयों की समान मैत्री का भी है, शुद्ध नौकर–मालिक का भी है।" इस बदली हुई दृष्टि को कहानी में निरूपित करने का श्रेय जिन कथाकारों को है, उनमें कृष्णा सोबती का महत्वपूर्ण स्थान है। कृष्णा सोबती की 'मित्रो मरजानी' इस रूप में एक क्रांतिकारी परिवर्तन उपस्थित

कर देने वाली कहानी कही जा सकती है। बरसाती नद–नदिया–सी खुली–डुली मित्रों पंजाब की मिट्टी से उठाया गया ऐसा जीवंत चरित्र है जिसने नारी के लिए बनायी गयी कई–कई लक्ष्मण रेखाओं को एक साथ तोड़ा है। उसकी साँस–साँस को स्वतंत्रता का अहसास कराया है।

उषा प्रियंवदा अपनी 'जिंदगी और गुलाब के फूल' जैसी कहानी से भारतीय समाज में स्त्री की बदली हुई स्थिति से परिचित कराती हैं। आज़ादी के बाद वह औरत की आज़ादी का पहला–चरण था जब उसने नौकरी करना शुरू किया ही था, उसकी इस आर्थिक निर्भरता ने परिवार में भाई और बहन की स्थितियों को बदल सम्बधों के समीकरण को एक नया रूप दिया। मन्नू भंडारी की 'यही सच है', 'घुटन' जैसी कहानियों में नारी–मन को प्रथम बार इतनी ईमानदारी और प्रामाणिकता से चित्रित किया गया है। नयी कहानी–दौर की इन तीनों कहानीकारों में तुलना की दृष्टि से अपना–अपना योगदान है। आलोचना की यह शैली बहुत पुरानी पड़ चुकी है कि बताया जाए कि इन तीनों में कौन सर्वश्रेष्ठ है। कृष्णा सोबती ने अपने ढंग से नयी कहानी को जीवन–रस प्रदान किया जिसकी चर्चा आगे की जाएगी।

नयी कहानी के परवर्ती समय में विनय चौहान व शशिप्रभा शास्त्री ने भी अपनी–अपनी तरह से विभिन्न प्रकार की सामाजिक स्थितियों में नारी की बदली हुई भूमिका पर कहानी में विचार किया किन्तु इनकी कहानियों के नारी पात्र उस विद्रोह–भाव से शून्य हैं जो कृष्णा सोबती के कहानी–पात्रों में है।

समकालीन कथाकारों की पीढ़ी में यदि अकारादि क्रम से विचार करें तो अनेक महिला कहानीकार अपनी पूरी ऊर्जा के साथ कथा–क्षितिज पर उभर कर आयीं जिनमें प्रमुखता की दृष्टि से ये नाम लिए जा सकते हैं–अचला शर्मा, अनिता औलम, अलका सरावगी, आशा रानी व्होरा, इन्दु बाली, उषा किरण खान, ऋता शुक्ल, कमल कुमार, कांता सिन्हा, कुसुम अंसल, कृष्णा अग्निहोत्री, चंद्रकांता, चित्रा मुद्गल, ज्योत्सना मिलन, दीप्ति खांडेलवाल, नमिता सिंह, निरूपमा सोबती, निर्मला ठाकुर, मंजुल भगत, मणिका मोहिनी, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, मालती जोशी, सिम्मी हर्षिता, सुधा अरोड़ा, सुनीता जैन, सूर्यबाला, आदि–आदि। इन सब कथाकारों ने अपनी–अपनी तरह से कहानी को कथ्य और शिल्प स्तर पर समृद्ध किया है। किन्तु इनमें से कोई भी कहानीकार कृष्णा सोबती के कहानीकार के कद को छोटा नहीं कर सकी है। कृष्णा सोबती 1948 ई० के आस–पास से कहानी लिखना प्रारंभ करती हैं और तब से निरंतर कहानी (और उपन्यास) लिख रही हैं। उनकी 'ऐ लड़की' कहानी पिछली सदी के अंतिम दशक में आयी एक बहुचर्चित कहानी है। इस प्रकार निरंतरता में श्रेष्ठ कहानियाँ लिखते हुए कृष्णा सोबती ने न केवल महिला कहानीकारों में अपितु कहानी की समग्रता में अपना गौरवपूर्ण स्थान बना रखा है।

कृष्णा सोबती को यह गौरवपूर्ण स्थान अपनी कहानी–कला के किन विशिष्ट गुणों और प्रवृत्तियों के कारण प्राप्त है, उन पर विचार करना समीचीन होगा। सर्वप्रथम पाठक का ध्यान उनकी कहानियों में एक खास तरह के खुलेपन की ओर जाता है। प्रेम, काम, यौन की इच्छाएँ क्या पुरुष में ही हो सकती हैं, नारी क्या इनसे पूर्ण असंतुष्ट रह सकती है या रह जाती है–ऐसे अनेक प्रश्नों की गुंजलकें कृष्णा सोबती की कहानियों में विश्लेषित हुई हैं। उन्होंने प्रथम बार अपनी स्त्री–पात्रों को यह अहसास कराया कि वे भी हाड़–मांस की बनी मानवी हैं। बल्कि अपनी साहसिकता में कहीं–कहीं ये नारियाँ पुरुषों को भी पछाड़ती हैं। उनकी 'मित्रो मरजानी– की मित्रो अपनी दृष्टि के इसी खुलेपन का परिचय देती हुई जीवन जीती है। इसी प्रकार 'कुछ नहीं–कोई नहीं' की शिवा प्रथम बार इस प्रश्न को उठाती हैं कि प्रेमी आनंद से सब कुछ पा कर भी उसकी पारिवारिक स्थिति क्या है, वह पत्नी का गौरवपूर्ण पद प्राप्त नहीं कर

सकती,वह तो एक रखैल–सी बन कर रह जाती है। अंतिम समय में प्रेमी आनंद अपने बच्चों से ही जुड़ना चाहता है और बच्चे उसके अस्तित्व को नकार कर किसी प्रकार अपने पिता से जुड़ते हैं, यह सब उसे (शिवा को) और छोटा बना देता है। इस कहानी का एक दूसरा पक्ष यह भी है कि इस कहानी में पहली बार स्त्री यह स्वीकार करती है कि इस प्रकार घर की मर्यादा को लाँघ प्रेमी के आश्रय में चले आना उसकी एक बड़ी भूल थी। उसे अपनी यह नियति ज्ञान नहीं थी कि एक दिन उसे अपने इस पूर्व पति को ही सब कुछ बताते हुए अपने मन की वास्तविक स्थिति को खोलना पड़ेगा। उसे समझ में नहीं आता है कि "तुम्हारे संग घर बसा ही लिया था तो इस घर में मैं क्या लेने आ गयी थी।" उसे अपने उन पलों को ध्यान आता है जिनमें वह पति द्वारा प्रेमी की बांहों में पकड़ी गयी थी, फिर उसके बाद स्वयं पति ने प्रेमी आनंद को बुला उसे प्रेम के रास्ते पर आगे बढ़ने के लिए धकेल दिया। इस प्रकार नारी का यह बँटा मन और इसे स्वीकारने की ईमानदारी इससे पूर्व किसी और कहानीकार द्वारा चित्रित नहीं हो सकी है। इस कहानी में स्त्री–मन को समझने की जितनी ईमानदारी है, अपनी गलतियों की स्वीकृति और उनका तीव्र अहसास है, वह शिवा के चरित्र को बहुत ऊँचा उठा देता है। वह मुक्त मन स्वीकार करती है कि "मुझे तुम्हारे और अपने घर की पहचान करने में बहुत देर हो गयी।" जो क्षण कभी लौट कर नहीं आते उनके प्रति कितना ममत्व नारीमन में उठता है, "आज मैं किस–किसको रोती हूँ रूप, यह तुमसे क्या कहूँ ! जो कुछ भी याद हो आता है, मन को बरसाता है। सर्दियों की वे धुपाती दुपहरें आँखों में उतर आती हैं, जब द्वार पर खड़ी–खड़ी मैं तुम्हारे आने की बाट जोहा करती थी। प्रतीक्षा में बार–बार द्वार पर जाती, बरामदे में बिछे कालीन की गरमाई तलवों को छूती तो कुछ ऐसा लगता कि कहीं कोई दुराव नहीं, कमी नहीं। कुछ सगा है तो अपना है। रूप, लिखते–लिखते हाथ रूक आया था। उन दिनों वाले अपनेपन को खो कर किसी और को अपना कहने की साख मेरे भाग में फिर कभी नहीं आयी।" शायद ही हिंन्दी कहानी की किसी और स्त्री–पात्र ने इस प्रकार पीछे लौटकर, अतीत में झाँकते हुए अपने सम्बंधों का पुनर्विश्लेषण किया हो। वस्तुतः कृष्णा सोबती की इस कहानी की ओर हिन्दी समीक्षकों का ध्यान कम ही गया। साथ ही 'ऐ लड़की' जैसी चर्चित कहानी की जो चर्चा की गयी है, उसमें भी दृष्टि का खुलापन यह प्रमाणित करता है कि कृष्णा सोबती की कहानियों में नारी–पुरुष सम्बंधों का विश्लेषण एक विशेष धरातल पर बहुत ही खुली दृष्टि से किया गया है।

बहुत गहरे डूब कर अपने परिवेश का भी जीवंत चित्रण करना सोबती की कहानियों की बहुत बड़ी विशेषता है। वे पंजाब के उस अंचल की पली बढ़ी हैं जो अब पाकिस्तान का हिस्सा है। कृष्णा सोबती की कहानियों में वह पंजाब अपनी पूरी सभ्यता और संस्कृति में मौजूद रहता है। वहाँ की बोली–बानी, वेशभूषा और पूरा भूगोल–इतिहास इन कहानियों में बार–बार झाँक पड़ता है। इसकी सबसे बेहतरीन मिसाल उनकी 'सिक्का बदल गया' कहनी है। इस कहानी के प्रारम्भ में ही 'चनाब' (चिनाब) और उसके पास दूर–दूर तक फैले शाहनी के खेत खड़े लहलहा रहे हैं। चनाब जिस तरह वहाँ के निवासियों की जीवन–रेखा सी है, पचास वर्षों से वहाँ प्रातः स्नान करती शाहनी उससे अपने मोह–ममत्व का परिचय देती है। उसकी हवेली, उस हवेली के चारों ओर आ जुटी 'परजा'–ये सब उस वातावरण को साक्षात् प्रस्तुत कर रहे हैं। इसी प्रकार 'बदली बरस गयी', 'गुलाब–जल गंडेरिया', 'टीलो ही टीलो', 'अभी उसी दिन ही तो', 'जिगरा की बात' आदि कहानियों में पंजाब और पंजाबियत का यह चित्रण देखा जा सकता है। 'जिगरा की बात' कहानी से पंजाब के देहात का परिचय इस रूप में मिलता है, "दुपहर ढलने को आयी, कुएँ पर बैलों की जोड़ी बदल गयी। झाड़ियों पर पड़े सूखते कपड़ों से धूप की परछाई उतर गयी, अमरी ने हाथ का साफ़ा निचोड़ा और नीचे फैला दिये। खेतों की हरियाली फागुन की हवाओं में डोल रही थी। ......गाढ़े की चद्दर, चारखाना तहबंद, कमाल जुलाहे का बुना धारीदार

खेस और सरदारे का लंबा चौड़ा कुरता। कुरते के सल निकालते अमरो मन ही मन मुस्करायी। मालिक नज़र सीधी रखे, शेरों सी देह है। ..... कभी साफ़–सुथरा साफ़ा बाँध हाथ–भर का शमला छोड़ सरदारा गाँव में निकलता है तो दुश्मनों के दिल पर बीत जाती है।" कहना न होगा कि पंजाब के जट्ट–पुत्तर का यह मुँह बोलता चित्र है।

भाषा–स्तर पर भी कृष्णा सोबती की कहानियाँ अपनी अलग पहचान रखती हैं। यदि प्रसंग में आवश्यक हुआ तो उन्होंने अपने पात्रों से मर्दाना गालियों का खुल्लम–खुल्ला प्रयोग कराया है जिसके लिए उनकी देर तक अलोचना भी होती रही किन्तु इतना स्पष्ट है कि इन्होंने हिन्दी गद्य को भी उसके छुई–मुई स्वभाव से मुक्त कर एक विशेष प्रकार की साफ़गोई और ज़िंदादिली दी। उनके द्वारा प्रयुक्त गालियों के उदाहरण तो 'बादलों कें घेरे' की कहानियों में नहीं मिलते किन्तु उनके संवादों की जीवंतता और चुटीलापन यहाँ भी दर्शनीय है। 'जिगरा की बात' में ही थानेदार की अमरो जिस प्रकार डाँट लगाती है (वह भी आज़ादी मिलने के समय के आस–पास, कहानी 1952 ई० में लिखी गयी), वह भी पंजाबी जिगरे की ही बात है। यह कद्दावर जाटनी ही थानेदार से कहने की ज़ुर्रत कर सकती थी, "अरे, यह दाँत दिखाना अपनी माँ से। मैं सरदारे की माँ हूँ, सरदारे की, समझे?" खुले आम डंके की चोट थानेदार को दी गयी यह चुनौती कोई सामान्य बात नहीं, वह कृष्णा सोबती की अमरो ही दे सकती थी। अपने इन गुणों के कारण–कृष्णा सोबती भाषा में एक नयी किस्म की दबंगई ले कर आती हैं। स्वेदश दीपक ने अपने हाल के संस्मरणात्मक कथा कोलाज़ों में कृष्णा सोबती को उचित ही 'भाषा की सुलतान' कहा है। 'भाषा को दी गयी यह दबंगई उनके अपने व्यक्तित्व का प्रतिफलन है, वे स्वयं भी एक दबंग व्यक्तित्व की स्वामिनी कथाकार है। अपने इसी स्वभाव के कारण यदि उन्हें किसी बड़े राजनेता के ग़लत काम पर भी टिप्पणी करनी है, तो वे निधड़क कर देंगी। पंडित नेहरू सरीखे बड़े नेता के स्वागत में खड़े बच्चों को देख कर उनकी दुर्गति पर उनका मन खिन्न हो उठता है और वे अपनी प्रतिक्रिया कहानी में इस रूप में व्यक्त करती हैं, "सुना कि नेहरू आने वाले हैं। एक ओर सड़क के किनारे बीस–बीस बच्चे बैठे थे। मैले–कुचैले गर्म कपड़ों में गोरे–गोरे रंग वाले, पहाड़ों से घिरी सड़क पर न जाने क्यों मुझे वे बेजान पुतलों की तरह लगे। आँखों में बचपन की चंचलता नहीं थी, बैठने के ढंग में पास खड़े अध्यापक का अनुशासन नहीं था, जड़ता थी। पहाड़ों के मौन आँचल में लगी रहने वाल चलती–फिरती बेरंग परछाईयों का झुंड का झुंड जैसे धरती पर छा गया था। देखकर लगा कि कार के गुज़रते ही किसी के संकेत पर ये जयजयकार करेंगे, कार की रफ़्तार में लिपटी एक मुस्कान बिखरते–बिखरते आगे बढ़ जायेगी। और फिर पहाड़ों पर शाम हो जायेगी, अंधेरा बढ़ जायेगा। गाय–बकरियों के झुण्ड की तरह अलग–अलग पगडंडियों से ये बच्चे अपने–अपने घरों की ओर लौट जायेंगे।" इन सबके बीच कार का गुज़रना नेहरू जैसे बड़े नेता पर फूलों का बरसना और बच्चों का इसी तरह उनके आगे–आगे बिछते जाना, कहानीकार को व्यथित करता है और वह उस पर अपनी बेबाक टिप्पणी करती है–(प्र० कहानी 'पहाड़ों के साये तले')।

16.4 सारांश

कहानियों से अलग कृष्णा सोबती ने उपन्यास–रचना द्वारा भी हिन्दी कथा–साहित्य में अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है। एक के बाद एक श्रेष्ठ उपन्यास दे कर अपने को निरंतर चर्चा में बनाए रखना भी एक बड़ी उपलब्धि कही जायेगी। 'ज़िंदगीनामा', 'सूरजमुखी अंधेरे के', 'दिलो दानिश' तथा 'समय सरगम' जैसे उपन्यास और अब 'गुजरात से गुजरात' का धारावाहिक प्रकाशन सूचित करता है कि वे निरंतर सृजनरत हैं। इसी प्रकार कहानी में भी उनकी निरंतरता बनी हुई है किसी भी वरिष्ठ लेखक–लेखिका के लिए यह बहुत बड़ी उपलब्धि है कि वे लगातार श्रेष्ठ कृतियों से माँ

सरस्वती के भंडार को भरती रहें। इस प्रकार महिला कहानियों में कृष्णा सोबती अत्यंत महत्वपूर्ण और विशिष्ट स्थान की अधिकारिणी हैं।

16.5 कठिन शब्द

(1) अधिकारिणी

(2) निरतंरता

(3) उपलब्धि

(4) व्यथित

(5) विशिष्ट

(6) बेबाक

(7) महत्वपूर्ण

(8) प्रयुक्त

(9) विश्लेषण

16.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. महिला कलाकारों में कृष्णा सोबती का स्थान निर्धारित करें।

2. नयी कहानी की परम्परा में महिला कथाकारों की क्या भूमिका रही है, टिप्पणी करें।

2. उपन्यासों से अलग कृष्णा सोबती ने कहानी के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण स्थान बनाया है, स्पष्ट कीजिए।

16.7 पठनीय पुस्तकें

1. बादलों के घेरे – कृष्णा सोबती
2. नयी कहानी : संदर्भ और प्रकृति – डॉ० देवी शंकर अवस्थी
3. हिन्दी कहानी में जैविक मूल्य – डॉ० रमेश चन्द्र लवानिया
4. हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान – डॉ० रघुवर दयाल वार्ष्णेय
5. स्वातंत्र्योत्तर कथा लेखिकाएँ – डॉ० उर्मिला गुप्ता
6. साठोत्तर महिला कहानीकार – डॉ० मधु संधु
7. वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन – डॉ० साधना अग्रवाल
8. हिन्दी कहानी आठवां दशक – सरबजीत
9. नयी कहानी विघटन और विसंगति – डॉ० रामकली सराफ
10. हिन्दी कहानी प्रक्रिया और पाठ – सुरेन्द्र चौधरी
11. समकालीन हिन्दी कहानी में पीढ़ियों का अन्तराल – डॉ० सरजू प्रसाद मिश्र
12. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी – विकास और मूल्यांकन – डॉ० सोमनाथ कौल

******

निर्धारित कहानियों पर आधारित मूल संवेदना

17.0 रूपरेखा

17.1 उद्देश्य

17.2 प्रस्तावना

17.3 निर्धारित कहानियों पर आधारित मूल संवेदना

17.4 सारांश

17.5 कठिन शब्द

17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

17.7 पठनीय पुस्तकें

17 .1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप जानेंगे –

- कृष्णा सोबती की कहानियों की मूल संवेदना क्या है।
- कृष्णा सोबती की कहानियों में मानवीय सम्बन्धों के बदलते स्वरूप का चित्रण हुआ है।
- देश विभाजन की त्रासद स्थितियों में मानवीय परिवेश और उसकी पीड़ा से अवगत होंगे।

17.2 प्रस्तावना

संवेदना शब्द 'सम्' उपसर्ग 'विद्' धातु से बना है जिसका अर्थ है– समान भाव से, बराबरी से जानना या महसूस किया जाना। संवेदना मूलतः मनोविज्ञान का शब्द है इसकी अनुभूति आन्तरिक होती है। यह ज्ञान–प्राप्ति की प्रथम सीढ़ी है, जिसमें स्वयं और पर दोनों की समान अनुभूति अर्थात् दूसरे के सुख में सुख तथा दुःख में दुःख का अनुभव करना ही संवेदना है। जो व्यक्ति जितना सहृदय होगा, उसमें संवेदना का जागरण उतनी ही प्रबलता से होगा। यह मानव की मानवीयता अथवा मनुष्यता को जागृत और परिष्कृत करती है।

रचना की मूल संवेदना सहृदय पाठक को रचनाकार की अभिव्यक्ति के मूल उद्देश्य से तदाकार करती है और वह पात्र, स्थिति तथा घटना के प्रति संवेदित होता है। वास्तव में संवेदना ऐसा भाव अथवा हृदय–संवाद है जिसमें हम रचनाकार के भाव से जुड़ते, भाँपते अथवा परखते हैं।

17.3 निर्धारित कहानियों पर आधारित मूल संवेदना

'बादलों के घेरे' कृष्णा सोबती द्वारा रचित कहानी संग्रह 1980 में प्रकाशित हुआ था। इसमें कुल चौबीस कहानियाँ हैं और सभी कहानियाँ सुख–दुःख के भावों से ऐसी ओत–प्रोत हैं कि पाठक की संवेदना कहीं न कहीं रचनाकार के साथ जाकर तदाकार हो जाती हैं यही इस रचना का वैशिष्टय भी हैं और उद्देश्य भी। पाठ्यक्रम में निम्नलिखित कहानियाँ हैं जिनकी मूल संवेदना पर आगे विचार किया जा रहा है–

2. दादी अम्मा
3. बदली बरस गयी
4. कुछ नहीं–कोई नहीं
5. सिक्का बदल गया

दादी अम्मा

कृष्णा सोबती द्वारा लिखित 'दादी अम्मा' कहानी एक पारिवारिक कथा है, जिसमें तीन पीढ़ियों सास, बहू तथा पोता बहुएं एक साथ रहती हैं। नई पीढ़ी द्वारा पुरानी पीढ़ी की उपेक्षा इसके केन्द्र में है। रचनाकार ने पुरानी पीढ़ी और नयी पीढ़ी की विचारधारा के अंतराल से उत्पन्न दुष्परिणामों से पाठकों को सजग करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत कहानी की मूल संवेदना को निम्नलिखित शीर्षकों द्वारा देखा जा सकता है।

1. बुजुर्गों की उपेक्षा–

बुजुर्गों के साथ हो रहा उपेक्षणीय व्यवहार इस कहानी का मूल स्वर है। वर्तमान समय की सबसे बड़ी त्रासदी बुजुर्गों की उपेक्षा है। भारतीय संस्कृति में बुजुर्गों को मान–सम्मान दिया जाता है एवं परिवार की नींव माना जाता है। लेकिन आधुनिक समय में सांस्कृतिक मूल्यों के विघटन एवं जीवन शैली में वैज्ञानिकता के पदार्पण से होने वाला परिवर्तन

अतः प्रोद्यौगिकीकरण, पाश्चात्यकरण एवं आधुनिकीकरण के कारण बुजुर्गों का परिवार में मान–सम्मान यथा सम्भव समाप्त होता जा रहा है।

कहानीकार ने 'दादी अम्मा' कहानी द्वारा इसी अनुभूति को अपनी रचना के माध्यम से व्यक्त किया है। दादी मां भरे–फूले परिवार की सबसे बड़ी सदस्य होते हुए भी अपने आपको अकेला महसूस करती है। वह अपने बेटे, बहू, पोते, पतोहू से मान–सम्मान तथा स्नेह की अपेक्षा करती है। लेकिन परिवार द्वारा उसकी भावनाओं की अवहेलना की जाती है जिससे उसका मन आहत होता है। दादी अम्मा के बेटे के पास इतना भी समय नहीं है कि वह माँ के पास दो वक्त दस मिनट के लिए भी बैठ सके। दादी एक बार जब कमरे के बाहर से गुज़रते हुए बेटे का दरवाज़ा खुला देखती है तो बोल पड़ती है– **"जिस बेटे को मैंने अपना दूध पिलाकर पाला, आज उसे देखे मुझे महीनों बीत जाते हैं, उससे इतना नहीं हो पाता कि बूढ़ी अम्मा की सुधि ले।"**

इसी तरह कहानी में भी बताया गया है कि वर्तमान युग में संस्कार नवयुवा पीढ़ी से लुप्त होते जा रहे हैं। आज उपेक्षित माता–पिता इसी प्रकार अपनी संतान को कोसते रहते हैं पर बहुत से आधुनिक युवा बुजुर्गों को त्यागकर केवल अपने जीवन में व्यस्त रहते हैं।

2. नयी पीढ़ी के साथ पुरानी पीढ़ी का सामंजस्य न बैठना–

आधुनिक युग में युवा पीढ़ी और पुरानी पीढ़ी की विचारधारा के बीच अन्तराल और संघर्ष देखने को मिल रहा है। हमारे युवा जहां नवीनता के पक्षधर है तो वहीं बुजुर्ग प्राचीनता के पुरातन एवं नवीन जीवन मूल्य एक प्रकार से दो धुव्र हैं जो कभी मेल नहीं खाते। कुछ इसी तरह बिखरते मूल्य इस कहानी में देखने को मिलते हैं। दादी अम्मा जहां प्राचीन परम्परा और रीति–रिवाजों को साथ लेकर चलती है तो दूसरी तरफ उसके बेटा–बहू तथा उनकी संतान आधुनिक मूल्यों को साथ लेकर चलते हैं। इन दोनों विचारधाराओं के चलते दोनों पीढ़ियों के विचारों में अंतराल आ जाता है। दादी अम्मा के पुराने विचारों के चलते उनकी पोती और बहू उन्हें गहने दिखाने से मना कर देती है कहती है कि **"माँ ! अम्मा को दिखाने जाती हो, वह तो कहेगी, यह गले का गहना हाथ लगाते उड़ता है। कोई भारी ठोस कण्ठा बनाओ। मेरे अपने ब्याह में मायके से पचास तोले का रानीहार चढ़ा था।"**

उनका विचार है कि पुरानी बातें पुराने दिनों के साथ चली जाती हैं। लेकिन दादी अम्मा अपनी पुरानी परम्परा अभी भी साथ लेकर जी रही है। जब दादी ने पोते की बहू का श्रृंगार देखा तो बोल उठी, "लड़कियों में यह कैसा चलन है आजकल? बहू के हाथों और पैरों में मेहंदी नहीं रचायी। यही तो पहला सगुन है।" पर मेहराँ उसके विचारों को अनसुना कर देती है क्योंकि वह संतान की आधुनिकता का साथ देती है।

3. वृद्धों को उनकी गलतियों से परिचित करवाना–

परिवार व्यक्तियों का समूह होता है जिसमें प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के सुख–दुःख का भागीदार होता है लेकिन जब परिवार के सदस्य ही एक दूसरे की भावनाओं को न समझकर एक दूसरे को नज़र अन्दाज़ करते हैं, तब उस परिवार का अस्तित्व ही खत्म हो जाता है।

इस कहानी में दादी अम्मा का दादा से किसी न किसी बात पर लड़ाई–झगड़ा कर, मेहराँ को खरी–खोट्टी सुनाना, बेटा और पोतों द्वारा देखकर भी अनेदखा करने पर उन्हें डांटते रहना पारिवारिक कलह का कारण बनता है। यदि वह अपने बेटे को डांटती है तो ये सब देखकर मेहराँ कहती है **"अम्मा कुछ तो सोचो, लड़का बहू–बेटों वाला है। तो क्या उस पर तुम इस तरह बरसती रहेगी ?"** अम्मा मेहराँ को बात–बात पर डांटती रहती है तो मेहराँ कहती है– ''**मान की बात करती हो अम्मा। आये दिन छोटी–मोटी बात लेकर जलने–कलपने से किसी का मान नहीं रहता।**'' इस तरह से बहु सास को समझाने का प्रयास करती है।

इस प्रकार इस कहानी के द्वारा तीन पीढ़ियों की विचारधारा के अंतराल को दिखाया गया है– अम्मा, मेहराँ और उसकी बहुएं। जब अम्मा और बहू की विचारधारा में तालमेल नहीं बैठ पाता तो तीसरी पीढ़ी की सोच में अंतर बैठना स्वाभाविक हो जाता है। इस पीढ़ीगत अंतराल को हम तभी खत्म कर सकते हैं, जब हम दूसरों को सम्मान देंगे, उन्हें प्रेम करेंगे तथा उनकी भावनाओं को समझेंगे। सभी को समय और परिस्थितियों के अनुरूप एक दूसरे के अनुसार अपने स्वभाव में परिवर्तन लाना चाहिए। जिस प्रकार जल के निरंतर प्रवाह से चलते रहने पर उसमें स्वच्छता और गतिशीलता बनी रहती है उसी प्रकार समय के परिवर्तन के साथ–साथ व्यक्ति की विचारधारा में परिवर्तन होते रहना चाहिए ताकि नयी और पुरानी पीढ़ी में प्रेम और सम्मान बना रहे। यही इस कहानी की मूल संवेदना है।

बदली बरस गई

'बदली बरस गई' कहानी में मुख्य पात्र कल्याणी है। कल्याणी की माँ गौरी एक विधवा औरत है और उसके पति की मृत्यु के बाद सास के कटु व्यवहार से तंग आकर गौरी साध्वी बन जाती है। अतः कल्याणी को लेकर आश्रम में महाराज की शरण में चली जाती है जब गौरी आश्रम में जाती है। तो उसके लम्बे बाल काट दिए जाते हैं और पहनने को एक धोती दी जाती है। कल्याणी अभी बालावस्था में ही थी जब उसकी माँ उसे आश्रम में ले आई लेकिन जैसे–जैसे कल्याणी की उम्र बढ़ती जाती है शारीरिक विकास के साथ–साथ उसके मन की जिज्ञासाएँ बढ़ने लगती हैं कल्याणी ने जो बचपन में थोड़ी–बहुत बाहर की दुनिया देखी थी उसके प्रति आकर्षण बढ़ता जाता है और वह एक दिन अपनी साध्वी माँ से कहती है कि उसे आश्रम में नहीं रहना तो साध्वी उसे बाहर जाने की आज्ञा न देकर महाराज के कक्ष की सफाई का कार्य सौंप देती है, अतः उपवास और भजन द्वारा अपने मन को शान्त करने का उपाए बताती है। इन कार्यों को करते हुए भी जब उसका मन नहीं लगता वह माँ से कहती है–

"साध्वी माँ, आश्रम में मन नहीं लगता

''उपवास करो।''

क्या होगा उपवास कर

''शान्ति मिलेगी।''

''नहीं, साध्वी माँ'' कल्याणी ने प्रतिवाद करना चाहा।

"इसे भजन में लगाओ।"

कल्याणी पर गौरी साध्वी के उपदेश का कोई प्रभाव नहीं होता और वह समय पाकर महाराज के समक्ष अपनी बात रखती है। महाराज कल्याणी की बातों को शान्ति से सुनते हैं और उसे आश्रम से जाने की अनुमति दे देते हैं। उस समय कल्याणी अपनी माँ से कहती है कि अब वह अपना घर बसाएगी। प्रस्तुत कहानी की मूल संवेदना को हम निम्नलिखित शीर्षकों में देख सकते हैं–

1. विधवा के प्रति परिवारजनों का उपेक्षणीय व्यवहार–

गौरी के विधवा हो जाने पर उसका परिवार उसकी इच्छाओं एवं उसके अस्तित्व का मान न रखकर उसकी उपेक्षा करता है। उसकी सास एवं जेठानी उसे कटु वचनों से प्रताड़ित करती है। उनके उलाहनों से तंग आकर वह घर छोड़ने का ही निर्णय कर लेती है और अपने घर–परिवार से कटकर साध्वी बन जाती है। उसकी सास बहू को तो जाने ही देती है पोती को संभालने का भी कोई उत्साह नहीं दिखाती।

2. बाल मनः स्थिति का चित्रण–

इस कहानी के माध्यम से कृष्णा सोबती ने उस साधारण बाल मनोविज्ञान का वर्णन किया है जिन्हें बाल्यावस्था में ही सन्यास ग्रहण करने के लिए बाध्य किया जाता है। लेकिन जो बालक समाज के नीति–नियमों, रीति–रिवाजों को ही नहीं जानता वह स्वयं को किन वासनाओं और इच्छाओं से निर्लिप्त करेगा। इसलिए होना ये चाहिए कि बालक को सही शिक्षा देते हुए उसे समाज के सभी आचारों–विचारों से गुजरने देना चाहिए। उसके पश्चात् यदि वह सन्यास लेना चाहे तो यह उसका स्वयं का निर्णय होना चाहिए। आश्रम के महाराज इस बात से परिचित थे इसीलिए वह कल्याणी को आश्रम से बाहर जाने की अनुमति दे देते हैं। इस कहानी के माध्यम से कृष्णा सोबती यह संदेश देने का प्रयास कर रही है कि बचपन में बच्चों को माता–पिता के उचित संरक्षण की आवश्कता होती है लेकिन युवावस्था में उन्हें निर्णय लेने की पूर्ण स्वतंत्रता होनी चाहिए।

3. बदलते हुए सामाजिक संदर्भ/संबंध–

इस कहानी के माध्यम से कृष्णा सोबती ने परिवर्तित हो रहे सामाजिक मूल्यों की ओर भी ध्यानाकर्षण किया है। हमारे समाज में पहले नारी रक्षा का कार्यभार पूरा समाज उठाता था जबकि इस कथा में तो परिवार भी इस दायित्व से मुक्ति की इच्छा करता है इसलिए घर की बहू को परिवार का परित्याग करना पड़ता है। उसके चले जाने के बाद भी उसके परिवार वाले यह जानने का प्रयास नहीं करते कि वह कहाँ है और किस स्थिति में है?

4. आश्रम व्यवस्था का चित्रण करना–

इस कथा के द्वारा रचनाकार ने आधुनिक युगीन आश्रम प्रणाली पर भी प्रकाश डाला है। समाज का हिस्सा होते हुए भी इनका एक अपना समाज है। गौरी जैसे परित्यक्त एवं दुखी लोगों के लिए यह आवास का काम देते हैं। आश्रमों में रहने वाले साधुओं के ठाट–बाट की ओर भी लेखिका ने संकेत किए हैं कि किस प्रकार उनके भक्त उनकी सुख सुविधाओं का ध्यान रखते हैं।

5. नारी स्वातन्त्र्य–

वास्तव में इस कहानी के माध्यम से लेखिका ने नारी स्वातन्त्र्य पर प्रकाश डाला है पहले गौरी ने विधवा हो जाने पर स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय लिया और उसने आश्रम में जीवन यापन का चयन किया और दूसरी ओर 'उसकी पुत्री कल्याणी ने इसी नारी स्वातन्त्र्य का प्रयोग करते हुए पुनः पारिवारिक जीवन जीने का चयन किया है। अतः दोनों का साहस सराहनीय एवं नारी चेतना का उदाहरण है।

इस प्रकार नारी स्वातंत्र्य की समर्थक यह कहानी गौरी और कल्याणी के निर्णयों से परिचित करवाती हुई सामाजिक–दायित्व–मुक्ति का घोषणा पत्र भी है।

सिक्का बदल गया

'सिक्का बदल गया' कहानी कृष्णा सोबती द्वारा रचित 'बादलों के घेरे' कहानी संग्रह की एक उत्कृष्ट रचना है। जुलाई, 1948 में लिखी गई इस कहानी में 1947 के देश–विभाजन के मार्मिक प्रसंगों एवं देश विभाजन की मानवीय पीड़ा का गहराई से चित्रण हुआ है। विभाजन की त्रासदी के विभिन्न पहलुओं पर प्रकाश डालना ही इस कहानी के मूल संवेदित स्वर हैं।

1. **भारत–पाक विभाजन की त्रासदी का वर्णन–** विभाजन के समय अपना देश, अपना घर–बार छोड़ने की पीड़ा से गुज़रते मानवीय छटपटाहट की अभिव्यक्ति हुई है। लेखिका ने 65–70 वर्ष की शाहनी को केन्द्र में रखकर मानवीय स्तर पर अत्यन्त हृदय विदारक घटना को आधार बनाया है। शाहनी कहानी की नायिका अविभाजित कश्मीर के समीप चिनाब नदी के किनारे बसे गाँव में बड़ी सी हवेली में अकेली रहती है। उसका बेटा कहीं बाहर है और पति की मृत्यु हो चुकी है। वह सैंकड़ों मीलों तक फैले खेतों की मालकिन है। कहानी का आरंभ तनाव की उस परिस्थिति से होता है जिसे शाहनी दरिया के तट पर महसूस करती है जहां पर वो पिछले पचास वर्षों से स्नान करती आ रही है। उसे इस बात की खबर मिल चुकी है कि विभाजन के इच्छुक आतताइयों ने रात को उसके पड़ोसी गांव (कल्लूवाल) पर धावा बोला है। वह मंत्रणा के लिए शेरे और हुसैना को बुलाती है। शेरे का पालन–पोषण उसकी मां की मृत्यु के पश्चात् शाहनी की हवेली में ही हुआ है पर वह वर्ग गत भेदभाव रखता है। शाहनी शेरे से जब कहती है कि ''आज शाह जी होते तो कुछ बीच बचाव करते।'' लेकिन अंतः वैमनस्य के कारण वह ऐसा नहीं सोच पाता क्योंकि उसे तो विभाजन करवाना ही है इसलिए वह सोचता है– ''आज शाह जी क्या, कोई भी कुछ नहीं कर सकता। यह होके रहेगा– क्यों न हो? प्रतिहिंसा की आग उसकी आँखों में उतर आई क्योंकि वह सोचता है कि हमारे ही भाई–बहनों से सूद लेकर शाह जी सोने की बोरियां तोला करते थे। पर शाहनी के उस पर एहसान हैं इसलिए वह शाहनी को सचेत करना चाहते हुए भी प्रतिहिंसा के भाव से जलता है। पास के जलालपुर गाँव में आग लगी है शेरा को इसकी पूर्व सूचना थी कि शाहनी के सारे नाते रिश्तेदार भी वहीं पर हैं। इस प्रकार शाहनी के माध्यम से लेखिका ने विभाजन के मर्मान्तक दर्द को व्यक्त किया है।

2. बदलते मानवीय संबंधों का चित्रण–

'सिक्का बदल गया' कहानी देश विभाजन की त्रासदी की मुँह बोलती तस्वीर है। विभाजन पूर्व

हिन्दू–मुस्लिम दोनों का प्रेम–सौहार्द इतना अधिक था कि लगता ही नहीं था कि यह सब इस प्रकार बदल जाएगा। पर इस राजनीतिक घटना ने सब कुछ अलग–थलग कर दिया। शाहनी जो सारे गाँव को अपना मानती है। शेरे को उसने पाल–पोस कर बड़ा किया है अतः वह उसके बेटे तुल्य है। आज वह भी विभाजन की इस आग में हाथ सेंक कर शाहनी के प्रति द्वेष भाव रखता है। **''सारा गाँव है उसकी असामियाँ हैं जिन्हें उसने अपने नाते रिश्तों से कभी कम नहीं समझा। लेकिन नहीं, आज उसका कोई नहीं, आज वह अकेली है।''** शाहनी के प्रस्थान के समय सभी बड़ी–बूढ़ियाँ चाहे रो पड़ती हैं पर इस प्रकार एक पैंसठ–सत्तर वर्ष की विधवा वृद्धा को उसके घर–बार से निकाल कर अलग कर देना हिंदू–मुस्लिम के भेदभाव को छोड़ मानवीय संबंधों की एक करूण त्रासदी है। दाऊद खां के शब्द तो उस समय शाहनी द्वारा किए गये सारे उपकारों की कृतघ्नता को एक ही पंक्ति में कह देते हैं– **''शाहनी, मन में मैल न लाना। कुछ कर सकते तो उठा न रखते! वक्त ही ऐसा है। राज पलट गया है, सिक्का बदल गया है।''**

दूसरी ओर लेखिका ने इस ओर भी संकेत किया है कि विभाजन के समय दिल दहला देने वाली घटनाओं और नृशंस हत्याओं के बाद भी कहीं न कहीं मानवीयता के दर्शन हो जाते हैं।

3. साम्प्रदायिकता के दंश का चित्रण–

प्रस्तुत कहानी में विभाजन के समय सांप्रदायिक दंगों को आधार बनाकर परस्पर हत्याओं और लूटपाट तथा आगजनी की घटनाओं का उल्लेख भी किया गया है। सांप्रदायिकता के आधार पर घटने वाली घटनाओं का प्रभाव न केवल सम्प्रदाय विशेष अपितु सम्पूर्ण मानवता पर पड़ता है। यह इस तथ्य से स्पष्ट होता है कि जब शाहनी को मालूम है कि कल रात गाँव में पड़ोसी गाँव कुल्लूवाल के लोग आए थे और कुछ लूटपाट की योजना बनी थी, जिसमें शेरा भी शामिल था। इसी सांप्रदायिकता के कारण शेरा तीस चालीस हत्याएं कर चुका है। यहां तक कि इसी भाव से ग्रसित वह शाहनी की हत्या की योजना भी बनाता है। पर शाहनी के ममत्व को याद कर वह विचलित हो जाता है।

4. अलगाव की यंत्रणा का चित्रण–

अलगाव इस कहानी के केन्द्र में है। विभाजन की त्रासदी मानवों में अलगाव पैदा करती है। कोई भी व्यक्ति जो अपनी पुश्तैनी परंपरा के साथ जुड़ा है उसे अचानक वहां से अलग कर अपरिचित जगह में भेजने के लिए विवश करना अपने–आप में एक त्रासदी है। शाहनी को यह अलगाव न केवल सांस्कृतिक स्तर पर ही उखाड़ता है बल्कि उसके जीवन के प्रमुख आर्थिक आधार को भी उससे छीन लेता है। इसलिए चलते समय जब दाऊद उसे कुछ संपत्ति साथ रखने की सलाह देता है तो वह कहती है– ''नहीं बच्चा, मुझे इस घर से'' शाहनी का गला रूँध गया– ''नकदी प्यारी नहीं। यहाँ की नकदी यहीं रहेगी। सोना चाँदी। बच्चा सब तुम लोगों के लिए है।'' अलगाव का शिकार बनी शाहनी पचास वर्ष के अत्यन्त मानवीय लगाव भरे जीवन को कुछ घंटों में ही बर्बर मानसिक हिंसा से भयंकर पीड़ा के साथ मोह मुक्त होकर झेलती है।

वास्तव में देश विभाजन की त्रासद स्थितियों के मानवीय परिवेश और उसकी पीड़ा का चित्रण करना ही इस कहानी का मूल है।

17.4 सारांश

अतः स्पष्ट है कि हिन्दी साहित्य की प्रतिष्ठित कथाकार कृष्णा सोबती नारी मन की अति कुशल चितेरी है। अपनी कहानियों में उन्होंने पात्रों के माध्यम से नारी जीवन को पूरी ईमानदारी और उनका यथार्थ रूप चित्रित किया है। 1980 में प्रकाशित कृष्णा सोबती का कहानी संग्रह 'बादलों के घेरे' प्रकाशित हुआ। इस कहानी संग्रह में प्रकाशित कहानियों को पढ़ते हुए पाठक की संवेदना कहीं न कहीं रचनाकार के साथ जाकर तादात्मय स्थापित करती है। ये कहानियाँ मानव जीवन के सुख–दुख से ओत–प्रोत हैं।

17.5 कठिन शब्द

(1) त्रासद

(2) पीड़ा

(3) संपत्ति

(4) सांस्कृतिक

(5) मानवीय सम्बन्ध

(6) मर्मान्तक

(7) साम्प्रदायिकता

(8) दंश

(9) यंत्रणा

(10) त्रासदी

(11) वैमनस्य

17.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. निर्धारित कहानियों की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए।

____

____

17.7 पठनीय पुस्तकें

1. बादलों के घेरे – कृष्णा सोबती
2. नयी कहानी : संदर्भ और प्रकृति – डॉ० देवी शंकर अवस्थी
3. हिन्दी कहानी में जैविक मूल्य – डॉ० रमेश चन्द्र लवानिया
4. हिन्दी कहानी बदलते प्रतिमान – डॉ० रघुवर दयाल वार्ष्णेय
5. स्वातंत्र्योत्तर कथा लेखिकाएँ – डॉ० उर्मिला गुप्ता
6. साठोत्तर महिला कहानीकार – डॉ० मधु संधु
7. वर्तमान हिन्दी महिला कथा लेखन और दाम्पत्य जीवन – डॉ० साधना अग्रवाल
8. हिन्दी कहानी आठवां दशक – सरबजीत
9. नयी कहानी विघटन और विसंगति – डॉ० रामकली सराफ
10. हिन्दी कहानी प्रक्रिया और पाठ – सुरेन्द्र चौधरी
11. समकालीन हिन्दी कहानी में पीढ़ियों का अन्तराल – डॉ० सरजू प्रसाद मिश्र
12. स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी कहानी – विकास और मूल्यांकन – डॉ० सोमनाथ कौल

******

निर्धारित कहानियों का शिल्प एवं चरित्र चित्रण

18.0 रूपरेखा

18.1 उद्देश्य

18.2 प्रस्तावना

18.3 कहानियों का शिल्प

18.4 चरित्र चित्रण

18.5 सारांश

18.6 कठिन शब्द

18.7 अथ्यासार्थ प्रश्न

18.8 पठनीय पुस्तकें

18.1 उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप जानेंगे –

- कहानियों में पात्रों के माध्यम से सजीवता स्वाभाविकता की अभिव्यक्ति हुई है इससे अवगत होंगे।
- विभाजन की त्रासदी में पिसती नारी की पीड़ा को जानेंगे।

18.2 प्रस्तावना

कृष्णा सोबती नयी कहानी–दौर की एक महत्वपूर्ण कथाकार हैं जिनकी कथा–शैली ने 'नयी कहानी' को एक नयी रंगत और एक खुलापन दिया। नारी ह्रदय को पूर्ण उन्मुक्त भाव से प्रकट करने में उन्होंने हिन्दी कहानी को एक नयी दिशा और महिला लेखन को एक नया मुहावरा प्रदान किया। किसी भी विधा में उसकी विषय–वस्तु उसके शिल्प और शैली का परिचालन करती हैं। वस्तुतः विषय वस्तु और शिल्प को बहुत दूर तक अलगाया भी नहीं जा सकता, केवल अध्ययन की दृष्टि से या कहें छात्रों को समझाने की दृष्टि से दोनों का पृथक्–पृथक् अध्ययन अपेक्षित है। इस विश्लेषण में शैली के साथ–साथ कहानियों के कथ्य को भी ध्यान में रखना अवश्यक होगा।

कहानी की कथावस्तु किसी भी प्रकार की क्यों न हो, वह किसी न किसी पात्र पर आधारित रहती है। कहानी में पात्रों की संख्या जितनी कम हो उतनी ही अच्छी मानी जाती है। कहानी के पात्रों में सजीवता, स्वाभाविकता की अभिव्यक्ति, मूलभाव तथा घटना के प्रति अनुकूलता रहनी चाहिए।

18.3 कहानियों का शिल्प

कृष्णा सोबती की कहानियों में एक रोमानी भाव–बोध 'बादलों के घेरे' की कहानियों में सर्वत्र दिखाई देता है। नयी कहानी में अनेक कहानीकारों में यह प्रवृत्ति देखी जा सकती है। कृष्णा सोबती अपनी इसी प्रवृत्ति से परिचलित अपनी कहानियों का प्रारंभ वातावरण–चित्रण से करती हैं। प्रकृति का चित्रण बड़ी रोमानी शैली में प्रायः सभी कहानियों के प्रारंभ में देखा जा सकता है। 'बादलों के घेरे' कहानी में भुवालों सेनेटोरियम का वातावरण चित्रित करते हुए ये शब्द देखिए–"सामने पहाड़ के रूखे हरियाले में रामगढ़ जाती हुई पगडंडी मेरी बाँह पर उभरी लम्बी नस की तरह चमकती है। पहाड़ी हवाएँ मेरी उखड़ी–उखड़ी साँस की तरह कभी तेज़, कभी हौले इस खिड़की से टकराती है।" 'दादी अम्मा' कहानी के प्रांरभ का प्रकृति–चित्रण और भी अधिक रोमानी शैली का है। बहार फिर आ गयी। बसन्त की हल्की हवाएं पतझड़ के पीले ओठों को चुपके से चूम गयीं। जाड़े के सिकुड़े–सिकुड़े पंख फड़फड़ाये और सर्दी दूर हो गयी। आँगन मे पीपल के पेड़ पर नये पात खिल–खिल आये।" 'अभी उसी दिन ही तो' कहानी का प्रांरभ भी ऐसा ही है, जाड़े में डूबी–डूबी अंधियारी साँस ! आकाश के परदे पर बादलों के बनते–मिटते चित्र फैल रहे थे–ठिठुरती हवाएँ जा–जाकर लौटती आ रही थीं, आँगन का पुराना पीपल का पेड़ खड़–खड़ा डोल रहा था।" 'दोहरी साँझ' कहानी का प्रांरभ यह है, "साँझ दोहरी होने को आयी। सूरज की डूबती–डूबती छाया ऊँचे गुम्बद पर घिर आयी। खण्डरों में खड़े पके पत्तों के पेड़ एक से खड़खड़ाते और धरती पर बिखर गये। चबूतरे पर हवा थिरकती रही। जंगले में पथरीली जाली जैसे अपनी ही कारीगरी में जकड़ी रही। मिट्टी और साँझ की छाया से लिपट–लिपट साँझ की उदासी सिबुकती रही।" इस प्रकार कुछ अन्य कहानियों में प्रकृति का चित्रण इसी रूप में देखा जा सकता है। इन चित्रों में कभी मानवीयकरण कर प्रकृति को पूर्ण जीवंत किया गया है, कहीं विरोधाभास का प्रयेग कर पात्र की मनः स्थिति का स्पष्टीकरण है तो कहीं यह प्रकृति उपमान बन जाती है। प्रकृति के इन सूक्ष्म विवरणों में एक प्रकार की काव्यात्मक संवेदना सर्वत्र विद्यमान रहती है।

कथानक के चयन में कृष्णा सोबती ने सर्वत्र एक ताज़गी का परिचय दिया है। 'नयी कहानी' में 'मित्रों मरजानी' जैसी 'बोल्ड' रचना दे कर उन्होंने पंजाब की मिट्टी से एक ऐसा जीवन पात्र हिन्दी कथा में दिया जो अपना सानी नहीं रखता। नारी के लिए बनाए गए पृथक् नैतिक मापदण्डों, मूल्यों और मान्यताओं को खुल कर चुनौती देती यह कहानी हिन्दी कहानी में नारी को पहली बार खुल कर साँस लेने की इजाज़त देती है। वह छुई–मुई भी नहीं है कि पुरुषों के साये से भी घबराए। यह नयी स्त्री–चेतना उनकी कहानियों में एक खास खूबी है। नारी को उसकी स्वतंत्रता और संपन्न व्यक्तित्व का बोध उनकी अधिकांश कहानियाँ देती है। नारी की यह 'बोल्डनेस' प्रेम, यौन और व्यक्तिगत सम्बन्धों को ले कर ही नहीं है, जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी उनकी यह दबंगई स्पष्टतः लक्षित की जा सकती है। 'सिक्का बदल गया' की शाहनी पुरखों की मान–मर्यादा की रक्षक है इसीलिए वह इतना निर्भीक और दबंग निर्णय अपने पुरखों की हवेली छोड़ते हुए लेती है कि वह अपनी रियासत के सामने किसी प्रकार भी छोटी न पड़े" जी छोटा हो रहा है, पर जिनके सामने हमेशा बड़ी बनी रही है, उनके सामने वह छोटी न होगी।" 'कुछ नहीं–कोई नहीं' की शिवा के सामने यही संकट है कि वह अपने प्रेमी आनंद के परिवार में उनके बच्चों के सामने उपेक्षिता और छोटी बन कर नहीं रहना चाहती, इस उम्र में वह घर छोड़ने का विकल्प चुनती है। वह पुरुष की उस मानसिकता को चुनौती देती है जिसके तहत वह "एक घर से निकाल तुम दूसरे घर का अधिकार नहीं देना चाहते।" वस्तुतः कृष्णा सोबती की इन कहानियों में एक नये किस्म की आधुनिक नारी अपना स्वरूप ग्रहण कर रही है।

कृष्णा सोबती की कहानियों में अतीत और व्यतीत होती नारी की व्यथा भी कथ्य को एक नया कोण देती है। उनकी कई कहानियों में वह नारी आयी है जो बहू से सास और सास से दादी मां की भूमिका में जाते–जाते किस प्रकार पीढ़ियों के अतंराल का अनुभव करती है। 'दादी अम्मा' पीढ़ियों के इस अतंराल को चित्रित करती एक सशक्त कहानी है। मेहराँ को वे दिन नहीं भूलते जब वह ब्याह के बाद इस घर में आयी थी। किस प्रकार उसे देर में संतान हुई, किस प्रकार वह बेटे बहुओं वाली हुई और फिर कैसे अपनी वृद्धावस्था को पहुँची। 'बहनें' कहानी में भी सास की पीड़ा है कि बड़ी ने कैसे–कैसे उसके सारे अधिकार अपने बना लिए हैं। इन कहानियों में स्मृति–स्मृतियों का प्रयोग कृष्णा सोबती कुशलता से करके बार–बार अपने पात्रों को अतीत में लौटा लाती है। सास का पद संकलन किसी भी बहू के लिए बड़ी उपलब्धि है, सास को उसके गौरवपूर्ण आसन से खारिज करने का सनातन सिलसिला कृष्णा सोबती की कहानियों में कुशलता से अभिव्यंजित हुआ है," नाते की बहनों ने मन–माँगे उपहार लिये, बहू को गहने–कपड़े भेंट दिये अैर बड़ी ने इतने वर्ष सास की अधिकारपूर्ण छाया के नीचे रह कर आज सास का पद संभाल लिया"– (बहनें)! ऐसे चित्रण उनकी कहानियों की खास शैली हैं, जहाँ कहीं भी अवसर मिला है, वे इस पद पर बहू के अधिकार का कथन अवश्य करती हैं। 'ऐ लड़की' कहानी तक में उनकी प्रवृत्ति देखी जा सकती है, "वह औरत क्या जो बेटे की माँ को न पछाड़ सके।" "घरवाले के तन–मन पर मिल्कियत की मोहर लगाती है औरत। उसे लगानी पड़ती है। नहीं तो उसका अपना सुख–चैन भंग" (ऐ लड़की) इस प्रकार यह जीवन–अनुभव उनकी कहानियों की एक शैली का रूप ले लेता है।

कहानी का आकार–बड़ा या छोटा कभी कृष्णा सोबती के यहाँ बाधक नहीं रहा। उन्होंने खूब लंबी कहानियाँ भी लिखीं जिन्हें लोगों ने भ्रमवश लघु उपन्यास की संज्ञा भी दी यथा–'मित्रो मरजानी' और 'ऐ लड़की' और कभी 'गुलाब

जल गंडेरिया' जैसी छोटे आकार वाली या 'डरो मत, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा जैसी मात्र बामुश्किल डेढ़ पृष्ठ की बिल्कुल छोटी–सी कहानी भी उनके यहाँ है। वस्तुतः वे कहानी में आकार की अपेक्षा तीव्र प्रभावान्विति पर बल देती हैं।

कृष्णा सोबती अपनी कहानियों में पात्रों की आकृति, वेश–भूषा, रहन–सहन का भी बहुत जीवंत चित्र प्रस्तुत करने में समर्थ हैं। "सिरहाने पर पड़ा दादा का सिर बिल्कुल सफ़ेद था। बंद आँखों से लगी झुर्रियां ही झुर्रियां थीं। एक सूखी बाँह कंबल पर सिकुड़ी–सी पड़ी थी–"'दादी अम्मा' कहानी में दादा का यह चित्र कितना प्राणवान बन उठा है। 'कलगी' में सुल्लखी के पति का यह जीवंत चित्र भी दर्शनीय है एक–एक शब्द अपने पात्र की रेखाओं–नैन– नक्शों को साक्षात् करता," मजबूत घोड़े पर बैठा सवार मखमली झोला और चमचमाता कमरबंद, कमरबंद से लटकी तलवार की सुनहली मूठ, चौड़ी छाती, अकड़े हुए कन्धे, तीखे नक्श–नैन, सिर पर केसरी साफा और लहरों–सी झलक मारती माथे पर लगी कलगी। यही तो वह बहादुर सरदार है जो क्षण–भर पहले सुल्लखी से विदा ले कर नीचे उतरा है। यही तो है सुल्लखी के सिर का धनी जिसका चौड़ा वक्ष और बलिष्ठ बाहें देख कर उसकी मीठी देह पर से तूफान गुजर जाता है।" इस प्रकार अपने पात्रों को रंग–रूप और रेखाओं से प्रस्तुत करना उनकी खास शैली है।

कृष्णा जी की कहानियों में देश–काल और वातावरण का चित्रण बहुत कुशलता से हुआ है। इस चित्रण की विशेषता यह है कि इसमें पंजाबियत, पंजाबी संस्कृति, विशेष रूप से उस भू–भाग के पंजाबियों की संस्कृति जो आज पाकिस्तान में है। इनके पात्रों की बोली–बानी, वेश–भूषा–सब से वहीं की रंगत देखने को मिलती है। वहाँ के तीज–त्योहार, शादी–ब्याह के रीति–रिवाज़, नेग–चार और अन्य लोकाचार, आभूषण आदि सभी कहानीकार की चेतना पर छाये रहते हैं, अक्सर मिलते ही वह इनकी अभिव्यक्ति सहज भाव से कर देती है। 'सिक्का बदल गया' में चिनाब में वर्षों से नहाती चली आती शाहनी है, उनका 'अम्मा वाला' कुआं है, दूर–दूर तक फैले खेत हैं, पुरखों की ऊँची हवेली है, कुल्लूवाल के जार हैं, आरेवाली कनाली के साथ हुसैना हैः 'कलगी' में सुल्लखी की कुरते पर अटकी जंजीर है, पट्ट की ओढनी है, 'गठे हुए वक्ष को उभार देने वाला' किसी अशुभ स्याही का काला पड़ गया कत्थई कुर्ता है, उसके मुखड़े पर चमकने वाली कीमती लौंग है, 'बहनें' कहानी में 'सगुणो की लाल ओढ़नी' में सजी बड़ी बहन है, बड़ी के गले में चमकता हार और झोली में सगुण के दिये रुपये हैं, और हैं विवाह की कई–कई रस्म–रीति रिवाज, "कपड़े आये और जोड़े बंटने लगे। सेहरा गूंथने वाली मालिन, नाई, धोबी, साईस, नये–पुराने नौकर सभी को कपड़े और रुपये। दूल्हे पर आशीर्वाद बरस रहें हैं और दूल्हे की माँ जात–बिरादरी के सामने सिर ऊँचा किये खड़ी है।" इस प्रकार अनेक–अनेक रूपों में यहाँ लोक–संस्कृति के दर्शन होते हैं। पंजाब के गाँवों के भोजन का दृश्य 'जिगरु की बात' कहानी में सरदारे की माँ के इस व्यवहार में देखा जा सकता है," थाली देखकर मन भर आया, कटोरी में अब भी थोड़ा सा घी शक्कर पड़ा था जाने कब बेटे को अपने हाथ से रोटी खिलायेगी।" वेश–भूषा में क्या कुछ पहना–ओढ़ा जाता है, इसका परिचय भी इसी कहानी में इस रूप में देखा जा सकता है," मालिक मेहर करें लाल पर, यह वक्त तो उसके सगुण मनाने का है। सही–सलामत घर आये बच्चा..... कल ही उसके कपड़े चीरे धुला–रंगा कर रक्खूंगी ....। (पंजाब में पगड़ियों और परनों को रंगवाने का विशेष प्रचलन है)। यहीं उसके हवा में सूखते 'लाबी साफ़ा' का परिचय मिलता है।

पंजाबियत, पंजाबी संस्कृति के इस चित्रण में कृष्णा सोबती ने अपनी भाषा–शैली का भी विशेष योग लिया है। इसलिए उनके पात्रों के संवादों में एक पंजाबी रंगत और अदा तथा अदाकारी है। इस भाषा के कुछ उदाहरणों से कथन की पुष्टि होगी–

–"आज का दिन धन्य है बेटी ! मेरी धर्म ब्याहने गया है ! भगवान की छाँह हो उस पर ! मौसियों को भी कम खुशी नहीं ! बहनों का नाता ही ऐसा होता है, बेटी !"

–"तुम्हें आग लगे चन्ना।"

–"शाहनी, मन में मैल न लाना ! कुछ कर सको तो उठा न रखते !"

–"रमन बच्ची के सिर पर हाथ रखे कहता है," नहीं–नहीं, कोई डर नहीं–तुम हमारा सगा के माफिक है.....।"

इस प्रकार वातावरण और देशकाल कृष्णा सोबती की कहानियों में भाषा के माध्यम से भी खनकता है।

कृष्णा सोबती की भाषा में एक विशेष प्रकार की ताज़गी और कविता के लय है। विशेषतः ऐसा उनकी प्रारंभिक दौर की कहानियों में हुआ है जो 'बादलों के घेरे' में संकलित हैं। काव्यात्मक बिम्ब एक रोमानी–बोध देते हुए भाषा को एक लय प्रदान करते हैं। कथन की पुष्टि में 'बादलों के घेरे' कहानी से यह अंश देखा जा सकता है," हल्की–सी हँसी.... और बाहें खुल जातीं। आँखें खुल जाती और गृहस्थी पर सुबह हो आती। फूलों की महक में नाश्ता लगता। धुले–ताजे कपड़ों में लिपट कर गृहस्थी की मालकिन अधिकार–भरे संयम से सामने बैठ–रात के सपने साकार कर देती।" प्रेम आदि का चित्रण करते यह भाषा और भी तरल हो भावों की अभिव्यक्ति में सक्षम होती है, सूक्ष्मता से मन की पर्तों को खोलती है। मंदिर सा यह वातावरण भाषा के माध्यम से ही साक्षात् हो उठता है, "बल्ब के नीले प्रकाश में दो अधखुली थकी–थकी पलकें जरा सी उठती हैं और बाँह के घेरे–तले सोये शिशु को देखकर मेरे चेहरे पर ठहर जाती हैं। जैसे कहती हों–तुम्हारे आलिंगन को तुम्हारा ही तन दे कर सजीव कर दिया है। मैं उठता हूँ, ठण्डे मस्तक को अधरों से छू कर यह सोचते–सोचते उठता हूँ कि जो प्यार तन में जगता है, तन से उपजता है, वही देह पाकर दुनिया में जी भी आता है।" इस सधी हुई भाषा के अभाव में यह पूरा प्रसंग मांसल और स्थूल हो उठता है। भाषा पर पूरा अधिकार और पकड़ मनोभावों की सूक्ष्म अभिव्यक्ति में सहायक हुआ है। पात्रों के रंग–रूप, नैन–नक्श को कागज़ पर चित्रात्मक रूप देने में भी इस भाषा का ही सहयोग रहा है। वे अपने पात्रों की इस भाषा के द्वारा हमारे सामने साक्षात कर देती हैं, यह इनकी भाषा की बहुत बड़ी शक्ति है। न गुल था, न चमन था, कहानी में नादिरा दस्तूर का यह वर्णन द्रष्टव्य है," नादिरा दस्तूर ! अधगोरी गर्दन में चमकते मोतियों का हार उसके साथ–साथ बीत गये समय की तीन–चार रेखाएँ, काले केशों में रूपहले रूखे तागों की चमक, अधमैले रंग की देह पर सफेद और गुलाबी पाउडर की तह–नादिरा दस्तूर ! बड़ी–बड़ी सुंदर आँखें। ...... और बिजली के प्रकाश में स्वच्छ शैय्या पर फैली नादिरा दस्तूर के भरे गठन के मध्य में से ऊपर उठी हुई लेस का फीता और उंगलियों में लाल नग की अंगूठी..... लाल नग की अंगूठी के साथ–साथ उंगलियों में थमा सिगरेट भी था।" पात्र का यह सारा विवरण पूरी रंग–रेखाओं में शब्दों के द्वारा ही संभव हुआ है। एक–एक शब्द चुना हुआ, 'अधगोरी' और 'अधमैले रंग' का अपना ही बिम्ब दे कर लेखिका ने अपनी भाषा की क्षमता की प्रतीति दी है। कभी–कभी यह शब्द चयन इतना पूरा और एक–एक शब्द एक चीख बन कर इस रूप में चेतना पर उभरता है कि देर तक बजता रहता है–'दो राहें: दो बांहे' कहानी के अंत में 'सब कहाँ हैं? की आवृत्ति से एक अनुगूंज पैदा की गयी है। इसी प्रकार शब्दों की चीख का अहसास देखिए–

"लौट आयी है।

अकेली ! अकेली ! अकेली !"

शब्द–चयन की ऐसी कलाकारिता कृष्णा सोबती की कहानियों में स्थान–स्थान पर देखी जा सकती है।

अपनी प्रारभिक कहानियों में कृष्णा सोबती ने पत्र–शैली का भी भरपूर प्रयोग किया है। कभी ये पत्र कहानी के बीच में आये हैं और कभी पूरी कहानी ही पत्र रूप में लिखी गयी है। 'कुछ नहीं–कोई नहीं' कहानी पूरी की पूरी अपने पूर्व पति 'रूप' को एक पत्र के रूप में कही गयी है। 'पहाड़ों के साये तले' कहानी 'सुषी' कई पत्रों के रूप में बुनी गयी है। 'दो राहें : दो बाहें' कहानी में शोभन दा को मीनल का पत्र है। इस प्रकार उन्होंने पत्र–शैली का प्रयोग किया है।

यद्यपि कृष्णा सोबती की अधिकांश कहानियों की कथा–वक्ता (नैरेटर) स्त्री ही है किन्तु एक कहानी 'बादलों के घेरे' का कथा–वक्ता–नैरेटर पुल्लिंग में अपनी बात कहता है।

पाठ्यक्रम में निर्धारित कहानियों का चरित्र–चित्र

डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल पात्रों के सम्बन्ध में कहते हैं –"पात्र अतीत, वर्तमान, भविष्य तथा स्वदेश, विदेश जहां के भी हों, उनकी सृष्टि में केवल एक शर्त होनी चाहिए, उनकी पार्थविकता और स्वाभाविकता में हमें किसी प्रकार का सन्देह न हो।''

कहानी में जिनके सम्बन्ध में कथा कही जाती है, वे कहानी के पात्र होते हैं। उनमें से मुख्य पात्र को कहानी का नायक कहते हैं। कहानी में जिस प्रकार के पात्रों को चित्रित किया गया है, उसे चरित्र–चित्रण कहते हैं। इसी में कहानी का लक्ष्य या उद्देश्य निहित रहता है।

'दादी अम्मा' कहानी में दादी अम्मा का चरित्र–चित्रण

दादी अम्मा इस कहानी की प्रमुख पात्र है। दादी अम्मा के परिवार में बेटे–बहू, तीन पोते और उनकी बहुएँ, बच्चे और पोतियां हैं। वह एक संयुक्त परिवार की बुजुर्ग महिला हैं। दादी अम्मा चूंकि अपनी जवानी के दिनों में परिवार का कुशल नेतृत्व किया करती थीं लेकिन बूढ़े हो जाने पर सारी जिम्मेदारी बहू मेहराँ संभाल लेती हैं लेकिन दादी अम्मा घर के कामों में भागीदारी चाहती हैं और बच्चों से स्नेह की अपेक्षा रखती हैं लेकिन बच्चों का इस ओर ध्यान नहीं जाता तो वह निराश रहने लगती है। उनके चरित्र की विशेषताएँ इस प्रकार हैः–

ममतामयी

दादी अम्मा ममत्व से परिपूर्ण है। वह अपने बेटे, बहू, पोता–पतोहू से बहुत प्रेम करती है। अपने बेटे के विवाह के बाद बहू–बेटे के लाड़ में उसे पति के खाने–पीने की सुधि तक न रहती थी। जब उसे पता चलता है कि उसकी बहू गर्भ से है तो वह उसे बहुत–सा प्यार देती है और बहू को काम करता देख कर दादी अम्मा बहू से कहती है "बहू, अपने को थकाओ मत, जो सहज–सहज कर सको, करो। बाकी मैं संभाल लूँगी।"

अपने बेटे को अपने परिवार और काम में इतना व्यस्त देखकर भी उसके हृदय में अपने बेटे के लिए प्रेम कम नहीं होता। ममता भरी निगाहों से वह अपने बेटे को बार–बार आशीर्वाद देती रहती थी – "जीयो बेटा, भगवान बड़ी उम्र दे।"

सम्मान की इच्छा रखने वाली

दादी अम्मा सम्मान की इच्छा रखने वाली स्त्री है। वह चाहती है कि उसका परिवार और बहू उसका सम्मान उसी तरह से करें, जिस तरह से उसने कभी अपनी सास का और उसके परिवार का किया था। लेकिन अपनी बहू द्वारा सम्मान न मिलने पर वह अपनी बहू को कहती है कि "बहू, यह सब तुम्हारे अपने सामने, आयेगा। तुमने जो मेरा जीना दूभर कर दिया है तुम्हारी तीनों बहूएँ भी तुम्हें इसी तरह समझेंगी, समझेंगी क्यों नहीं, जरूर समझेंगी।"

उपेक्षित

दादी अम्मा अपने परिवार द्वारा उपेक्षित की जाती है। उसे लगता है कि कोई उससे प्रेम और सम्मान नहीं करते। जब भी वह परिवार के किसी भी सदस्य से लड़ती तो वह अपने कमरे में आकर अपनी चारपाई पर बैठ कर सोती रहती है। उसके उपेक्षित होने के भाव निम्न पंक्तियों से मिल जाते हैं– "बुढ़ापे की उम्र भी कैसी है जीते जी मन से संग टूट जाता है कोई पूछता नहीं, जानता नहीं।" वह कोठरी में अकेली पड़ी रहती थी। जब भी दादा से बात करती तो वह सुनकर भी अनसुना कर देते थे। वह कोठरी में बैठे–बैठे दूर कमरों से बहुओं की मीठी दबी–दबी हँसी की आवाज़ सुनती रहती और लगता कि बेटे के कदमों की आवाज उसकी तरफ आते–आते रुक गई है।

परम्परावादी

दादी अम्मा पुरानी परम्परा और रीति–रिवाजों से जुड़ी हुई है। वह जब स्वयं गर्भवती हुई थी तो उसकी फूफी ने उसे अपना कमरा दे दिया और स्वयं कोठरी में रहने को चली गई थी। जब दादी माँ की बहू पेट से हुई तो उसने भी अपने फूफी की परम्परा को आगे बढ़ाया। वह भी कमरा बहू के लिए खाली कर अपने पति सहित कोठरी में रहने चली गई। अपने पुराने विचारों के कारण उसको पोता–बहू ने उसे गहने दिखाने से यह कह कर मना कर दिया कि "माँ अम्मा को दिखाने जाती हो, वह तो कहेगी, यह गले का गहना हाथ लगाते उड़ता है। कोई भारी ठोस बनवाओ। मेरे अपने ब्याह में मायके से पचास तोले का रानीहार चढ़ा था।" वह सोचती है कि पुरानी बातें पुराने दिनों के साथ चली जाती है लेकिन दादी अम्मा अपनी पुरानी परम्परा अभी भी साथ लेकर घूम रही है।

चिड़चिड़ापन

दादी माँ सदैव स्वभाव से चिड़चिड़ी नहीं थी। लेकिन जैसे–जैसे उसकी आयु बढ़ती जा रही थी उसके स्वभाव में भी अंतर आता जा रहा था। वह हमेशा घर के किसी न किसी सदस्य से लड़ती–झगड़ती रहती थी। खासकर वह अपनी बहू मेहराँ को तो बहुत खरी–खोटी सुनाती थी। उसे लगता था कि उसकी बहू उसकी एक भी बात नहीं सुनती है बल्कि आगे से बहस करती है। दादी माँ के स्वभाव में परिवर्तन का कारण उसके आस–पास की परिस्थितियाँ थीं।

जब उस का पोता अपनी दादी अम्मा से नजरें चुरा कर जा रहा था तो वह उसे रोक कर कहती है– "काम पर जा रहे हो बेटा, कभी दादा की ओर भी देख लिया करो, कब से उनका जी अच्छा नहीं। जिसके घर में भगवान के दिए बेटे–पोते हो, वह इस तरह बिना दवा–दारू पड़े रहते हैं?"

दादी अम्मा को किसी न किसी से लड़ते–झगड़ते देखकर उसकी बहू कहती है कि अम्मा तो सदैव उठते–बैठते बोलती रहती है, ऐसा करना अच्छी बात नहीं।

बदलते मूल्यों के प्रति उदासीनता

दादी माँ सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को साथ लेकर चलती है। वह चाहती है कि उसके पोते–पेतियों की शादी सामाजिक रीति–रिवाजों से की जाए। लेकिन पोते की बहू को रीति–रिवाज़ का पालन न करते देखकर वह कहती है कि, "लड़कियों में यह कैसा चलन है आजकल ? बहू के हाथों और पैरों में मेहंदी नहीं ....। यही तो पहला शगुन है"।

दादी माँ को बदलते मूल्यों को देखकर ही दुःख होता है। दादी माँ क्या सोचती है इसकी किसी को भी चिंता नहीं है।

अकेलापन

दादी माँ का इतना बड़ा परिवार होने के बावजूद उसे लगता है कि कोई उसकी परवाह नहीं करता। जिसके कारण वह अपने आप में अकेलापन महसूस करती है। कहानी में मेहराँ, मेहराँ का पति, इनके बेटे और बहुओं में से कोई भी दादी अम्मा का हाल–चाल नहीं पूछता। दादी एक बार जब राह में बेटे का कमरा खुला देखती है तो बोल पड़ती है– "जिस बेटे को मैंने अपना दूध पिलाकर पाला, आज उसे देखे मुझे महीनों बीत जाते हैं, उससे इतना नहीं हो पाता कि बूढ़ी अम्मा की सुधि ले।"

परिवर्तनशील

दादी अम्मा का हृदय परिवर्तनशील है। वह अपने आप को समय के अनुसार बदल भी लेती है क्योंकि वह अपने परिवार से बहुत प्रेम करती है। वैसे तो दादी अम्मा मेहराँ से लड़ती–झगड़ती रहती थी पर अपने अंतिम समय में बहू को रोते देख अम्मा की आंखों में भी पलभर के लिए सन्तोष झलका और मेहराँ के प्रति कड़वापन समाप्त हो गया। मेहराँ चाहती थी कि अम्मा उसकी बहूँओं को आशीर्वाद देती हुए जाए। अम्मा ने भी आंखों के झिलमिलाते पर्दे में से अपने पूरे परिवार को देखा और अपने बेटे, बहू, पोते–पतोहू को प्यार दिया। इससे हमें उसके हृदय के परिवर्तनशील होने का पता चलता है।

इसके अतिरिक्त दादी अम्मा के व्यक्तित्व से एक ऐसी महिला का बिम्ब उतरता है जो वृद्ध हो जाने से भी घर में अपना पूरा वर्चस्व बनाए रखना चाहती है पर जब उसे यह मान–सम्मान नहीं मिल पाता तो उसमें चिड़चिड़ापन तथा असुरक्षा का भाव आ जाता है और वह अकेलेपन से जूझती रहती है। वास्तव में दादी अम्मा में भारतीय नारी का वह रूप है जो जीवन के अन्तिम समय तक पारिवारिक प्रेम और समर्पण के लिए तत्पर रहती है। उसके लिए अपनी परम्पराएं, अपने मूल्य एवं अपनी बनाई हुई सीमाएं ही सब कुछ हैं।

'मेहराँ' का चरित्र–चित्रण

मेहराँ 'दादी अम्मा' कहानी में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली पात्र है। 'दादी अम्मा' कहानी एक ऐसे संयुक्त परिवार की कहानी है जिसके सभी सदस्य बड़ों की आज्ञाओं का पालन करते हैं। परिवार में दादी अम्मा, दादा, उनकी बहू–बेटा आगे उनके तीन बेटे और बेटियाँ तथा पोते–पोतियाँ रहते हैं। पर फिर भी वृद्ध इस परिवार में उपेक्षित है। मेहराँ दादी अम्मा की बहू है जो परिवार के प्रति अपने कर्त्तव्यों को निभाने का पूर्ण प्रयास करते हुए भी वृद्धों की मानसिकता को समझने में सफल होती है। मेहराँ भावुक, संवेदनशील, अनुशासनप्रिय, पतिव्रता, कुशल गृहिणी, स्पष्टवादी आदि गुणों से सम्पन्न महिला है उसकी चरित्रगत विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

कुशल गृहिणी

मेहराँ कुशल गृहिणी है वह अपने सास–ससुर, पति एवं बहू–बेटों की प्रत्येक आवश्यकता तथा प्रत्येक सदस्य के सुख–दुःख का ख्याल रखती है। पूरे परिवार का दायित्व वो प्रसन्नता पूर्वक निभाती है। उसे प्रत्येक सदस्य की आवश्यकताओं और उनकी इच्छाओं का ज्ञान है। इसका उदाहरण तब मिलता है जब नौकर दादी अम्मा के कमरे से भोजन की थाली लौटा कर लाता है– "दोपहर को नौकर जब अम्मा के यहाँ से अनछुई थाली उठा लाया तो मेहराँ का माथा ठनका। अम्मा के पास जाकर बोली, अम्मा, कुछ खा लिया होता, क्या जी अच्छा नहीं?"

मेहराँ दादी अम्मा के बूढ़े हो जाने के पश्चात् घर का पूरा नेतृत्व करती है परन्तु सास ससुर का सम्मान करते हुए भी उन्हें वह सम्मान नहीं दे पाती जितना कि वृद्ध लोग अपेक्षा रखते हैं। वृद्ध उपेक्षणीय होने पर जब समय–असमय बोलते रहते हैं तो वह दादी अम्मा के कटु वचनों का भी बड़े धैर्य से जवाब देती है। बेटे की शादी की जिम्मेदारियों से निपट जब मेहराँ का ध्यान अपनी सास की तरफ जाता है तो वह उनके साथ दिल की बातें करते हुए उन्हें बिस्तर तक पहुँचाने जाती है– "मेहराँ बहू पर आशीर्वाद बरसाकर लौटी तो देहरी के संग लगी दादी अम्मा को देखकर स्नेह जता कर बोली, "आओ अम्मा, शुक्र है भगवान का जो ऐसी मीठी घड़ी आयी।"

अपने सास–ससुर की सेवा करते हुए उनकी हर इच्छा का सम्मान करती है। परन्तु अपने बच्चों को वह बड़ों के सम्मान हेतु शिक्षा देने में असमर्थ रहती है।

अनुशासनप्रिय

मेहराँ अपने परिवार में पूरा अनुशासन बनाएँ रखती है वह समय सुख का हो या दुःख का। वह समय–समय पर बहुओं और बेटों एवं नौकरों को कार्य करने के आदेश देती है जिसे परिवार का प्रत्येक सदस्य अपना कर्तव्य समझकर पूरा करता है – दादी अम्मा के बीमार पड़ने पर–

"मेहराँ ने बहुओं को धीमें स्वर में आज्ञाएँ दीं और बेटों से बोली,

बारी–बारी से खा–पी लो, फिर पिता और दादा को भेज देना।"

विवाह के समय किसी प्रकार का व्यवधान कहीं न पड़े कोई चीज़ छूट न जाए इस को ध्यान में रखते हुए हर तरह से अनुशासन बनाए रखती है। ''बरामदें में मेहराँ का रोबीला स्वर नौकर–चाकरों को सुबह के लिए आज्ञाएँ देकर मौन हो गया।''

पतिव्रता

मेहराँ अपने पति से बहुत अधिक प्रेम करती है। इसलिए वह दादी माँ के द्वारा कहे गए वाक्यों को सहन नहीं कर पाती और कहती है– "जिस बेटे को घर भर में सबसे अधिक तुम्हारा ध्यान है। उसके लिए यह कहते तुम्हें झिझक नहीं आती?"

मेहराँ को यह स्वीकार नहीं कि उनके पति को कोई गलत शब्द कहे इसलिए वह दादी अम्मा से कहती है– "अम्मा, कुछ तो सोचो, लड़का बहू–बेटों वाला है। तो क्या तुम इस तरह बरसती रहोगी ?"

आधुनिक एवं सुविचारों वाली नारी

मेहराँ जानती है कि बदलती परिस्थितियों के साथ बदलने में ही व्यक्ति और परिवार की भलाई है इसलिए वह अपने बच्चों की हर इच्छा को सुचारू रूप से पूरा करती है और दादी अम्मा को भी समझाती है कि बार–बार व्यंग्यों के द्वारा नहीं बल्कि स्नेह के साथ ही बच्चों से सम्मान कराया जा सकता है। इस संबंध में उसकी निम्नलिखित उक्तियाँ सार्थक हैं– "मान की बात करती हो अम्मा ? तो आये दिन छोटी–मोटी बात लेकर जलने–कलपने से किसी का मान नहीं रहता।"

भावुक एवं संवेदनशील

मेहराँ कुशल गृहिणी के साथ भावुक हृदय भी है। दादी अम्मा के व्यंग्य उसके मन पर कटाक्ष तो करते हैं लेकिन वह बड़ी सरलता से दादी को समझाती है और परिस्थिति पर काबू कर लेती है। दादी अम्मा की मृत्यु से पहले वह उनके पास जाती है। अम्मा के मुख मोड़ने पर भी वह बहूओं को पास बैठने का आदेश देकर स्वयं रसोईघर में उनके लिए दूध गर्म करने चली जाती है। अम्मा मृत्यु से पहले जब हँसती है तो वह समझ जाती है कि अम्मा ने सबको आशीर्वाद दे दिया। ससुर को मेहराँ यह कहकर सांत्वना देती है कि अम्मा सदैव हमारे पविवार में जीवित रहेगी।

अन्ततः कहा जा सकता है कि मेहराँ में वह सभी गुण हैं जो एक महिला में होने चाहिए जैसे अपने परिवार को अनुशासन में रखना, पति का सम्मान करना, बड़ों को आदर देना, बच्चों की इच्छाओं को पूरा करना आदि। पर मेहराँ अपने घर में अपने सास–ससुर का वो मान–सम्मान नहीं दे पाती जो उन्हें उपेक्षित सोचने पर विवश न करता। मेहराँ ही तो सास–ससुर और बच्चों के बीच में एक सेतु थी वह एक ऐसा माध्यम था जो बच्चों को वृद्धों की सेवा, मान–सम्मान करना सिखाती ताकि परिवार में वृद्ध कोठरी में न पड़े रहें ऐसा काम यदि वह स्वयं करती तो ही बच्चों के सम्मुख एक उदाहरण प्रस्तुत कर सकती थी पर उसका यह पक्ष काफी निर्बल रहा है।

'बदली बरस गई' में कल्याणी का चरित्र–चित्रण

कल्याणी 'बदली बरस गई' कहानी की मुख्य पात्र है। पिता की मृत्यु हो जाने के पश्चात् वह बचपन में ही अपनी मां के साथ आश्रम में आ जाती है। उसकी मां साध्वी बन जाती है और वह भी आश्रम में रहते हुए आश्रम की सभी मर्यादाओं का पालन करते हुए अपना जीवन व्यतीत करने लगती है पर जब वह बड़ी होती है तो सुनहरे स्वप्न देखती है और उज्ज्वल भविष्य की चाह में स्वतंत्र जीवन जीने का निर्णय लेती है। इसी संदर्भ में उसके चरित्र के विभिन्न पक्ष पाठकों को प्रभावित करते हैं जिन्हें निम्नलिखित शीर्षकों के अंतर्गत देखा जा सकता है।

मातृस्नेह से परिपूर्ण

कल्याणी अपनी माँ के प्रति स्नेही भावना से परिपूर्ण है। समाज की रूढ़िगत परम्पराओं से त्रस्त अपनी माँ को देखकर बेटी को अपनी माँ के प्रति दया और करूणा की भावना पैदा होती है। छोटी उम्र होने के कारण वह माँ के दर्द को तो नहीं जान पाई पर मां को रोते देख वह व्यथित हो उठती है और सोचती है– "माँ के आंसुओं में कैसा दर्द था और क्यों दर्द था यह सुधि कल्याणी को तब क्योंकर होती पर फिर माँ के हाथ से अपनी उँगलियाँ छुआकर कल्याणी ने सोचा था कि माँ दादी अम्मा की फटकारों के लिए रोती है और रोती है अपने लम्बे बालों के लिए।"

उस समय कल्याणी का कोमल हृदय माँ की वेदना को भले समझ नहीं पाया हो लेकिन माँ के आँसुओं ने उसे पिघला दिया था।

माता–पिता एवं परिवार के प्रेम से वंचित

जबकि कल्याणी का जन्म एक खुशहाल परिवार में हुआ लेकिन पिता की मृत्यु के पश्चात् उसे अपनी माँ के साथ आश्रम भेज दिया गया जिसके कारण वह अपने पारिवारिक स्नेह से वंचित हो गई थी पर माँ के साध्वी बनने पर उसे मातृस्नेह से भी हाथ धोने पड़े। "माँ की आंखों के सामने थी, पर नहीं थी। माँ देखकर भी देखती नहीं। बेटी के साथ जो अपनापन था वह बेटी से छिटककर मोह ममता से दूर जा पड़ा था।"

कर्त्तव्यनिष्ठ

कल्याणी कत्तर्व्यनिष्ठ एवं आज्ञाकारी युवती है। वह अपनी इच्छाओं तथा आकांक्षाओं को मारकर अपनी माँ के कहने पर आश्रम के नियमों का पालन करती है। "यह आश्रम का नियम है जिसका पालन कल्याणी ने हमेशा किया है। वह आज भी करेगी – रात के बाद उसकी आँखों में प्राणों की ज्योति रही तो कल भोर के बाद फिर इसी नियम में वह बँधी–बँधी चलेगी।"

अनुशासन में रहने वाली

कल्याणी अपने आपको आश्रम के नियमों में आबद्ध अनुभव करती है। वह अपना जीवन अपनी इच्छा से जीना चाहती है लेकिन आश्रम के साधारण जीवन तथा जोगिया धोती पहन कर अपनी इच्छाओं का दमन करती है। जब तक

वह आश्रम में रहती है अनुशासन बनाए रखने में पूरा सहयोग देती है और अंत में अनुशासन के साथ ही आश्रम के जीवन का परित्याग कर देती है।

महत्वाकांक्षी

कल्याणी जीवन के प्रति महत्वाकांक्षी है। अन्य युवतियों की तरह वह भी रंग–बिरंगा रेशमी लहंगा चोली पहनना चाहती है। परिवार का प्रेम पाना चाहती है और शादी करवा के अपना घर बसाना चाहती है। उसकी आँखों में वह स्मृतियाँ दौड़ जाती है जब उसकी चाची उसकी बुआ के लिए रेशमी चोली तैयार कर रही होती है।" "जल्दी–जल्दी बाँहों पर हाथ फेरती तो बाँहें उसे अपनी नहीं लगती । गाढ़ की कुरती और जोगिया धोती लिपटाते–लिपटाते बुआ के रंग–बिरंगे कपड़े मन में झिलमिला जाते।"

कल्याणी जीवन के सभी भौतिक सुखों को जीना चाहती है। वह इस जोगिया धोती से ऊब चुकी थी और अपना जीवन अपनी इच्छा से जीना चाहती थी।

स्वतंत्रताभिलाषी

कल्याणी स्वतंत्र विचारधारा वाली युवती के रूप में दृष्टिगोचर होती है। वह आश्रम में बंध कर नहीं रहना चाहती। वह अपना स्वतंत्र जीवन व्यतीत करना चाहती है।

स्पष्टवादी एवं साहसी

कल्याणी स्पष्टवादी एवं साहसी युवती है। अपने हृदय की बात वह साध्वी माँ और महाराज के समक्ष बिना किसी संकोच के रख देती है। वह आश्रम को हमेशा–हमेशा के लिए छोड़कर जाने की बात को स्पष्ट रूप से माँ साध्वी और महाराज के सामने रखती हुई कहती है– ''अभ्यासवश कल्याणी महाराज के सामने झुकी, माँ के सामने झुकी और खड़ी होकर बोली, "जाती हूँ माँ – मेरे लिए अब भी समय है। आश्रम की कोठरी में कल से मेरा दम नहीं घुटेगा – अब मेरा अपना घर होगा।" कहते–कहते कल्याणी उस घर की मीठी कल्पना में बाहर हो गयी।

युवावस्था में प्रविष्ट करते ही वह भी एक युवा लड़की की तरह स्वप्न देखती है और अनुकूल परिस्थितियां न होने के कारण वह विद्रोह करती है।

अतः कहा जा सकता है कल्याणी 'बदली बरस गयी' कहानी में ऐसी पात्र है जिसके माध्यम से लेखिका ने एक युवती के मनोभावों, इच्छाओं के दमन को चित्रित किया है। वह अपनी चारित्रिक विशिष्टताओं के कारण इस कहानी की प्रमुख पात्र के रूप में चित्रित हुई है।

साध्वी माँ का चरित्र–चित्रण

'बदली बरस गयी' कहानी में साध्वी माँ एक महत्वपूर्ण पात्र है। वह कल्याणी की माँ है। साध्वी अपने पति की मृत्यु के बाद सास के तंग किए जाने पर घर का त्याग कर आश्रम में आ जाती है और सन्यासी जीवन ग्रहण करती

है। साध्वी अपने साथ कल्याणी (जो उसकी बेटी है) को भी अपने साथ आश्रम में ले आती है और उसे भी महाराज की आज्ञाओं का पालन करने के लिए कहती है। लेकिन कल्याणी उसका विरोध करती है और आश्रम छोड़ कर चली जाती है। साध्वी माँ चाहकर भी उसे रोक नहीं पाती। साध्वी भावुक, सहनशील, धैर्यवान औरत है, उसके चरित्र की अन्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

रूढ़िवादी परम्पराओं की शिकार

साध्वी माँ समाज की रूढ़िवादी परम्पराओं की शिकार है। पति की मृत्यु के पश्चात् अपनी सास के बुरे व्यवहार से तंग आकर साध्वी आश्रम में महाराज की शरण में जाती है। आश्रम में वह अपनी इच्छाओं, आकांक्षाओं का गला घोंट कर साधारण जीवन आरम्भ करती है, तथा जोगिया वस्त्र धारण करती है। उसके लम्बे काले केश काट दिए जाते है। "दूसरे दिन जब देर गये उठकर वह कोठरी के द्वार पर आ खड़ी हुई तो माँ के तन पर गीली धोती थी – माथे पर चन्दन का टीका था और अब माँ कोठरी में लौटी तो सिर पर घने काले केश नहीं थे।"

दमित इच्छाओं से परिपूर्ण

साध्वी बन जाने के पश्चात् चाहे भक्तजनों से उसे बड़ा मान–सम्मान मिलता है पर साध्वी माँ जब नयी–नयी आश्रम में आई थी तो उसके यौवन, उसके हृदय में उल्लास एवं भौतिक वस्तुओं का आकर्षण था। वह उसे अंत तक हृदय से निकाल नहीं सकी।

मातृत्व युक्त

चाहे साध्वी माँ भौतिक आकर्षण से परे हो चुकी थी और कल्याणी को अन्य आश्रम की युवतियों की भांति समझती थी। लेकिन जब कल्याणी आश्रम छोड़कर जाने को तैयार हो जाती है तो उसका मन भर आता है। उसका मन विचलित हो उठता है। उसके वात्सल्य को लेखिका ने निम्नलिखित पंक्तियों में स्पष्ट किया है–

"महाराज कुछ बोले नहीं। साध्वी माँ कई क्षण मौन बैठी रही। बोल मुँह पर आने को थे कि व्यथा से आँखें अन्धी हो गयी। और रुके–रुके श्वास के साथ एक आहत–सी सिसकी निकल गयी।"

अनुशासन प्रिय

साध्वी माँ आश्रम के नियमों के अनुरूप अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करती हैं वह आश्रम के प्रति इतनी समर्पित होती जाती है कि उसे बाहरी दुनिया यहाँ तक कि अपनी बेटी के भावी जीवन, आवश्यकताओं के प्रति कोई ध्यान नहीं है। जब कल्याणी माँ साध्वी से दादी के घर लौटने के लिए कहती है तो माँ साध्वी मोह माया का त्याग करने की बात करती है जैसे–

"साध्वी माँ शान्त बैठी रही। वह क्यों हिलेंगी। यह मोह माया का आवरण है जो उसे कोई सुख नहीं देता। उपवास करो।"

अध्यात्मवादी

साध्वी माँ आश्रम में रहते हुए धीरे–धीरे भौतिक जीवन का त्याग कर अध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होती गई। "माँ देर गये ध्यान में रहती और सुबह उसके उठने से पहले ही आसन पर होती। आश्रमनिवासी माँ के सामने झुकते – माँ आँखें खोलती, मुस्करातीं, हाथ उठाकर आशीर्वाद देती और फिर आँखें मूँद लेती।"

अब वह एक माँ न होकर साध्वी माँ बन चुकी थी। आध्यात्म में लीन साध्वी माँ हर रिश्ते नाते को पीछे छोड़ चुकी थी।

गुरु–सम्मान में निपुण

साध्वी माँ जब से आश्रम में गुरू से दीक्षा प्राप्त करती है तब से वह गुरू का पूरा मान–सम्मान करती है। उनकी ज़रूरतों का ध्यान रखती है। गुरू के उठने से पहले ही उनके कक्ष की यथा सम्भव सफाई करके हर आवश्यक सामग्री को वहां उपलब्ध करवाती है। खुद मान–सम्मान करने के साथ–साथ वह अपनी बेटी को भी इस मार्ग पर चलने के लिए प्रेरित करती है।

धैर्यवान

साध्वी माँ धैर्य रखने वाली है। पति की मृत्यु के पश्चात् उसकी सास व ननद आदि जब उसे बात–बेबात पर प्रताड़ित करती हैं तो वह उन्हें किसी बात का उत्तर नहीं देती। चुपचाप उनकी बातें सहन करती है। वह रोकर अपना मन हल्का कर लेती है। पर उनका विरोध नहीं करती। इसी प्रकार जब कल्याणी आश्रम छोड़ने का निर्णय लेती है तो चाहे वह व्यथित हो उठती है पर उस समय भी उसका धैर्य डोलता नहीं बल्कि स्थिर बना रहता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि साध्वी माँ 'बदली बरस गयी' कहानी की ऐसी नारी पात्र है, जिसका जीवन सामाजिक थपेड़ों की चपेट में आकर एक सदगृहिणी से सन्यासिनी में बदल जाता है। ममत्व भाव से परिपूर्ण होते हुए भी वह अपने आप को संयमित करने का प्रयास करती है। अपनी इच्छाओं को दमित कर वह साधुत्व का बाणा करने में सफल होती है।

'सिक्का बदल गया' में शाहनी का चरित्र–चित्रण

शाहनी सिक्का बदल गया कहानी की मुख्य पात्र है। यह कहानी भारत–पाक विभाजन के समय के उन जगीरदारों की त्रासदी पर आधारित है जिन्हें अपनी सारी ज़मीन–जायदाद छोड़कर जाने के लिए विवश किया गया। बंटवारे की आग ने उन हिन्दू और मुस्लमान लोगों को भी अलग कर दिया जो आपसी प्रेम भाव से रहा करते थे। शाहनी ज़मीदार घराने की बहू है जो विधवा हो चुकी है विधवा होने के बाद भी शाहनी अपने पति के खेतों और अन्य जायदाद का पूरा ख्याल रखती है और कामयाब भी होती है लेकिन भारत–पाक विभाजन के समय हिन्दू और मुसलमानों में आपसी वैमनस्य बढ़ गया और शाहनी को सरकार के आदेश अनुसार अपना घर और ज़ागीर छोड़ कैम्प में जाना पड़ा। गांव के लोग जो कि मुसलमान हैं वे भी नहीं चाहते कि शाहनी गांव छोड़कर जाये लेकिन वह शाहनी को मुस्लिमों के भय के कारण तथा सरकार के आदेश के

कारण रोक भी नहीं पाते। शाहनी धनवान होते हुए भी बहुत ममतामयी, दयावान, निस्वार्थी महिला है– शाहनी के चरित्र की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं–

धार्मिक वृत्ति वाली महिला

शाहनी धार्मिक वृत्ति की महिला थी। हिन्दू धर्म की विचार पद्धति के आधार पर सूर्य पूजा में विश्वास रखती है। इसलिए हाथ में माला और राम–नाम का जाप करती हुई प्रतिदिन चिनाब दरिया में स्नान करने जाती है और सूर्य देव को नमस्कार करती है। जैसे – श्री राम श्री राम करती पानी में हो ली। अंजलि भरकर सूर्य देवता को नमस्कार किया। अतः धार्मिक वृत्ति की होने के कारण ही वह सभी में ईश्वरत्व भाव देखती है।

ममतामयी

शाहनी गाँव के सभी लोगों के प्रति ममत्व की भावना रखती है और प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकता पड़ने पर सहायता भी करती है। शेरा जब मुसलमानों के साथ मिलकर शाहनी को मारने की योजना बनाता है तो उसे अनायास शाहनी की वह ममता याद आती है– "वह सर्दियों की रातें–कभी कभी शाहजी की डाँट खाके वह हवेली में पड़ा रहता था और फिर लालटेन की रोशनी में देखता था, शाहनी के ममता भरे हाथ दूध कटोरा थामे हुए, शेरे, शेरे उठ पी ले।"

वह जानती है कि सरकार के आदेश के कारण कोई व्यक्ति चाहते हुए भी उसकी सहायता नहीं करेगा तो वह जाते हुए भी गांव वालों को आशीष देकर जाती है– ''रब्ब तुम्हें सलामत रखे बच्चा खुशियाँ बख्शे।''

गांव के लोग जानते हैं कि शाहनी का हृदय बहुत बड़ा है इसलिए इस्माइल शाहनी से कहता है–

'शाहनी कुछ कह जाओ। तुम्हारे मुंह से निकली आशीष झूठी नहीं हो सकती।''

वह शेरे से कहती है– ''तुम्हें भाग लगे चन्ना।''

रीति–रिवाजों को मानने वाली

शाहनी धनवान होने के साथ–साथ सामाजिक भी थी और अक्सर लोगों के विवाह आदि उत्सवों पर उन्हें शामिल हो कर आशीर्वाद के साथ–साथ उन्हें उपहार के रूप में कीमती वस्तुएँ भेंट किया करती थी। जैसे वह थानेदार दाऊद खां की मंगेतर से मिलती है तो उसे सोने के कर्नफूल मुंह दिखाई में देती है। सरकार के आदेश के अनुसार थानेदार दाऊद खां जब शाहनी को घर से कैंप में ले जाने के लिए आता है तो उसे यह प्रसंग व्यक्त करता है– "यह तो वही शाहनी है जिसने उसकी मंगेतर को सोने के कर्नफूल दिये थे मुंह दिखाई में।"

और उसे बहुत दुःख भी होता है कि आज वह स्वयं उसे घर से कैम्प में ले जाने आया है।

निस्वार्थी

जब थानेदार शाहनी को घर से निकलने से पहले कुछ नकदी और सोना चाँदी साथ लेने के लिए कहता

है तो शाहनी कहती है– "सोना–चांदी ! बच्चा वह सब तुम लोगों के लिए है। मेरा सोना तो एक–एक जमीन में बिछा है।"

''नहीं बच्चा मुझे इस घर से नकदी प्यारी नहीं यहां की नकदी यहीं रहेगी।''

विवश

शाह जी की मृत्यु के बाद भी शाहनी अपने पति के खेतों और अन्य संपत्ति की संभाल रखने में पूर्ण कामयाब रहती है लेकिन विभाजन की आग उससे वह सब कुछ छीन लेती है। गांव में उसका बहुत सम्मान था लेकिन ज़ागीरों के साथ–साथ वह भी उसी गांव में छोड़ शाहनी को कैम्प जाना पड़ता है। गांव के जो लोग शाहनी को सलाम करते थकते नहीं थे वह सभी उससे मुख मोड़ लेते हैं। शाहनी गांव वालों की तरफ देखती है और सोचती है।

"सारा गांव जो उसके इशारे पर नाचता था कभी उसकी असामियाँ जिन्हें उसने अपने नाते–रिश्तों से कभी कम नहीं समझा। लेकिन नहीं, आज उसका कोई नहीं, आज वह अकेली है।"

दाऊद सोचता है– "वही शाहनी है जिसके लिए शाहजी दरिया के किनारे खेमे लगवा दिया करते थे।"

लेकिन आज वह इतनी विवश है और कोई उसकी सहायता भी नहीं कर सकता।

स्वाभिमानी

शाहनी कठिन परिस्थितियों में भी अपने संयम को नहीं खोती और गांव वालों के सामने न ही दया का हाथ फैलाती है बल्कि पूरे स्वाभिमानी के साथ घर और संपत्ति छोड़ वहां से चली जाती है– "शाहनी रो–रोकर नहीं, शान से निकलेगी इस पुरखों के घर से, मान से लाँघेगी यह देहरी, जिस पर वह रानी बनकर आ खड़ी हुई थी।"

साहसी

शाहनी जब हर रोज की तरह स्नान करने के लिए चिनाब दरिया के किनारे जाती है तो स्नान करने के बाद देखती है कि रेत पर पैरों के निशान बने हैं लेकिन आस–पास कोई नहीं है उसे आभास तो हो जाता है कि वे लोग मुसलमान थे और उसे हानि पहुंचाने ही आये थे लेकिन वह घबराती नहीं और राम नाम लेते हुए गांव वापस लौट जाती है।

मिलनसार

शेरा और हुसैना उसके घर में काम करने वाले नौकर नौकरानी हैं लेकिन वह उनके साथ माँ जैसा व्यवहार करती है। शेरा को वह अपना बेटा मानती है और हुसैना को बहू– "जिगरा !" हुसैना ने मान–भरे स्वर में कहा "शाहनी, लड़का आखिर लड़का ही है। पगली मुझे तो लड़के से बहू प्यारी है।"

कृष्णा सोबती ने शाहनी के माध्यम से ऐसी नारी का वर्णन किया है जो सर्वजन का हित चाहती है। उसे देश के विभाजन से कुछ लेना–देना नहीं है। शाहनी इस कहानी की एक ऐसी पात्र है जिसे अपनी संपत्ति से अगाध प्रेम होते हुए भी उसके प्रति अनासक्ति दिखलाती हैं।

18.5 सारांश

इस प्रकार कृष्णा सोबती अपनी विशिष्ट कथा–शैली के साथ 'नयी कहानी' में अपना स्थान बनाती हैं और आगे समकालीन कथा–दौर में भी कहानी में शैली और शिल्प के स्तर पर कितने ही नये–नये प्रयोग करती हैं।

स्पष्ट है कि कृष्णा सोबती की कहानियों के विभिन्न पात्रों के माध्यम से समाज की विभिन्न समस्याओं को उद्घाटित किया है। 'कहीं कुछ ओर' कहानी आधुनिक नारी का प्रतीक है जो अपनी भावनाओं को अपने हृदय में दबाकर अपना जीवन अपनी इच्छा से जीती हैं। 'सिक्का बदल गया' कहानी भारत पाक विभाजन के समय के उन जागीरदारों की त्रासदी पर आधारित है जिन्हें अपनी सारी जमीन–जायदाद छोड़कर जाने के लिए विवश किया गया है।

18.6 कठिन शब्द

(1) वि ाष्ट

(2) समकालीन

(3) भौली

(4) ि ाल्प

(5) प्रारंभिक

(7) व्यथा

(8) मान्यता

(9) मापदण्ड

(10) अनासक्ति

(11) विभाजन

(12) अगाध

(13) सर्वजन

(14) आभास

(15) त्रासदी

(16) स्वाभिमानी

(17) प्रवृत्ति

(18) दुर्भाग्य

(19) परम्परावादी

18.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

1. कृष्णा सोबती की कथा शैली पर प्रकाश डालें।

2. वातावरण और देशकाल कृष्णा सोबती की कहानियों में भाषा के माध्यम से खनकता है, स्पष्ट कीजिए।

3. कृष्णा सोबती की कहानियों में प्रमुख पात्रों का चरित्र–चित्रण करें।

4. 'दादी अम्मा' कहानी की दादी का चरित्र–चित्रण करें।

5. साध्वी माँ 'बदली बरस गयी' की महत्वपूर्ण पात्र है, इस परिप्रेक्ष्य में साध्वी माँ का चरित्र–चित्रण करें।

6. 'सिक्का बदल गया' कहानी की शाहनी का चरित्र चित्रण करें।

*****

M.A. Semester-II	UNIT - IV	Lesson No. 19
C.No. 203		HINDI

संजीव की युगीन चेतना

19.0 रूपरेखा

19.1 उद्देश्य

19.2 प्रस्तावना

19.3 संजीव की युगीन चेतना

 19.3.1 सामाजिक चेतना

 19.3.2 धार्मिक चेतना

 19.3.3 आर्थिक चेतना

 19.3.4 राजनीतिक चेतना

19.4 सारांश

19.5 कठिन शब्द

19.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

19.7 सन्दर्भग्रन्थ/ पुस्तकें

19.1 उद्देश्य

- युगीन चेतना का अर्थ जान सकेगें।

• साहित्यकार अपने युग को किस दृष्टि से देखता है।

• संजीव की कहानियों में राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक चेतना किस प्रकार उभरी है।

19.2 **प्रस्तावना** : अपने युग के समाज का युगीन इतिहास संजीव की कहानियों में प्राप्त होता है। उन्होंने मुख्य रूप से ग्राम को ही कथा का केन्द्र बनाया है। किसान, मजदूर, दलित, नारी समाज के प्रति गहरी आस्था व्यक्त की है। नारी हर युग में समाज द्वारा शोषित एवं पीड़ित रही है। संजीव की हर रचना एक नयी ज़मीन तलाशती है, इतना ही नहीं बल्कि पूरी क्षमता और यथार्थ के साथ प्रस्तुत होती है। इन्होंने शोषकों के प्रति घृणा और शोषितों के प्रति सहानुभूति अपनाई है। कोई भी साहित्यकार देश काल तथा समाज के प्रभाव से अछूता नहीं रहता है। तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक धार्मिक एवं दार्शनिक विचार का प्रभाव रहता ही है। संजीव पर भी उनके काल की सम्पूर्ण चेतना प्रबल रूप से हावी रही है।

संजीव की कहानियां सामाजिक बदलाव की माँग करती है। आजादी के बाद आम आदमी ने जो स्वप्न देखा था वह आजादी के साठ साल बाद भी पूरा नहीं हुआ। विदेशी नेतृत्व की तुलना में देशी नेतृत्व बहुत अन्यायी साबित हो रहा है इन्हीं बातों को संजीव अपनी कहानियों में पर्दाफाश करते हुए लोगों में उसका विरोध करने की दृष्टि से चेतना निर्माण करते हैं। आजादी के बाद का यथार्थ चित्रित कर संजीव लोगों में जाग्रती लाते हैं। तथा अपने हक एवं अधिकार के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा भी देते हैं।

19.3 संजीव की युगीन चेतना

'युग चेतना' का अर्थ प्रायः काल या समय विशेष के बारे में विशिष्ट ज्ञान या बोध से लिया गया है। 'युग' का सामान्य अर्थ काल की सुदीर्घ सीमा से लिया जाता है अर्थात् समय का वह अंश जिसका कोई दीर्घ परिणाम हो, जिसमें कोई विशिष्ट विचारधारा प्रवाहित हुई हो या कोई महापुरुष या कोई क्रांति हुई हो। 'चेतना' शब्द सामान्यतः ज्ञान के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इसका प्रयोग बुद्धि, 'मनोवृति', ज्ञानात्मक मनोवृति, बोध चैतन्य आदि रूपों में भी किया जाता है।

युग चेतना समय सापेक्ष होती है। इसमें युगानुरूप परिवर्तन, परिवर्धन होता रहता है। काल विशेष की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनीतिक हलचलें इसके निर्धारक तत्व माने जा सकते हैं। चूंकि एक युग में समाज, संस्कृति, धर्म, दर्शन, आध्यात्म, नैतिकता आदि अनेक तत्व रहते हैं। साहित्यकार इन सबसे प्रभावित ही नहीं होता वरन् इन्हें अनुभूति के स्तर पर लाकर अभिव्यंजित भी करता है।

युग चेता साहित्यकार अपने युग को सूक्ष्मता से देखता है और युगीन परिस्थितियों के मध्य आलोड़न–विलोड़न करता हुआ प्रत्येक घटना का बारीकी से अध्ययन करता है तथा समाज के लिए उसकी

उपयोगिता को रेखांकित करता है। जो साहित्यकार युग के प्रति जितना अधिक जागरूक होगा उसका साहित्य समाज के लिए उतना ही उपयोगी होता है। संजीव ऐसे ही युग चेता रचनाकार हैं। इन्होंने अपने युग की प्रत्येक परिस्थिति को जिया है इसलिए कथा–साहित्य को यथार्थ की परिपाटी पर स्थापित कर पाए हैं। इन्होंने दलित समाज के जीवन की यथार्थता के मूल तक पैठ जमाई है। इन्होंने कहानियों में सामाजिक शोषण के सारे पहलुओं की छान–बीन की है। गाँव से लेकर शहर तक, दलित से लेकर मजदूर और आदिवासियों तक उनके लेखन का कैनवास फैला है। इनकी कहानियां वर्तमान के साथ ही इतिहास और भूगोल के पुर्जे भी खोलती हैं। स्वयं कुम्हार जाति के होने के कारण ऊंच–नीच के भाव से स्वयं परिचित हैं। धर्मांधता, जातिवाद और सामाजिक गैर–बराबरी को वे अपनी मानवतावादी वैचारिक प्रतिबद्धता के चलते असंगत बताते हैं। इन्होंने दलित, निम्नवर्ग, आदिवासी और नारी की वेदना का बखान बेबाकी और संवेदना के साथ किया है। शोषित–पीड़ित मनुष्य उनके लेखन के केन्द्र में हैं। संजीव जिन परिस्थितियों में जन्मे, पले और साहित्यकार बने उन परिस्थितियों का प्रभाव उनके लेखन पर भी दिखाई देता है।

19.3.1 सामाजिक चेतना

भारतीय समाज में जाति का महत्त्व हजारों सालों से रहा है। जाति के आधार पर ही व्यक्ति की पहचान है। सदियों से जाति ही व्यक्ति के शोषण का कारण बनी है। जाति के केन्द्र में व्यक्ति का 'स्व' लुप्त हो चुका है। डॉ. देवेश ठाकुर भारतीय समाज के प्रति विचार प्रकट करते हैं–''एक ओर राष्ट्रीयता की भावना से प्रेरित भारतीय समाज एक स्वर में अंग्रेजी शासन के विरूद्ध उठ खड़ा हुआ था, और दूसरी ओर स्वयं नगर नहीं ग्राम्य और आँचलिक स्तर पर ही जातिवाद का 'विष बीज' विकास पा रहा था, जिससे व्यक्ति–व्यक्ति के बीच मतभेद की खाई गहरी हो रही थी और व्यक्ति जातिगत आधार पर अलग–अलग समूहों में विभाजित और विच्छिन होकर परस्पर द्वेष, ईर्ष्या और शत्रुता के भाव को बढ़ता हुआ राष्ट्रीय शक्ति एकता और उदात्त मानवीयता के आदर्शों को धूमिल कर रहा था।'' संजीव की कहानियों में जातिगत भेदभाव की समस्या देखने को मिलती है। लेखक की दृष्टि में जातिगत–भेद समाज की सबसे बड़ी ज्वलन्त समस्या है। जाति के नाम पर व्यक्ति का शोषण हो रहा है और इस भांति समाज कमज़ोर पड़ रहा है। 'योद्वा' कहानी जाति से जुड़े प्रश्नों को उभारने वाली कहानी है। उच्च जाति के लोगों ने छोटी जाति के लोगों के प्रति हीन भाव रखा। समाज में छोटी जातियों के अस्तित्व को स्वीकार नहीं किया जाता रहा। इसलिए उनके 'होने' पर भी सन्देह किया जाता रहा।

प्रस्तुत कहानी में समाज के दो मुँहे चेहरे को बेनकाब किया है। गाँव दुबौली में बभन टोले के पाँच ब्राह्मणों के घर के साथ दो लोहारों के भी घर थे। लेकिन आए दिन लोहार जाति को ठाकुरों और ब्रह्मणों की तीखी वाणी का शिकार होना पड़ता है। गाँव भर में लोहारों को हीन साबित किया जाता है। अवधू सिंह दद्दृ को नाम से बुलाने के बजाय 'लंगड़' कहकर पुकारता है। दद्दृ और बिसेसर दुबे दोनों लंगड़े थे लेकिन 'लंगड़' कहकर बुलाने का मतलब बिसेसर दुबे से नहीं बल्कि दद्दृ से रहता था क्योंकि दहा जाति से लौहार थे। संजीव के कहने का तात्पर्य यह है कि अभी भी बड़ी जाति के द्वारा छोटी जाति को छोटा साबित करने की परम्परा समाप्त नहीं हुई है। छोटइ और दहा का संगद दृष्टव्य है।

'' ई दुबे से कैसे बोल रहे थे और तुमसे कैसे?

बड़े हैं न!

बड़े तो तुम हो

अरे नहीं, जाति के ऊँचें। ठाकुर हैं न!''

कहानी में अनपढ़ ब्राह्मण फेरू काका वर्णव्यवस्था को भगवान की देन समझता है। फेरू काका ही नहीं बल्कि समाज का अधिकांश अशिक्षित वर्ग यही समझता है। भगवान को भी जाति के कठघरे में खड़ा कर दिया। इस सन्दर्भ में ब्रह्मण फेरू काका और छोटूक का संवाद द्रष्टव्य है ''राम तो ठाकुर थे लेकिन परशुराम बाभन. ....रुको भगवान भी कई हैं न, दस–दस तो अवतार ही हैं।........इनमें से कोई लोहार भी है? लोहार? बिसकर्मा थे तो सही लेकिन लोहार ही थे कि और कोई जात हमको ठीक–ठीक नहीं मालूम?'' कहानी ब्राह्मण एवं ठाकुर समाज के दम्भ एवं क्रूर व्यवहार को दिखाने के साथ–साथ ग्रामीण समाज के पिछड़ेपन एवं संकुचित मानसिकता को भी उभारती है। समाज अभी भी वर्णव्यवस्था को मनुष्य द्वारा निर्मित समझता है। ईश्वर ने केवल मनुष्य की जाति बनाई और मनुष्य ने कई जातियां बनाई और अब उसी की उलझन में फंसकर रह गया है।

दुबौली गाँव के ब्राह्मण समाज का क्रूर व्यवहार तो तब मिलता है जब ब्राह्मण फेरु काका एक नटिनी से विवाह करता है और उस विवाह की सौगात रुप में इन दोनों को मौत मिलती है। फेरु काका जब नटिनी से विवाह करता है तो वह अपनी भाभी दुबाइन की दृष्टि में ब्राह्मण नहीं बल्कि एक कुत्ता मात्र रह जाता है दुबाइन के शब्द फेरु काका के सन्दर्भ में द्रष्टव्य हैं– ''तू बाभन नहीं कुत्ता है, कुत्ता! एक हाड़ लाकर चिचोर रहा है। कुत्ते को घर में घुसाकर मैं अपना धरम भरस्ट क्यों करुँ? हमारे घर में क्या बिटिया – बिटार नहीं है?

सामंती समाज के लिए फेरु काका और नटिनी अपराधी थे और अपराधियों को सज़ा के रुप में मौत मिलती है। दोनों पति–पत्नी को कोई भी देखने नहीं आया– ''गौरमिण्टी अस्पताल में चीर–फाड़ के बाद भी लाशें सड़ती, बदबू देती रहीं फेरु काका और उनकी मेहरारू की लेकिन गाँव से कोई भी लेने न आया, बभनौटी से भी नहीं? मेहतरों ने वहीं फूँक दी लाशें।''

'योद्धा' कहानी में काकी, छोटके काका और भैया मतलब बडकू जागरूक पात्र हैं। यह बंधी–बधाई परिपाटी पर चलने वाले पात्र नहीं हैं। इन्हें सामंती समाज का वर्चस्व एवं शोषण से पूर्ण व्यवहार पसन्द नहीं है, इसलिए उच्च वर्ग के प्रति विद्रोही व्यवहार रखते है। दद्दा बाह्मणों एवं ठाकुरों के दम्भी व्यवहार से रुष्ट तो थे लेकिन डर के कारण विद्रोह कर नहीं पाते थे। दद्दा के बाद की पीढ़ी उच्च जाति से डरती नहीं है बल्कि मुकाबला करने में विशवास रखती है। भैया के शब्दों में' ''बचपन से चोटें ही तो झेलता रहा हूँ काकी, कभी किसी के हिस्से की, कभी किसी के.............कभी ऊपर–ऊपर दिख जाती है, कभी नहीं,..........। घायल हुआ हूँ तो घायल किया

भी है हमने........आदत पड़ गई है.........अब वे मेरी ओर मुखातिब थे, अवधू सिंह वाली बात याद है न तुम्हें, लोहा न पहचान पाने के चलते ददा से कितनी मार खाई थी हमने। तुम्हें मालूम, लोहा पहचानते थे हम। जान–बूझकर कच्चा लोहा दिया उन्हें हमने।'' संजीव की कहानी के पात्र शोषण के प्रति जागरुक हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बरसों से सह रहे शोषण के प्रति आवाज़ आज की नई पीढ़ी ने उठाई है, वह जाति को ईश्वर की देन नहीं बल्कि मनुष्य की देन मानता है।

कहानीकार को वर्ण व्यवस्था से डर नहीं है बल्कि ब्राह्मणवादी मानसिकता से डर है। ब्राह्मणवादी मानसिकता का शिकार ब्राह्मण ही नहीं बल्कि किसी भी जाति का व्यक्ति इस मानसिकता की गिरफ्त में आता जा रहा है। पूँजी की ताकत के आधार पर अपनी जाति का रौब जमाया जाता है। जिन जातियों ने ब्राह्मण समाज के अनाचार को सदियों से सहन किया वह आज स्वयं वैसा ही व्यवहार करती नज़र आ रही हैं, जैसा उच्च जाति के लोगों ने आज तक किया।इस सन्दर्भ में भैया अफसोस जताते हुए कहानी के अन्त में कहता है कि –''जिस चोट ने मुझे सबसे ज्यादा तकलीफ दी, जानते हो, वह क्या है?'' क्या? हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना–हमी नहीं, ज्यादातर लोगों का। युगों के इस बभनपने के मारे लोगों में तो बभनपना नहीं आना चाहिए था न!''।

बुद्धपथ

'बुद्वपथ' कहानी में समाज का एक ऐसा रूप उभरता है जिसमें पूँजीपति वर्ग है जो पैसे के बल पर गरीबों का शोषण कर रहा है। वहीं दूसरी ओर समाज का एक ऐसा पहलू उभरता है जो ईश्वर के नाम पर दंगे कराता है। कोई पैसे के लिए रो रहा है और कोई अपने–अपने ईश्वर को श्रेष्ठ साबित करने के लिए लहू बहा रहा है। कहानीकार संजीव समाज के इस संवेदनहीन व्यवहार को देख चिंतित नज़र आता है। कहानी की दृष्टि से स्पष्ट झलकता है कि जहाँ धर्मों के नाम पर युद्ध हो वहां ईश्वर कैसे वास कर सकता है। कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है– ''भगवान तो जा रहे हैं इस देश से। इतनी हिंसा! इतनी ऽऽऽ! भगवान रुकते भी तो कैसे? इसी हिंसा के चलते तो गृह–त्याग किया था उन्होंने।'' कहानी के माध्यम से लेखक स्पष्ट करता है कि समाज दिशाहीन है। गरीब पूँजीपतियों का शिकार कर रहे हैं, कोई अर्थ प्राप्ति हेतु भीड़ में भागता जा रहा है और बौद्ध विहार का आचार्य शीलभद्र दुनिया की हिंसा को देख केवल मुँह से बुद्ध का पथ दिखाता नज़र आता है और वह भी बौद्व विहार को संवारने और मन्दिर बनाने के लिए चिंतित नज़र आता है। गाँव के महन्त होने के नाते गाँव के गरीब लोगों के उत्थान के लिए कोई चिंता नहीं दिखाता है। बुधचक और गनगौर गाँव के शोषित लोग अपनी बदहाली को जब आचार्य के सामने प्रकट करते हैं तो वह उनकी सहायता करने के बजाये बुद्ध का पथ दिखाता हैं।– ''आचार्य, गाँव के बड़े लोगों ने हमारा जीना हराम कर रखा है। न पूरी मजूरी देते हैं न बाहर ही जाने देते हैं।..... नान्ह जाति के लोग हमारे धर्म में जीना चाहते हैं लेकिन कुछ दबंग लोग धमकाते हैं, गोड़ निकालें तो गोड़ काट देंगे।.....आचार्य, अब तो छोटी–छोटी बात पर भड़क जाते हैं लोग। दंगा शुरु हो गया तो हमें न हिन्दू बचाएँगे, न मुसलमान। हमारे लिए क्या रास्ता बचता है जान बचाने के लिए? .

.........आचार्य की उँगली भगवान के चित्र की ओर उठ जाती है। ''बुद्वपथ'' संजीव की दृष्टि में समाज दिशाहीन है, वह स्वार्थ साधने में संलग्न है। मानवता को बचाये रखने के बजाये धर्म के नाम पर लोगों को बांटा जा रहा है।

राख

'राख' कहानी में भी ग्रामीण परिवेश के अशिक्षित लोग ब्राह्याडम्बरों में फंसे हुए हैं। वह अभी भी जात–पात के भेदगत परम्परा से उभर नहीं पाए हैं। जाति ही उनकी पहचान है इसलिए उनकी नज़र में बड़ी जाति का व्यक्ति श्रेष्ठ और छोटी जाति का व्यक्ति दोयम दर्जे का ही रहता है। ग्रामीण समाज के लोग धर्म और जाति के नाम बट़े हुए है।

संजीव ने कहानियों के माध्यम से स्पष्ट किया है कि भारत देश की आज़ादी को इतने साल बीत चुके हैं लेकिन दलितों की स्थिति अच्छी नहीं है। सरकार द्वारा इनके उत्थान के लिए बहुत प्रयत्न किए गए लेकिन सरकार की योजनाएँ पूँजीपति वर्ग के लोगों ने हड़प ली। 21वीं सदी में भी जातिभेद खत्म नहीं हुआ है, अभी भी यह मुख्य पहचान का माध्यम है।

19.3.2 धार्मिक चेतना

दुबौली गाँव के लोग जाति के भीतर विवाह करना ही अपना धर्म समझते हैं। कोई भी व्यक्ति यदि जाति से अलग जाकर विवाह करता तो वह तथाकथित जाति से आऊट कर दिया जाता है। योद्धा कहानी का फेरु काका एक नटिनी से विवाह करता है, तो वह ब्राह्मण समाज के लिए घृणा का पात्र बन जाता है। ब्राह्मण फेरु काका की भाभी विजातीय विवाह के सन्दर्भ उस पर व्यंग्य बाण चलाती है– ''कुत्ते को घर में घुसाकर मैं अपना धरम भरस्ट क्यों करुँ? हमारे घर में क्या बिटिया–विटार नहीं हैं? जबकि तुम बाभन रहे नहीं, भरस्ट हो गए हो, बाभन की जमीन पर तुम्हारा कोई हक नहीं बनता।'' संजीव इस कहानी से स्पष्ट करते हैं कि ग्रामीण समाज के ब्राह्मण समाज का अपनी जाति के प्रति मोह कम नहीं हुआ है। जाति को मजबूत बनाने के लिए जिस धर्म का पालन किया जा रहा है इसी के कारण ही समाज खोखला होता जा रहा है। जाति को बचाने की खातिर उच्च जाति के लोग अधर्म के रास्ते पर चल पड़े हैं।

धर्म

वर्तमान समय में धर्म के नाम पर हिंसा का बोलबाला है। कोई मन्दिर के लिए लड़ रहा है, कोई इसाईयत के लिए। अपने धर्म को श्रेष्ठ साबित करने की होड़ लगी है। 'बुद्धपथ' कहानी धर्म के नाम पर मची लूट एवं अमानवीयता के रूप को दर्शाती है। प्रस्तुत कहानी में आचार्य शीलभद्र उर्फ ने–देन बौद्ध विहार एवं मन्दिर बनाने के लिए चिन्तित है और किसी तरह पैसे जुटाने के तरह–तरह के साधन अपनाता है और यहाँ तक कि मुख्यमन्त्री के पास भी जाने का प्रयत्न करता है। एक तरफ आचार्य शीलभद्र है और दूसरा अयोध्या

के लिए लड़ने वाला हिन्दु एवं मुस्लिम समुदाय है। आचार्य कहानी का पात्र राहुल धर्म के पीछे, छिपी राजनीति को व्यक्त करता है– ''आचार्य जागिए! बहुत सो चुके। धर्मों में ही युद्ध होता है, सभ्यताओं में ही असभ्यता। युद्ध तो यद्ध, पापाचार भी सबसे ज्यादा धर्मों की आड़ में ही होता है। कहानीकार दंगों की जड़ में धर्म को ही आधार मानता है। धर्मों की आड़ में लहू बहाया जाता है। बौद्व विहार में शान्ति से बैठने वाला आचार्य शीलभद्र अयोध्या के दंगों में भीड़ का शिकार हो जाता है– ''भाग रहा है। स्पाई है मार साले को। हम बौद्व भिक्षु है बेटा! कोई कुछ सुनना नहीं चाहता। खींचों–खींचों लुंगी खींचो, देखो यह कौन है!'' किसी के कपड़े खींचे, चीरफाड़ डाले गए। वह सब जैसे कुत्तों का हुजूम था। जो कुछ हुआ वह इतना असहनीय था कि उन्हें गश आ गया और वह गिर पड़े।'' कहानीकार धर्म के नाम पर मची लूट के प्रति समाज को सचेत करता नजर आता है। संजीव की दृष्टि में मानवता ही सबसे बड़ा धर्म है। धर्म के नाम पर हो रही मार–काट को वह धर्म नहीं अधर्म मानते हैं।

'राख' कहानी धर्मांधता की बर्बरता का बयान है। समाज अंधविश्वास एवं शगुन–अपशगुन के नाम पर महिलाओं का शोषण करता है। कहानी की पात्र जोखन बहू इसका ज्वलन्त उदाहरण है। जोखन बहू के बांझ होने के कारण परिवार और गाँव उसे मनहूस मानता है। गाँव के लोगों को डर है कि कहीं वह सामने न पड़ जाए। जोखन बहू भी अपनी अपसगुनी काया से सनातनियों को बचाती रहती है। अछूत होने के कारण जोखन और जोखन बहू को काम ही नहीं मिलता। खिल्ली और उपेक्षा के कारण वह अपनी फूटी आंख और कुरुपता को आँचल से ढकी रहती है। एक दिन प्रातः पुत्र प्राप्ति की कामना हेतु वह सर्वमंगला देवी के मंदिर जाती है लेकिन उसे महताइन देख लेती है। महताइन शोर मचाती है कि एक अछूत नारी ने मंदिर और देवी को भ्रष्ट कर दिया है। जोखन बहू गाँव भर के लिए मनहूस मानी जाती है। सुकुलजी जोखन बहू के मन्दिर जाने पर टिप्पणी करता हुआ कहता है– ''अरे तुझे और कोई मन्दिर न मिला कि और देवी–देवता न मिले? तू कहीं और पूजा कर लेती। देवी को ही पूजना था तो दूर मंगल से गोड़ धर लेती! क्या तुझे मालूम नहीं कि यह मन्दिर महतो–महताइन ने खास अपने पैसे से अपने परिवार और गाँव के लिए कुशल मंगल के लिए बनवाया था?'' गाँव भर की धर्मांधता के प्रति कथावाचक व्यंग करता है– ''यह कैसे सम्भव है कि एक औरत मनहूस हो और वह भी इतनी मनहूस कि उसके छूने मात्र से मन्दिर और देवी दोनों का सत्त जाता रहे?'' गरीबी के कारण मरने वाले जोखन की चिता में जोखन बहू आत्मसर्म्पण करती है। वह जोखन बहू जो गाँव के लिए डायन थी, वह चिता में आत्मसर्म्पण करने से सती मैया बन जाती है। उसके सतीत्व की याद में सती चौरा बनाया जाता है। धर्म के नाम पर पाखण्ड करने वाले रवैये पर कथावाचक टिप्पणी करता है– ''एक व्यक्ति विशेष को यह छूट नहीं होनी चाहिए कि वह मुक्ति और लोकमंडल से जुड़ी भावना को प्रदूषित करे।'' वास्तव में इस कहानी के माध्यम से कथावाचक समाज एवं धर्म के ठेकेदारों पर व्यंग्यबाण कसता है, जिन्होंने मन्दिरों के नाम पर समाज से पैसा लूटा है। ऐसे लोगों ने पवित्र स्थान को अपवित्र किया है।

19.3.3 आर्थिक चेतना

आर्थिक समस्या सबसे बड़ी एवं जटिल समस्या है। समाज में ज्यादा महत्त्व धन को ही दिया जाता

है। आर्थिक मजबूती के कारण ही उच्च जाति के लोग छोटी जातियों के लोगों पर अपना प्रभुत्व जमाते रहे हैं। आर्थिक कमजोरी के कारण ही दलित वर्ग और कमजोर होता गया। पैसे के समक्ष ही व्यक्ति गुलाम होता है। आज दलित लोगों ने अपनी पहचान बनाई है, स्वयं संघर्ष कर अपने पैरों पर खड़े हुए हैं और आर्थिक रूप से भी सम्पन्न होते जा रहे हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि सामाजिक व्यवस्था के ढाँचे में थोड़ा–सा बदलाव आया है। पहले पहल अन्य जाति का व्यक्ति किसी भी ऊँची जाति के व्यक्ति की जमीन नहीं खरीद सकता था, लेकिन अब वह खरीदने लगे हैं। उच्च वर्ग के लोगों का नज़रिया छोटी जाति के प्रति वैसा ही है जैसा सदियों पहले रहा है। अन्य जाति के व्यक्ति वर्तमान समय में प्रगति पर हैं लेकिन उच्च वर्ग के समाज को यह प्रगति सहन नहीं हो पा रही है। 'योद्धा' कहानी में छोटकू काका ने ब्राह्मण फेरु काका की ज़मीन पर घर बनाने की इच्छा ज़ाहिर की, लेकिन ब्राह्मण समुदाय छोटकू काका से तिलमिला उठता है– ''बाभन की ज़मीन भला लोहार लेंगे, पैसे ने एकदम से तुम्हारा दिमाग खराब कर दिया है क्या?''।

ब्राह्मणों को लोहारों द्वारा फेरु काका की ज़मीन पर तीन मंजिला घर बनाना बर्दाश्त नहीं होता है। बिसेसर दुबे घर छोड़कर सड़क पर आ जाते हैं और सम्पूर्ण बभनटोले में बदहाली छा जाती है। दुबौली में ब्राह्मण घर बेचने लगते हैं। ज़मीन बेचने की खबर आम हुई तो जमीन पर कब्जा मारने के लिए गांव भर में होड़ लग जाती है। लोहार और ठाकुर इस होड़ में लग जाते हैं लोहार छोटकू काका आर्थिक रूप से अवधू सिंह ठाकुर से ज्यादा सम्पन्न थे, इसलिए अवधू सिंह के हाथ से ज़मीन खिसकती चली गई।

अवधू सिंह को यह हार बर्दाशत नहीं होती है, तो बस वह लाव–लश्कर के साथ सीधे छोटकू काका पर वार कर बैठता है– ''मगर एक तरफ हम तैयार थे और हम अप्रस्तुत, दूजे वे सभी जवान या प्रौढ़ थे और हममें से ज्यादातर बच्चे और औरतें, पर बजतीं लाठियां बिलबिलाकर बहता खून, कच्ची दीवारों की तरह भहराते लोग! पैसों की ताकत में दोनों जाति के लोग लहूलुहान हो जाते हैं। दोनों जातियों के अंह में मानवता लुप्त हो जाती है। संजीव ने स्पष्ट किया है, छोटी जाति के लोगों में भी पैसों की सम्पन्नता के चलते बभनपन ने ग्रस लिया है इसलिए वह लाठी के बल पर अपनी ताकत दिखाते नज़र आते हैं।

छोटकू काका की मृत्यु के उपरान्त काकी भैया और छोटकू ने श्राद्ध की रस्म को नहीं निभाया। श्राद्ध के नाम पर रामफेर–रामचेत सम्मान देने का निर्णय किया गया। यह सम्मान लोहार परिवार में एक पारिवारिक उत्सव के रूप में मनाया जाता है। यह सम्मान कोई तेज पढ़ने वाले को नहीं बल्कि ऐसे बहादुर को दिया जाता है जो सच में बहादुर होता। वह इस सम्मान का वाजिब हकदार हो सकता था। रामफेर–रामचेत सम्मान जब रविदास को दिया गया तो ब्राह्मणों और ठाकुरों में आग सुलग गई। रविदास को यह सम्मान इसलिए दिया जाता है क्योंकि उसने चौधरी परिवार की एक जवान बेटी दुलारी जिसे घर से मार–पीटकर निकाला गया था और जिसे गांव का कोई भी व्यक्ति न्याय नहीं दिलाता रविदास उस लड़की को उसके घर लेकर जाता है और न्याय दिलाने की बात करता है लेकिन फैसला पक्ष में न होने के कारण वह उस लड़की को अपने घर में आश्रय देता है। परिणामतः चौधरी लोग रविदास की भड़ई फूंक देते हैं। पैसे का हकदार रविदास को देखकर उच्च वर्ग के लोगों में बहस शुरू हो जाती है क्योंकि वह सहन नहीं कर पाते कि पैसे का हकदार कोई छोटी जाति

का व्यक्ति कैसे हो सकता है। तभी सम्मान की उद्घोषणा करने वाले भैया पर लोग गरजने लगते हैं– ''अरे देखते क्या हो, पैसे के बूते इस धरम की सभा में अधरम फैला रहा है। खींच कर मारो दस जूते। दिमाग सही हो जाए।'' उत्तेजित भीड़ ने दमित ईर्ष्या और जातिगत द्वेष को आधार बनाकर हिंसात्मक रूप धारण किया। भैया को सबसे ज्यादा दुःख यह होता है कि जिस बभनपने का शिकार हम स्वयं होते रहे, हमारे भीतर भी वह बभनपन। स्वयं ही घुसता चला गया। –''हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना–हमी नहीं, ज्यादातर लोगों का। युगों के इस बभनपने के मारे लोगों में तो बभनपना नहीं आना चाहिए था न!''।

बुद्धपथ

'बुद्धपथ' कहानी समाज के भ्रष्ट रूप को भी अभिव्यक्त करती है। जब जमींदारी प्रथा विलुप्त होने लगी थी तो पूँजीपति लोग अपनी जमीन एवं राशि बचाने के लिए षड्यन्त्र करने लगे थे। बौद्ध विहारों पर लोग अपनी जमीन एवं पैसा दान के रूप में देने लगे लेकिन बौद्ध विहार के महन्त श्री आचार्य दीपंकर को कभी भी ज़मीन एवं राशि हाथ में प्राप्त नहीं हो पाती है। अपनी–अपनी ज़मीन एवं आय बचाने के लिए लोगों के बौद्ध विहार के इस चोर दरवाजे का रहस्य आचार्य दीपंकर और आचार्य शीलभद्र के समक्ष कभी खुल नहीं पाता है– ''इस विहार के नाम पर दान दी हुई जमीन और दान की अकूत राशि की जानकारी, हालाँकि दानपात्र के कुछ एक पीले–मटमैले कागजों के अलावा इस गुप्त खजाने की कोई कुंजी न उनके पास कभी थी, न शीलभद्र जी को ही कभी हासिल हो पाई। ....इस तरह देखा जाए तो सब कुछ हवा – हवाई है।'' महात्मा बुद्ध भ्रष्टता फैलाने के पक्ष में नहीं थे लेकिन बुद्ध की धरती के लोग पूँजी के लोभ के कुँए में धंस चुके हैं। इन बड़े गाँव के बड़े पूंजीपति लोगों द्वारा मजदूर वर्ग का शोषण किया जाता है। पूँजी के बल पर गरीब एवं मेहनतकश लोगों को गुलाम बनाया है। गाँव के लोग बौद्ध विहार के महन्त आचार्य शीलभद्र के समक्ष अपने शोषण को व्यक्त करते हैं– ''आचार्यजी, गाँव के बड़े लोगों ने हमारा जीना हराम कर रखा है। न पूरी मजूरी देते हैं न बाहर ही जाने देते हैं। हमारी औरतों का बाहर–भीतर जाना भी रोक देते हैं।'' प्रस्तुत कहानी पूँजीपति लोगों के अमानवीय व्यवहार को स्पष्ट करती है।

आर्थिक बदहाली ही व्यक्ति को गुलाम बनने पर मजबूर करती है। जात से छोटा जोखन गरीबी में जीवन व्यतीत करता है। छोटी जात का होने के कारण उसे बड़ी जल्दी कोई काम भी नहीं मिलता है और यदि मिलता है तो ठेकेदार सही समय पर पैसा नहीं देते हैं और स्थिति ऐसी बनती है कि लगभग वह पैसा निगल ही डालते हैं। जोखन अपनी बदहाली का चित्रण डागदर बाबू के समक्ष करता हुआ कहता है कि– ''पैसे तो है डागदर बाबू, एक महीना सड़क के ठेकेदार के पास काम किया, उसका पैसा, तीन महीने महताइन के यहाँ उसने काम किया, उसका पैसा...........!'' जोखन को अपनी मेहनत का पैसा भी नहीं मिलता है और यदि मांगता है तो ठेकेदार से और महताइन से दुत्कार खानी पड़ती है– ''पहले हमारे दस लीटर दूध का दाम और मन्दिर की 'शुद्धी' के हज़ार गिन दो फिर पैसे की बात करो। तुम लोगों के चलते दो दिन से पूजा नहीं हुई, भोग नहीं चढ़ा, दो दिन से निराहार हैं देवी। दो दिन से तो हम दोनों भी.....। चोऽऽऽप! देवी–देवता से अपनी तुलना करता है बदजात।''

सती मैया के चौरे पर मेला लगता है। दुकानें लगती हैं। पूजा और आशीर्वाद के लिए कतारें लगती हैं। जोखन बहू को जीते–जी कोई भी नहीं पूछता है और मर जाने के बाद वह लोगों के लिए पूजनीय देवी बन जाती है। पंडित, शोषक, परिवार वाले उसके नाम की दक्षिणा लेते हैं। जोखन, जोखन बहू और उसके अजन्में बच्चे पर फूल बरसाते हैं। सुकुल जी और डागदर का संवाद इस सन्दर्भ की पुष्टि करता है ''अहा डागदर बाबू! आइए–आइए। यहाँ चढ़ाइए, यह सती की मुख्य वेदी है। दूसरी पिण्डी पर चढ़ावा वसूलने, जोखन बहू की देवरानी थी। तीसरी पर सन्तू, चौथी पर शिवचरण, पाँचवीं पर उनके बच्चे। वो सती माई की माई हैं। आगे सती की सास हैं। उसके आगे जोखना....न सती के पति। ....वो सती की आँख है और सबसे अन्त में वो सती की अजन्मी सन्तानें।'' लेखक ने कहानी के माध्यम से समाज की बेसुध मानसिकता पर प्रहार किया है। वह सार्थक जीवन जीने के बजाये व्यर्थ की व्यस्तताओं में लीन अपना स्वार्थ साध रहा है। पंडित सुकुल सर्वमंगला देवी का चढ़ावा बटोरता था लेकिन सती मैया को चौरे पर सर्वमंगला देवी की तुलना में ज्यादा चढ़ावा होने लगता है, इसलिए सुकुल जी सैती मैया की भक्ति में ज्यादा लीन हो जाते हैं। वस्तुतः स्पष्ट होता है कि धर्म के ठेकेदार मंदिरों के नाम पर खूब पैसा कमा रहे हैं। धर्म की अपेक्षा अधर्म को ही फैला रहे हैं।

19.3.4 राजनीतिक चेतना

राजनीति और समाज का गहरा सम्बन्ध है। राजनीति समाज का अविभाज्य घटक होने के कारण दोनों को अलग करना मुश्किल कार्य होगा। आधुनिक समय में भी राजनीति के कारण जनता को दर–दर की ठोकरें खानी पड़ती हैं। राजनीति का आज़ादी के बाद परिवर्तित रुप देखने को मिलता है। सत्ता–प्राप्ति राजनीति का मुख्य लक्ष्य रहा है, जिससे आम जन का शोषण होता है। राजनीतिज्ञों द्वारा धर्म एवं जाति के नाम पर लोगों को ठगा जाता है। संजीव की 'बुद्धपथ' कहानी में आया गुजरात दंगा एवं अयोध्या दंगा राजनीति पक्ष की ओर सोचने के लिए मजबूर करता है।

'योद्धा' कहानी भी पुलिस के बर्बर व्यवहार को उद्‌घाटित करती है। पुलिस का प्रधान काम देश की अखंडता, कानून और व्यवस्था को बनाये रखना है, लेकिन पुलिस का व्यवहार इस दृष्टि से नकारात्मक है। दलित समाज को एक तो उच्च जाति के लोगों ने प्रताड़ित किया और वहीं पुलिस व्यवस्था भी उच्च जाति की राह पर ही चलती है, इसलिए दलित समुदाय न्याय की माँग की आशा किससे करे। इस सन्दर्भ के लिए डॉ. ऋषिकुमार चतुर्वेदी के विचार योग्य लगते है– ''पुलिस तंत्र पीड़िकों को संरक्षण देता है और पीड़ितों को और अधिक पीड़ित कर रहा है।'' संजीव की 'योद्धा' कहानी इस बात का ज्वलन्त प्रमाण देती है। लोहार छोटकू काका और माई, ब्राह्मण फेरु काका एवं नटिनी पत्नी के विजातीय विवाह के पक्ष में खड़े होते हैं लेकिन छोटकू काका एवं माई के खिलाफ सम्पूर्ण ब्राह्मण समाज खड़ा होता है और इसकी सज़ा इन्हें पुलिस व्यवस्था से मिलती है– ''पुलिस आई। गाँव के मानिन्द लोगों को बुलाया गया। अवधू सिंह से देर तक खुसुर–फुसुर होती रही। फिर काका और माई को गरियाते मारते–पीटते ले जाने लगी पुलिस। एक–एक दृश्य आंतक का दाग बनकर आज भी उभरा पड़ा है जेहन में – थप्पड़ों और डण्डों की मार में गिरते–पड़ते रोते' बिलबिलाते काका और

माई .... उधर काका और माई को छुड़ाने में हमारे नाममात्र के खेत और माई, आजी के नाममात्र के गहने भी बिक गए। कर्ज चढ़ गया ऊपर से।" इस कथन से विदित होता है कि पुलिस भी आम आदमी की रक्षा के लिए नहीं बल्कि समाज में उपद्रव करने वाले लोगों को सहयोग देने का काम करती है। संजीव की प्रस्तुत कहानी यह स्पष्ट करती है कि न्याय व्यवस्था के भ्रष्ट व्यवहार के कारण सामान्य जन को न्याय मिलना मुश्किल होता जा रहा है।

19.4 सारांश

प्रगतिशील विचारों से लैस संजीव एक चेतनशील कहानीकार है। संजीव एक युग चेतना कथाकार है। इन्होंने अपने युग को सूक्ष्मता से देखा है। गाँव से लेकर शहर तक, दलित से लेकर आदिवासी एवं स्त्री की पीड़ा को अपने लेखन का आधार बनाया है। शोषित एवं पीड़ित मनुष्य उनके लेखन के केन्द्र में है। संजीव का झुकाव शोषित वर्ग के प्रति रहा है। वह मानवता की भाषा बोलने के पक्ष में खड़े होते हैं।

19.5 कठिन शब्द

1. चैतन्य
2. अभिव्यंजित
3. वर्चस्व
4. सामंती
5. क्रूर

19.6 अभ्यासार्थ प्रश्न :

1. चेतना का अर्थ बतलाते हुए संजीव की कहानियों को युगीन सन्दर्भ में विश्लेषित कीजिए।

2. संजीव की कहानियों की युगीन चेतना पर प्रकाश डालिए।

3. संजीव एक चेतनशील कहानीकार हैं, सिद्ध कीजिए।

4. कथाकार संजीव की चेतनशील कहानियों का युगीन सन्दर्भ में रेखांकन कीजिए।

5. युगीन चेतना को परिभाषित करते हुए संजीव की कहानियों का विश्लेषण कीजिए।

19.7 सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. संजीव की कहानियों के पात्रों का समाज – मनोवैज्ञानिक अध्ययन –डॉ. चन्द्रा मुखर्जी
2. संजीव की कहानियाँ शिल्प एवं शैलीगत अध्ययन – डॉ. स्नेहा पाटील
3. कथाकार संजीव मूल्याकंन के विविध आयाम – विश्वज्योति
4. सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ. शहाजान मपोर
5. संजीव व्यक्तित्व एवं कृतित्व – डॉ. रामचन्द्र मारुती लोठे
6. पाखी पत्रिका, अंक – 12 सितम्बर – 2009 (संजीव पर विशेषांक)

*****

बुद्धपथ, राख और योद्धा कहानियों की मूल संवेदना

20.0 रूपरेखा

20.1 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.3 संजीव की कहानियों की मूल संवेदना

20.3.1 'बुद्धपथ' कहानी की मूल संवेदना

20.3.2 'राख' कहानी की मूल संवेदना

20.3.3 'योद्धा' कहानी की मूल संवेदना

20.4 निष्कर्ष

20.5 कठिन शब्द

20.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

20.7 सन्दर्भ ग्रन्थ / पुस्तकें

20.1 उद्देश्य :–

संवेदना के बारे में जानना ।

– संजीव की विवेच्य कहानियों में संवेदना का पुट कितना झलक पाया है ।

– विवेच्य कहानियों में मार्मिकता कितनी परिलक्षित होती है ।

– संजीव की कहानियों के पात्र अधिकतर दलित, निम्नवर्ग तथा उपेक्षित समाज से हैं, प्रस्तुत कहानियों के माध्यम से जान सकेंगे कि लेखक ने उपेक्षित समाज की पीड़ा को किस हद तक समझा है।

20.2 प्रस्तावना :

संजीव की कहानियों में विचार ही नहीं बल्कि संवेदना का पुट भी है। सिद्धान्त ही नहीं, यथार्थ भी है, समाज ही नहीं, बल्कि व्यक्ति भी है। संजीव के पास सामाजिक व्यवहारों का खासतौर से निम्न तथा मध्यवर्गीय मनुष्यों के आचरण का गहरा, भोगा हुआ अनुभव है जो उनकी कहानियों में जीवन्त होकर आया है। इसलिए संजीव के पात्र इतने यथार्थ पूर्ण सहज और स्वभाविक लगते हैं। उन्होंने जो कुछ भी देखा, जाना, समझा, महसूस किया उसके प्रति उनका कन्सर्न मात्र दर्शक या साक्षी का नहीं था बल्कि उसका सम्बन्ध उनके जीवन के साथ कई स्तरों में था। वे खुद गांवों और कस्बों की जिन्दगी का एक ऐसा हिस्सा रहे हैं जो परिवर्तन को शिद्दत से महसूस करता रहा है । इसलिए कहानी में स्थितियों, घटनाओं, क्रियाओं से उस जिन्दगी में होने वाले परिवर्तनों का बड़ा ही मर्मस्पर्शी चित्रण कर सके हैं। संजीव ने जिस दौर में होश संभाला, वह आज़ादी के बाद नव निर्माण के सपनों का दौर था। तब जनता में यह भरोसा अधिक था कि शिक्षा से जीवन की परिस्थितियाँ बदली जा सकती हैं। उनकी जिंदगी का सफर निम्नवर्ग से मध्यवर्ग तक का सफर है। संजीव का जीवन आम जन को प्रेरणा देने वाला है। विज्ञान से जुड़े इस रचनाकार के साहित्य में गहरी संवेदना है। इनके अंदर का कथाकार अत्यन्त परिश्रमी बेचैन एवं जनवादी चेतना का पक्षधर है।

20.3 संजीव की कहानियों की मूल संवेदना :

बुद्धपथ, राख और योद्धा कहानियों की मूल संवेदना :

किसी भी रचनाकार की संवेदना उसके समय और इतिहास बोध से बनती है । उसका इतिहास बोध जिस दृष्टि से निर्मित होता है, उसी से वह अपने समय को परखता, जांचता है और आत्मसात करता है तथा इसी से उसके संवेदन मानस का निर्माण होता है। दरअसल हर वक्त द्वन्द्वात्मक से घिरा वक्त होता है । यह द्वंद्वात्मकता समाज के विभिन्न स्तरों पर पसरे–उलझे अंतर्विरोधों से निर्मित होती है और रचनाकार का यही दायित्व होता है कि वह अपने समय के समाज के उन अंतः सूत्रों को समझे जो यथार्थ के जटिल आयामों का निर्माण भी करते हैं और इन्हें समझने के लिए सहायता प्रदान करते हैं। अपने समय के समाज के यथार्थ को उसकी सही गति पकड़ना ही लेखक का उत्तरदायित्व होता है ।

संजीव अपने समय की विभीषिका को पहचानते हैं और इस विभीषिका को बहुत सटीक तरीके से पहचानने का ही नतीजा है कि उनका संवेदन मानस हमेशा उत्पीड़ितों के पक्ष में रहता है और अपने समय के इस संकट को रेखांकित करते हुए उन्होंने लिखा है कि ''मेरा समकाल बेरोक–टोक बढ़ती आबादी, यौन हिंसा और अराजकता का काल है । मेरा समकाल उन्मादग्रस्त हुड़दंगियों का काल है – क्रिकेट, परमाणु बम, विस्थापन, बंटवारा, बाबरी मस्जिद ध्वंस, हिन्दू–मुस्लिम, हिन्दू–सिक्ख, हिन्दू–इसाई ही नहीं, हिन्दू–हिन्दू, मुस्लिम–मुस्लिम और उष्ण युद्ध (खूनी दंगों का काल), सती के नाम पर नारी हत्या को गरिमा व मंडित करता, गरीबों की हत्या का काल रहा है'' संजीव की संवेदना का धरातल दुश्चक्रों और दुश्चक्रों को भेदने का साहस रखने वाली वैचारिकता के द्वन्द्व से निर्मित हुआ है । संजीव की कथा संवेदना में लूट, दमन, भ्रष्टाचार और कुत्सित नरसंहारो के इस दौर में रचना को विरुद्ध खड़ा करने की ताकत है। संवेदना और पीड़ितों, वंचितों के पक्ष में खड़े होने का इतिहास बोध ही उन्हें जाति–दमन, भ्रष्टाचार, विस्थापन, महिलाओं के यौन–शोषण, आंदोलनों के चरित्र और उनके विरुद्ध चल रही साजिशों आदि पर लिखने के लिए प्रेरित करता है ।

20.3.1 'बुद्धपथ' कहानी की मूल संवेदना :

'बुद्धपथ' कहानी मनुष्य के बर्बर व्यवहार को उद्‌घाटित करती है । महात्मा बुद्ध द्वारा जो रास्ता मनुष्य को दिखाया गया, वह उस पर न चलते हुए युद्धपथ पर चल रहा है। चाहे हिन्दु हो, चाहे मुसलमान या चाहे बौद्ध भिक्षु, मन्दिर बनाने की होड़ में अमानुषिक व्यवहार करने में कोई भी पीछे नहीं हट रहा है । प्रस्तुत कहानी के माध्यम से संजीव वर्तमान समय के बर्बर वातावरण को दिखाता है । कहानी स्पष्ट करती है कि किस तरह व्यक्ति प्रेम की भाषा न बोलकर वाक से आग के गोले बरसाता है । यह वही बुद्ध का देश है जिसने कहा था कि अपने मुँह से कोई ऐसा शब्द न निकालो जिससे किसी को आघात पहुंचे । कभी भी झूठी वाणी का प्रयोग न किया जाए । कभी भी ऐसा कर्म न किया जाए जिससे किसी को हानि पहुंचे। कभी कोई ऐसा व्यापार ना किया जाए जिससे किसी दूसरे को ठेस पहुँचे। लेकिन बुद्ध के जीवन के सिद्धान्त वर्तमान समय में फीके पड़ चुके हैं। बुद्ध ने मन्दिरों से कभी प्यार नहीं किया । उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति को मन की यात्रा करने का उपदेश दिया । वह कभी भी ईश्वर को मन्दिर में स्थापित करने के पक्ष में नहीं थे । 'बुद्धपथ' कहानी इस बात का प्रमाण है कि महात्मा बुद्ध ने जिस रास्ते पर चलने के उपदेश समाज को दिए, उस रास्ते पर कोई नहीं चल रहा है। जिस महात्मा ने मन्दिर की तरफ रुख नहीं किया मनुष्य उसी का मन्दिर बनाने का सपना संजोकर बैठा है। शीलभद्र का असली नाम 'ने–यैन' था । बरसों पहले बर्मा से प्रभु बुद्ध की धरती की तीर्थयात्रा की लालसा उसे भारत में खींच लाई थी। शीलभद्र के वृद्ध गुरुं दीपंकर जाते–जाते उसे 'ने–येन' से शीलभद्र बनाकर इस मन्दिर और विहार की महन्ती, दूसरी इस विहार के नाम पर दान दी हुई ज़मीन और दान राशि की जानकारी दे गए थे । मूलतः इस दौर में ज़मीदारी प्रथा टूट रही थी इसलिए अपनी ज़मीन और आय बचाने के लिए विहार के नाम दान राशियां आरम्भ हो गई थी, लेकिन इस बौद्ध विहार को गुरु दीपंकर को इस चोर दरवाज़े के रहस्य का कभी पता न चला और न ही उसके शिष्य शीलभद्र को कभी अवगत हो पाया। शान्ति का प्रतिनिधित्व करने वाले बौद्ध विहारों को भी संवेदनहीन मनुष्य ने भ्रष्ट करने में कोई परहेज़ नहीं किया । जिस भ्रष्ट व्यवहार को नकारा। उसी देश में यह भ्रष्टता अधिक बलबती गई । कहानीकार संजीव पाठक का ध्यान तो तथाकथित प्रधानमंत्री की ओर ले जाना चाहते हैं जिनके सरंक्षण में पहला परमाणु परीक्षण राजस्थान क्षेत्र में 1974 में किया गया था इससे लोगों को काफी नुकसान पहुंचा था और भारत ने इसे शांतिपूर्ण कार्यक्रम के रूप में दुनिया के सामने रखा था और कहा था "आज बुद्ध मुस्कुराए होंगे ।"

आलोच्य कहानी ने मनुष्य की बढ़ती संवेदनहीनता को रेखांकित किया है । दुनिया भर में भारत बुद्ध को देश के रूप में जाना जाता है । बुद्ध का देश कहलाने का अर्थ है – भारत शान्ति का प्रतीक है । प्रेम का सागर इसी भारत देश में विराजमान है । लेकिन अब भारत प्रेम का सागर है की धारणा फीकी पड़ती नज़र आ रही है निरन्तर बढ़ते अमानवीय व्यवहार इस बात का प्रमाण है । कहानी में गुजरात के दंगों के प्रसंग और राम मन्दिर से सम्बन्धित दंगों के प्रसंग इस बात के द्योतक हैं कि यहां ईश्वर के नाम पर लड़ा जा रहा है, एक–दूसरे को मारा जा रहा है, औरतों के साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है बुद्ध का देश धीरे–धीरे युद्ध का क्षेत्र बनता जा रहा है स्वयं को श्रेष्ठ स्थापित करने की होड़ ने मानवीयता का चेहरा काला कर दिया है – "शहर फिर से दंगे की चपेट में था । हुंकारती भीड़, पुलिस की गाड़ियाँ, मारकाट और भागम–भाग ।.... यह सब क्या है ?... इतने दिन से मार–काट मची है और आप आज पूछने चले हैं ? युद्ध पथ माने लड़ाई का रास्ता । एक धर्म के लोग दूसरे धर्म के लोगों से युद्ध कर रहे हैं"।

आचार्य शीलभद्र एक ऐसा बौद्ध भिक्षु है जिसे दुनिया से कोई लेना–देना नहीं है, वह बल्कि अपने सपने को पूरा करने में संलग्न रहता है और बड़ी बात यह है कि वह करता कुछ नहीं है केवल सोचता है कि बौद्ध विहार बनाना है और मन्दिर बनाना है । इसलिए उसे मालूम ही नहीं कि शहर में दंगा मन्दिर की वजह से ही हो रहा है । शीलभद्र अपने शिष्य से जब पूछता है कि यह मारकाट कब समाप्त होगी तो राहुल दुनिया के स्वार्थी व्यवहार को व्यक्त करता हुआ कहता है – ''सो तो भगवान ही जाने ! यहां तो एक धर्म दूसरे धर्म के विरुद्ध, एक देश दूसरे देश के विरुद्ध, एक प्रान्त दूसरे प्रान्त के विरुद्ध, एक जाति दूसरी जाति के विरुद्ध, धनी गरीब के विरुद्ध, गरीब धनी के विरुद्ध, सभी अभी युद्ध पथ पर ही है ।'' राहुल के शब्दों से स्पष्ट झलकता है कि केवल भारत ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया ही युद्ध के पथ पर चल रही है और इस युद्ध का अन्त होने की सम्भावना दिखाई नहीं देती है ।

दंगे के दौरान शान्त रहने वाला शीलभद्र भी मनुष्य की बर्बरता का शिकार हो जाता है । वह हमेशा बौद्ध विहार में रहने वाला भिक्षु है, वह किसी की बात में हस्तक्षेप नहीं करता है । शहर में कर्फ्यू की ढील पड़ते ही वह अपने बौद्ध विहार की जमीन के मसले से मुख्यमन्त्री के पास जाने के लिए निकलता है लेकिन रास्ते में दंगाइयों के हाथों का शिकार हो जाता है। वह लाख कोशिश के बावजूद उनसे बच नहीं पाता है । मन्दिर के नाम पर हिन्दू–मुस्लिम के बीच बौद्ध भिक्षु पिट जाता है – ''भाग रहा है । स्पाई है, मार साले को । हम बौद्ध भिक्षु है बेटा! ... खींचो–खींचो लुंगी खींचों, देखो यह कौन है ! किसी ने कपड़े खींचे, चीरफाड़ डाले गए। वह सब जैसे कुत्तों का हुजूम था। जो कुछ हुआ वह इतना असहनीय था कि उन्हें गश आ गया और वे गिर पड़े ।'' धर्म के नाम पर बौद्ध भिक्षु के साथ अमानवीय व्यवहार किया गया । सभ्यता के नाम पर असभ्यता स्थापित होती जा रही है । धर्म के नाम पर अधर्म का बोलबाला होता जा रहा है । भारतीय संस्कृति को धर्म के नाम पर दूषित किये जाने की परम्परा आरम्भ हो चुकी है ।

कहानीकार ने गुजरात दंगे के दौरान फैलती अमानवीयता के चित्र भी कहानी में उकेरे हैं । शीलभद्र का शिष्य राहुल गुजरात दंगे की बर्बरता को व्यक्त करता हुआ है कि वहां गर्भवती महिला को भी नहीं छोड़ा जा रहा है । राहुल की सूचना भर से शीलभद्र का पता लेने आए सभी लोग मर्मान्तक होते हैं । कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है– ''फूले पेट वाली वह और मुड़कर पीछे ताकती है कि धकेल दी जाती है। सामने उसका अपना ही घर जल रहा है । माँ कानों का कंपा देने वाली मर्मान्तक चीखें! गर्भ पर प्रहार और कटहल के कोए की तरह से पेट से शिशु को निकालकर आग में झोंका जाना। बन्द होती धड़कनों और डूबती नब्जों में उस माँ ने पुकारा होगा अपनी माँ को। आचार्य को लगा, ऐसी ही एक चीख और निकली होगी – आग के हवाले किए जा रहे गर्भस्थ शिशु की चीख, माँ।'' शीलभद्र को यह सम्पूर्ण कालखण्ड आग की लपटों में झुलसता नज़र आता है ।

अन्ततः कहा जा सकता है कि 'बुद्धपथ' कहानी अत्यन्त संवेदनशील कहानी है । दिन ब दिन समाज का अमानवीय होता जाना इस बात का प्रमाण है कि बुद्ध का देश युद्ध के पथ पर अग्रसर है ।

20.3.2 राख कहानी की मूल संवेदना :

राख कहानी के माध्यम से कहानीकार ने स्त्री के प्रति भारतीय समाज की कुत्सित मानसिकता को उभारा है । 'औरत' को औरत होने पर कमजोर समझा जाता है और दूसरा यदि वह छोटी जाति की हो, तो शोषण की प्रक्रिया और बढ़ जाती है । भारतीय समाज में विवाह के उपरान्त वही स्त्री सम्मान पाती है जो सन्तान पैदा करती है । विवाह

के उपरान्त यदि कोई महिला बच्चा पैदा नहीं कर पाती है तो समाज के लिए वह अपशगुन का केन्द्र बन जाती है। उस स्त्री की पहचान ही उसका बांझपन बन जाती है । भारतीय समाज में स्त्रियों को वैसे भी अपनी पहचान स्थापित करने में वर्षों लग गए, लेकिन अभी भी वह अपनी अस्मिता की लड़ाई लड़ रही है । 'राख' कहानी में साफ–सफाई का काम करने वाली जोखन बहू के जीवन की दारुन कथा का चित्रण है । जोखन बहू को तो छोटी जात का होने के कारण उच्च वर्ग के दुर्व्यवहार को झेलना पड़ता है और साथ ही विवाह के पांच साल बाद भी बच्चा न पैदा होने पर बांझपन का tag लेकर जीना पड़ता है । वह महतो के खटाल में साफ–सफाई का काम करती थी । वह बेहतरीन कलाकार थी । वह मूज की नक्काशीदार बेहतरीन चीजें बना लेने के साथ, ऊपले सजाने में उसकी किसी से भी तुलना नहीं की जा सकती थी। गांव के लोगों द्वारा जब उसे अपसगुनि नाम से जाना जाने लगा तो इस काले साये में उसके सारे गुण लुप्त होते गए। परिवार और समाज दोनो के ही लिए वह मनहूस बन चुकी थी। धीरे–धीरे उससे बच्चे भी छीने जाना आरम्भ हो चुके थे। शुभ मुहूर्तों पर लोग जोखन बहू से डरने लगे थे। कहने का तात्पर्य यह है कि दिन–व–दिन उसकी दुनिया छोटी पड़ती जा रही थी और वह धीरे–धीरे अपने ही घूंघट में सिमटती जा रही थी । मवेशी डाक्टर ने जोखन बहू का परिचय इस प्रकार दिया है – ''महतो–महताइन की आहट पाते ही आड़ में हो लेती । सुकुलजी को प्रणाम करना होता तो दूर से अंचरा (आंचल) से गोड़ धरती। मैं सामने पड़ जाता तो दायाँ हाथ उठाकर सलाम करती । उसे बोलते मैंने कभी सुना नहीं । या तो वह निःशब्द मुस्कराती या फिर निःशब्द रोती।''

प्रस्तुत कहानी में कहानीकार की स्त्री के प्रति गहरी संवेदनशीलता उभरी है । कहानी में मवेशी डाक्टर की जोखन बहू के प्रति संवेदना रहती है इसलिए वह बार–बार उसकी तरफ खींचा चला आता है ।

सुबह–सुबह महताइन अपनी सर्वमंगला देवी के मन्दिर पूजा करने जाती है लेकिन वह देखती है कि दबे पावों जोखन बहू मन्दिर से बाहर निकल रही है। महताइन उसे मन्दिर से बाहर आता देख एकदम तमतमा जाती है और डर में जीने लगती है कि सुबह–सुबह जोखन बहू के दर्शनों का अंजाम क्या होगा । महताइन का यह व्यवहार अन्धविश्वास का द्योतक है और साथ ही उसका यह व्यवहार अमानवीयता का द्योतक है, क्योंकि उसके कहे अपशब्द जोखन बहू के हृदय को ठेस पहुँचाते हैं –''जोखन बहू को काटो तो खून नहीं । ...आज का दिन सकुशल बीत जाए तो तुम्हें चुनरी चढ़ाऊँगी मैया ।'' लेकिन महताइन की दृष्टि में जोखन बहू का दिख जाने का मतलब था अपसगुन। अब यह अपसगुन टलता कैसे । ''भर बल्टा दस लीटर दूध चौखट से टकराकर गिर गया, अंगूठे में जो ठेस लगी सो अलग। ... क्या किया उसने ? मन्दिर भरस्ट कर दिया, देवी को भरस्ट कर दिया, अभी पूछते हो, किया क्या।'' भारतीय समाज के विचारों का द्वन्द्व कभी सुलझता दिखाई नहीं पड़ता है । कहने का तात्पर्य यह है कि जिस समाज में स्त्री को देवी तुल्य समझा जाता है, उसी समाज में स्त्री द्वारा मन्दिर प्रवेश कर जाने पर सज़ा सुनाई जाती है। यह दोमुंहा समाज है। जहां औरत यदि संतान पैदा करती है तो वह देवी स्वरूपा मानी जाती है और यदि वह बांझ निकलती है तो वह डायन बना दी जाती है ओर यदि वह छोटी जाति की होती है तो अमानवीय व्यवहार और अधिक बढ़ जाता है ।

स्त्री ही स्त्री की पीड़ा को समझ सकती है, लेकिन यह धारणा इस कहानी को पढ़ने के उपरान्त बदल जाती है । उच्च जाति की महताइन, जोखन बहू की आन्तरिक वेदना को समझने के बजाय उसकी परिस्थिति का मज़ाक लेती हुई डागदर बाबू से कहती है कि – ''गाय–भैंस को गाभिन करवताते हो डागदर बाबू, तनी इस जोखन

बहू को भी कोई सुई ...।'' आधी बात कहकर वह रस के सरोवर गोते लगाने लगती है। यह वह स्त्री अपशब्द बोलती है जिसके मुँह से दूधो नहाने और पूतो फलने वाली आर्शीवाद निकलते हैं। इस सन्दर्भ से स्पष्ट होता है कि एक स्त्री ही यदि स्त्री की मनःस्थिति को नहीं समझ पाती है तो दुनिया का और शख्स स्त्री के भीतरी यथार्थ को क्या समझ पाएगा। स्त्री संवेदनशील मानी जाती है, वह कोमलता की प्रतिमूर्ति है, वह दूसरों के लिए प्राण न्यौछावर करने वाली है, वह दूसरों का सहारा बनती है लेकिन महताइन का अहं से भरा पड़ा व्यवहार इस बात का प्रमाण है कि जाति के ऊँचेपन ने और पैसे के लोभ ने औरत को भी संवेदनहीन बना दिया है ।

जोखन बहू के दुर्भाग्य पर सारा गाँव उसे कोसता लेकिन जोखन भूले–बिसरे कभी भी अपनी पत्नी को कोसता नहीं है, न ही उसके बांझपन के लिए और न ही उसके कानेपन के लिए । जोखन बहू को यदि कोई सहारा था, तो वह केवल जोखन का ही था । समाज जोखन बहू के पति को कानी का पति कहकर सम्बोधित करते तो वह लोगों पर व्यंग्य बाण कसता हुआ कहता है कि ––हो गयी तसल्ली ! भगवान न करे तुम्हारा कोई अंग–भंग हो जाए, दुःख–तकलीफ, हारी–बीमारी हो जाए और घरवाले तुम्हें छोड़ दें तो अच्छा लगेगा ? नहीं न ! फिर हम कैसे छोड़ दें अपनी...।''

गरीबी में जीने वाले जोखन बहू और जोखन को आपस में ही एक दूसरे का सहारा था, अन्य लोग तो उनके प्रति कोई अच्छी दिलचस्पी नहीं रखते थे । गरीबी ही उन्हें निगल गई । जोखन काम तो बहुत करता लेकिन उस काम का पैसा उसे सही समय पर नहीं मिल पाता था । वह अपनी इस परेशानी को डागदर बाबू से कहता है और कोई न कोई काम मिल जाने की बात उनसे करता है । पूँजीपति एवं ऊँची जाति के लोग संवेदनहीन होते हैं इस बात का प्रमाण इसी कहानी में मिलता है । जोखन एक महीना सड़क के ठेकेदार के पास काम करता है, तीन महीने महताइन के यहाँ काम करता है, लेकिन वह पैसे मिल नहीं पाते हैं । वह अपनी मेहनत की मजदूरी मांगने जाता है तो उसे खरी खोटी ही सुनाई जाती है – ''काहे गुस्सा रहे हैं मालिक, हम कोई भीख या खैरात तो मांग नहीं रहे, मजदूरी मांग रहे हैं, बकाया मजदूरी ।... पहले हमारे इस लीटर दूध का दाम और मन्दिर की 'शुद्धि' के हज़ार गिन दो फिर पैसे की बात करो । तुम लोगों के चलते दो दिन से पूजा नहीं हुई, भोग नहीं चढ़ा, दो दिन से निराहार है देवी ।''

भारतीय समाज के लोगों में एक धारणा यह है कि गरीब व्यक्ति चाहे भूख से तड़प–तड़प कर मर जाए लेकिन उस व्यक्ति को दो रोटी खिलाने के बजाए देवी की पूजा के प्रति चिन्तित रहेंगे, उनके आहार में छप्पन प्रकार के व्यंजन तैयार किए जाएंगे। भारत में भूख, गरीबी से कितने लोग मर जाते हैं लेकिन उन्हें रोटी नसीब नहीं होती है और न ही उनका कोई ऐसा ईश्वर है जो उनकी भूख की तृष्णा को समाप्त करे। महताइन द्वारा जिस दिन देवी मन्दिर का शुद्धिकरण करवाया जाता है, उसी दिन जोखन भूख से तड़पकर मर जाता है। सबसे दारुण एंव हृदय को दहला देने वाली स्थिति तब पैदा होती है, जब जोखन बहू पति की चिता में छलांग लगाती है और झुलस जाती है। सारे गाँव में उदासीनता का मातम छा जाता है। समाज द्वारा प्रताड़ित एवं उपेक्षित जोखन बहू आग की लपटों में स्वयं को सौंप देती है । समाज का बर्बर व्यवहार ही उसे यह घृणित क्रियाकलाप करने के लिए उकसाता है। उसे मालूम था कि जोखन पति के सिवा उसका इस दुनिया में कोई नहीं है और वह यह भी जानती थी कि भूख

की तड़प से मरने वाले पति की मृत्यु का कारण भी वही समझी जाएगी इसलिए वह और समाज का दुर्व्यवहार झेल नहीं सकती थी ।

वेदना से भरे इस माहौल में डागदर बाबू को छोड़ कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं था, जो जोखन बहू के मृत्यु के कारणों पर सोचता । भीड़ के लिए जोखन बहू सती बन गई थी । जीते जी जिस समाज ने उसे दुत्कारा, अपशकुनि और डायन माना, वहीं बांझ जोखन बहू उन्हीं लोगों के लिए सती मैया बन जाती है । डागदर बाबू इस स्थिति को अभिव्यक्त करते हुए कहता है कि –''अब वह मौन थी तो लोग उसे सुन रहे थे, अब वह नहीं थी तो लोग उसे देख रहे थे। अरे ऊ तो पहले ही सती थी, हमारी ही आँखों पर परदा पड़ा हुआ था ।... न किसी से बोलना, न किसी से चालना। मूड़ी गाड़कर आवा, मूड़ी गाडकर जाना । इस कलियुग में देखी है ऐसी औरत ?'' जिसे जीते जी पूछा नहीं गया वहीं मरने के बाद उसके मन्दिर की स्थापना की जाती है और पैसा भी खर्च किया जाता है ''एक हजार महतो ने दिए, एक हजार ठेकेदार ने, बाकी सौ–पचास जिससे जो बन पड़ा सबने । ईंटें गिरीं, सीमेंट गिरा, बालू गिरी, सरिया गिरा । देखते सती चौरा बन गया । यदि जोखन को उसकी मेहनत का पैसा समय पर मिल जाता तो न जोखन मरता और न ही जोखन बहू जलती आग में अपने को सौंपती । कहानीकार समाज की मूर्खता से परिपूर्ण मानसिकता के साथ–साथ उसकी संवेदनहीनता को भी दर्शाता है। पंडित सुकुलजी महताइन द्वारा बनाए सर्वमांगला मंदिर पर जोखन बहू को पैर न धरने देता था, लेकिन जब सती मैया के मन्दिर में पैसा ज्यादा चढ़ने लगता है, तो पैसा पाने के लिए सर्वमांगला देवी के मन्दिर को छोड़ सती मैया के मन्दिर जाकर अच्छी कमाई करने लगता है । इससे स्पष्ट होता है कि सुकुलजी के पण्डिताई एक व्यापार है जिससे वह खूब पैसा कमाता है। सुकुलजी को ज्यादा पैसा कमाता हुआ देख जोखन की बिरादरी के सोये हुए लोग भी जाग पड़े और इन दोनों में झगड़ा पड़ जाता है –''बहू–बेटी हजारी और चढ़ावा वसूलने चले आए आप ! आप ही हर जगह दखलिया के बैठ जाएंगे तो हम कहाँ जाएंगे ?'' परिस्थिति ऐसी बन चुकी थी कि उसके हत्यारों में उस पर व्यापार करने की लूट खचौट मच जाती है । 'राख' में जोखन बहू के साथ उसके पति की 'राख' भी थी। समाज ने जोखन की परिस्थितियों को समझा नहीं, यह स्थिति संवेदनहीनता की द्योतक है । ज्यादा पैसा कमाने की होड़ में लोग अपना धर्म भूलते जा रहे हैं । धर्म से तात्पर्य यहां मन्दिर बनाने से नहीं बल्कि कर्म से है ।

20.3.3 योद्धा कहानी की मूल संवेदना :

संजीव एक संवेदनशील कहानीकार है इसलिए उनकी कहानियों में भी संवेदना का पुट झलकता है । संजीव का झुकाव समाज के उस तबके की ओर ज्यादा रहा है जो सदियों से उपदेशीय जीवन जीता रहा है, अपनी पहचान को स्थापित करने के लिए तरह–तरह के संघर्ष करता रहा है । ब्राह्मण समाज से छोटी जातियों का संघर्ष चलता ही रहा है । 'संजीव' योद्धा कहानी के माध्यम से स्पष्ट करते हैं कि समाज में अभी भी छोटी जाति के लोग ब्राह्मण समाज के दुर्व्यवहार को सहन कर रहे हैं और इसके साथ ही लेखक ने चिन्ता जताई है कि अब छोटी जातियों में भी ब्राह्मणत्व का बीज पनपने लगा है । इस कहानी में लेखक का उद्देश्य लोहार जाति के मार्मिक पक्षों को उभारना रहा है ।

योद्धा कहानी ग्रामीण परिवेश को केन्द्र में रखकर लिखी गई है । गांव का नाम दुबौली है । इस गांव में

ब्राह्मण और ठाकुरों के घर के साथ दो लोहार जाति के घर भी हैं । इनमें आपस में जातिगत संकीर्णता के चलते मतभेद होता रहता है । अक्सर ठाकुर एवं ब्राह्मण जाति के लोग लोहार परिवार को हीन दृष्टि से देखते हैं या उन्हें अपने से छोटे होने का अहसास करवाते हैं । कभी ब्राह्मण या ठाकुर समुदाय ने अपने से नीची जाति को मानव समझा ही नहीं और न ही उनके अस्तित्व को कोई महत्त्व दिया । स्वर्ण जाति ने अपने से छोटी जाति को दोयम दर्जे का ही समझा । प्रस्तुत कहानी में भी ब्राह्मणों से निचली जाति की पीड़ा को अभिव्यक्त किया है । जातिगत भेदभाव का अहसास धीरे–धीरे करवाया जाता है । कहानी का पात्र छोटकू इस बात को स्पष्ट करता है कि जब छोटे थे तो ब्राह्मण क्या होता है या लोहार क्या होता है ? इसका भेद नहीं मालूम था बल्कि यही समझा जाता है कि सब एक से होते हैं, लेकिन मानव के बीच भेद का स्पष्टीकरण तो धीरे–धीरे ही हो पाता है छोटकू के शब्दों में ' "चेहरे–मोहरे, रहन–सहन, सुख–दुःख सब एक जैसे । हमारे हारे–गाढ़े वे दौड़े चले आते। उनके हारे–गाढ़े हम । आईने की खरोंचे तो बाद में उभरनी शुरू हुई–निहायत छोटी–छोटी बातें, मसलन खाट से उतार दिया जाना, पंगत से डाँटकर भगा दिया जाना, या ऐसी ही चीजें जो अब पूरी तरह याद नहीं ।" छोटकू की इस बात से स्पष्ट होता है स्वर्णों द्वारा जातिगत भेदभाव का दुर्व्यवहार सहन करना बच्चा बचपन में ही आरम्भ कर देता है । स्वर्ण छोटी जातियों को बचपन से ही लहूलुहान करना शुरू कर देते हैं ।

भारतीय समाज में व्यक्ति का आंकलन उसकी जाति के आधार पर किया जाता है । यदि वह ब्राह्मण या ठाकुर हुआ तो वह श्रेष्ठ है और यदि वह लोहार या अन्य पिछड़ी जाति हुई तो वह व्यक्ति निम्न है । जाति के आधार पर व्यक्ति को सम्बोधित किया जाता है । व्यक्ति ऊँची जाति का हुआ तो उसे ससम्मान बुलाया जाता है और यदि व्यक्ति अन्य निचली जाति का हुआ तो उसे गाली देकर बुलाया जाता है । लेखक इस कहानी के माध्यम से भारतीय समाज की कुत्सित मानसिकता का खुलासा करता नजर आता है – "गाँव के बिसेसर दुबे भी लंगडे थे और दद्दा भी। एक के बुलाये जाने पर दूसरे के कान खड़े जो जाते । सो पहले बिसेसर दुबे ही लंगड़ाते हुए सामने आए, "का राजा..?" अवधू सिंह ने उनकी पैलगी की और स्पष्ट किया, "आपको नहीं महाराज हम तो 'लंगड़ा लोहार' को ढूँढ रहे हैं । हमे तो आज तक पता नहीं चला कि 'बभनौटी' है कि 'लोहरोटी' । बसने के लिए और जगह नहीं की गांव में...? "दद्द' ! ई दुने से कैसे बोल रहे थे और तुमसे कैसे ?" कहने का तात्पर्य यह है कि बड़ी जाति के लोगों ने अपने से छोटी जाति को घृणित समझा । बड़ी जाति ने पूंजी पर अपना अधिकार समझा, शिक्षा पर अपना अधिकार समझा, ऊँचे काम पर अपना अधिकार समझा जहाँ तक कि छोटी जाति को अपने हिसाब से चलाना भी अपना अधिकार ही समझा । सम्पूर्ण कहानी में दोनों जातियाँ विपरीत चित्रों का निर्माण करती है । कहानी में एक और ब्राह्मणों के दम्भ, क्रूरता, शोषण और राजनीति का नग्न यथार्थ चित्रण किया है तो वहीं लोहारों के प्रति उपेक्षित व्यवहार और उन्हें ब्राह्मणों द्वारा नीचा दिखाने और बनाने की प्रकृति को उद्घटित किया है । दलित ददा को ब्राह्मणों और ठाकुरों के दुर्व्यवहार के प्रति रोष तो है लेकिन वह प्रतिरोध नहीं कर पाता है इसलिए वह अपना क्रोध अपने ही बेटे पर निकालता है ।

लेखक ने स्पष्ट किया है कि जातिगत भेदभाव ने लोगों की सोचने की शक्ति को खत्म कर दिया है और कहीं न कहीं संवेदनहीन ज्यादा बना दिया है । जिस समाज में लोग जाति के आधार पर बंटे होगें वहां इन्सानियत कहाँ जिन्दा होगी । वहां जाति की भांति प्रेम भी बंटा होगा, वहां मुस्कराहटें भी बंटी होगी, वहां संवेदनाएं भी बंटी होंगी।

21वीं सदी की बात की जाए तो यह कहानी स्पष्ट करती है कि समाज में अभी भी जातीयता की परम्परा खत्म नहीं हुई है बल्कि और ज्यादा जटिल होती जा रही है । विजातीय विवाह करने पर फेरु दुबे के साथ अपनी बिरादरी के लोग दुर्व्यवहार करने लगते हैं और उसपर धर्म को भ्रष्ट करने का आरोप लगाते हैं । अपनी जाति को छोड़ किसी और जाति–धर्म की लड़की से विवाह करना ब्राह्मणवादी संस्कृति में धर्म को भ्रष्ट करना है, जोकि नहीं किया जाना चाहिए । इसलिए केरू दुबे को विजातिय विवाह करने का फलागम यह मिलता है कि उसकी भाभी दुबाइन उसे ब्राह्मण से कुत्ते के रूप में सम्बोधित करती है – "तू बामन नहीं कुत्ता है, कुत्ता ! एह हाड़ लाकर चिचोर रहा है । कुत्ते को घर में घुसाकर मैं अपना धर्म भ्रष्ट क्यों करूँ ? हमारे घर में क्या बिटिया – बिटार नहीं है ?" फेरु दुबे का यह क्रियाकलाप गाँव भर में चर्चा का विषय बन जाता है, इस सन्दर्भ से इस बात की पुष्टि होती है कि जाति भेद सिर्फ स्वर्ण और अवर्ण के बीच तक ही सीमित नहीं है बल्कि यह अपने–अपने वर्ग में जटिल रुप में देखने को मिलती है। फेरु दुबे स्वंय ब्राह्मण जाति का है लेकिन जब वह एक नटिन से शादी कर लेता है तो वह अपनी ही जाति के लोगों के लिए अछूत बन जाता है – "मैंने देखा, जहां फेरु काका खड़े थे, उस जगह को गोबर से लिपवाया गया और तुलसी कुश–गंगाजल छिड़कर बाकायदा मन्त्र से शुद्ध किया गया ।" फेरू काका का किस्सा यही तक समाप्त ही नहीं होता बल्कि जब वह अपने भाई बसेसर दुबे से अपने हिस्से की ज़मीन मांगने पर पंचायत भी उसके विपक्ष में फैसला सुनाती है – "तुमने बामन रहते हुए भुँई माँगी होती तो जरूर मिलती । लेकिन अब जबकि तुम बामन रहे नहीं, भष्ट हो गए हो, तो बाभन की जमीन पर तुम्हारा कोई हक नहीं बनता ।" इससे स्पष्ट होता है कि स्थान को गोबर से लिपवाना, तुलसी–कुश, गंगाजल छिड़कर, मंत्र पढ़कर शुद्ध करना आदि कुसंस्कारों के माध्यम से ब्राह्मणवादी सोच संवेदनहीन हृदय की पोल खोलती है । स्वर्ण जाति का अमानवीय चेहरा तो तब उभरता है जब वह फेरू काका और उसकी पत्नी को मौत के घाट उतार दिया जाता है । स्वर्णता की आड़ में जीने वाले ऊँची जाति के लोग संवेदनहीन हो चुके हैं उन्हें व्यक्ति की मौत से कोई फर्क नहीं पड़ता है, बल्कि उनकी जाति के साथ कोई खिलवाड़ नहीं करना चाहिए, बल्कि विजातीय विवाह पर धर्म भ्रष्ट नहीं करना चाहिए अन्यथा विजातिय कहानी में एक पहलू स्वर्णों का अवर्णों के प्रति घृणित व्यवहार उभरता है और दूसरा पहलू यह उभरकर आता है कि अब अवर्ण भी पूँजी के धरातल पर मजबूत होने लगे हैं और अब उनमें भी स्वर्ण जाति की भांति मानसिकता पनपने लगी है । कहानी में काका का बेटा शंकर एक ऐसे पात्र के रूप में उभरता है जो केवल हिंसा में विश्वास करता है और उसने गाँव में अपना इतना रौब जमा लिया है कि उससे गांव के सभी स्वर्ण जातियां डरने लगी हैं । इस बात का दुःख बडकू को अन्दर तक उदास कर डालता है वह कहता है कि – "लेकिन वे सब मामूली चोटें थीं, जिस चोट ने मुझे सबसे ज़्यादा तकलीफ दी, जानते हो, वह क्या है ?

'क्या' हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना। हमीं नहीं ज्यादातर लोगों का युगों के इस बभनपने के सारे लोगों के तो बभनपन नहीं आना चाहिए था न ।"

इससे स्पष्ट होता है कि दलित समाज जिस मानसिकता के खिलाफ संघर्ष करता आ रहा था, अमानवीयता को झेलता आ रहा था, हिंसा का शिकार होता आ रहा था, वह ही थोड़ी सी सम्पन्नता आ जाने से संवेदहीन बनने लगा है । वह अपने विगत संघर्षों को भूलकर उसी ब्राह्मणवादी संस्कृति को अपना रहा है । जिसमें उसे सुधार करना

चाहिए । सम्पन्नता आ जाने से अवर्णों का व्यवहार भी परिवर्तित होता जा रहा है वह भी संवेदनहीनता की ओर रूख पकड़ता आ रहा है, प्रेम की भाषा भूलता नज़र आ रहा है ।

अन्ततः कहा जा सकता है कि जीवन की सम्पूर्णता में यह कहानी दलितों के आत्म सम्मान, स्वाभिमान और विकास की प्रक्रिया में जातिगत विद्वेष से ऊपर उठकर मानव होने की कहानी है ।

विवाह की परिणति वही होगी जो फेरू काका और उसकी पत्नी के साथ हुआ – ''फेरू काका और उनकी मेहरारू को घाटी दी गयी थी उन्हीं की गोजी से। ...गौरमिण्टी अस्पताल में चीर–फाड के बाद भी लाशें सड़ती, बदबू देती रहीं। फेरू काका और उसकी मेहरारू की लेकिन गाँव से कोई भी लेने न आया, बभनौटी से भी नहीं ? मेहतरों ने वहीं फूँक दी लाशें ।

ब्राह्मणवादी सोच ने जाति, धर्म एवं संस्कृति को ही नहीं बल्कि न्याय व्यवस्था और पुलिस व्यवस्था को भी पूरी तरह प्रभावित किया है, वह भी स्वर्णों के इशारें पर ही नाचती है इसका प्रमाण कहानी में तब मिलता है जब फेरू काका को बचाने के लिए माई और काका मदद करते हैं – ''फिर काका और माई को गरियाते मारते–पीटते ले जाने लगी पुलिस । एक–एक दृश्य आतंक का दाग बनकर आज भी उभरा पड़ा है । जेहन में – थप्पडों और डण्डों की मार में गिरते–पड़ते रोते–बिलबिलाते काका और माई, ...उधर काका और माई का छुड़ाने में हमारे नाममात्र के खेत और माई, आजी के नाममात्र के गहने भी बिक गए ।

21वीं सदी में विकास के नाम जितनी भी बातें कह ले लेकिन अब भी गाँव के स्वर्ण अपनी झूठी आन–बान और संकीर्ण सोच से उभर नहीं पाए हैं और न ही एक–दूसरे के प्रति मानवीयता का भाव पैदा हुआ है । वह अभी भी किसी छोटे को उभरता हुआ नहीं देख सकते हैं । बडकू जब यह घोषणा करता है कि इस बार रामफेर–रामचेत सम्मान ''गिरजा रविदास' को दिया जाएगा क्योंकि उसने दुलारी जैसी बेसहारा को सहारा दिया । तब स्वर्णों का गुस्सा सातवें आसमान पर चढ़ जाता है । बड़कू अभी अपनी बात पूरी भी नहीं कर पाया था कि दर्शकों में से कई लोग विरोध में उठकर खड़े हो गए । ''अरे देखते क्या हो, पैसे के बूते इस धरम की सभा में अधरम फैला रहा है सार! खींच कर मारों दस जूते, दिमाग सही हो जाए ।''

अवर्णों को आगे बढ़ता देख सवर्णों द्वारा हिंसात्मक व्यवहार उनकी संवेदहीनता एवं संकुचित मानसिकता का द्योतक है ।

20.4 निष्कर्ष :

अतः कहा जा सकता है कि संजीव की कहानियों में संवेदना का पुट है। इन कहानियों में संघर्ष की लौ जलाए रखने की आशा है । कथाकार उपेक्षित समाज की वेदना को समझता है और कहीं न कहीं उन्हें न्याय दिलाने के पक्ष में खड़ा होता है ।

20.5 कठिन शब्द :

1. विभीषिका
2 अराजकता

3. दायित्व

4. संरक्षण

5. संकीर्णता

20.6 अभ्यासार्थ प्रश्न :

प्र1. संजीव की कहानियों की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए ।

उ॰

प्र2. संजीव एक संवेदनशील कहानीकार है सिद्ध कीजिए ।

उ॰

प्र3. संजीव की कहानियों में संवेदनशीलता का पुट है, सिद्ध कीजिए ।

उ॰

प्र4. भावनात्मक धरातल पर संजीव की कहानियां कितनी संवेदनशील है, प्रकाश डालिए ।

उ॰

प्र5. संवेदना का अर्थ समझाते हुए, संजीव की कहानियों की संवेदनशीलता को मुखरित कीजिए ।

उ॰

20.7 सन्दर्भ ग्रन्थ :

1. संजीव की कहानियों के पात्रों का समाज मनोवैज्ञानिक अध्ययन – डॉ० चन्द्रा मुखर्जी
2. संजीव की कहानियां शिल्प एवं शैलीगत अध्ययन – डॉ० स्नेहा पाटील
3. कथाकार संजीव मूल्यांकन के विविध आयाम – विश्वज्योति
4. सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ० शहजहान मणेर
5. संजीव व्यक्तित्व एवं कृतित्व – डॉ० रामचंद्र मारूती लोंढे
6. पाखी पत्रिका, अंक – 12, सितम्बर – 2009 (संजीव पर विशेषांक)

*****

संजीव की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

21.0 रूपरेखा

21.1 उद्देश्य
21.2 प्रस्तावना
21.3 संजीव की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र
21.3.1 वस्तु शिल्प
21.3.2 कहानी का आरम्भ और अन्त
21.3.3 संवाद शिल्प
21.3.4 वातावरण शिल्प
21.3.5 चरित्र शिल्प
21.3.6 विवेच्य कहानियों का शैलीगत मूल्यांकन
21.3.7 विवेच्य कहानियों का भाषागत मूल्यांकन
21.4 कहानियों के प्रमुख पात्र
21.4.1 राख
21.4.2 बुद्धपथ
21.4.3 योद्धा
21.5 कठिन शब्द
21.6 अभ्यासार्थ प्रश्न
21.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

21.1 उद्देश्य :–

प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप –

– शिल्प का अर्थ जान सकेंगे ।

– रचना के सन्दर्भ में शिल्प का क्या महत्त्व होता है ।

– संजीव ने अपनी कहानियों को प्रभावी एवं सशक्त बनाने के लिए किन–किन विधियों को अपनाया है, यह जान सकेंगे।

– विवेच्य कहानियों की अभिव्यक्ति हेतु संजीव ने किस शैली को अपनाया है, यह जान सकेंगे।

21.2 प्रस्तावना :–

संजीव ने कहानियों में स्वाभाविक, सहज, सरस, सतर्क विचारों के द्वारा शिल्प में विविधता को अपनाया है। कहानियों का आरम्भ वर्णनात्मक, आत्मकथात्मक शैलियों द्वारा प्रारम्भ हुआ है। चरित्र–चित्रण में आदर्शवादी पात्र, नारी पात्र, उच्चवर्ग के खल पात्र आदि पात्रों का चरित्र–चित्रण कर उनकी चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट किया है। संवादों के माध्यम से पात्रों का चरित्र–चित्रण, उद्‌देश्य तथा कथावस्तु का विकास संवादों के माध्यम से परिलक्षित होता है। शिल्पगत विविधता के कारण ही इनकी कहानियों की रोचकता बढ़ी है।

21.3 संजीव की कहानियों का शिल्प एवं चरित्र :–

किसी रचना की संवेदना का कथ्य जिन सहयोगी तत्वों या पद्धतियों के सहारे अभिव्यक्त किया जाता है उन्हीं से उसके शिल्प का निर्धारण होता है। संवेदना रचना का प्राणतत्व होता है और शिल्प उसे धारण करने वाला शरीर होता है। शिल्प रचना को एक खास आकृति और पहचान प्रदान करता है। शिल्प के अन्तर्गत कथानक, पात्रों का चरित्र, संवाद, भाषा, रचना का शीर्षक, उसकी शुरूआत और अंत देशकाल आदि तत्वों का समावेश होता है।

अंग्रेजी में शिल्प के लिए स्ट्रक्चर, फार्म, डिजायन, क्राफ्ट, सर्फेस आदि पर्याय शब्दों का प्रयोग होता है। हिन्दी रचना के शिल्प पक्ष के लिए कला पक्ष, रूप, शैली, संरचना आदि शब्दों का प्रयोग होता रहा है। बिना शिल्प के किसी भी रचना या कहानी का निर्माण सम्भव नहीं है। डॉ. जवाहर सिंह के शब्दों में ''किसी चीज़ को बनाये या रचने का ढंग अथवा तरीका किसी वस्तु के रचने की जो–जो विधियां अथवा प्रक्रियाएं होती है। उनके समुच्चय को शिल्प विधि कहते है।''

कथाकर संजीव शिल्प के सन्दर्भ में प्रयोग धर्मी है। इनकी कहानियों का शिल्प दो उद्देश्यों से निर्मित होता रहा है। एक तो यथार्थ को जीवंत और विश्वसनीय तरीके से पेश करना और कहानी को प्रभावशाली तरीके से पाठकों तक संप्रेषित करना या उसमें चुंबकीय आकर्षण पैदा करना रहा है। संजीव जनवादी कहानीकार है। अमूल सामाजिक परिवर्तन को अपनी कहानियों का लक्ष्य मानते हैं। शिल्प को इन्होंने यथार्थवाद की ताकत के रूप में साधने की जरूरत पर बल दिया है। इनकी कहानियों का शिल्पगत अध्ययन इस प्रकार है :–

21.3.1 वस्तुशिल्प :–

कोई भी कहानी शिल्प रहित नहीं होती और कहानीकार के व्यक्तित्व और आकांक्षाओं का अनेक शिल्प पर

प्रभाव पड़ता है। रचना को प्रस्तुत करने की प्रणाली शिल्पविधि है। कहानी शिल्प के बारे में डॉ० सुरेश सिन्हा लिखते हैं, "कहानी लिखने के लिए कहानीकार को कहीं भटकना नहीं पड़ता वह जो जीवन जीता है उसी से कहानियों की प्रेरणा भी लेता है। उस जीवन से संवेदनशील घटना को चुन लेता है, इसके लिए अनेक उपकरण जुटाने पड़ते हैं। यह विभिन्न उपकरण ही वस्तुतः कहानी के तत्व होते हैं। जिनसे मिलकर एक कहानी की रचना होती है।" प्रेमचन्द ने कहानी को कला की अनिवार्य जरूरत के रूप में रेखांकित किया है। वास्तव में कहानी का शिल्प पाठकों की अभिरूचि से भी प्रभावित होता है। प्रेमचन्द ने लिखा है कि – "प्रेम वियोग आदि विषय इतनी बार लिखे जा चुके हैं कि उनमें कोई नवीनता बाकी नहीं रही। अब तो पाठक – कहानियों में नये भावों का, नये विचारों का, नये चरित्रों का दिग्दर्शन चाहते हैं।" प्लाट की सुन्दरता, चरित्रों का चित्रण, घटना का वैचित्र्य सभी समिश्रित हो जाते हैं तो रोचकता अपने आप आ जाती है।

सफल लेखक वही होता है जो सुधार के जोश में कथा की रोचकता को कम नहीं होने देता है संजीव इसी प्रकार के लेखक है जिन्होंने कहानी की रोचकता को बनाए रखा। इन्होंने अपनी कहानियों को सफल बनाए रखने के लिए सजीवता, संक्षिप्तता, स्वाभाविकता, मौलिकता, विश्वसनीयता, कुतूहलता आदि गुणों को अपनाया, विवेच्य कहानियों में संजीव ने गरीब, सामान्य स्त्री, दलित, सामंती उत्पीड़न, जातीय भेदभाव, पूंजीवादी शोषण आदि विषयों को कहानी में उठाया है। इनकी कहानियों में वर्गीय चित्रण स्पष्ट दिखाई देता है। संजीव की कहानियों के बारे में आलोचक प्रभाकर श्रोत्रिय कहते हैं कि – "संजीव हालांकि घटना बहुल सामाजिक यथार्थ का साक्षी लेखक है। फिर भी मन की निगूढ़ वृत्तियों में उतरने रचना का अंत सौन्दर्य की अनवरत खोज करने के बारे में उसे उदासीन नहीं कहा जा सकता। किसी भी समकालीन लेखक की तुलना में संजीव के कथा संसार में सृजन का सौंदर्य हार्दिक स्पर्श और मार्मिकता कहीं अधिक मिलेगी ।

'योद्धा' कहानी में जातिगत भेदभाव को उभारने के साथ–साथ ब्राह्मणवाद से लैस हो रही छोटी जाति को भी उभारा है। लेखक ने इस कहानी के माध्यम से स्पष्ट किया है कि पैसे की अधिकता के कारण छोटी जातियों में भी ब्राह्मणवाद के गुण दिखाई देने लगे हैं।

बुद्धपथ कहानी धर्म के नाम पर हो रही हिंसा पर प्रकाश डालती है। मन्दिर और मस्जिद बनाने की ज़िद ने मनुष्य को संवेदनहीन बनाया है। वह प्यार की भाषा कम बोलता है और वह बुद्धपथ की अपेक्षा युद्धपथ पर अग्रसर है।

'राख' कहानी दलित स्त्री की पीड़ा को अभिव्यक्त करती है और साथ ही ग्रामीण समाज के भीतर पनप रहे अन्धविश्वास का चित्रण भी करती है। ग्रामीण समाज के उच्च वर्ग के लोगों द्वारा छोटी जाति की गरीब जोखन बहू के साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उसका मार्मिक चित्रण लेखक ने किया है। मूलतः संजीव ने समाज के वंचित घटकों को चित्रित किया है। इनकी कहानियां एक प्रकार की न होकर विविध विषयों को लेकर लिखी गयी है। इनकी कहानियाँ आरम्भ, मध्य, अंत की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण दिखाई देती हैं।

21.3.2 कहानी का आरम्भ और अन्त :–

कहानी की सफलता के लिए उनका आरम्भ प्रभावात्मक होना जरूरी है इस दृष्टि से संजीव पूर्ण रूप से सफल हुए हैं। इन्होंने कहानी का आरम्भ विभिन्न प्रकार से किया है। जैसे 'योद्धा' कहानी का आरम्भ संजीव ने वर्णन

द्वारा किया है – ''वह एक अघोषित देवासुर संग्राम था, जो आज भी चल रहा है। यूँ कहूँ, इब्तदा ही गलत हो गयी थी लेकिन जो होता आ रहा था, उस पर हमारा वश ही कहाँ था ? अब यह क्या मज़ाक था कि दुबौली के बभनटोले में पांच घर ब्राह्मणों के साथ दो घर हम लोहारों का भी था। हुआ भी तो तनिक परे हो सकता था लेकिन नहीं, ऐन आमने–सामने ही ! खैर मज़ाक तो और भी थे...।''

'राख' कहानी में कहानी का अन्त पहले देकर आरम्भ किया है । इस कारण से कहानी में अन्त तक रोचकता बनी रहती है। पाठक के भीतर घटना का मूल कारण जानने की कुतूहलता अन्त तक बनी रहती है। 'राख' कहानी का आरम्भ इस सन्दर्भ में उद्धरित है – ''चिता ठण्डी पड़ने लगी थी पर सवाल थे कि अभी भी सुलग रहे थे। अचानक ऐसा क्या हो गया कि दोनों ही ...? ''......'' वह किधर से आई ? ''.............'' किसी ने रोका नहीं ? आतंक, उत्तेजना और करुणा का माहौल । नए–नए लोग आते जा रहे थे, नए–नए सवाल जुड़ते जा रहे थे और सारे सवालों के केन्द्र में एक ही सवाल था, जोखन तो माना कि मरकर अपनी चिता तक पहुंचा था, लेकिन जोखन बहू तो जीते जी ही... आखिर क्यों ?''

'बुद्धपथ' कहानी का आरम्भ भी वर्णन द्वारा ही किया गया है। वर्णन द्वारा पाठक के भीतर एक दृष्टिकोण बन जाता है और अन्त तक उसके भीतर रोचकता बनी रहती है। ''बुद्ध यहाँ के लिए एक सेलीब्रेटी चीज़ है। लोग यह कहते हुए फ़ख्र महसूस करते हैं कि यह बुद्ध का देश है। लाखों हिन्दू इस नाम को कलँगी की तरह धारण करते हैं। कितनी ही कथाएं जुड़ी हैं बुद्ध से.... भाई देवदत के तीर से घायल हंस के घाव को आंसुओं से धोते करूणा – सिन्धु सिद्धार्थ। ! अँगुलिमाल जैसे बर्बर, हत्यारे दस्यु को अहिंसा के चरणों में समर्पित कराने वाले गौतम !''

संजीव की कहानियों का अन्त व्यंग्य प्रधान है। योद्धा, राख और बुद्धपथ कहानी का अन्त व्यंग्यपूर्ण और मर्मस्पर्शी है। जिस कहानी का अन्त व्यंग्य प्रधान और मर्मस्पर्शी होता है वही कहानी अन्ततः पाठक को प्रभावित करती है। 'योद्धा' कहानी का अन्त इस प्रकार है – ''हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना हमी नहीं, ज्यादातर लोगों का। युगों के इस बभनपने के मारे लोगों में तो बभनपना नहीं आना चाहिए था न !''

अतः स्पष्ट होता है कि संजीव की कहानियों का कथावस्तु रूपी महल आकर्षित, संक्षिप्त, प्रभावात्मक, मौलिक एवं सुगढ़ है। कहानी का आरम्भ और अंत कुतूहलवर्धक, उत्साहवर्धक, प्रभावात्मक एवं विश्वसनीय लगता है अर्थात संजीव की कहानियों का शिल्प सौन्दर्य से परिपूर्ण है।

21.3.3 **संवाद शिल्प** :– संवाद शिल्प कहानी का प्राणतत्व होता है। संवादों से ही कहानी प्रवाही एवं प्रभावी बनती है। संवादों के सन्दर्भ में डॉ. भूलिका त्रिवेदी का कहना है कि ''कथोपकथन के द्वारा पात्रों के चरित्र का परिचय मिलता है। इससे कहानी में सजीवता आ जाती है। कथा–प्रवाह में तीव्रता आ जाती है। घटना या कार्य–व्यापारों के संकेत मिलते हैं, कहानी में रोचकता आ जाती है। वास्तव में कथोपकथन के लिए आवश्यक है कि वह सजीव, संगत, चमत्कारपूर्ण और पात्र एवं परिस्थिति के अनुकूल हो। कहानी के संवाद संक्षिप्त एवं प्रभावात्मक जरूरी है। कहानी के संवादों का महत्त्वपूर्ण कार्य चरित्र का चित्रण, कथा का संकेत एवं उद्देश्य को स्पष्ट करना होता है। संजीव की कहानियों में संवाद शिल्प अन्य तत्वों के विकास में योगदान देता हुआ देशकाल का बोध करवाते हुए उद्देश्य को स्पष्ट करता है।

संजीव की कहानियों में भावात्मक संवाद, व्यंग्यात्मक संवाद एवं छोटे संवाद दिखाई देते हैं। भावात्मक संवाद के सन्दर्भ में 'बुद्धपथ' कहानी का उदाहरण दृष्टव्य है – ''आचार्य किसी गली से बच निकलना चाह रहे थे कि कुछ लोगों ने देख लिया । भाग रहा है। स्पाई, मार साले को । हम बौद्ध भिक्षु है बेटा ! कोई कुछ सुनना नहीं चाहता। खींचो–खींचो लुंगी खींचो, देखो यह कौन है ! किसी ने कपड़े खींचे, चीरफाड़ डाले गए । वह सब कुत्तों का हुजूम था।... कुछ भी तो नहीं किया था हमने, लेकिन पता नहीं उन्हें मुझ पर क्यों शक हुआ कि मैं स्पाई हूँ।''

संजीव की कहानियों में व्यंग्यात्मक संवादों के पुट के कारण सजीवता एवं स्वाभाविकता चित्रित होती है। इस सन्दर्भ में राख कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''अहा डागदर बाबू ! आइए–आइए।' सुकुलजी मुझे पुकारते हैं, यहां चढ़ाइए यह सती की मुख्य वेदी है। और वोऽऽऽ ? मैं दूसरी पिण्डियों की ओर बढ़ा। आश्चर्य, दूसरी पिण्डी पर चढ़ावा वसूलने, जोखन बहू की देवरानी थी, तीसरी पर सन्तू, चौथी पर शिवचरण, पांचवी पर उनके बच्चे।'' अर्थात इस सन्दर्भ से पुष्ट होता है कि भारतीय समाज के गांवों के लोगों में अन्धविश्वास की जडें बहुत भीतर तक पैर जमाये बैठी है। पैसे–पैसे के लिए तड़पने वाली जोखन बहू सती होने के बाद लोगों की रोजी–रोटी का साधन बनती है। जिन ठाकुर एवं पंडित समाज के लिए छोटी जात की जोखन बहू डायन होती है। सती होने के उपरान्त उनके लिए देवी बन जाती है। संजीव ने इन्हीं व्यंग्यात्मक संवादों के माध्यम से मनुष्य के दोगले व्यवहार पर प्रहार किया है।

संजीव की कहानियों में अत्यन्त संयत एवं छोटे संवाद भी परिलक्षित होते हैं। छोटे संवादों में आकर्षण का पुट भी झलकता है। 'योद्धा' कहानी का उदाहरण इस सन्दर्भ में द्रष्टव्य है –

''दद्दा''

''हाँ।''

ई दुबे से कैसे बोल रहे थे और तुमसे कैसे ?

बड़े हैं न !

बड़े तो तुम हो ।

अरे नहीं, जाति के ऊँचे। ठाकुर हैं न !

छोटे–छोटे संवादों के माध्यम से संजीव की कहानियों में सरसता एवं रोचकता का निर्माण हुआ है।

कुतूहल उत्पन्न करने वाले संवाद भी इनकी कहानियों में मिलते हैं । कहानी का मुख्य तत्त्व भी कुतूहल ही है। इसी तत्त्व के माध्यम से ही कहानी में रोचकता बढ़ती है तथा कहानी प्रारम्भ से लेकर अन्त तक पढ़ने को पाठक विवश रहता है। कुतूहल वह तत्त्व होता है जो पाठक को बांधकर रखता है। संजीव के कहानी साहित्य में कुतूहल बर्धक संवाद परिलक्षित होते हैं जैसे – योद्धा, राख और बुद्धपथ कहानी। इन कहानियों में कुतूहल तत्व के कारण रोचकता बढ़ी है। 'योद्धा' कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''क्या सभी हमसे ऊँचे हैं ? बनिया, लाला, ठाकुर, बाभन...!, और नीचे ?, धोबी, धरिकार, पासी, चमार...। और नबी के घरवाले ? पठान हैं, मुसुरमान हमसे अलग ! ऊँचे भी, नीचे भी...!'' स्पष्ट होता है कि इनकी कहानियों के संवाद संक्षिप्त, प्रभावात्मक, व्यंग्यात्मक, कुतूहलवर्धक एवं सोउद्देश्यपूर्ण परिलक्षित होते हैं।

21.3.4 वातावरण शिल्प :–

कहानी लेखक अपनी कथा के देश–प्रदेश आकाश–अवकाश को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट करता है। काल बोध के कारण कहानी को स्पष्ट करने में सहायता मिलती है। वातावरण कहानी का आवश्यक अंग माना जाता है। वातावरण चित्रण के सन्दर्भ में गुलाबराय का कहना है कि ''कहानी में देश–काल की स्पष्टता लाने के लिए तथा कार्य से परिस्थिति की अनुकूलता व्यंजित करने के लिए इसका चित्रण आवश्यक हो जाता है। वातावरण भौतिक और मानसिक दोनों प्रकार का हो सकता है। भौतिक वातावरण भी प्रायः ऐसा होता है कि जो पात्रों की स्थिति की व्याख्या में सहायक हो ।''

संजीव की कहानियों में सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक चित्रण दृष्टिगोचर होता है। इनकी कहानियों का विषय फलक व्यापक है। इनकी कहानियों का भूगोल भी बड़ा है। भारतीय राजसत्ता और व्यवस्था, पुलिस तंत्र, प्रशासन, भारतीय निम्नवर्ग, मध्यवर्ग, मुस्लिम समाज, जाति, दलित नारी, सेठ–साहूकार आदि उनकी कहानियों में भरे पड़े हैं। इनकी कहानियों का विषय फलक व्यापक तथा अलग–अलग आंचल का है जो कहानियों को सजीव एवं प्रभावात्मक बनाने में सहायक रहा है। घटना स्थल के अनुरुप चित्रण मिलता है।

सामाजिक वातावरण के माध्यम से कहानी प्रभावात्मक बनती है । सामाजिक वातावरण के द्वारा समाज की परिस्थितियाँ भी परिलक्षित हो जाती हैं, जैसे – 'राख' कहानी में महताइन की टिप्पणी से स्पष्ट झलकता है कि ग्रामीण समाज में अभी भी छोटी जात के प्रति भेदभावपूर्ण व्यवहार और छोटी जाति की स्त्री को हीनता की दृष्टि से देखा जाता है, उसे मानवी नहीं समझा जाता है, जोखन बहू ज़िन्दा होती है तो वह गाँव के लोगों के लिए डायन होती है और जब सती होती है तो देवी बन जाती है। इस कहानी में गांव के लोग अन्धविश्वास में डूबे हुए हैं और जातिगत भेदभाव का व्यवहार किसी भी प्रकार अशिक्षित लोगों में कम नहीं हुआ है – महताइन के शब्दों में – ''अब तुम्हीं बताओ डागदर बाबू, डागदर के डागदर हो, बाभन के बाभन ... सत के रखवारे। कहां गौरा पार्वती, कहाँ रानी पदमिनी, कहाँ रूपकुंअर और कहाँ ई ऽऽऽ! अब जब कुकुर–बिलार भी सती होने लगें तो सती की महिमा कहाँ रह गई ?'' महताइन की इस टिप्पणी के द्वारा उनके दूषित मानसिक वातावरण का चित्रण मिलता है और साथ ही इनके द्वारा समाज का वातावरण भी स्पष्ट झलकता है कि अभी भी समाज में जातिगत भेदभाव की जड़ें बरकरार है। 'योद्धा' कहानी में सामाजिक वातावरण इस प्रकार का उभरता है कि उसमें लोग भेदभाव केवल वर्गगत या जातिगत ही नहीं मानते बल्कि ईश्वर में भी भेद मानते हैं अर्थात जिस–जिस जाति एवं वर्ग का व्यक्ति होगा उसका ईश्वर भी उसी जाति का ही होगा। 'योद्धा' कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''भगवान की क्या जात है?'' भगवान की जात...? अटकने लगे फेरू काका, राम तो ठाकुर थे लेकिन परशुराम बाभन... रुको भगवान भी कई हैं न, दस–दस तो अवतार ही हैं। इनमें से कोई लोहार भी है ? लोहार ? विसकर्मा थे तो सही लेकिन लोहार ही थे कि और कोई जात हमको ठीक–ठीक नहीं मालूम ?''

संजीव ने गांव का वातावरण बताने के लिए गांव का माहौल कहानी में तैयार किया है जैसे खेत–खलिहान, पशु, हल, आदि। शहर का वातावरण बताने के लिए शहरी माहौल कहानी में चित्रित किया है जैसे 'बुद्धपथ' कहानी का उदाहरण द्रष्टव्य है – ''उधर शहर का पेट उदर शूल सा फूलता ही चला जा रहा है। चारो ओर से बिल्डिगें भेड़ियों की तरह दांत निकाले, पंजे मारती, गुर्राती हुई विहार पूर टूट पड़ने को आमादा है। मिट्टी निकाल लेने और

नाबदानों का रुख उस खाली जगह की ओर मोड़ देने से वहाँ गन्दे पानी का डबरा हो गया है।'' गांव के वातवरण को कहानीकार ने योद्धा कहानी में इस प्रकार प्रस्तुत किया है – ''काका जब भी आते खेत खरीदते। अब गांव में भी हमारे पास पाँच बीघे खेत हो गए थे, गाय, भैंस, बैल, हलवाह, चरवाह और पम्पिंग सेट था।'' लेखक ने बड़ी ही सजीवता के साथ गाँव और शहर के बदलते वातावरण प्रकाश डालकर कहानी को विश्वसनीय बनाया है।

21.3.5 चरित्र शिल्प :–

चरित्र–चित्रण कहानी का एक अभिन्न तत्व होता है। कहानीकार पात्रों के चरित्र का विकास वर्णन, मनोविश्लेषण, संवाद, प्रसंग आदि से करता है। यह चित्रण कभी प्रत्यक्ष तो कभी परोक्ष होता है। इस सन्दर्भ में हिन्दी के आलोचक गुलाबराय का विचार द्रष्टव्य है – ''आजकल कथानक को उतना महत्त्व नहीं दिया जाता जितना कि चरित्र–चित्रण और भावभिव्यक्ति को चरित्र–चित्रण का सम्बन्ध पात्रों से है। कहानी में पात्रों की संख्या न्यूनातिन्यून होती है। कहानी में पात्रों के चरित्र के ऐसे अंश पर प्रकाश डाला जाता है, जिसमें व्यक्ति का व्यक्तित्व झलक उठे।'' इससे स्पष्ट होता है कि कहानी में भी पात्रों का पूरा जीवन चित्रित नहीं होता बल्कि व्यक्ति के जीवन का एक भाग, अंश या एक पक्ष चित्रित किया जाता है। संजीव की कहानियों के चरित्र–चित्रण में पात्रों की व्यवहारिक, स्वभाविकता, कथात्मक अनुकूलता, मौलिकता, सजीवता, आदि महत्त्वपूर्ण गुण परिलक्षित होते हैं। संजीव की कहानियों के पात्रों का वर्गीकरण निम्नलिखित हैं :–

पुरुष प्रमुख पात्र :– संजीव ने अपनी समस्त कहानियों के प्रमुख पात्रों को न्याय देने का सफल प्रयास किया है। प्राचीन काल में नायक और नायिका को ही महत्त्व दिया जाता था, लेकिन आधुनिक काल में सभी पात्रों को न्याय देने की कोशिश की जा रही है। छोटकू, छोटके काका, भैया, अवधू सिंह (योद्धा), आचार्य शीलभद्र, राहुल (बुद्धपथ), जोखन, पंडित सुकुल जी, मवेशी डॉक्टर (राख) आदि संजीव की कहानियों के प्रमुख पुरुष पात्र हैं।

स्त्री प्रमुख पात्र :– संजीव की कहानियों में काकी, फेरू काका की मेहरारू, दुबाइन (योद्धा), सुजाता (बुद्धपथ), जोखन बहू, महताइन (राख), प्रमुख स्त्री पात्र है।

सहायक पात्र :– फेरू काका, मझले काका, शंकर (योद्धा), आनन्द (बुद्धपथ), जोखन बहू की देवरानी, गयादीन (राख), कहानी के सहायक पात्रों के रूप में उभरते हैं।

संजीव ने अपने आदर्श या सकारात्मक चरित्रों को प्रभावशाली बनाने के लिए भी उनके समानंतर कमज़ोर चरित्रों को रखा है।

चरित्र चित्रण विधि :– संजीव की कहानियों में चरित्र–चित्रण शिल्प में वर्णनात्मक, संवादात्मक, आत्मकथात्मक, विवरणात्मक, अनिश्चयात्मक, मनौवैज्ञानिक आदि विधियों का प्रयोग किया है।

(क) संवादात्मक विधि :– इस पद्धति के अन्तर्गत पात्र के व्यक्तित्व में प्रभावभिव्यक्ति आ जाती है। व्यक्ति के आचार–विचार, तर्क, भावनाएं आदि इस पद्धति के माध्यम से अभिव्यक्त होती है जैसे – 'योद्धा' कहानी में बंशू सिंह की बेटी कमला को रामफेर–रामचेत से सम्मानित किया गया तो उच्च जाति के लोग विचलित हो जाते हैं – ''ई कहाँ की टॉपर हैं ? बड़कू की तरह दो साल से रपट रही है हाईस्कूल में। दूध के धन्धे में टॉप किया है भाई! बाप चरवाहा था, बेटी दूध नहीं बेचती तो क्या करती ? सुनो, सुनो इनाम में उसे एक साइकिल मिली और एक मुर्रा पडिया। अब

लोहार–कोंहार, धोबी–धरिकार के हाथ में पैसा आएगा तो क्या होगा ?" उच्च वर्ग के लोगों के मन में छोटी जाति के प्रति कोई संवेदना का पुट नहीं उभरता है और न ही उनकी मेहनत का सम्मान करते नज़र आते हैं। संवादात्मक विधि के द्वारा पात्र का आन्तरिक व्यवहार उभरता है। संवादात्मक विधि बुद्धपथ और राख कहानी में भी अपनाई गई है।

(ख) आत्मकथात्मक विधि :– आत्मकथात्मक पद्धति में पात्र की मानसिकता का चित्रण होता है जैसे राख, योद्वा, कहानी में आत्मकथात्मक विधि का चित्रण परिलक्षित होता है। "धुएं में झिलमिलाते उस औरत के चेहरे की शिनाख्त लोग अपने–अपने ढ़ंग से कर रहे थे, मैं भी... हाँ उस औरत को मैं जानता था। महतों के खटाल में साफ–सफाई का काम करती थी। वह गोबर कढ़िन थी और मैं मवेशी डॉक्टर। कुल इत्ता–सा रिश्ता बनता था हमारे बीच। ...सुकुलजी की तरह मैं ब्राह्मण था, वह किसी छोटी जाति की। मैं इस परतदार सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था की ऊपरी परत पर, वह निचली परत पर...। औरों की तरह मैं भी इस दुःखद प्रसंग की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी को नज़र अन्दाज़ कर रहा हूँ, कि इस चिता में जोखन बहू की राख ही नही है, एक राख और है – जोखन की राख। दोनों मौतें कहीं न कहीं जुड़ी हुई हैं। आज अगर जोखन ज़िन्दा होता तो वह भी ज़िन्दा होती।"

(ग) व्यंग्यपरक विधि :– इस पद्धति में भी पात्र की मानसिकता का चरित्र झलकता है। जैसे 'योद्धा' कहानी में भैया (बड़कू) का विचार पूंजीपति लोगों में पनपे अहं पर व्यंग्य करता है, चाहे वह पूंजीपति ब्राह्मण, ठाकुर वर्ग के हों या फिर लोहार जाति के हों। पैसे की अतिशयता में ही बभनपना छुपा रहता है। उदाहरण – "हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना–हमी नहीं, ज्यादातर लोगों का। युगों के इस बभनपने के मारे लोगों में तो बभनपना नहीं आना चाहिए था न!" व्यंग्यात्मक पद्धति का 'बुद्धपथ' कहानी में चित्रण मिलता है। प्रस्तुत कहानी मन्दिर के नाम पर युद्ध करने वाले लोगों पर व्यंग्य करती है। आचार्य शीलभद्र बौद्ध बिहार एवं मन्दिर बनाने की इच्छा अन्तः बदल जाती है। जिस भगवान ने खुद राजगृह का परित्याग किया, उसे ही महल में कैद करने चले थे हम ? किस मन्दिर के लिए इतना उन्माद ? किस मन्दिर की परिकल्पना हम बार–बार करते रहे, न दीन देखी, न दुनिया, बस इसी के निर्माण की चिन्ता में ही होम कर डाली उम्र...। यही तो है वह। यही है... मां का गर्भ।"

अतः कहा जा सकता है कि संजीव के कहानी साहित्य में पात्र एवं चरित्र–निर्मिति में शिल्प योजना काफी असरदार एवं प्रभावात्मक दिखाई देती है। पात्रों की भावात्मक, मानसिक, बौद्धिक एवं सामाजिक अभिव्यंजना परिलक्षित होती है।

21.3.6 विवेच्य कहानियों का शैलीगत मूल्यांकन :–

व्यक्ति के हृदय के भावों को अभिव्यक्त करने का तरीका शैली कहलाता है। शैली का अर्थ बताते हुए डॉ. भागीरथ मिश्र कहते हैं कि "शैली की स्वभाविकता कहानी की जान है। स्वाभाविक और सफल कहानी वही है, जिसमें वर्णन और वार्तालाप दोनों का सहारा लेकर कथानक का विकास एवं चरित्र–चित्रण उपस्थित किया गया है। यह सदा ही ध्यान में रखना चाहिए कि संक्षिप्त और स्वाभाविक शैली कहानी कला का आवश्यक अंग है।" कथा विषय या संवेदना की अभिव्यक्ति के लिए संजीव ने कथा–साहित्य की भाषा को अधिक से अधिक सरस, स्वाभाविक, प्रभावात्मक एवं रोचक बनाने के लिए अनेक शैलियों का प्रयोग किया है। इन्होंने सिर्फ पारंपरिक शैलियों का इस्तेमाल ही नहीं किया है बल्कि

कुछ नये किस्म की शैलियों को भी अपनाया है। उनमें वर्णनात्मक, संवाद, पत्रात्मक, साक्षात्कार, भाषण, काव्यात्मक, पूर्वदीप्ति, फंतासी, प्रथम पुरुष अर्थात आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग किया है।

आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग 'राख' और 'योद्धा' कहानी में किया है। आरम्भ में ही सबसे पहले कथावाचक से मुलाकात होती है। 'राख' कहानी में ''धुएँ में झलमलाते उस औरत के चेहरे की शिनाख़्त लोग अपने–अपने ढंग से कर रहे थे, मैं भी ....। हाँ, उस औरत को मैं जानता था। वह महतो के खटाल में साफ–सफाई का काम करती थी। वह गोबर कढिन थी और मैं मवेशी डॉक्टर। ...मैं इस परतदार सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्था की ऊपरी परत पर, वह निचली परत पर....।'' योद्धा कहानी में भी 'मैं' शैली का प्रयोग मिलता है। ''दद्दा के दो बेटे–भैया और मैं। दद्दा लँगड़े थे और भैया लँगड़े की लाठी। ...दद्दा के हिस्से की मार–झिड़की के भी एक तरह से सहभोक्ता रहे। वर्षों–वर्षों तक मैंने कभी उनको प्रतिवाद करते नहीं सुना। ...वे मुझसे सात साल बड़े थे। मगर वे जितने चुप रहते मैं उतना ही वाचाल था।''

संजीव ने वर्णनात्मक शैली को भी कथा कहने का आधार बनाया है। इस शैली में किसी पात्र, घटना, दृश्य या प्रसंग का वर्णन, विवरण प्रस्तुत किया जाता है –'बुद्धपथ' कहानी का उदाहरण –''बाहर के कम ही लोगों को पता होगा कि शहर के जिस कूड़ेखानें से वे नाक पर रूमाल दिए गुजर रहे होते हैं, वहां विश्व के सुन्दरतम बौद्ध विहार का सपना साँस ले रहा है। सिर्फ विहार ही नहीं बौद्ध मन्दिर भी अद्वितीय और उसमें विराजमान तथागत भी।'' इन्होंने कहानियों में संवादात्मक एवं व्यंग्यात्मक शैली का प्रयोग भी यथातथ्य किया है। इससे स्पष्ट होता है कि संजीव ने कहानी की संवेदना को प्रभावशाली बनाने के लिए नए–पुराने प्रचलित–अप्रचलित सभी शिल्पगत शैलियों का प्रयोग सफलता से किया है।

21.3.7 विवेच्य कहानियों का भाषागत मूल्यांकन :–

कहानी की सशक्त स्वभाविक एवं प्रभावात्मक अभिव्यक्ति के लिए उसकी भाषा शैली का महत्त्व अनन्य होता है। भाषा ही अभिव्यक्ति का माध्यम है। कहानी के शिल्प का उद्देश्य संवेदनाओं और भावनाओं को अभिव्यक्त करना है। संजीव ने भाषा के संदर्भ में कहा है कि – ''भाषा गढ़ी नहीं जाती... इसे तो जीवन जगत और प्रकृति के नाना कार्य–व्यापारों से ग्रहण किया जा सकता है। विविधता कभी खत्म होने की नहीं। ...जिन लोगों तक हमें अपनी बात पहुँचानी है, उन तक कला को कितने सक्षम ढंग से संप्रेषित किया जा सकता है। साहित्य संवेदनात्मक या वैचारिक उद्देश्य की अभिव्यक्ति का माध्यम है और भाषा उस माध्यम की शक्ति है, यदि भाषा उपयुक्त न हो तो साहित्य अपने लक्ष्य से भटक सकता है।

संजीव ने अपनी कहानियों में बुंदेलखंडी, बंगाली, अवधी, मगही, गढ़वाली, उर्दू, हिंदी, हिंदी मिश्रित बोली तथा आदिवासियों की बोलियों का प्रयोग हुआ है। राख और योद्धा कहानी का केन्द्रीय क्षेत्र पूर्वाचंल का क्षेत्र रहा है। इन कहानियों में भोजपुरी और अवधी के शब्दों का प्राधान्य दिखता है। 'बुद्धपथ' कहानी में भी सामान्य हिन्दी का प्रयोग हुआ है इनकी कहानियों की भाषा में उर्दू के शब्द, अरबी के शब्द, संस्कृत के तत्सम् एवं तद्भव शब्द मिलते हैं।

21.4 कहानियों के प्रमुख पात्र

21.4.1 राख

जोखन बहू

मेहनतकश :–

जोखन बहू मेहनती स्त्री है। वह महतों के खटाल पर साफ–सफाई का काम करती थी। वह गोबर कढ़िन थी। वह छोटी जाति की थी। साँवला लंबोतरा चेहरा, छरहरा बदन, औसत कद की जोखन बहू मूँज की नक्काशीदार बेहतरीन चीजें बना लेती है। ऊपले बनाने में उसकी किसी से भी तुलना नहीं की जा सकती है। साफ–सफाई के काम में उसका कोई जोड़ नहीं है। वह मेहनत कर रोटी कमाने वाली स्त्री है।

मित्तभाषी एवं सम्मान देने वाली :–

जोखन बहू कम बोलने वाली महिला है। वह अपने जीवन के प्रति ही केन्द्रित है। उसे दुनिया से कुछ लेना नहीं है। इस प्रवृति के कारण वह अपने पति को बहुत प्रिय है। वह निःशब्द मुस्कुराती या फिर निःशब्द रोती है। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति को आदर सम्मान की दृष्टि से देखती है– ''हल्का घूँघट काढ़कर मूड़ी गड़ाकर आती, काम करती और मूड़ी गड़ाकर वापस लौट जाती। महतो–महताइन की आहट पाते ही आड़ में हो लेती। सुकुलजी को प्रणाम करना होता तो दूर से अँचरा (आँचल) से गोड़ धरती। मैं सामने पड़ जाता तो दायाँ हाथ उठाकर सलाम करती। उसे बोलते मैंने कभी सुना नहीं।''

संतान पैदा करने में असहाय :–

जोखन बहू सहनशील एवं मित्तभाषी स्त्री होने के साथ–साथ वह असहाय भी है। विवाह के पाँच साल तक भी बाल–बच्चे नहीं हो पाते हैं। इस तरह वह संतान पैदा करने में असहाय थी। इस कारण से वह धीरे–धीरे गाँव वालों के लिए मनहूस बनती जाती है। शुरू–शुरू में किसी रोते हुए बच्चे को देखती तो दुलार के मारे उसे उठा लेती लेकिन बाद में उससे बच्चे छीने जाने लगते हैं – ''बहुत देर तक पुती रहती यह उदास मुस्कराहट उसके चेहरे पर। फिर सूख जाती जैसे रेत में पानी बिला जाता है। धीरे–धीरे वह खुद को बचाने लगी थी दूसरों के सामने पड़ने से।''

गाँव की दृष्टि में अपशकुनि :–

संतान पैदा न कर पाने के कारण वह धीरे–धीरे गाँव के लोगों के लिए अभागिन एवं मनहूस बनती जाती है। वह गाँव के लिए अपशकुन का कारण बन जाती है। गाँव में घूँघट ओढ़कर ही चलती है। ईश्वर में आस्था रखने वाली जोखन बहू दुःख की स्थिति में मन्दिर नहीं जा सकती थी। सर्वमंगला देवी के मन्दिर चोरी से जाना उसके जीवन का सबसे बड़ा अपराध था। लोगों ने उस पर आरोप लगाना आरम्भ कर दिया– ''मन्दिर भरस्ट कर दिया, देवी को भरस्ट कर दिया, अभी पूछते हो, किया क्या! सुकुलजी ने समाहार करते हुए कहा– ''अरे तुझे और कोई मन्दिर न

मिला कि और कोई देवी–देवता न मिले? तू कहीं और पूजा कर लेती। देवी को ही पूजना था तो दूर से गोड़ धर लेती! क्या तुझे मालूम नहीं कि यह मन्दिर महतो–महताइन ने खास अपने पैसे से अपने परिवार और गाँव के कुशल मंगल के लिए बनवाया था?... एक पल में तूने माटी कर दिया!''

आत्मदाह करने पर मजबूर :–

आर्थिक रूप से कमज़ोर जोखन बहू आत्मदाह करने के लिए मजबूर थी। एक बाँझ होने के कारण वह गाँव वालों के लिए अपशकुनि थी लेकिन पति की मृत्यु का कारण भी उसे ही माना जाता है। धर्म के अनुयायियों से डरकर वह आत्मदाह करती है। ''चिता फूँककर लोग दूर पीपल की छाँव में जा बैठे कि जल जाए तो चिता बुझाकर लोग अपना–अपना काम–धन्धा देखें। तभी अचानक जाने कहाँ से बवण्डर की तरह वह दौड़ती हुई आई और औंधे मुँह चिता पर जा भहराई। अरे...! अरे! कब्ल इसके कि लोग चिता तक पहुँचते। वह झुलस चुकी थी।'' आत्मदाह के उपरान्त वह मौन हो जाती है लेकिन गाँव वालों के लिए वह सती मैया बन जाती है। दुनिया ने उसे खुद ही अपशकुनि माना और स्वयं ही देवी बना दिया। गाँव वालों का दृष्टिकोण– ''न किसी से बोलना, न किसी से चालना। मूड़ी गाड़कर आना, मूड़ी गाड़कर जाना। इस कलियुग में देखी है ऐसी औरत?... हमें तो लगता है कि हमारी परीक्षा लेने आई थी। जाते जाते आँख में उँगली डालकर दिखा गई कि देखो, मैं क्या हूँ।... बोलो, बोलो, सती मैया की जै।''

'राख' कहानी में जोखन बहू का चरित्र समाज के दोयम दर्जे की सोच को बेनकाब करता है।

21.4.2 बुद्धपथ

आचार्य शीलभद्र

महात्मा बुद्ध के प्रति आस्था :–

आचार्य शीलभद्र का महात्मा बुद्ध में आगाध विश्वास है। वह महात्मा बुद्ध के दिखाए रास्ते पर चलने वाला व्यक्ति है। बुद्ध के लिए वह अपना स्वर्वस्व न्यौछावर करने वाला व्यक्ति है। वह बुद्ध की धरती पर भारत में रहकर जीवन का निर्वाह करने में प्रसन्न है। वह बौद्ध विहार को संवारने का पक्षधर है और इस दृष्टि से वह तन और मन से बौद्ध विहार को विकसित करने की योजनाएँ बनाता है। शीलभद्र बौद्ध बिहार के पुजारी है, इसलिए वह बौद्ध विहार के लिए तरह–तरह की योजनाओं में निमग्न रहते हैं– ''सबसे ज्यादा चर्चा मन्दिर को लेकर होती है– कैसा, क्या और कहाँ! कभी पूरब में रखते हैं, कभी पश्चिम में... अन्ततः विहार के केन्द्र में एकमुखी नहीं, चतुर्मुखी! मन्दिर को चारों और राहे फूटेंगी जैसे भगवान के प्रभामण्डल से फूटती किरणें। मन्दिर को घेरकर चारों ओर परिक्रमा–पथ जैसे भगवान का ज्योतिवलय हो। पथ कितने होंगे चार?...।'' शीलभद्र महात्मा बुद्ध को मन्दिर में विराजमान करने का सपना संजोता है और उसे पूरा करने के लिए वह मुख्यमन्त्री से मिलने की कोशिश में भी रहता है। "....भिक्षु को पूजा–पाठ के अलावा दूसरे पचड़े में नहीं पड़ना चाहिए। बस एक बार विहार खड़ा हो जाए तो सब ठीक हो जाएगा। आचार्य शीलभद्र का असली नाम 'ने–येन' था। वह मूल रूप से बर्मा के किसी लेपचा गाँव का था। बर्मा से प्रभु बुद्ध के प्रति आस्था भाव ही उसे भारत में खींच लाता है।

अहिंसा के रास्ते में चलने वाला :–

आचार्य शीलभद्र अहिंसा के रास्ते पर चलने वाला है। वह वाद–विवाद में विश्वास बिल्कुल नहीं करता है। वह शान्त रहता है और सबको शान्त देखने की उम्मीद करता है। वह हिंसा से डरता है। वह किसी भी समस्या का हल बुद्ध में खोजता है। शीलभद्र अयोध्या और गुजरात के दंगों का हिंसात्मक रूप देखकर भयभीत हो जाता है। वह शान्ति का प्रचार–प्रसार करता है, लेकिन वह देखता है कि समाज में किसी भी समस्या को हिंसा का रूप देकर हल निकालने की कोशिश की जा रही है। शीलभद्र शिष्य दंगों की खबर प्रतिदिन देते रहते हैं और आचार्य शीलभद्र शिष्यों से खबरें सुनकर भयभीत होते जाते। सच्चाई को जानते हुए भी शीलभद्र खुद को सांत्वना देता रहता है– " मन्दिर के बनते ही लौट आएँगे। भगवान के लौटते ही सारी हिंसा रूक जाएगी। ऐसा भव्य मन्दिर बनेगा कि...।" वह समाज का हिंसात्मक व्यवहार देखकर चिन्तित है। वह वातावरण को शान्त बनाने का पक्षधर है, लेकिन वह समाज में धर्म के नाम पर हिंसा का फैलाव देखकर भयभीत हो जाता है।

संवेदनशील :–

शीलभद्र संवेदनशील पात्र है। वह दूसरों को दुःख नहीं पहुँचाता है। इस भिक्षु की रूचि केवल बौद्ध विहार का निर्माण करने की है। वह कुछ भी ऐसा कार्य नहीं करता है जो किसी दूसरे व्यक्ति के हृदय को ठेस पहुँचाये। हिंसा की आग में जल रही जनता को देख आचार्य के हृदय को ठेस पहुँचती है। वह समाज में हो रही मारकाट के प्रति उदास होता है और गाँवों के लोगों की समस्याओं को सुनकर खिन्न हो उठता है वह हर एक समस्या का निदान बुद्ध का पथ ही मानता है।

भावुक :–

आचार्य शीलभद्र भावुक पात्र है। लेकिन वह शान्ति का पथ सुझाने वाला धर्म के नाम पर लड़ने वाले दंगाईयों का शिकार हो जाता है। किसी के धर्म में कोई दखलन्दाजी न करने वाला शीलभद्र दंगाईयों की भीड़ का शिकार हो जाता है। "खींचो–खींचो लुंगी खींचो। देखो यह कौन है! किसी ने कपड़े खींचे, चीरफाड़ डाले गए। वह सब जैसे कुत्तों का हुजूम था। जो कुछ हुआ वह इतना असहनीय था कि उन्हें गश आ गया और वे गिर पड़े।" आचार्य की इस दुःखमयी स्थिति को पूरा गाँव जानकर उनके पास आता है। आचार्य जी गाँव के लोगों की सहानुभूति पाकर भावुक हो उठता है और कहता है– "कुछ भी तो नहीं किया था हमने, लेकिन पता नहीं उन्हें मुझ पर क्यों शक हुआ कि मैं स्पाई हूँ। आपबीती बताते हुए आचार्य बूँद–बूँद पिघल रहे थे।"

21.4.3 योद्धा

भैया (बड़कू)

सहनशील – योद्धा कहानी में भैया सहनशील प्रवृति के है। वह अपने से बड़े व्यक्ति का सम्मान करता है और अपने से छोटी उम्र वालों के प्रति स्नेह भाव रखता है। वह उँची आवाज में बात करने वाला नहीं है। बड़कू

को दद्दा से हर दिन डाँट डपट पड़ती रहती है, वह कभी भी दद्दा के समक्ष प्रतिवाद नहीं करता है। वह किसी भी परिस्थिति पर पहले मंथन करता है और फिर अपना विचार रखता है। लोहारखाने में अगर कोई शिकायत आती तो पिता के हिस्से की मार–झिड़की भी बड़कू ही सहन करता है। बड़कू के पिता लँगड़े थे और बड़कू अपने पिता का सहारा था। सहनशीलता ने उसके व्यक्तित्व को अलग तरह से निखार दिया था। लोहारखाने में अवधूसिंह शिकायत लेकर आता है, तो बड़कू डाँट डपट खाकर भी किसी प्रकार का प्रतिवाद नहीं करता है , "सिंह ने लोहे के टुकडों को उनके सामने फेंक दिया, ई का है? भैया ने वे टुकड़े उठाकर दद्दा को दिए। दद्दा ने लोहे के टुकड़े को परखते हुए हैरानी प्रकट की, टूट गया? इत्ता बड़ा हो गया अभी तक लोहा पहचानने की तमीज़ नहीं आई? सिर झुकाकर अपराधी की तरह सुनते रहे भैया। उन्होंने ढूँढ–ढ़ाँढ़ कर लोहे का एक दूसरा टुकड़ा निकाला और उसे आग पर चढ़ा दिया।

वाद–संवाद में हिस्सा लेने वाला नहीं – 'योद्धा' कहानी में भैया किसी भी वाद–विवाद में नहीं पड़ता है। भैया के छोटे भाई की प्रवृति सवाल करना है लेकिन भैया किसी दूसरे से सवाल करने की अपेक्षा मनन करने में विश्वास करता है। बड़कू का छोटा भाई किसी वाद–संवाद में अपना दायित्व निभाता, लेकिन भैया कहीं भी अपनी हिस्सेदारी नहीं निभाता है। छोटा भाई सवाल करता और दूसरों के लिए उसके सवाल बहस का मुद्दा बन जाते है और अन्ततः उसका सवाल झगड़े का कारण बनता है। भगवान की जात पूछे जाने पर शूरसिंह, सरूप और फेरु काका में विवाद इस हद तक बढ़ जाता है कि एक–दूसरे को मारने की नौबत आ जाती है। छोटू के शब्दों में– "मैंने भैया को इस शास्त्रार्थ में कभी भी हिस्सा लेते नहीं देखा। फेरु काका ने मुझे डण्डा हिला– हिलाकर चेताया, कल से झगड़ा लगाया तो खै़र नहीं।"

ईमानदार– 'योद्धा' कहानी में भैया एक ईमानदार चरित्र है। झूठ, छल इत्यादि उसके चरित्र का हिस्सा नहीं हैं। वह कोरी बातें नहीं करता है बल्कि समस्याओं का समाधान खोजता है। गाँव भर में यह सम्मान किसी भी संघर्ष शील प्रतिभाशाली को दिया जाता है। रामचेत सम्मान के लिए छोटू चयन करता है। शुरु– शुरु में इस कार्य के लिए गाँव में काफी 'थू–थू' हुई लेकिन जब से रामलीला कमेटी को भी 500 रूपये दिये जाने लगे हैं तब से गाँवों में हर जाति के होनहार लड़के–लड़कियों को सम्मान–स्वरूप पैसे और पहचान मिलने लगती है। विरोध स्वीकृति में डलता जाता है लेकिन इस सम्मान के प्रति भैया का मन कुढ़ने लगता है, क्योंकि भैया की दृष्टि में वो व्यक्ति सम्मान का वाज़िब हकदार होता जो ईमानदार है, जो समाज सेवी है, जो कठिन संघर्ष के उपरान्त पढ़ाई में सफल होता है इत्यादि। 'रामचेत सम्मान' देने के लिए छोटू लड़के –लड़कियों का मैरिट के आधार पर चयन करता है जिस कारण से भैया का इस कार्य मोहभंग होने लगता है," पिछले साल रामलीला के ठीक पहले भैया का दिमाग गड़बड़ाया, छोटकू मझे छुट्टी दे दो। किस बात की ? मैंने हैरत से पूछा। वही उस इनाम– इकराम से । मैं अवाक् होकर लगा देखने भैया को , जिन्दगी भर हीनता के बोध में दबा हुआ एक कुण्ठित व्यक्तित्व! बन्द कर दें ? मैंने चिढ़कर पूछा। मैंने कब कहा ? फिर आप हाथ क्यों खींच रहे हैं? हम चाहते है कि पैसा सही आदमी को दिया जाए, वरना न दिया जाए।" इससे पुष्टि होती है कि भैया एक ईमानदार व्यक्ति है।

विद्रोही– बड़कू ईमानदार , सहनशील एवं विद्रोही पात्र है। वह एक ऐसा चरित्र है जो बोलता कम है

और सोचता ज्यादा है। प्रतिवाद करने की प्रवृति उसमें दिखाई नहीं देती है, लेकिन प्रतिशोध लेना वह अच्छी तरह जानता है। वह जातिगत भेदभाव की परम्परा को मानने वाला पात्र नहीं है। वह मनुष्यत्व पर विश्वास करता है इसलिए मानवता को बनाए रखने के लिए ईमानदारी के रास्ते पर चलता है, लेकिन उँची जाति के लोगों ने जो छोटी जातियों के साथ दुर्व्यवहार किया है वह उसका बदला लेना नही भूलता है, इसलिए वह अवधू सिंह को लोहा पकाकर नहीं देता है," बचपन से चोटें ही तो झेलता रहा हूँ काकी, कभी किसी के हिस्से की, कभी किसी के ... कभी ऊपर–ऊपर दिख जाती है , कभी नहीं, कभी– कभी तो वर्षों रिसती और टीसती रहती है। घायल हुआ हूँ तो घायल किया भी है हमने... लोहा न पहचान पाने के चलते दद्दा से कितनी मार खाई थी हमने। तुम्हें मालूम, लोहा पहचानते थे हम। जान–बूझकर कच्चा लोहा दिया उन्हें हमने।"

पश्चातापी– 'योद्धा' कहानी में बड़कू पश्चातापी चरित्र के रूप में भी उभरता है। वह ईमानदार है लेकिन अपने बदले की भावना को लेकर पश्चातापी भी है। वह मानता है जिस प्रकार ऊँची जाति के लोगों ने छोटी जाति के लोगों से दुर्व्यवहार किया उसी प्रकार छोटी जाति के लोग आर्थिक सम्पन्नता के चलते बड़ी जाति के लोगों के प्रति भी ऐसा ही भाव रखेंगे तो यह प्रवृति ब्राह्मणवादी होने की द्योतक है, " लेकिन वे सब मामूली चोटें थी जिस चोट ने मुझे सबसे ज्यादा तकलीफ दी, जानते हो, वह क्या है ? क्या ? हमारे अनचाहे ही खुद बभनपने में समाते जाना– हमी नहीं, ज्यादातर लोगों का । युगों के इस बभनपने के मारे लोगों में तो बभनपना नहीं आना चाहिए था न!"

संस्कृत शब्द – तृप्ति, उत्त्सव, स्मृति, आचार्य, श्रद्धावत्, पुष्प, घृणा, अनुष्ठान, आश्चर्य आदि।

उर्दू शब्दों का प्रयोग – फरियाद, खैर, बाकी, नज़रअन्दाज, ज़हर ख़बर, यकीन, फर्क, खून, ज़िद, ज़्यादा, करीब, दोमंज़िले, तकलीफदेह, श्वासा, आईने आदि।

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग – कैरियर, पावर, प्वाइण्ट, इंजीनियरिंग मेडिकल, फैशन–डिज़ाइनिंग, बॉलिबाल, साइकिल, ट्रस्ट, बोल्ड़, इंजेक्शन, ब्लॉक आदि।

इससे स्पष्ट होता है कि संजीव की कहानियों में भाषायी विविधता दिखाई देती है और इस विविधता के कारण ही लेखक के भाव एवं विचार पाठक तक सरल तरीके से सम्प्रेषणीय होते हैं।

21.5 कठिन शब्द :–

1. आकाश
2. सम्मिश्रण
3. सजीवता
4. द्रष्टव्य

21.6 अभ्यार्थ प्रश्न :–

प्र1. शिल्प का अर्थ समझाते हुए, संजीव की कहानियों का शिल्पगत विवेचन कीजिए ।

प्र2. संजीव की कहानियों के वस्तु शिल्प पर प्रकाश डालिए ।

प्र3. संजीव की कहानियों के वातावरण को रेखांकित कीजिए ।

प्र4. संजीव की कहानियों में चरित्र–शिल्प का विवेचन कीजिए ।

प्र5. संजीव की कहानियों के सन्दर्भ में आत्मकथात्मक विधि को स्पष्ट कीजिए ।

प्र6. राख कहानी में जोखन बहू का चरित्र किस रूप में आया है? स्पष्ट कीजिए।

प्र7. आचार्य शीलभद्र का चरित्र चित्रण करें।

प्र8. 'बड़कू' का चरित्र चित्रण करें।

21.7 सन्दर्भ ग्रन्थ :–

1. संजीव की कहानियों के पात्रों का समाज मनोवैज्ञानिक अध्ययन – डॉ. चन्दा मुखर्जी
2. संजीव की कहानियाँ शिल्प एवं शैलीगत अध्ययन – डॉ० स्नेहा पाटील
3. कथाकार संजीव मूल्यांकन के विविध आयाम – विश्वज्योति
4. सामाजिक यथार्थ और कथाकार संजीव – डॉ० शहजहान मणेर
5. संजीव व्यक्तित्व एवं कृतित्व – डॉ० रामचन्द्र मारूती लोंढे
6. पाखी पत्रिका, अंक 12, सितम्बर – 2009 (संजीव पर विशेषांक)

*****

नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी

22.0 रूपरेखा

22.1 उद्देश्य

22.2 प्रस्तावना

22.3 नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी

22.4 सारांश

22.5 कठिन शब्द

22.6 अभ्यासार्थ प्रश्न

22.7 सन्दर्भग्रन्थ/पुस्तकें

22.1 उद्देश्य : प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप

– मनोविज्ञान के विषय में जान सकेंगे।

– नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी के साहित्य से अवगत हो सकेंगे।

– अपनी अस्मिता के लिए संघर्ष करती नारी के विषय में जान सकेंगे।

– मन्नू भंडारी की कहानियों में व्याप्त नारी पात्रों की मानसिकता को जान सकेंगे।

22.2 प्रस्तावनाः–

मानव मन का गइराई से अध्ययन करने में मनोविज्ञान ही महत्वपूर्ण विज्ञान है। इसके माध्यम से मानव मन के प्रत्येक कोने का मूल्यांकन मनोविश्लेषणात्मक दृष्टि से किया जा सकता है। स्वातंत्र्योत्तर कहानियों में मनोविश्लेषणात्मक कहानियों का विशेष स्थान है। इस दौर में आम आदमी के जीवन को कथा का आधार बनाया गया। इसलिए नारी मन के प्रत्येक कोने को जानने तथा पाठक तक पहुँचाने में इसी मनोविज्ञान का सहारा लिया गया। इसी के माध्यम से नारी मन की प्रत्येक स्थिति को सूक्ष्मता से देख उसके प्रति अपनी संवेदना को प्रकट किया गया है।

स्वतन्त्रता पश्चात हिन्दी साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने वाली कहानीकारों में मन्नू भण्डारी का भी विशेष स्थान है। इनकी कहानियां चुनौतियों से संघर्ष करती बेबाक भाषा में सामाजिक सरोकार से संबधित हैं। अगर बात नारी मनोविज्ञान के संदर्भ में की जाए तो इन्होंने नारी के मन का अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ चित्रण किया है। भारतीय नारी के तथाकथित आदर्शों, विपरीत परिस्थितियों में छटपटाती नारी की आशाओं, आकांक्षाओं एवं लालसाओं को निर्भीक वाणी दी है, जिसमें नारी अपनी परम्परागत छवि से बाहर निकलकर मानवी नारी के रूप में सामने आई है। अतः इनकी कहानियाँ नारी मन की उलझनों को मनोविज्ञानिक दृष्टि से व्यक्त करती हैं।

22.3 नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी :–

युग परिवर्तन के साथ–साथ स्त्री–पुरुषों के सोचने समझने में अन्तर आने लगा है। पुरुषों की नारी को देखने की दृष्टि बदल गई। परिणामस्वरूप स्त्री पर पुरुषों का परम्परागत पाश ढीला होता गया। स्त्री अपने बारे में स्वतंत्र रूप से सोचने लगी, स्त्री को अपने बंधन और मुक्ति का अहसास होने लगा। पीढ़ी–दर–पीढ़ी स्त्री की मनः स्थिति में भी अन्तर आता गया। इसका नतीजा यह हुआ कि नारी, पुरुष के साथ बराबरी की संख्या में साहित्य क्षेत्र में भी प्रविष्ट हुई। अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि साहित्य क्षेत्र में भी स्त्री, पुरुष के साथ–साथ कार्यरत रही। यह बदलाव विशेषतः स्वातंत्र्योत्तर युग में ही दिखाई देता है। अपनी विशिष्ट संवेदना एवं शिल्प के द्वारा समकालीन कथा–साहित्य को समृद्ध करने वाली इन लेखिकाओं में कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, ममता कालिया, मृदुला गर्ग, राजी सेठ, मृणाल पाण्डे, चित्रा मुद्‌गल, मन्नू भण्डारी आदि प्रमुख हैं।

उपरोक्त सभी कथाकारों के बीच मन्नू भण्डारी अपनी एक अलग और विशिष्ट पहचान बनाए हुए है। इन्होंने वर्तमान समाज में व्याप्त अनेक विसंगतियों को उभारने के साथ–साथ नारी के अंतर्द्वन्द्व, प्रेम के निर्णायक क्षणों में नारी की वेदना तथा मस्तिष्क को झकझोर देने वाली घुटन, टूटन, निराशा, संत्रास, तनाव को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। इन्होंने नारी–हृदय के सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों को कलात्मक अभिव्यक्ति दी है। इनकी नारी देवी–दानवी के दो छोरों के बीच टकराती 'पहेली' नहीं बल्कि हाड़–माँस की मानवी भी है। लेखिका ने अपनी रचनाओं में प्राचीन–नवीन मूल्यों के द्वन्द्व में फँसी नारी के संघर्ष एवं तज्जनित मानसिकता का बड़ा ही

मनोविज्ञानिक चित्रण किया है। नारी होने के नाते इन्होंने नारी–मन को पूरी तरह समझा और परखा है, जिसकी यथार्थ अभिव्यक्ति इनकी रचनाओं में मिलती है। अपने साहित्य की नारी के विषय में वह स्वयं कहती है कि ''बार–बार जिस स्त्री को मैंने अपनी रचनाओं के द्वारा पहचानना चाहा है, वह है–आंतरिक संस्कारों, भावनाओं और संवेदनाओं के साथ बाहरी स्थितियों और दबावों को झेलती, कभी उनको तोड़ती और कभी खुद उनके सामने टूटती हुई नारी।'' इसलिए समय के बदलते स्वरूप के साथ–साथ चलकर नारी–अनुभवों के यथार्थ का चित्रण इनकी कहानियों में सशक्त एवं प्रभावी रूप में मिलता है।

लेखिका ने 'यही सच है' कहानी में दीपा और 'एक बार और' की बिन्नी के माध्यम सें नारी की अनिर्णय द्वन्द्वग्रस्त मनः स्थिति तथा 'क्षय' कहानी में कुन्ती की मनः स्थिति का जो चित्रण किया है। वह नारी मनोविज्ञान को हमारे सामने स्पष्ट करता है।

'यही सच है' कहानी की दीपा ऐसी नारियों की मानसिकता को स्पष्ट करती है जो क्षण के दर्शन को श्रेष्ठ मानकर उसके अनुसार अपने भावजगत को ढ़ाल लेती है। दीपा ने किशोरावस्था में प्रेम की प्रथम अनुभूति निशीथ से प्राप्त की थी किन्तु निशीथ उसकी भावनाओं का सम्मान नहीं कर पाया, फिर कानपुर में रिसर्च के दौरान उसकी जिन्दगी में संजय आता है जो उससे प्रेम करता है। दीपा पूर्व और वर्तमान प्रेम में उलझकर रह जाती है किन्तु अंततः वह संजय के प्रेम को स्वीकार कर उसे ही सच मान लेती है।

निर्णय के द्वन्द्व में आज की आधुनिक नारी फंसी हुई है। वह निर्णय लेने में स्वतन्त्र तो है किन्तु सही निर्णय करना उसके लिए फिर भी कठिन ही है। कभी यह सच लगता है तो कभी वह सच लगता है। इसी दोलायमान मनः स्थिति में जीने वाली दीपा वर्तमान क्षणों को ही सच मानती है। आधुनिक नारी की इसी द्वन्द्वात्मक मानसिकता को 'एक बार और' कहानी की बिन्नी के माध्यम से भी दर्शाया गया है।

आज की इस व्यवस्था में स्त्री–पुरुष का भेद कम होता जा रहा है यह एक अच्छी स्थिति है परन्तु कुछ प्रश्न भी उभर रहे हैं। विशेषतः स्त्री अर्थ का स्त्रोत बन जाए, परिवार की जिम्मेदारी को निभाती चले तो फिर उसे अपनी स्वाभाविक इच्छाओं को जलाकर परिवार के लिए ही व्यक्तित्व समार्पित करना पड़ता है। इसी सच्चाई को लेखिका ने 'क्षय' कहानी की कुन्ती द्वारा व्यक्त किया है। कुन्ती स्कूल में अध्यापिका है। उसके कुछ सिद्धान्त हैं, आदर्श हैं, किसी के सामने वह झुकना नहीं चाहती किन्तु पिता की बीमारी और भाई की शिक्षा के लिए उसे अपने सिद्धांतों से समझौता करना पड़ता है। वह परिस्थितियों के चलते अपने सिद्धांतों तथा आदर्शों से समझौता तो करती है किन्तु उसकी मनोस्थिति ऐसी बन जाती है कि वह स्वयं को पिता के समान बीमार ही मानने लगती है।

'ऊँचाई' कहानी की शिवानी के माध्यम से लेखिका ने ऐसी नारी को रूपायित किया है जो एक ही समय पत्नी और प्रेमिका दोनों भूमिकाओं का निर्वाह निर्द्वन्द्व भाव से करती है। नारी के विवाहेतर–संबंध को सहज मानने का, विवाहिता नारी का नया नैतिक बोध इसमें दर्शाया गया है। नैतिक नियम पुरुष और नारी के लिए समान होने

चाहिए क्योंकि विवाहेतर संबंध रखकर यदि पुरुष अपवित्र और अनैतिक नहीं होता तो स्त्री कैसे हो सकती है। पवित्रता का संबंध शरीर से नहीं मन से होता है, इसी कारण ऐसे संबंध न अनुचित हैं न अनैतिक। ऐसे ही विचार इस कहानी की नारी पात्र शिवानी रखती है। जो आधुनिक नारी की मनः स्थिति को हमारे सामने लाती है। उसका कहना है, ''नारी एक साथ एक से अधिक पुरुषों से प्रेम करती हुई उनसे शारीरिक संबंधों का निर्वाह करते हुए उस ऊँचाई पर रह सकती है, जिसे नैतिक ऊँचाई चाहे न भी कहा जाए, किंतु वह उसके स्वतंत्र अस्तित्व एवं व्यक्तित्व की ऊँचाई अवश्य है।'' स्पष्ट है कि शिवानी अपनी इच्छा और संवेदना को रूढ़ि–परंपरा ही नहीं दांपत्य–जीवन से भी बढ़कर मानती है।

इनकी 'अकेली' कहानी में बुआ के माध्यम से नारी मन की पीड़ा और अकेलेपन की त्रासदी का मर्मस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत हुआ है। बेटे की असमय मृत्यु, पति की बेरुखी और सन्यास के कारण एकाकीपन बुआ के जीवन का अटूट हिस्सा बन गया है। वह निरंतर दूसरों को अपना बनाने की कोशिश करती है किन्तु आज के संदर्भ में रिश्ते का आधार अर्थ है, इसलिए रिश्तेदारों द्वारा भी बुआ की उपेक्षा होती है। जिस कारण बुआ को आजीवन अकेलेपन का अभिशाप भुगतना पड़ता है।

'जीती बाजी की हार' में मुरला उन कामकाजी और अविवाहित स्त्रियों का प्रतिनिधित्व करती है जो दाम्पत्य की व्यवस्था को नकारकर अकेले में जीना चाहती हैं। कहानी में मुरला की सहेली आशा जब उसे समझाती है कि नारी को पुरुष का साथ चाहिए तब वह कहती है, ''सहारा उसे चाहिए जो अपने को 'अबला' समझे, मैं तो सबला हूँ, मुझे किसी का सहारा नहीं चाहिए। बच्चों को तो मैं अपनी उन्नति का बाधक समझती हूँ।'' स्वयं को मुक्त रखने की इसी मानसिकता के चलते वह अविवाहित ही रहती है किन्तु आशा के घर जाकर उसमें अकेलेपन और संतान की लालसा जाग उठती है। जो इस वास्तविकता को सामने लाता है कि इस तरह के निर्णय नारी को इतना खोखला और अकेला बना देते हैं कि उसके पास फिर पश्चाताप की अपेक्षा कोई रास्ता नहीं रहता। क्योंकि दैहिक आवश्यकता की पूर्ति तो किसी–न–किसी तरह की जा सकती है परन्तु मातृत्व की प्यास या अकेलेपन से मुक्ति किसी और माध्यम से पूर्ण नहीं की जा सकती। एक आयु में इसका एहसास नहीं होता किन्तु ढलती उम्र में जब यह प्राकृतिक जरूरत उभरने लगती है तब पीछे लौटकर आया नहीं जा सकता। इस प्रकार लेखिका ने मुरला के माध्यम से नारी की उस मानसिकता का घातक परिणाम दिखाया है जो अपनी स्वतन्त्र मानसिकता के चलते अकेलेपन का शिकार हो जाती है।

नारी हृदय में प्रेम की अभिलाषा सदैव रहती है। वह ऐसे जीवन साथी की कल्पना करती है जो उसकी भावनाओं को समझे, उसे प्रेम करे किन्तु जब पति उसकी उपेक्षा करता है तो उसके हृदय में प्रेम की कसक रह जाती है। ऐसी ही स्थिति विवाहेत्तर प्रेम–संबंधों को जन्म देती है। क्योंकि नारी हृदय तो प्रेम चाहता है और उसकी यह प्रवृत्ति भी देखने को मिलती है कि वह जिसे प्रेम करती है उस पर अधिकार भावना भी रखती है। 'कील और कसक' कहानी की रानी भी पति की उपेक्षा के कारण अपने पेईंग गेस्ट शेखर की ओर आकर्षित होती है और उस पर अपना अधिकार भी जमाएं रखना चाहती है। किन्तु शेखर की शादी की बात सुनकर वह

पागल–सी हो जाती है, वह अकेले में रोती, छटपटाती है उसे ऐसा प्रतीत होता है मानों उसके हृदय में उपेक्षाओं का कील चुभ गया हो, क्योंकि पहले पति की उपेक्षा और फिर शेखर की। इस कहानी में लेखिका ने रानी के माध्यम से प्रेमाभाव के चलते नारी हृदय की मनःस्थिति को व्यक्त किया है।

विवाहपूर्व प्रेम चाहे पुरुष का हो या स्त्री का जब वह विवाहेत्तर जीवन में झांकने लगता है तब स्त्री किस प्रकार की प्रतिक्रिया देती है, इसका जीवन्त चित्रण 'बंद दरवाजों का साथ' कहानी में मिलता है। कहानी में मंजरी का पति विपिन विवाहपूर्ण के प्रेम से विवाह पश्चात भी जुड़ा रहता है और इस सत्य से जब मंजरी अवगत होती है तो वह इस प्रेम संबंध को स्वीकार न करते हुए पति से अलग हो जाती है किन्तु अलग होने पर दिलीप के साथ विवाह कर नई जिंदगी शुरू करने पर जब दिलीप विवाहपूर्व हुई उसकी संतति के प्रति, संतति के शिक्षा के प्रति कुछ व्यावहारिक बातें करता है तब मंजरी बिखर जाती है। अतः इस कहानी में मंजरी का द्वन्द्व ही प्रमुख है। जो विवाहेत्तर संबंधों से जनित कुंठा से उपजा है।

'रानी माँ का चबूतरा' कहानी में गुलाबी के माध्यम से नारी का वह रूप चित्रित हुआ है जो अंधविश्वासों का खण्डन कर कर्म पर विश्वास करती है। ग्रामीण स्त्रियाँ यहाँ रानी माँ के चबूतरे पर इतना विश्वास करती हैं कि अपनी कामनाओं की पूर्ति का श्रेय उसी चबूतरे को देती हैं, वहीं गुलाबी इस चबूतरे पर कभी नहीं गई। आर्थिक अभाव के कारण उसका स्वभाव क्रूर हो गया है। वह संतान को मारती–पीटती तथा गाली गलौच भी करती है। इसलिए स्त्रियों का मानना है यदि गुलाबी भी रानी माँ के चबूतरे पर जाए तो उसके घर भी शांति बनी रहेगी किन्तु गुलाबी उन औरतों की बातों पर ध्यान न देकर, बच्चों के भरण–पोषण के लिए निरन्तर परिश्रम करती है। वह स्वाभिमानी नारी है इसलिए जब औरते उसे बच्चों को सरकारी केंद्र में रखने के लिए पाँच रुपये चन्दा एकत्रित करके देने की बात करती हैं तो वह कहती है, ''किसी के दान–पुन्न पर चलने वाली नहीं है गुलाबी। थूकती है, तुम्हारे चन्दे पर।''

वह स्वयं भूखी रहती है लेकिन बच्चों को भोजन खिलाती है और अपनी मेहनत से शिशु केन्द्र में बच्चे को दाखिल करने हेतु पाँच रुपये की रसीद भी ले आती है। इस प्रकार गुलाबी उन माँओ में से है जो अपनी संतान के प्रति अधिक प्रतिबद्ध होती है। उसमें गुण और दोष दोनों हैं लेकिन आर्थिक अभाव के चलते संतान का भरण–पोषण करने वाली माँ में ऐसे दोषों का होना स्वाभाविक सा लगता है।

मन्नू ने अपनी रचनाओं में आदर्श और यथार्थ, स्वप्न और वास्तविकता, विचार और संस्कार के बीच टूटती, चरमराती, नारी की संवेदना का मार्मिक चित्रण किया है। नारी की बेबसी, पुरुष निर्भरता, अंतर्द्वन्द्व आदि को लेखिका ने अपनी रचनाओं में कलात्मकता के साथ अभिव्यक्ति दी है।

स्पष्ट ही देखा जा सकता है कि इनकी नारी अस्तित्व की खोज में निरंतर संघर्ष करती रही है। नारी होने के नाते लेखिका ने जो सहा है, भोगा है, उसका मर्मान्तक चित्रण उनकी आत्मकथा में हुआ है और जो पीड़ा उन्होंने भोगी है वही उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त हुई है। वे लिखती हैं–

''अपने सुख और उल्लास के क्षणों में हम अपने से बाहर होते हैं, औरों के साथ होते हैं; यातना के क्षणों में हम अपने भीतर जीते हैं और वे हमारे अपने होते हैं। हो सकता है, उल्लास और प्रसन्नता के क्षण मेरी जिन्दगी के सर्वश्रेष्ठ क्षण रहे हों लेकिन यातना के ये क्षण मेरे अपने हैं और सृजनधर्मा हैं। इन्हें विभिन्न कहानियों में अभिव्यक्ति न मिली होती तो निस्सन्देह जिन्दगी का बहुत–कुछ टूट–बिखर गया होता आज जब सब–कुछ बहुत पीछे छूट गया है तो लगता है कि ये क्षण ही मेरे प्रिय क्षण हैं।''

समाज के बन्धनों में घिरी नारी को अपनी अस्मिता की रक्षा के लिए हर तरफ संघर्ष करना पड़ता है। मन्नू भंडारी की रचनाओं में बार–बार आयी संघर्षशील नारी यही है, जो दुःख की आँच में तपकर निखरी है। अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए अपने रिश्तों को भी यह दाँव पर लगा देती है। प्रेम की टूटन, दाम्पत्य जीवन की कड़वाहट, यौन–अतृप्ति की घुटन को झेलती मन्नू भंडारी की नारी निरंतर अपने को बचाए रखने की कोशिश करती है।

22.4 सारांश :– निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि नारी मन की सूक्ष्म और प्रामाणिक अभिव्यक्ति मन्नू भंडारी की कहानियों को विशिष्ट पहचान देती है। लेखिका ने नारी के परिवेश की विभिन्न समस्याओं के विविध पहलुओं को गहराई के साथ देखा है और उसे साहस और तटस्थता के साथ यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत किया है। यह मन्नू भंडारी की कहानियों की बहुत बड़ी विशेषता है क्योंकि इससे पहले कथा साहित्य में अक्सर ही नारी का चित्रण पुरुष की आकांक्षाओं से प्रेरित होकर किया गया था, नारी के समग्र व्यक्तित्व को यथार्थ के धरातल पर प्रस्तुत नहीं किया गया था लेकिन मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में पुरानी रूढ़ियों का परित्याग करते हुए नारी को उसके वास्तविक यथार्थ रूप में अभिव्यक्त किया है।

22.5 कठिन शब्द :

1) प्रविष्ट	2) अंतर्द्वन्द्व	3) निर्द्वन्द्व	4) उपेक्षा
5) क्षय	6) कुंठा	7) प्रतिबद्ध	8) मर्मान्तक
9) सृजनधर्मा	10) भावजगत		

22.6 अभ्यासार्थ प्रश्न :–

प्र॰1. मनोविज्ञान से आपका क्या अभिप्राय है। स्पष्ट करें ?

....

....

....

....

....

....

....

....

प्र॰2. नारी मनोविज्ञान की दृष्टि से मन्नू भंडारी के कथा साहित्य पर अपने विचार व्यक्त करें।

....

....

....

....

....

....

....

....

प्र॰3. मन्नू भंडारी की कहानियों में व्यक्त नारी पात्रों की मनोस्थिति पर प्रकाश डालें।

....

....

....

....

....

....

....

....

22.7 सन्दर्भग्रन्थ/ पुस्तकें

1) मन्नू भंडारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य – डॉ. बंसीधर, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, नटराज पब्लिशिंग हाउस 1986।
2) मन्नू भंडारी की कहानियों में आधुनिकता बोध–प्रो॰ उमा केवलराम, चन्द्रलोक प्रकाशन 1997।
3) मन्नू भंडारी का कथा साहित्य : संवेदना और शिल्प, डॉ. भूमिका पटेल, चिन्तन प्रकाशन 2012।
4) साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी–डॉ. सौ. मंगल कप्पीकेरे, विकास प्रकाशन, 2002।
5) साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ– डॉ. विजया वारद, विकास प्रकाशन, 1993।

*****

यही सच है, मजबूरी एवं मैं हार गई कहानियों की मूल संवेदना

23.0 रूपरेखा

23.1 उदेद्श्य

23.2 प्रस्तावना

23.3 'यही सच है' कहानी की मूल संवेदना

23.4 'मजबूरी' कहानी की मूल संवेदना

23.5 'मैं हार गई' कहानी की मूल संवेदना

23.6 सारांश

23.7 कठिन शब्द

23.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

23.9 सन्दर्भग्रन्थ/पुस्तकें

23.1 उद्देश्य : प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप

- संवेदना के अर्थ से अवगत हो सकेंगे।
- 'यही सच है' कहानी की मूल संवेदना की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

– 'मजबूरी' कहानी की मूल संवेदना को जान सकेंगे।

– मैं हार गई' कहानी की मूल संवेदना से अवगत होंगे।

– मन्नू भंडारी की कहानियों के संवेदना पक्ष को जान सकेंगे।

23.2 **प्रस्तावना :–** मानव हृदय के भीतर बसी हर्ष, शोक, प्रेम, वात्सल्य की अनुभूति ही संवेदना है। इन कोमल अनुभूतियों का सीधा संबंध मानव के मन से है। साहित्य का संबंध मूलतः मानव हृदय से है। वह रचनाकार के हृदय से निकलकर पाठक के हृदय तक पहुँचता है। हृदय से हृदय तक की इस यात्रा में संवेदना ही प्रधान है। आधुनिक साहित्यकारों ने मानव–मन की सूक्ष्म से सूक्ष्म संवेदनाओं को अपनी रचनाओं में अभिव्यक्त किया है। उन्होंने आधुनिक मानव की टूटन, तनाव, यंत्रणाओं के साथ–साथ नारी–मन की भीतरी पर्तों को भी खोला है। मन्नू भण्डारी भी उन्हीं में से एक हैं। जिन्होंने मानव–मन को पूरी तरह समझा और परखा है और उसे व्यापक धरातल पर चित्रित किया है। मन्नू जी की संवेदनाएं विश्व व्यापक हैं। उन्होंने मध्यम–वर्गीय मनुष्य की समूची संवेदनाओं को व्यक्त करते हुए नारी–जीवन की अनेक भीतरी पर्तों को खोला है। अर्थाभाव से जूझता मध्यम–वर्ग और टूटते स्वप्नों की मर्मान्तक पीड़ा उनकी कहानियों में अत्यधिक मार्मिक रूप में उभरी है। परंपरागत जड़ मान्यताओं और आधुनिकता के बीच फँसा भारतीय–मानस अंतर्द्वन्द्व से ग्रस्त है। पुरूष का अहम्, उसकी शंकाशीलता नारी जीवन को तनाव में डाल रही है और उसका जीवन उजड़ रहा है। मन्नू जी ने इन सभी विषयों पर अपनी कलम चलाई है। लेखिका ने नारी–जीवन की कई भीतरी पर्तों को खोला है। प्रेम की कोमल संवेदना और जीवन के कटु यथार्थ के साक्षात्कार से उत्पन्न घुटन, टूटन को उन्होंने स्वर दिया है। मानव–मन के एक–एक बनते–बिगड़ते चित्रों का अंकन मन्नू भंडारी के कथा साहित्य की भूल संवेदना है। उनका संपूर्ण साहित्य मानव– मन की सूक्ष्म प्रक्रियाएँ संवेदित करता है। उन्होंने बदलती नारी–चेतना के साथ उसकी बदलती मानसिकता, स्वतन्त्र अस्तित्व को अपने कथा साहित्य में चित्रित किया है।

23.3 'यही सच है' कहानी की मूल संवेदना :–

'यही सच है' कहानी प्रेम के क्षण की सघन अनुभूति को सच्चाई के साथ प्रकट करती है। स्त्री–पुरुष के परस्पर संबंधों को संस्कारगत मान्यताओं से अलग करके, प्रणय त्रिकोण को लेखिका ने नये संदर्भ से उभारा है। कहानी के संपूर्ण कथ्य के मध्य में दीपा है। दीपा घर से अलग कानपुर में रहकर शोध–कार्य करती है। दीपा के लिए संजय ही सबकुछ है। संजय अक्सर दीपा के लिए रजनीगंधा के फूल लाया करता है। दीपा को कलकत्ता इन्टरव्यू के लिए जाना है। उसे इन्टरव्यू से डर लगता है। वह कहती है कि मैं कलकत्ता में किसी को नहीं पहचानती तब संजय कहता है– 'निशीथ' को भी नहीं पहचानती, क्रोधित दीपा घर आ जाती है। उसे लगता है कि संजय मे मन में निशीथ को लेकर वहम है। मगर दीपा के लिये निशीथ से किया गया प्यार कच्ची उम्र का आवेश मात्र है, महज पागलपन। ''अठारह वर्ष की आयु में किया हुआ प्यार भी कोई प्यार होता है भला! निरा बचपन होता है, महज पागलपन! उसमें आवेश रहता है पर स्थायित्व नहीं, गति रहती है पर गहराई नहीं। जिस वेग से वह आरंभ होता है, ज़रा–सा झटका लगने पर उसी वेग से टूट भी जाता है।''

दीपा इन्टरव्यू देने कलकत्ता जाती है तब अचानक ही उसकी मुलाकात निशीथ से हो जाती है। वो उससे बात करना नहीं चाहती फिर भी करती है। निशीथ के प्रेम को बचपना मानने वाली दीपा देखती है कि निशीथ का रंग स्याह पड़ गया है और वह दुबला भी हो गया है। न चाहते हुए भी सारा अतीत उसकी आँखों के सामने घूमने लगता है। उसका मन एकाएक कटु हो जाता है, उसे लगता है कि ''यही तो है वह व्यक्ति जिसने मुझे अपमानित करके सारी दुनिया के सामने छोड़ दिया था, महज उपहास का पात्र बनाकर।'' दीपा नहीं चाहती है कि निशीथ उसके साथ रहे। वह अपने आपसे ही प्रश्न करती हुई कहती है कि ''ओह, क्यों नहीं मैंने उसे पहचानने से इनकार कर दिया? जब वह मेज के पास आकर खड़ा हुआ, तो क्यों नहीं मैंने कह दिया कि माफ कीजिए, मैं आपको पहचानती नहीं? ज़रा उसका खिसियाना तो देखती! वह कल भी आएगा। मुझे उसे साफ़–साफ़ मना कर देना चाहिए था कि मैं उसकी सूरत भी नहीं देखना चाहती, मैं उससे नफरत करती हूँ......।''

मगर दीपा ऐसा कुछ भी नहीं कर पाती। निशीथ दीपा की मदद करने के लिए काफी दौड़–धूप करता है। सारा दिन दोनों साथ रहते हैं। दूसरे दिन भी निशीथ नौ के बदले पौने नौ बजे आ जाता है। यहाँ दीपा को लगता है कि संजय होता तो ग्यारह से पहले कभी नहीं आता। दीपा के मन के किसी भीतरी कोने में अनायास ही निशीथ और संजय को लेकर तुलना चलती है। दीपा जब नीले रंग की साड़ी पहनकर नौकरी तय होने की खुशी में निशीथ को पार्टी देने के लिए जाती है, तब निशीथ कहता है कि ''इस साड़ी में तुम बहुत सुन्दर लग रही हो।'' तब दीपा को लगता है कि संजय ने कभी मेरे कपड़ों पर ध्यान नहीं दिया। दीपा के मन में एक बार फिर निशीथ और संजय को लेकर तुलना चलती है। नारी–मन अतीत और वर्तमान में डूबने उतरने लगता है।

दीपा कानपुर आने के लिए निकलती है तब निशीथ का इंतजार करती है। उसे लगता है कि निशीथ जरूर आयेगा और निशीथ आ ही जाता है। आने के बाद निशीथ दीपा से पूछता है कि जगह मिल गयी, पानी ले लिया, लेकिन दीपा का मन निशीथ से कुछ अन्य सुनने को व्याकुल था, मन ही मन वह बोल उठती है कि निशीथ जो कहना है वो कहो ना। गाड़ी चलने लगती है निशीथ दीपा से कहता है कि पहुँचकर खबर देना। लेकिन दीपा कुछ बोल नहीं पाती और उसकी आँखों में आँसू आ जाते हैं। गाड़ी के साथ चलता निशीथ एकाएक ही दीपा के हाथ पर अपना हाथ रख देता है। दीपा का रोम–रोम सिहर उठता है, उसका मन बोल उठता है– ''मैं सब समझ गई, निशीथ, सब समझ गई! जो कुछ तुम इन चार दिनों में नहीं कह पाए, वह तुम्हारे इस क्षणिक स्पर्श ने कह दिया। विश्वास करो, यदि तुम मेरे हो तो मैं भी तुम्हारी हूँ, केवल तुम्हारी, एकमात्र तुम्हारी।'' गाड़ी के गति पकड़ने से निशीथ दीपा के हाथ को जरा–सा दबाकर छोड़ देता है। हल्का सा दबाव दीपा के भीतरी तारों को झनझना देता है। उसे लगता है कि ''यह स्पर्श, यह सुख, यह क्षण ही सत्य है, बाकी सब झूठ है, अपने भूलने का, भरमाने का, छलने का असफल प्रयास है।'' कानपुर पहुँचकर भी दीपा निशीथ के बारे में सोचती रहती है। निशीथ के सामने उसे अपने प्रथम प्रेम को गइराई की अनुभूति होती है। वैसे भी प्रथम प्रेम को कभी भुलाया नहीं जा सकता। यह प्रेम हृदय के किसी भीतरी कोने में दबा रहता है। आज इस बात का साक्षात्कार दीपा

को होता है, उसे लगता है कि ''प्रथम प्रेम ही सच्चा प्रेम होता है, बाद में किया हुआ प्रेम तो अपने को भूलने का, भरमाने का प्रयास–मात्र होता है।''

दीपा निशीथ को लिखे पत्र में उन सारी भावनाओं को व्यक्त कर देती है, जिसे वह कह नहीं पायी थी और स्वयं भी निशीथ के पत्र की व्यग्रता से प्रतीक्षा करती है। तब निशीथ का पत्र आता है उसे नियुक्ति की बधाई देता हुआ। लेकिन ऐसी कोई भी बात वह पत्र में नहीं लिखता, जिसकी कामना दीपा करती है। अंत में 'शेष फिर' शब्द में दीपा प्रेम का संकेत खोजती है। परंतु उसी क्षण अचानक आये संजय के रजनीगंधा की फूलों की सुंगध, संजय के अधरों के स्पर्श में निशीथ का प्रेम 'शेषफिर' के शेष की भाँति शेष (समाप्त) हो जाता है। दीपा को लगता है कि– ''यह स्पर्श, यह सुख, यह क्षण ही सत्य है, वह सब झूठ था, मिथ्या था भ्रम था. ....'' दीपा के लिए प्रेम भावनाओं एवं संवेदनाओं से स्थायित्व का नाम नहीं, बल्कि आनंद भोगने का क्षण है। दीपा संजय और निशीथ दोनों से प्रेम करती है, लेकिन सबसे ज्यादा वह क्षण को प्रेम करती है। जो क्षण उसे सुख देता है वही उसके जीवन का परम–सत्य बन जाता है। यहाँ आधुनिक नारी की संवेदना है।

23.4 'मजबूरी' कहानी की मूल संवेदना :–

मजबूरी कहानी की अम्मा गाँव में रहनेवाली अनपढ़ वृद्धा है। उनके वैद्य पति दिन भर औषधालय में रहते हैं। बेटा रामेसुर बम्बई में नौकरी करता है। बहू और पोता उसी के साथ रहते हैं। अम्मा का सबसे बड़ा दुःख है कि उनके पति उनके अस्तित्व से बेखबर हैं। सारा दिन अम्मा अकेली ही घर पर रहती है। अम्मा ने जब यह सुना कि उनका बेटा और बहू घर आनेवाले हैं तो उनकी खुशी का ठिकाना नहीं रहता, उनका मातृत्त्व हिलोरें लेने लगता है, वे लोरी गाने लगती हैं:–

''बेटू को खिलावे जो एक घड़ी,
उसे पिन्हाऊँ मैं सोने की घड़ी।
बेटू को खिलावे जो एक पहर
उसे दिलाऊँ मैं सोने की मोहर''

बेटू के आने की खुशी में अम्मा लाल मिट्टी से कमरा लीपती हैं। गठिया की तकलीफ का एहसास ही नहीं होता, तन–मन का आनंद उसकी सारी तकलीफें हर लेता है। मौसम में ठंड है पर पोते से मिलने की उमंग में अम्मा को ठंड का अनुभव नहीं होता जब द्वार पर तांगे की आवाज सुनायी पड़ती है तब अम्मा पागलों की तरह दरवाजे की ओर दौड़ पड़ती हैं और बेटे की गोद से बच्चे को झपट लेती हैं।

अम्मा की खुशियाँ तब चरम सीमा पर पहुँच जाती हैं, जब बहू उनसे कहती है कि बेटू को मैं आपके पास छोड़कर जाऊँगी। अम्मा फटी आँखों से बहू को देखती रहती हैं मानो उन्हें सुने हुए शब्दों पर विश्वास नहीं है। वह बहुत खुश हो जाती हैं। उनकी आँखों में चमक आ जाती है। अपनी खुशियों को बढ़ाने के लिए वह मुहल्ले में जाकर हर घर मे यह बात बताती हैं कि बेटू अब मेरे पास रहेगा। अम्मा इस बात का इतना प्रचार करना चाहती हैं कि यदि किसी कारण बहू का मन और इरादा बदल जाये तो भी वह शरम के मारे ऐसा न कर पाये। बेटू अब मेरे पास रहेगा यह कल्पना ही अम्मा को रोमांचित कर देती है। उसका स्नेह उमड़ जाता है। वह बहू से कहती है– ''तुम क्या जानो बहू! अपने कलेजे के टुकड़े को निकालकर मुम्बई भेज दिया। रामेसुर के बिना यह घर तो मसान जैसा लगता है।'' अम्मा वास्तव में बहुत अकेली हैं, वह पहाड़ जैसे दिन कैसे काटती हैं वही जानती हैं। यहाँ पर हमें 'अकेली' की सोमा बुआ याद आ जाती हैं। यहाँ परिस्थितियाँ और प्रसंग भिन्न हैं, पर मूल समस्या अकेलेपन की वही है।

अम्मा के शिथिल और नीरस जीवन में बेटू के आने से नया उत्साह आ जाता है। घुटनों के दर्द के मारे जहाँ अम्मा अपने शरीर का बोझ नहीं उठा पाती थीं, वह अब बेटू को लादे घूमती रहती हैं। बेटू के आने से जैसे उनका बचपन लौट आता है। वह बेटू के साथ आँख मिचौली खेलती, घोड़ा बनतीं उसके अकेले जीवन में जैसे बाहर आ जाती है पर अनायास इस बहार पर पाला पड़ जाता है, वज्रपात होता है। बहू वापस आकर जब बेटू को देखती है तो वह महसूस करती है कि जिस बेटू को वह छोड़ गई थी और आज जिसे देख रही है उन दोनों में कोई सामंजस्य नहीं है। बेटू की अनुशासनहीनता और उसके भविष्य के बारे में सोचकर बहू उसे अपने साथ ले जाने की बात करती है। अम्मा का हृदय तड़प उठता है, चीत्कार कर उठता है। वस्तुतः यही बूढ़ी अम्मा की विवशता है। वह किसी के साथ जुड़ना चाहती है पर जुड़ नहीं पाती। किसी के साथ के लिए तड़पती है पर वह मिलता नहीं।

बहू को अम्मा के अकेलेपन से ज्यादा अपने बच्चे के भविष्य की चिंता है। बहू बेटू की पढ़ाई के बारे में कहती है तब अम्मा अनुनय भरे स्वर में बहू से कहती हैं–''अरे पढ़ लेगा बहू, पढ़ लेगा। उमर आएगी तो पढ़ भी लेगा। यह मत सोचना कि मैं उसे गँवार ही रहने दूँगी। रामेसुर को भी तो मैंने ही पाला–पोसा है उसे क्या गँवार ही रख दिया, फिर यह तो मुझे और भी–प्यारा है। मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है सो इसे तो मैं खूब पढ़ाऊँगी।'' पर बहू नहीं मानती तब अम्मा रो पड़ती हैं मानो करुण क्रंदन करती हुई वह कहती हैं– ''तू मेरे प्राण ही ले ले!'' बहू पर मेरे बेटू को मुझसे अलग मत कर। वास्तव में जिस बेटू ने अम्मा को जीने की वजह दी है, उसी बेटू से दूर होना मानों अपनी जिन्दगी से दूर होना है। बह अम्मा की किसी भी बात को नहीं सुनती। समय का मरहम अम्मा के घाव को भर देगा यह सोचकर रमा बेटू को ले जाती है। रमा बेटू को ले तो जाती है पर अम्मा का असीम प्रेम उसे वापस लाता है। अम्मा के साथ हिला–मिला बेटू अपनी माँ के साथ शहर जाने के बाद नये वातावरण में बीमार हो जाता है। अम्मा बेटू के बीमार होने की बात सुनकर पागलों की तरह दौड़ती है और रात की गाड़ी से ही बेटू को वापस लाती है। अम्मा की सूनी जिन्दगीं में एक बार फिर बहार आ जाती है।

अम्मा की यह खुशी ज्यादा दिनों तक नहीं टिकती है। बेटे के अनिश्चित भविष्य और उसके दिन–ब–दिन अनुशासनहीन होते जाने की कल्पना से रमा इतनी क्षुब्ध हो जाती है कि वह अम्मा के बार–बार मना करने पर भी बेटू को आखिर अपने साथ शहर ले ही जाती है। अम्मा न चाहते हुए भी बेटू को रमा के साथ भेजने के लिए विवश है। यह पीड़ा उन्हें भीतर से तोड़ती है, किन्तु मोहल्ले की औरतों के पूछे जाने पर वह सारी पीड़ा छिपाकर कहती हैं। ''अब यह कोई बच्चे पालने की उमर है।'' बाहर भले वह ऐसा कहती हैं पर भीतर उनका हृदय तड़प उठता है। बेटू के बिना अम्मा एक बार फिर अकेली हो जाती हैं। पर उन्हें विश्वास है कि शहर की हवा, बेटू को रास नहीं आयेगी और वह जरूर वापस आयेगा। लोगों के सामने अम्मा मनौती मानती हैं कि बेटू रमा के साथ हिल जाये तो वह सवा रुपये का परसाद चढ़ाएगीं, किन्तु अम्मा का भीतरी मन यही चाहता है कि बेटू वापस आ जाये। अम्मा बहू के साथ नौकर शिब्बू को इसलिए भेजती हैं कि कहीं वहाँ बेटू बीमार पड़ जाए तो नौकर उसे लेकर आये पर ऐसा नहीं होता। शिब्बू जब वापस आता है तब अम्मा उससे मिलने ऐसे दौड़ती हैं जैसे शिब्बू नहीं उनका बेटू आया हो। वह काँपते हुए स्वर में मन की सारी व्यथा को भीतर ही दबाकर शिब्बू से पूछती हैं–''तुझे मैंने किसलिए भेजा था।'' यहाँ अम्मा का बाहरी आवरण हट जाता है। अपने आपको जिस भुलावे में अम्मा ने डाल रखा था वह परदा मानो हट जाता है और वह कहना चाहती हैं कि मैंने तुझे बेटू को लाने के लिए भेजा था। बहू ने बेटू को हिला लिया यह सुनकर अम्मा शून्य पथराई आँखों से शिब्बू को देखती रहती हैं। यही शब्द अम्मा के मर्म पर गहरा आघात करते हैं, मानो वह इस बात को समझना नहीं चाहती हैं। एकाएक अम्मा की चेतना लौट आती है और व सारी स्थिति को समझ जाती हैं। ''क्या कहा........बेटू मुझे भूल गया, वहाँ जम गया? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई।'' यहाँ अम्मा का हृदय बिंध जाता है। अम्मा गीली आँखों और काँपते हाथों से जेब से सवा रुपया निकालकर शिब्बू को देती हैं और नौकरानी नर्बदा से कहती हैं–''सुना नर्बदा, बेटू मुझे भूल गया–बस भूल ही गया........।'' और अम्मा आँचल से अपनी आँखों को पोछती और हँस पड़ती है। अम्मा का हँसना उनके भीतर की वेदना की चरमसीमा है।

23.5 'मैं हार गई'' कहानी की मूल संवेदना :–

'मैं हार गई' कहानी लेखिका की राजनैतिक चेतना को व्यक्त करती है। इस कहानी में व्यंग्य के माध्यम से भ्रष्ट नेताओं की कलुषित राजनीति को उद्घाटित किया है। लेखिका कहना चाहती है कि आज के माहौल में हम आदर्श समाजसेवी, देश–प्रेमी नेता की कल्पना करने के प्रयास में हार जाते हैं।

कहानी की 'मैं' चूँकि बड़े नेता की पुत्री है, जो कवि सम्मेलन में एक कवि की कविता सुनकर भड़क उठती है। कविता में प्रथम अभिनेत्री की तस्वीर को चूमने वाला, बाद में शराब पीने वाला और तद्नंतर बडी गंभीरता से 'गीता' को बगल में दबाकर बाहर निकलने वाले बेटे को देखकर उसके पिता अपने बेटे की भविष्यवाणी करते हैं– ''यह साला तो आजकल का नेता बनेगा।'' लेखिका इस कविता को सुनने के बाद तिलमिला जाती है और वह इस कविता का जवाब कहानी द्वारा देना चाहती है। लेखिका अपनी कहानी में सर्वगुण संपन्न नेता बनाने की योजना बनाती है। वह प्रथम अपने नेता को गरीब किसान के घर जन्म देती है, क्योंकि

उसने सुना और पढ़कर महसूस किया था कि ''कमल कीचड़ में उत्पन्न होता है, वैसे ही महान आत्माएँ गरीबों के घर ही उत्पन्न होती हैं।'' सर्वगुणों से संपन्न नेता का जन्म लेखिका गाँव के एक गरीब की झोपड़ी में कराती है। इस बालक के सीने में बड़े–बड़े अरमान मचलते हैं, बड़ी उमंग करवटें लेती है। वह अत्याचार सह नहीं सकता पर उसके घर पर तबाही का आलम है। पिता की मृत्यु हो गई है, माँ की आँखों की रोशनी चली गई है, विधवा बुआ और क्षयग्रस्त बहन है। गरीब घर में पैदा हुए उस बालक को देश तो प्यारा है, पर परिवार के लोग भी प्यारे हैं। नेता की रचनाकार लेखिका उसे प्रेरित करती है– ''जानते नहीं नेता लोग कभी अपने परिवार के बारे में नहीं सोचते, वे देश के, संपूर्ण राष्ट्र के बारे में सोचते हैं।''पर उसकी परेशानी है कि उसके गुजारे का साधन नहीं है। घर की विषम परिस्थितियों को संभालने के लिए वह मजदूरी करता है और एक दिन परेशानियों से तंग आकर चोरी करने की सोचता है। भावी नेता चोरी जैसा जघन्य कार्य करके नैतिकता का हनन करे ये लेखिका को पंसद नहीं था। इसलिए उसने कहानी के टुकड़े–टुकड़े कर दिये।

गरीबी मनुष्य में अपराधवृत्ति को जन्म देती है यह सोचकर दूसरी बार लेखिका ने अपने नेता का जन्म समृद्ध परिवार मे किया। उसकी स्कूली शिक्षा अच्छे स्कूल में हुई। उसकी प्रतिभा को लेखिका ने निखारा। वह जोशीले भाषण देता और गाँव में जाकर बच्चों को पढ़ाता। अमीर होकर भी वह सादगी का जीवन बिताने लगा, पर उसमें भी परिवर्तन आने लगा। रईसों के कॉलेज में प्रवेश करते ही वह उनकी संगत में ऊँची चीजें सीखने लगा कॉफी हाउस, जुआ–शराब के आधीन होकर छमिया के धमाके में नेता के सेवा–भाव, देश–प्रेम, नैतिकता सब धुँधले हो गये। लेखिका को बड़ी निराशा और ग्लानि हुई कि उसने ऐसे नेता को अपनी कलम से निर्मित किया। लेखिका को लगा कि जिस कवि ने भरी सभा में 'बेटे के भविष्य' कविता के साथ जो नहला फटकारा था उस पर वह इक्का तो क्या दुक्का भी न मार सकी। लेखिका ने स्वीकार कर लिया कि मैं हार गई बुरी तरह हार गई। लेखिका एक आदर्श नेता को न गरीबी में बना सकी न अमीरी में। गरीबी के असह्य दुःख और अमीरी की ऊँची चीजों में फँसा हुआ व्यक्ति आदर्श नेता नहीं बन सका और लेखिका हार गई। इस प्रकार इस कहानी में लेखिका कहना चहती है कि वर्तमान परिस्थिति में जब राजनीति इतनी दूषित हो गई है, चारों और षड्यंत्र हैं धोखा है ऐसे माहौल में नेता तो आदर्शवादी हो ही नहीं सकते।

23.6 **सारांश :–** निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि मन्नू भंडारी ने मानवीय संवेदनाओं को अपने रचना संसार के केन्द्र में रखा है। उन्होंने जीवन की विभिन्न स्थितियों को भिन्न–भिन्न कोणों से देखा है अतः उनकी कहानियों में संबंधों की विवशता, जीवन की विसंगतियाँ और अकेलापन गहरी संवेदना के साथ प्रकट हुआ है। नारी–जीवन की पीड़ा, उसके अंतर्द्वन्द्व, घुटन, टूटन, रूढ़ियों के प्रति उसका विद्रोह, तथा पुरुष निर्भरता को बहुत बारीकी से चित्रित किया है। इस प्रकार मन्नू भंडारी की संवेदना विश्व व्यापक धरातल पर उपस्थित है।

23.7 कठिन शब्द :

1) शोध–कार्य 6) वज्रपात

2) वेग | 7) क्षुब्ध

3) अनायास | 8) क्षयग्रस्त

4) व्यग्रता | 9) कलुषित

5) अस्तित्व | 10) जघन्य

23.8 अभ्यासार्थ प्रश्न

प्र॰1. संवेदना से आपका क्या अभिप्राय है। स्पष्ट करें ?

प्र॰2. 'यही सच है' कहानी की मूल संवेदना पर प्रकाश डालिए ?

प्र॰3. 'मजबूरी' कहानी में व्यक्त संवेदना की विवचेना कीजिए ?

प्र॰4. 'मैं हार गई' कहानी के संदर्भ में वर्तमान नेता की छवी पर प्रकाश डालिए ?

23.9 सन्दर्भग्रन्थ /पुस्तकें

1) मन्नू भंडारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य– डॉ. बंसीधर, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, नटराज पब्लिशिंग हाउस 1986

2) मन्नू भंडारी की कहानियों में आधुनिकता बोध–प्रो॰ उमा केवलराम, चन्द्रलोक प्रकाशन, 1997।

3) मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य : संवेदना और शिल्प – डॉ. भूमिका पटेल, चिन्तन प्रकाशन, 2012.

4) साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी – डॉ. सौ. मंगल कप्पीकेरे, विकास प्रकाशन, 2002

5) साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ–डॉ. विजया वारद, विकास प्रकाशन, 1993.

*****

M.A. Semester-II	UNIT - IV	Lesson No. 24
C.No. 203		HINDI

यही सच है, मजबूरी एवं मैं हार गई कहानियों का शिल्प एवं चरित्र

24.0 रूपरेखा

24.1 उदेद्श्य

24.2 प्रस्तावना

24.3 शिल्प का अर्थ एवं परिभाषाएँ

24.4 'यही सच है' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण।

24.5 'मजबूरी' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण।

24.6 'मैं हार गई' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ।

24.7 सारांश

24.8 कठिन शब्द

24.9 अभ्यासार्थ प्रश्न

24.10 सन्दर्भग्रन्थ/पुस्तकें

24.1 उद्देश्य : प्रस्तुत आलेख के अध्ययनोपरान्त आप

– शिल्प के अर्थ एवं परिभाषाओं से अवगत हो सकेंगे।

– 'यही सच है', 'मजबूरी' एवं 'मैं हार गई' कहानियों की शिल्पगत विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।

– चरित्र चित्रण के महत्व से अवगत होंगे।

– 'यही सच है', 'मजबूरी' एवं 'मैं हार गई' कहानियों के प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण कर सकेंगे।

24.2 प्रस्तावना :– शिल्प–विधान का शाब्दिक अर्थ है किसी चीज के बनाने या रचने का ढंग अथवा तरीका। किसी वस्तु के रचने की जो विधियाँ अथवा प्रक्रियाएँ होती है उसके सम्मुच्चय को शिल्प–विधान के नाम से जाना जाता है। मन्नू भंडारी ने अपनी संवेदनाओं की अभिव्यक्ति के लिए शिल्प का उचित एवं कलात्मक प्रयोग किया है। उन्होंने अपने कथा साहित्य में मानव–मन की सूक्ष्म संवेदनाओं, बाल–मन की मौन छटपटाहट के साथ–साथ राजनैतिक हथकंडेबाजी को भी अभिव्यक्त किया है। उनका संवेदन–विश्व व्यापक है। उनकी संवेदनाएँ जितनी गहन हैं, अभिव्यक्ति उतनी ही कलापूर्ण। मन्नू भंडारी ने अपने उपन्यासों एवं कहानियों की संरचना में शैल्पिक उपकरणों को जबरदस्ती नहीं जुटाया है, बल्कि उनकी अनुभूतियाँ इतनी सशक्त और सच्ची हैं कि वे अपने आप एक कलात्मक सौंदर्य के साथ अभिव्यक्त होती चलती हैं। जहाँ तक पात्रों के चरित्र चित्रण का प्रश्न है कहानी–कला के तत्वों में पात्रों के चरित्र का अपना विशेष महत्व है। पात्रों के द्वारा ही कहानी को गति प्रदान होती है। इसलिए कहानी में पात्रों को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है।

24.3 शिल्प का अर्थ एवं परिभाषाएँ :–

कलाकार अपनी अनुभूति को जिस पद्धति से व्यक्त करता है उसे शिल्प कहा जाता है। शिल्प शब्द की उत्पत्ति 'शिल्प' धातु और 'पक' प्रत्यय से हुई है। यह कलात्मक निर्वाह से संबंधित है। रचनाकार की अूमर्त अनुभूतियाँ शिल्प के कारण ही मूर्तरूप धारण करती है। डॉ. कैलाश वाजपेयी के अनुसार – 'शिल्पविधि रचना उन प्रमुखताओं का लेखा जोखा है, जिनके आधार पर रचना मूर्त हो सकी है अथवा विशिष्ट भंगिमा के साथ लेखनी द्वार अवतरित हुई है।'' अपनी अमूर्त अनुभूति को मूर्त करने की पद्धति ही शिल्प है। मधु संधु के अनुसार–''सार्थक अभिव्यक्ति का कलात्मक मोड़ ही शिल्प कहलाता है। इसके लिए अंग्रेजी में टेकनीक शब्द प्रचलित है।''शिल्प का अर्थ ढंग, विधान अथवा तरीका भी होता है। शिल्प अभिव्यंजना का विशेष ढंग तथा वह अनुक्रम है, जो रचना के प्रांरभ से रचना के अंत तक विशिष्ट तत्वों के माध्यम से मूर्त होता है। हिंदी साहित्य कोश के अनुसार –''शैली अनुभूत विषय वस्तु को सजाने के उन तरीकों का नाम है, जो उस विषय वस्तु की अभिव्यक्ति को सुंदर एवं प्रभावपूर्ण बनाते हैं।'' इससे यह स्पष्ट है कि शिल्प की आत्मा मुख्यतः वे संबंध है जिनके ढाँचे में अनुभूत विषय वस्तु को समाहित या व्यवस्थित किया जाता है। कुछ विद्वानों ने शिल्प को शैली से अधिक व्यापक अर्थ में ग्रहण करते हुए उसे वस्तु की अंतः संरचना का अनिवार्य प्रतिफलन माना है। डॉ. सुरेंद्र उपाध्याय ने कहा है – ''शिल्प से तात्पर्य किसी वस्तु को गढ़ना या रूपायित करना है, किंतु यह नितांत बाह्यय ढाँचे

के तकनीक के नियम जैसा है जैसा कि जैनेंद्र मानते है। शिल्प वस्तुतः समूची कृति के अंतः भाव का बाह्यय रूपाकार है, वह वस्तु की नाटकीय ढंग से संपूर्ण उपस्थिति है।'' रचना के निर्माण में जिन उपादानों की सहायता ली जाती है वे सभी शिल्प के अंतर्गत आते हैं। शब्द प्रयोग, वाक्य रचना, भाषा, शैली, सांकेतिकता, अलंकार, बिंब, प्रतीक, चित्रात्मकता आदि सभी को शिल्प के अंतर्गत रखा जा सकता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि रचना के सृजन में शिल्प का अपना विशेष महत्व होता है।

24.4 'सही सच है' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण :– मन्नू भंडारी शिल्प को लेकर सजग लेखिका है। उनकी संवेदनाएँ जितनी सधन हैं अभिव्यक्ति उतनी ही कलापूर्ण है। अपने कथा–लेखन में लेखिका ने दृष्टिकोण का उचित चुनाव किया है जिसके कारण उनकी कहानियों और उपन्यासों की रचना में कसावट आ गई है।

कथा लेखन में लेखक का अपना दृष्टिकोण होता है। वह कथा को सीधे से न कहकर विशिष्ट तकनीक से कहता है। मन्नू भंडारी ने अपने कथा–साहित्य की संरचना में दृष्टिकोण का उचित चुनाव किया है। उनकी कई सफल कहानियाँ प्रथम पुरूष के दृष्टिकोण से लिखी गई हैं। यहाँ आत्मकथात्मक शैली में कथाकार स्वयं को एक पात्र के रूप में रखकर भोक्ता या द्रष्टा के तौर पर कथावस्तु को संगठित करता है। वह खुद कथा–कथक होता है। 'यही सच है' कहानी भी प्रथम पुरूष के सीमित दृष्टिकोण से लिखी गई है। कहानी का आरंभ आत्मकथात्मक शैली में इस प्रकार होता है–

''सामने आँगन में फैली धूप सिमटकर दीवारों पर चढ़ गई और कन्धे पर बस्ता लटकाए नन्हें–नन्हें बच्चों के झुंड–के–झुंड दिखाई दिए, तो एकाएक ही मुझे समय का आभास हुआ। घंटा भर हो गया यहाँ खड़े–खड़े और संजय का अभी तक पता नहीं। झुँझलाती सी मैं कमरे में आती हूँ। कोने में रखी मेज़ पर किताबें बिखरी पड़ी है, कुछ खुली, कुछ बन्द। एक क्षण मैं उन्हें देखती रहती हूँ, फिर निरूद्देश्य–सी कपड़ों की अलमारी खोलकर सरसरी सी नजर से कपड़े देखती हूँ। सब बिखरे पड़े हैं। इतनी देर यों ही व्यर्थ खड़ी रही, इन्हें ही ठीक कर लेती। पर मन नहीं करता और फिर बन्द कर देती हूँ।''

''नहीं आना था तो व्यर्थ ही मुझे समय क्यों दिया? फिर यह कोई आज ही की बात है। हमेशा संजय अपने बताए हुए समय से घंटे–दो घंटे देरी करके आता है और मैं हूँ कि उसी क्षण से प्रतीक्षा करने लगती हूँ। उसके बाद लाख कोशिश करके भी तो किसी काम में अपना मन नहीं लगा पाती। वह क्यों नहीं समझता कि मेरा समय बहुत अमूल्य है, थीसिस पूरी करने के लिए अब मुझे अपना सारा समय पढ़ाई में ही लगाना चाहिए। पर यह बात उसे कैसे समझाऊँ।''

इस कहानी के सम्पूर्ण कथ्य के मध्य दीपा है। उसका प्रथम प्रेमी निशीथ है और आज वह संजय से प्रेम करती है। वर्तमान में दोनों के साथ जुड़कर वह उसी क्षण को सच मानती है जो उसका अपना है। प्रणय त्रिकोण को नये संदर्भ के साथ लेखिका ने ऊभारा है। इस नये संदर्भ को उभारने में दृष्टिकोण का उचित चुनाव पूरी तरह से सहायक रहा है।

भाषा–शैली की बात की जाए तो भावों की अभिव्यक्ति का माध्यम भाषा है। और रचना की सफलता का वह एक महत्वपूर्ण मापदण्ड है। भाषा जितनी ही सरल प्रांजल, भावाभिव्यंजक एवं बोधगम्य होती है, उतनी ही वह प्रभावशाली होती है। आधुनिक लेखक–लेखिकाओं ने ऐसी भाषा को ग्रहण किया है जो परिवर्तित जीवन–मूल्यों और युग की विभिन्न स्थितियों से साक्षात्कार कराने में समर्थ हो। उन्होंने व्यक्ति के भीतर चलते संघर्षों, द्वन्द्वों और उसकी सूक्ष्म संवेदनाओं को व्यक्त करने के लिए भाषा में मुहावरों, लोकोक्तियों, प्रतीकों का आधार लेकर उसे धारदार बनाया है। ऐसी लेखिकाओं में मन्नू भंडारी जी एक है, जिनकी सर्जना की सफलता का एक बहुत बड़ा कारण उनकी भाषा है। मन्नू भंडारी के कथा–साहित्य के पात्र जन साधारण से जुड़े होने के कारण उन्होंने उसी भाषा को अपनाया है जो व्यक्ति की अनुभूतियों के समीप हो। उन्होंने जन सामान्य की व्यथा कथा जन सामान्य तक पहुँचाने के लिए जन–सामान्य की बोलचाल की भाषा का प्रयोग किया है। मन्नू भंडारी की कहानियों और उपन्यासों के अधिकतर पात्र पढ़े–लिखे सुसंस्कृत होने के कारण उनकी भाषा में शुद्ध हिन्दीं का रूप देखने को मिलता है और यहाँ उनके पात्र कस्बे और छोटे से गाँव से जुड़े हुए हैं, वहां उनकी भाषा में प्रदेशिक शब्दों का प्रयोग भी दिखाई देता है। व्यक्ति के भीतर चलते अंतर्द्वन्द्व को प्रकट करने के लिए उन्होंने जहाँ प्रतीकों का आधार लिया है, वहीं उनकी भाषा में मुहावरे, लोकोक्तियां, अरबी–फारसी के शब्दों के साथ अंग्रेजी के शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। मन्नू भंडारी ने जीवन की पीड़ा, घुटन, हर्ष, उल्लास आदि को बहुत निकट से देखा है, भोगा है, जिसको उन्होंने सहज एवं स्वाभाविक भाषा में अभिव्यक्त किया है।

मन्नू भंडारी की कहानियों में भावानुकूल भाषा का प्रयोग दिखाई देता है। पात्रों की मनः स्थिति के अनुसार उनकी भाषा का रूप बदलता है। भावावेग के क्षणों में मन्नू भंडारी के पात्रों की भाषा शब्दों और छोटे–छोटे वाक्यों के आवर्तन का सहारा लेकर अपने भावों को अभिव्यक्त करते हैं। 'यही सच है' कहानी की दीपा के हृदय में प्रथम प्रेम के स्पर्श मात्र से ही भावों का आवेग उमड़ने घुमड़ने लगता है। दीपा के इस भावावेग को छोटे–छोटे वाक्यों के आवर्तन के द्वारा अभिव्यक्ति दी गई है। जैसे– 'मैं सब समझ गई, निशीथ, सब समझ गई। जो कुछ तुम इन चार दिनों में नहीं कह पाए, वह तुम्हारे इस क्षणिक स्पर्श ने कह दिया। विश्वास करो, यदि तुम मेरे हो तो मैं भी तुम्हारी हूँ, केवल तुम्हारी, एक मात्र तुम्हारी''।

मन्नू भंडारी ने भावानुकूल भाषा के साथ–साथ पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग भी किया है। मन्नू भंडारी के पात्र जिस माहौल से आते है, उसी के अनुरूप भाषा का प्रयोग करते हैं। मन्नू भंडारी की कई कहानियों के पात्र पढ़े–लिखे सुसंस्कृत है। वहां पर उन्होंने ऐसी ही परिनिष्ठित भाषा का प्रयोग किया है। 'यही सच है' कहानी की नायिका दीपा साहित्य में शोध–कार्य कर रही है। उसकी भाषा उसके व्यक्तित्व के अनुरूप है। जब वह सोचती है तो उसकी भाषा शुद्ध साहित्यिक भाषा होती है। जैसे –

''अठारह वर्ष की आयु में किया हुआ प्यार भी कोई प्यार होता है भला! निरा बचपन होता है, महज पागलपन! उसमें आवेश रहता है पर स्थायित्व नहीं, गति रहती है पर गइराई नहीं। जिस वेग से वह आरम्भ होता है, जरा–सा झटका लगने पर उसी वेग से टूट भी जाता है और उसके बाद आहों, आँसुओं और सिसकियों

का एक दौर, सारी दुनिया की निस्सारता और आत्महत्या करने के अनेकानेक संकल्प और फिर एक तीखी घृणा। जैसे ही जीवन को दूसरा आधार मिल जाता है, उन सबको भूलने में एक दिन भी नहीं लगता। फिर तो वह सब ऐसी बेवकूफी लगती है, जिस पर बैठकर घंटो हँसने की तबीयत होती है। तब एकाएक ही इस बात का अहसास होता है कि ये सारे आँसू, ये सारी आहें उस प्रेमी के लिए नहीं थी, वरन् जीवन की उस रिक्तता और शून्यता के लिए थी, जिसने जीवन को नीरस बनाकर बोझिल कर दिया था।

शब्द प्रयोग की दृष्टि से मन्नू भंडारी की रचना संसार पूर्णतः समृद्ध है। पात्रों और परिस्थितियों के अनुकूल शब्द चयन उनकी भाषा की प्रमुख विशेषता है। 'यही सच है' कहानी में लेखिका ने संस्कृत और अंग्रेजी के भरपूर शब्दों का प्रयोग किया है इसके अतिरिक्त ग्रामीण और अरबी फारसी के शब्द भी छुट पुट कहानी में बिखरे दिखाई देते हैं। अंग्रेजी शब्द जैसे थीसिस, आंटी, क्वालिटी, इंटरव्यू, जॉब, हेड ऑफिस, रिसर्च, इन्फ्लुएंस, नर्वस, स्टेशन, प्लेटफॉर्म, टैक्सी, रोड़, कैरियर, कॉफी हाउस, मिनिस्टर, पार्टी, स्काई–रूम, होस्ट, आर्डर, कोल्ड–कॉफी, स्ट्रॉ, कॉफी सिप, लेक, मीटिंग, मिनट, सी ऑफ, ट्रेन, बालकनी, टेबल, बुक रैक, राइटिंग का प्रयोग हुआ है। इसके अतिरिक्त संस्कृत शब्द जैसे क्षण, उपक्रम, क्षमा, उपस्थिति प्रसन्न, आर्द्रता, निर्जन, गुप्त, भ्रम, सशंक्ति, घृणा, संकल्प शून्यता, परिहास, स्पर्श विस्मित, अनुपस्थिति, उपहास विक्षिप्त, हार्दिक, आकृति, नियुक्ति, पुलकित, सुवासित, प्रशंसा, प्रतिकार, प्रस्ताव, प्रसाधन, अनुचित, निःश्वास, पूर्ति, विश्लेषण, ईर्ष्यालु, ह्रदय, उत्कट, निर्विकार, अस्तित्व, प्रचंड, दृष्टि, प्रश्न। अरबी शब्द जैसे खैरियत, तबीयत, फारसी शब्द गुमान, ग्रामीण शब्द बस्ता, खिसियाना, खीज आदि शब्दों का प्रयोग कहानी में किया गया है।

मन्नू भंडारी ने अपने कथा–लेखन में पत्र शैली को भी अपनाया है। यह अभिव्यंजना की अपेक्षाकृत नवीन शैली है। यह शैली कथा के विकास के साथ–साथ पात्रों के चरित्र निर्माण में भी सहायक रही है। पात्रों के भीतर चलती उधेड़बुन को लेखिका सीधे न कह कर पत्र के द्वारा प्रकट करती है। 'यह सच है' कहानी में दीपा निशीथ के जिस पत्र की राह आतुरता से देख रही है उस पत्र में कुछ न पाकर वह पत्र उसे निरर्थक सा लगता है। लेखिका ने इस पत्र में 'शेष फिर' शब्द के द्वारा पत्र को समाप्त किया है। मानों वह शेष ही रखना चाहती है। इस प्रकार लेखिका कई जगह पत्र के द्वारा ही भावों की व्यंजना को बहुत कम शब्दों में व्यक्त कर देती है। यह उनके लेखन की एक विशेषता है। दीपा को लिखे निशीथ के पत्र से उसकी दीपा से दूरी प्रकट होती हैं। अत्यंत औपचारिकता से वह लिखता है–

''प्रिय दीपा,

तुम अच्छी तरह पहुँच गई, यह जानकर प्रसन्नता हुई। तुम्हें अपनी नियुक्ति का तार तो मिल ही गया होगा। मैंने कल ही इरा जी को फोन करके सूचना दे दी थी और उन्होंने बताया था कि तार दे देंगे। ऑफिस की ओर से भी सूचना मिल जाएगी।

इस सफलता के लिए मेरी ओर से हार्दिक बधाई स्वीकार करना। सच मैं बहुत खुश हूँ कि तुम्हें यह काम मिल गया। मेहनत सफल हो गई। शेष फिर.....

शुभेच्छु

निशीथ''

डायरी शैली भी अभिव्यक्ति की एक नवीन शैली है। इस शैली को अपनाकर रचनाकार किसी पात्र के दैनिक जीवन का विवरण, उससे संबधित उसकी निजी संवदेनाएं, उसकी क्रिया प्रतिक्रियाएं एक साथ क्रमशः प्रस्तुत करता है। मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में डायरी शैली का प्रयोग किया है। मन्नू भंडारी ने 'यही सच है' कहानी में भी डायरी शैली को अपनाया है, पर उन्होंने यहाँ तारीख देकर समय के आधार पर नहीं, बल्कि शहरों के नाम देकर स्थान के आधार पर डायरी को लिखाया है। डायरी शैली में यह नवीन प्रयोग है। दीपा कानपुर और कलकत्ता में डायरी लिखती है। कुछ अंश द्रष्टव्य हैं–

''कानपुर परसों मुझे कलकत्ता जाना है। बड़ा डर लग रहा है। कैसे क्या होगा? मान लो, इंटरव्यू में बहुत नर्वस हो गई तो? संजय से कह रही हूँ कि वह भी साथ चले, पर उसे ऑफिस से छुट्टी नहीं मिल सकती। एक तो नया शहर, फिर इंटरव्यू! अपना कोई साथ होता तो बड़ा सहारा मिल जाता। मैं कमरा लेकर अकेली रहती हूँ, यों अकेली घूम–फिर भी लेती हूँ तो संजय सोचता है, मुझमें बड़ी हिम्मत है, पर सच, बड़ा डर लग रहा है। बार–बार मैं यह मान लेती हूँ कि मुझे नौकरी मिल गई है और मैं संजय के साथ वहाँ रहने लगी हूँ। कितनी सुन्दर कल्पना है, कितनी मादक। पर इंटरव्यू का भय मादकता से भरे इस स्वप्नजाल को छिन्न–भिन्न कर देता है.....। काश, संजय भी किसी तरह मेरे साथ चल पाता! कलकत्ता में दीपा की अचानक निशीथ से भेंट हो जाती है। दीपा के सामने पूरा अतीत आ खड़ा होता है। अतीत की स्मृति उसके मन को कटुता से भर देती है। इसी व्यक्ति ने उसे अपमानित कर उपहास का पात्र बनाया था! वह अपनी पीड़ा को डायरी में अभिव्यक्त करती है–

''कलकत्ता

गाड़ी जब हावड़ा स्टेशन के प्लेटफार्म पर प्रवेश करती है तो जाने कैसी विचित्र आशंका, विचित्र–से भय से मेरा मन भर जाता है। प्लेटफार्म पर खड़े असंख्य नर–नारियों में मैं इरा को ढूँढती हूँ। वह कहीं दिखाई नहीं देती। नीचे उतरने के बजाय खिड़की में से ही दूर–दूर तक नज़रें दौड़ाती हूँ।.......आखिर एक कुली को बुलाकर, अपना छोटा–सा सूटकेस और बिस्तर उतराने का आदेश दें, मैं नीचे उतर पड़ती हूँ। उस भीड़ को देखकर मेरी दहशत जैसे और बढ़ जाती है। तभी किसी के हाथ के स्पर्श से मैं बुरी तरह चौंक जाती हूँ। पीछे देखती हूँ तो इरा खड़ी है। रूमाल से चेहरे का पसीना पोंछते हुए कहती हूँः ''ओफ! तुझे न देखकर मैं धबरा रही थी कि तुम्हारे घर भी कैसे पहुँचूँगी।''

बाहर आकर हम टैक्सी में बैठते हैं, अभी तक मैं स्वस्थ नहीं हो पाई हूँ। जैसे ही हावड़ा–पुल पर गाड़ी पहुँचती है, हुगली के जल को स्पर्श करती हुई ठंडी हवाएँ तन–मन को एक ताजगी से भर देती है। इरा मुझे

इस पुल की विशेषता बताती है और मैं विस्मित–सी उस पुल को देखती हूँ, दूर–दूर तक फैले हुगली के विस्तार को देखती हूँ, उसकी छाती पर खड़ी और विहार करती अनेक नौकाओं को देखती हूँ बड़े–बड़े जहाजों को देखती हूँ......

शाम को इरा मुझे कॉफी–हाउस ले जाती है। अचानक मुझे वहाँ निशीथ दिखाई देता है। मैं सकपकाकार नज़र घुमा लेती हूँ। पर वह हमारी मेज़ पर ही आ पहुँचता है। विवश होकर मुझे उधर देखना पड़ता है, नमस्कार भी करना पड़ता है, इरा का परिचय भी करवाना पड़ता है। इरा पास की कुर्सी पर बैठने का निमन्त्रण दे देती है। मुझे लगता है, मेरी साँस रुक जाएगी।

''कब आई?''

''आज सवेरे ही।''

''अभी ठहरोगी? ठहरी कहाँ हो?''

जवाब इरा देती है। मैं देख रही हूँ, निशीथ बहुत बदल गया है। उसने कवियों की तरह बाल बढ़ा लिए हैं। यह क्या शौक चर्राया? उसका रंग स्याह पड़ गया है। वह दुबला भी हो गया है।

विशेष बातचीत नहीं होती और हम लोग उठ पड़ते हैं। इरा को मुन्नू की चिन्ता सता रही थी और मैं स्वयं भी घर पहुँचने को उतावली हो रही थी। कॉफी–हाउस से धर्मतल्ला तक वह पैदल चलता हुआ हमारे साथ आता है। इरा उससे बात कर रही है, मानों वह इरा का ही मित्र हो! इरा अपना पता समझा देती है और वह दूसरे दिन नौ बजे आने का वायदा करके चला जाता है।

पूरे तीन साल बाद निशीथ का यों मिलना! न चाहकर भी जैसे सारा अतीत आँखों के सामने खुल जाता है। बहुत दुबला हो गया है निशीथ!..........लगता है, जैसे मन में कहीं कोई गहरी पीड़ा छिपाए बैठा है।

मुझसे अलग होने का दुःख तो नहीं साल रहा है इसे?

कल्पना चाहे कितनी भी मधुर क्यों न हो, एक तृप्ति–युक्त आनन्द देने वाली क्यों न हो, पर मैं जानती हूँ, यह झूठ है। यदि ऐसा ही था तो कौन उसे कहने गया था कि तुम इस सम्बन्ध को तोड़ दो? उसने अपनी इच्छा से ही तो यह सब किया था।

एकाएक ही मेरा मन कटु हो उठता है। यही तो है वह व्यक्ति जिसने मुझे अपमानित करके सारी दुनिया के सामने छोड़ दिया था, महज उपहास का पात्र बनाकर! ओह, क्यों नहीं मैने उसे पहचानने से इनकार कर दिया? जब वह मेज के पास आकर खड़ा हुआ, तो क्यों नहीं मैंने कह दिया कि माफ कीजिए, मैं आपको

पहचानती नहीं? ज़रा उसका खिसियाना तो देखती! वह कल भी आएगा। मुझे उसे साफ–साफ मना कर देना चाहिए था कि मैं उसकी सूरत भी नहीं देखना चाहती, मैं उससे नफरत करती हूँ.............!

अच्छा है, आए कल! मैं उसे बता दूगी कि जल्दी ही मैं संजय से विवाह करने वाली हूँ। यह भी बता दूँगी कि मैं पिछला सब कुछ भूल चुकी हूँ। यह भी बता दूँगी कि मैं उससे घृणा करती हूँ और उसे जिन्दगी में कभी माफ नहीं कर सकती......यह सब सोचने के साथ–साथ जाने क्यों, मेरे मन में यह बात भी उठ रही थी कि तीन साल हो गए, अभी तक निशीथ ने विवाह क्यों नहीं किया? करे न करे, मुझे क्या.......?

क्या वह आज भी मुझसे कुछ उम्मीद रखता है? हूँ! मूर्ख कहीं का!

संजय! मैंने तुमसे कितना कहा था कि तुम मेरे साथ चलो, पर तुम नहीं आए।......इस समय जबकि मुझे तुम्हारी इतनी–इतनी याद आ रही है, बताओ, मैं क्या करूँ?

अतीत और वर्तमान को एक साथ देख दीपा की स्थिति द्वन्द्वग्रस्त हो जाती है। निशीथ दीपा का अतीत था और संजय वर्तमान। कभी निशीथ का प्यार उसे सच लगता है तो कभी संजय का। अपने मन की इन दुविधा को वह डायरी में व्यक्त करती है–

''कानपुर

आज निशीथ को पत्र लिखे पाँचवाँ दिन है। मैं तो कल से ही उसके पत्र की राह देख रही थी। पर आज की भी दोनों डाकें निकल गई। जाने कैसा सूना–सूना, अनमना–अनमना लगता रहा सारा दिन! किसी भी तो काम में जी नहीं लगता। क्यों नहीं लौटती डाक से ही उत्तर दे दिया उसने? समझ में नहीं आता, कैसे समय गुजारूँ!

मैं बाहर बालकनी में जाकर खड़ी हो जाती हूँ। एकाएक ख़याल आता है, पिछले ढाई सालों से करीब इसी समय, यहीं खड़े होकर मैंने संजय की प्रतीक्षा की है। क्या आज मैं संजय की प्रतीक्षा कर रही हूँ? या मैं निशीथ के पत्र की प्रतीक्षा कर रही हूँ? शायद किसी का नहीं, क्योंकि जानती हूँ कि दोनों में से कोई भी नहीं आएगा। फिर?

निरुद्देश्य–सी कमरे में लौट पड़ती हूँ। शाम का समय मुझसे घर में नहीं काटा जाता। रोज़ ही तो संजय के साथ घूमने निकल जाया करती थी। लगता है, यहीं बैठी रही तो दम ही घुट जाएगा। कमरा बन्द करके मैं अपने को धकेलती–सी सड़क पर ले आती हूँ.......शाम का धुँधलका मन के बोझ को और भी बढ़ा देता है। कहाँ जाऊँ? लगता है, जैसे मेरी राहें भटक गई हैं, मंजिल खो गई है। मैं स्वयं नहीं जानती, आख़िर मुझे जाना कहाँ है। फिर भी निरुद्देश्य–सी चलती रहती हूँ। पर आख़िर कब तक यूँ भटकती रहूँ? हारकर लौट पड़ती हूँ।

आते ही मेहता साहब की बच्ची तार का एक लिफ़ाफ़ा देती है।

धड़कते दिल से मैं उसे खोलती हूँ। इरा का तार था।

'नियुक्ति हो गई है। बधाई!''

इतनी बड़ी खुशख़बरी पाकर भी जाने क्या है कि खुश नहीं हो पाती। यह ख़बर तो निशीथ भेजने वाला था। एकाएक ही एक विचार मन में आता है क्या जो कुछ मैं सोच गई, वह निरा भ्रम ही था, मात्र मेरी कल्पना, मेरा अनुमान? नहीं–नहीं! उस स्पर्श को मैं भ्रम कैसे मान लूँ, जिसने मेरे तन–मन को डुबो दिया था, जिसके द्वारा उसके हृदय की एक–एक परत मेरे सामने खुल गई थी?........लेक पर बिताए उन मधुर क्षणों को भ्रम कैसे मान लूँ, जहाँ उसका मौन ही मुखरित होकर सब कुछ कह गया था? आत्मीयता के वे अनकहे क्षण! तो फिर उसने पत्र क्यों नहीं लिखा? क्या कल उसका पत्र आएगा? क्या आज भी उसे वही हिचक रोके हुए है?

तभी सामने की घड़ी टन्–टन् करके नौ बजाती है। मैं उसे देखती हूँ। यह संजय की लाई हुई है।. ....लगता है, जैसे यह घड़ी घंटे सुना–सुनाकर मुझे संजय की याद दिला रही है। फहराते ये हरे पर्दे, यह हरी बुक–रैक, यह टेबल, यह फूलदान, सभी तो संजय के ही लाए हुए हैं। मेज़ प रखा यह पेन उसने मुझे साल–गिरह पर लाकर दिया था। अपनी चेतना के इन बिखरे सूत्रों को समेटकर मैं फिर पढ़ने का प्रयास करती हूँ, पर पढ़ नहीं पाती। हारकर मैं पलंग पर लेट जाती हूँ।

सामने के फूलदान का सूनापन मेरे मन के सूनेपन को और अधिक बढ़ा देता है। मैं कसकर आँखें मूँद लेती हूँ..............एक बार फिर मेरी आँखों के आगे लेक का स्वच्छ, नीला जल उभर आता है, जिसमें छोटी–छोटी लहरें उठ रही थी। उस जल की ओर देखते हुए निशीथ की आकृति उभरकर आती है। वह लाख जल की ओर देखे; पर चेहरे पर अंकित उसके मन की हलचल को मैं आज भी, इतनी दूर रहकर भी महसूस करती हूँ। कुछ न कह पाने की मजबूरी उसकी विवशता, उसकी घुटन आज भी मेरे सामने साकार हो उठती है। धीरे–धीरे लेक के पानी का विस्तार सिमटता जाता है और एक छोटी–सी राइटिंग टेबल में बदल जाता है और भी देखती हूँ कि एक हाथ में पेन लिए और दूसरे हाथ की उँगलियों को बालों में उलझाए निशीथ बैठा है.......वही मजबूरी, वही विवशता, वही घुटन लिए।..........वह चाहता है, पर जैसे लिख नहीं पाता। वह कोशिश करता है, पर उसका हाथ बस काँपकर रह जाता है ओह! लगता है, उसकी घुटन मेरा दम घोंटकर रख देगा। मैं एकाएक ही आँखें खोल देती हूँ। वही फूलदान, पर्दे, मेज घड़ी............।''

दीपा का चरित्र चित्रण :– 'यही सच है' कहानी 'दीपा' नामक युवती एक ऐसी मानसिकता को स्पष्ट करती है जो क्षण के दर्शन को श्रेष्ठ मानकर उसके अनुसार अपने भावजगत को ढाल लेती है। दीपा भावुक, स्वप्निल, अस्थिरमन वाली युवती है। पुरानी कहानी की तरह दीपा घुट–घुटकर अपने आप में नहीं जीती।

उल्टे जो सामने आया है उसे सहजता से स्वीकार कर जीती है। जो वर्तमान है उसे अपनाने का सामर्थ्य उसमें है।

यहाँ दीपा के रूप में लेखिका ने ऐसी नारी का चित्रण किया है जो पारम्परिक रूढ़ियों से भी स्वयं को पूरी तरह मुक्त नहीं कर पायी है और न ही पूरी तरह आधुनिकता को अपना सकी है जिसके कारण वह असमंजस की स्थिति में है वह यह समझ ही नहीं पाती कि आखिर सच्चा प्रेम क्या है और वह यह प्रेम किससे करती है। किशोरावस्था में प्रेम की प्रथम अनुभूति उसे निशीथ से प्राप्त होती है परन्तु बहुत जल्द धोखा मिलने पर वह उससे अलग हो जाती है। दीपा कानपुर आ जाती है और रिसर्च कार्य में व्यस्त हो जाती है वहाँ उसकी जिन्दगी में संजय आता है। वह संजय से प्रेम करने लगती है। संजय रजनीगंधा के फूल लेकर दीपा के पास आता है तो वह बहुत प्रसन्न हो जाती है। ''ये फूल जैसे संजय की उपस्थिति का आभास रहते हैं.......'अक्सर मुझे भ्रम हो जाता है कि ये फूल नहीं हैं, मानों संजय की अनेकानेक आँखें हैं जो मुझे देख रही है और अपने को यो असंख्य आँखों से निरंतर देखे जाने की कल्पना से ही मैं लज्जा जाती हूँ।'' दीपा जानती है कि संजय निशीथ को लेकर सशंकित हो उठा है। दीपा सोचती है ''पर मैं उसे कैसे विश्वास दिलाऊँ कि मैं निशीथ से नफरत करती हूँ। उसकी याद मात्र से मेरा मन घृणा से भर उठता है। फिर अठारह वर्ष की आयु में किया हुआ प्यार भी कोई प्यार होता है भला। निरा बचपन होता है, महज पागलपन। उसमें आवेश रहता है पर स्थयित्व नहीं। गति रहती है पर गहराई नहीं। जिस वेग से वह आरम्भ होता है, जरा सा झटका लगने पर उसी वेग से टूट भी जाता है। दीपा संजय से कहती है। ''विश्वास करो संजय, तुम्हारा मेरा प्यार ही सच है। निशीथ का प्यार तो मात्र छल था, भ्रम था झूठ था।'' बहुत दुखी मन से दीपा संजय को छोड़कर कलकत्ता इन्टरव्यू के लिए आती है। कलकत्ता आने के बाद निशीथ के बारे में सोचती है। ''तीन साल हो गये अभी तक निशीथ ने विवाह क्यों नहीं किया ? करे न करे मुझे क्या?'' दीपा को निशीथ प्यारा लगता है। ''ढलते सूरज की धूप निशीथ के बाएँ गाल पर पड़ रही थी और सामने बैठा निशीथ इतने दिन बाद एक बार फिर मुझे बड़ा प्यारा–सा लगा।'' दीपा यह भी जान लेती है कि निशीथ कलकत्ता में उसे नौकरी मिले इसलिये बहुत प्रयत्न कर रहा है। जब दीपा कलकत्ता से कानपुर के लिए निकल पड़ती तब निशीथ प्लेटफार्म पर आता है। वह गाड़ी के साथ कदम बढ़ाता और हाथ पर धीरे से अपना हाथ रख देता है। तब दीपा कहती है ''मेरा रोम–रोम सिहर उठता है मन चाहता है चिल्ला पडूँ–मैं सब समझ गई, निशीथ सब समझ गई। जो कुछ तुम इन चार दिनों में नहीं कह पाये, वह तुम्हारे इस क्षणिक स्पर्श ने कह दिया। विश्वास करो यदि तुम मेरे हो तो मैं भी तुम्हारी हूँ, तुम्हारी। एकमात्र तुम्हारी!...... मुझे लगता है यह स्पर्श, यह सुख यह क्षण सत्य है, बाकी सब झूठ है। अपने को भूलाने का भरमाने का असफल प्रयास है।'' संजय से अब वह कहेगी कि, ''मैं तुम्हें प्यार नहीं करती। आज एक बात अच्छी तरह जान गई हूँ कि प्रथम प्रेम ही सच्चा प्रेम होता है।'' बाद में किया हुआ प्रेम तो अपने को भूलने का, भरमाने का प्रयत्न मात्र है। वह सोच रही थी वह निशीथ से ही प्रेम करती है इतने में संजय का लिफाफा देखती है। जिससे उसे मालूम होता है कि पाँच–छह दिन के लिए वह कटक गया है। वह निशीथ को पत्र भेजती है और पत्र का इन्तजार करती रहती है। दीपा द्वंद्व की स्थिति में कैद है वह समझ नहीं पाती कि वह संजय

की प्रतीक्षा कर रही है या निशीथ के पत्र की। इस तरह दीपा जो क्षण जी रही है उसी को सत्य मानती है। प्रेमिका के एक नये बदलते रूप रंग की छवि उसमें दिखाई देती है। इस कहानी में दीपा के माध्यम से नारी की नई रोमांटिक भूमिका और दो ध्रुवों के बीच डोलती मनःस्थिति को उजागर किया गया है। प्रेमिका की संक्रान्त मानसिकता का चित्रण दीपा के माध्यम से इस कहानी में हुआ है। प्यार की तरफ उसका एप्रोच एकदम आधुनिक है। जिस क्षण वह जो कुछ अनुभव करती है वह क्षण ही उसके लिए सत्य है और क्षण की महत्ता इसी में है।

24.5 'मजबूरी' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ एवं प्रमुख पात्रों का चरित्र चित्रण : 'मजबूरी' कहानी में भावों के अनुकूल भाषा का प्रयोग किया गया है। कहानी में अम्मा के हृदय में पूर्ण विश्वास दिखाई देता है कि उनका बेटू फिर उनके पास लौट आएगा, किंतु बेटू के न आने की घटना से उनके हृदय को गहरी ठेस लगती है। बाहर हँसती, प्रसाद चढ़ाने की बात करती अम्मा के भीतरी हृदय की हलचल को, हताशा के चरम क्षणों को वाक्य खंडों के आर्वतन द्वारा अभिव्यक्त किया गया है– ''क्या कहा बेटू मुझे भूल गया, वहाँ जम गया? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई। इस बार भगवान ने मेरी सुन ली। जरूर परसाद चढाऊँगी रे, जरूर चढाऊँगी। मेरे बच्चे के जी का कलेश मिटा, मैं परसाद नहीं चढाऊँगी भला......ले पेडे लेता आ अब परसादी चढ़ाकर बाँट ही दूँ कौन नर्बदा, बेटू मुझे भूल गया –बस भूल ही गया''।

'मजबूरी' कहानी की अम्मा अपने अकेलेपन के कारण व्यथित है। जब अम्मा की बहू अम्मा को अपने बेटू की सौंपने की बात करती है, तब अम्मा आश्चर्यचकित रह जाती है। बेटू को अपने पास रखने की बात से वे आनंद विभोर हो जाती है। विस्मय मिश्रित आनंद के चरमोत्कर्ष में मन्नू भडांरी की भाषा एकदम बदल जाती है–''तुम क्या कह रही हो बहू, बेटू को मेरे पास छोड़ जाओगी, मेरे पास। सच? हे भगवान, तुम्हारी सब साध पूरी हो, ! तुम बड़भागी होओ। मेरे इस सूने घर में एक बच्चा रहेगा तो मेरा तो जन्म सफल हो जाएगा.......तुम क्या जानो बहू! अपने कलेजे के टुकड़े को निकालकर मुम्बई भेज दिया। रामेसुर के बिना यह घर तो मसान जैसा लगता है। ये ठहरे सन्त आदमी, दीन–दुनिया से कोई मतलब नहीं। मैं अकेली ये पहाड़ जैसे दिन कैसे काटती हूँ सौ मैं ही जानती हूँ। भगवान तुम्हें दूसरा भी बेटा दे, तुम उसे पाल लेना। पर देखो, अपनी बात से मुडना नहीं.............मैं.............मैं...................'' इस प्रकार भावों के अनुरूप मन्नू भंडारी ने भाषा का प्रयोग किया है।

भावों के अनुरूप भाषा प्रयोग के साथ–साथ मन्नू भंडारी के साहित्य में पात्रों के अनुकूल भाषा का प्रयोग भी किया गया है। जो भाषा को जीवन्त रूप प्रधान करता है। 'मजबूरी' कहानी की अम्मा गाँव में रहने वाली अनपढ़ स्त्री है। उनकी भाषा में परिवेश के अनुरूप ग्रामीण शब्दावली का प्रयोग हुआ है। ''अरे पढ़ लेगा बहू, पढ़ लेगा! ऊमर आएगी तो पढ़ भी लेगा। यह मत सोचना कि मैं उसे गँवार ही रहने दूँगी। रामेसुर को भी मैंने ही पाला–पोसा है, उसे क्या गंवार ही रख दिया? फिर यह तो मुझे और भी प्यारा है। मूल से ब्याज़ प्यारा होता है सो इसे तो मैं खूब पढाऊँगी–तू ज़रा भी चिन्ता मत करना बहू।'' मन्नू जी के पात्र जिस परिवेश से आते है, उसी के अनुकूल भाषा का प्रयोग करते हैं।

मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में मुहावरों और कहावतों का प्रयोग भी बड़ी सफलता एवं सजगता से किया है। मुहावरों और कहावतों के प्रयोग से भाषा सशक्त, प्रभावी, गतिशाली एवं धारदार हो गई है। उन्होंने मुहावरों और कहावतों के प्रयोग के कारण किसी गूढ़ रहस्यमयी और गंभीर बात को कम शब्दों के द्वारा कह दिया है। यह उनके जीवनानुभवों और भोगी हुई, सच्चाईयों के कारण ही संभव हो सका है। 'मजबूरी' कहानी में पैरों तले जमीन सरकना, खून खौलना, जमीन–आसमान एक करना, खून का घूंट पीना जैसे मुहावरे देखने को मिलते हैं। मुहावरों के प्रयोग से भाषा कैसी धारदार और अर्थ गंभीर बनती है, इसका एक उदाहरण द्रष्टव्य है– ''अम्मा को कभी स्वपन में भी खयाल नहीं था कि रमा पप्पू के रहते हुए भी बेटू को ले जाने का प्रस्ताव रखेगी। जिस दिन उन्होंने सुना, ''उनके पैरों तले की जमीन सरक गई।'' अम्मा की आघात–जनक स्थिति को 'पैरों तले की जमीन सरक गई' जैसे मुहावरे से सशक्त अभिव्यक्ति मिली है। इसी प्रकार 'कलेजे पर गरम सलाख दागाना' मुहावरे के प्रयोग से अम्मा की बेटू के प्रति संवेदना और दुख साफ झलकता है। ''अरे, बहू बेटू को ले गई? तुम तो कहती थी कि बेटू अब तुम्हारे पास ही रहेगा।'' अम्मा को लगा कि, जैसे किसी ने उनके कलेजे पर गरम सलाख दाग दी हो।.....''कहती तो थी पर अब रखा नहीं जाता। गठिया के मारे मेरा तो उठना–बैठना तक हराम हो रहा है, तो मैंने ही कह दिया कि बहू, अब पप्पू बड़ा हुआ सो बेटू को भी ले जाओ।'' मुहावरों के साथ–साथ कहावतें भी अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम बनकर आई हैं जैसेः– ''मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है''।

शब्द प्रयोग की बात की जाए तो मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में पात्रों और परिवेश के अनुसार भाषा का प्रयोग देखने को मिलता है। 'मजबूरी' कहानी में अंग्रेजी, ग्रामीण, अरबी, संस्कृत भाषा के शब्द देखने को मिलते हैं। अंग्रेजी शब्द ट्राम, ग्रामीण शब्द खिलावे पिन्हाऊं, पहर, लीप, गठिया, खड़िया, मांड, चून, खटिया, चौका, खाट, मनौती, परसाद आदि। अरबी शब्द अदब संस्कृत शब्द औषधालय, प्राण, संस्कार, प्रयाण, संशय, शून्य आदि शब्दों का प्रयोग किया गया है।

प्रत्येक रचनाकार अपने भावों और विचारों को विशेष पद्धति से अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है। इसे ही शैली कहा जाता है। मन्नू भंडारी चित्रात्मक शैली का सहारा लेकर पात्रों के हाव–भाव, मनः स्थिति या किसी घटना और स्थिति का वर्णन इतनी कलात्मकता से करती हैं कि हमारे सामने एक सजीव दृश्य आकर खड़ा हो जाता है। 'मजबूरी' कहानी की अम्मा अपने बेटू के आने की खुशी में बड़ी प्रसन्न दिखाई देती है। अम्मा के क्रिया–कलाप को लेखिका ने चित्रात्मक शैली में अंकित किया है– ''बूढ़ी अम्मा ज़ोर–ज़ोर से यह लोरी गा रही थी और लाल मिट्टी से कमरा लीप रही थी। उनके घोसले जैसे बालों में से एक मोटी सी लट निकलकर उनके चेहरे पर लटक आई थी, जो उनके हिलते हुए सिर के साथ हिलहिल कर मानों लोरी पर ताल ठोंक रहीं थी।''

भावों की सजीवता, मार्मिकता एवं सशक्त अभिव्यंजना हेतु अपने कथा–लेखन में मन्नू भंडारी ने कुछ स्थानों पर गीतों की संयोजना भी की है। 'मजबूरी' कहानी में अम्मा के भीतर अपने पोते के आने की खुशी को

लेखिका ने गीत के माध्यम से व्यक्त किया है। उनका वात्सल्य पूर्ण मन आज उमड़ पड़ा है। वे आँगन लीपते–लीपते लोरी गाती है–

'बेटू को खिलावे जो एक घड़ी

उसे पिन्हाऊँ मैं सोने की घड़ी।

बेटू को खिलावे जो एक पहर,

उसे दिलाऊँ मैं सोने की मोहर।''

''आओ र चिड़िया चून करो

बेटू ऊपर राइ–नून करो,

नून करो–नून करो.......

गीतों की सहायता लेकर लेखिका ने अपने कथा–साहित्य में शैलीगत वैविध्य का निरूपण किया है।

अम्मा का चरित्र–चित्रण :'मजबूरी' कहानी की 'अम्मा' एक ममतामयी नारी के रूप में चित्रित हुई है। उसके हृदय में अपने बेटे–बहू तथा पोते के लिए असीम प्रेम है। अम्मा का पति वैद्य है जो दिनभर औषधालय में ही रहता है और बेटा रामेसुर बम्बई में नौकरी होने के कारण परिवार सहित वहीं रहता है। पति और बेटा दोनों अपने जीवन में व्यस्त है जिस कारण अम्मा का अकेलापन काटने वाला कोई नहीं। अपने अकेलेपन में वह बेटे के आने की आस लगाए रहती है। जब उसे बेटे की परिवार सहित आने की सूचना मिलती है तो अम्मा की प्रसन्नता का ठिकाना नहीं रहता, क्योंकि इस बार वह बेटे के साथ–साथ अपने पोते से भी मिलने वाली थी। पोते के स्मरण से ही उसका ममत्व हिलौरे लेने लगता है। पोते की ममता में वह अपने गठिया के दर्द को भी भूल जाती है और खुशी में पूरा आंगन लीपने लगती है। वह अकेले में लोरियां गुनगुनाती है–

''बेटू को खिलावे जो एक घड़ी

उसे पिन्हाऊं मैं सोने की घड़ी।

बेटू को खिलावे जो एक पहर,

उसे दिलाऊं मैं सोने की मोहर''

इतना ही नहीं जब बेटा परिवार सहित घर आता है तो वह तांगे की आवाज सुनकर ही दरवाजे की और दौड़ पड़ती है और बेटे से पोते को ऐसे छीनती है जैसे किसी अजनबी से अपने पोते को ले रही हो।

बेटा–बहू जब अम्मा को बताते हैं कि अब बेटू को वह उनके पास ही छोड़ जाएंगे, क्योंकि बहू फिर से गर्भवती थी और ऐसी स्थिति में दो बच्चों की देखभाल करना कठिन है। यह सूचना अम्मा की खुशी को चरमसीमा पर पहुँचा देती है। वह इस समाचार को गांव की सभी औरतों को बताती है। अम्मा की यह प्रतिक्रिया पोते के प्रति उसके प्रेम को प्रदर्शित करती है।

अम्मा पोते के प्रति असीम ममता तो रखती है किन्तु जब बात उसी पोते के भविष्य की आती है तो वह अपनी ममता को इसमें रुकावट नहीं पहुँचाने देती। बहू, बेटू की अनुशासनहीनता से चिंतित होकर उसे अपने साथ ले जाने का निर्णय लेती है। पहली बार तो बेटू अम्मा के प्रेमाभाव के कारण पूणः वापिस आ जाता है लेकिन दूसरी बार बम्बई की चकाचौंद में उसका मन रम जाता है। तब अम्मा अपने प्रेम को हृदय में छुपा बेटू के उज्ज्वल भविष्य के लिए खुश होती है। अपनी नौकरानी नर्बदा से कहे अम्मा के ये शब्द–''सुना नर्बदा, बेटू मुझे भूल गया–वह भूल ही गया....''अम्मा की वेदना को व्यक्त करते हैं। क्योंकि चाहे वह पोते के भविष्य के लिए उसे स्वयं से दूर कर देती है लेकिन उसका मोह एवं असीम प्रेम अपने हृदय में आज भी छुपाए हुए है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि अम्मा एक ममतामयी नारी के रूप में हमारे सामने आती है, जो पोते के प्रति अथाह स्नेह रखते हुए भी उसके सुनहरे भविष्य हेतु स्वयं अकेलापन स्वीकार कर लेती है।

24.6 **'मैं हार गई' कहानी की शिल्पगत विशेषताएंः–** मन्नू भंडारी ने अपनी कहानियों में दृष्टिकोण का उचित चुनाव किया है। 'मैं हार गई' मन्नू भंडारी की प्रथम पुरूष के दृष्टिकोण से लिखी गई कहानी है। ''कहानी में कथा–कथक नायिका अपनी असफलता को व्यक्त करती है। आदर्श और समाजसेवी नेता का निर्माण न वह उच्चवर्ग में कर पाती है न गरीब वर्ग में और अंत में अपनी विवशता व्यक्त करती हुई कहती है–

''उसने तो अपने किए का फल पा लिया, पर मैं समस्या का समाधान नहीं पा सकी। इस बार की असफलता ने तो बस मुझे रूला दिया। अब तो इतनी हिम्मत भी नहीं रही कि एक बार फिर मध्यम वर्ग में अपना नेता उत्पन्न करके फिर से प्रयास करती। इन दो हत्याओं के भार से ही मेरी गर्दन टूटी जा रही थी और हत्या का पाप ढोने की न इच्छा थी न शक्ति ही और अपने सारे अहं को तिलांजलि देकर बहुत ही ईमानदारी से मैं कहती हूँ कि मेरा रोम–रोम महसूस कर रहा था कि कवि भरी सभा में शान के साथ जो नहला फटकार गया था अब उस पर इक्का तो क्या, मैं दुग्गी भी न मार सकी। मैं हार गई बुरी तरह हार गई।''

कथा–साहित्य में संवाद का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। संवाद कथ्य की संवेदना और पात्रों की मनः स्थिति की सही पहचान कराते हैं। वे कथा को गति प्रदान करते हुए पात्रों का आत्म–विश्लेषण करके उनकी छटपटाहट को चित्रित करते हैं। मन्नू भंडारी ने संवाद शैली का विशिष्ट रूप में प्रयोग किया है। वे अपनी कुछ कहानियों में सीधे पाठकों से बात करती है। ''मैं हार गई' कहानी पूरी संवाद शैली में लिखी गई है। लेखिका सर्वगुण संपन्न नेता का निर्माण करना चाहती है, वह अपने महान नेता को लेकर सीधे पाठकों से संवाद करती हैं– ''मन की आशाएँ और उमंगे जैसे बढ़ती हैं, वैसे ही मेरा नेता भी बढ़ने लगा। थोड़ा बड़ा हुआ तो गांव के स्कूल में ही उसकी शिक्षा प्रारम्भ हुई। यद्यपि मैं इस प्रबन्ध से विशेष सन्तुष्ट नहीं थी, पर स्वयं ही मैंने परिस्थिति

बना डाली थी कि इसके सिवाय कोई चारा नहीं था। धीरे–धीरे उसने मिडिल पास किया। यहाँ तक आते–आते उसने संसार के सभी महान व्यक्तियों की जीवनियां और क्रान्तियों के इतिहास पढ़ डाले। देखिए, आप बीच में ही थे मत पूछ बैठिए कि आठवीं का बच्चा इन सबको कैसे समझ सकता है? यह तो एकदम अस्वाभाविक बात है। इस समय मैं आपके किसी भी प्रश्न का जवाब देने की मनः स्थिति में नहीं हूँ। आप यह न भूलें कि यह बालक एक महान भावी नेता है। हाँ, तो यह सब पढ़कर उसके सीने में बड़े–बड़े अरमान मचलने लगे, बड़े–बड़े सपने साकार होने लगे, बड़ी–बड़ी उमंगे करवटें लेने लगीं।''

मन्नू भंडारी की भाषा की एक महत्वपूर्ण विशेषता है शब्द प्रयोग। मन्नू भंडारी परिवेश और पात्र के अनुरूप भाषा का प्रयोग करती है। परिणामस्वरूप उनकी भाषा में शुद्ध संस्कृत के शब्दों के साथ–साथ देशज और अरबी, फारसी और अंग्रेजी के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। 'मैं हार गई' कहानी में अंग्रेजी, ग्रामीण, उर्दू, अरबी, फारसी, संस्कृति के शब्द देखने को मिलते हैं। अंग्रेजी शब्द जैसे हॉल, स्कूल, मिडिल, मैट्रिक, कॉलेज, कॉफी हाऊस, सिल्क सिगरेट, सेंट, बार, ड्राईवर। ग्रामीण शब्द बाँछे, छमिया, छमाका, उर्दू शब्द फजीहत, नापाक, फारसी शब्द तबाह, अरबी शब्द नक्शा, सलाह–मशविरा, जिस्म, ज़लालत, लुत्फ़। संस्कृत शब्द हर्ष, प्राण, क्षयग्रस्त, स्रष्टा, रूग्ण, जघन्य, विधाता, क्षीण, क्षमा, अशिष्ट आदि देखने को मिलते हैं। इसके अतिरिक्त यथा तथा मुहावरों का प्रयोग भी मन्नू भंडारी के कथा साहित्य में देखने को मिलता है। 'मैं हार गई' कहानी में नाक में दम करना, काठ का उल्लू जैसे मुहावरों का प्रयोग देखने को मिलता है।

24.7 सारांश : मन्नू भंडारी शिल्प सजग लेखिका हैं। उनका भाषा पर जबरदस्त अधिकार है। मन्नू भंडारी के पात्र जहाँ पढ़े–लिखे सुसंस्कृत हैं वहाँ उन्होंने शुद्ध हिन्दी का प्रयोग किया है और जहाँ उनके पात्र कस्बे या गाँव से जुड़े हैं वहाँ उन्होंने गंवई भाषा का प्रयोग किया है। भावानुकूलता मन्नू भंडारी की भाषा की विशिष्टता है। मन्नू भंडारी ने वर्तमान जीवन की जटिलताओं, मानव–जीवन की उलझनों एवं ग्रंथियों को प्रतीकों के माध्यम से अभिव्यक्त किया है। उन्होंने अपनी रचनाओं में मुहावरों एवं कहावतों का प्रयोग बड़ी सफलता एवं सजगता से किया है। कथा में वास्तविकता तथा विश्वसनीयता लाने के लिए वर्णनात्मक शैली का प्रयोग भी किया गया है। इस प्रकार लेखिका ने चित्रात्मक शैली, पत्र शैली, डायरी शैली, संवाद शैली जैसी विभिन्न शैलियों के प्रयोग द्वारा लेखन में सजीवता लाने का प्रयास किया है जिसमें वह पूर्णतः सफल हुई है। अनुभूति की प्रामाणिकता, कथ्य की विविधता, व्यापक दृष्टिकोण और शिल्प का सौष्ठव मन्नू भंडारी को श्रेष्ठ सर्जक सिद्ध करता है।

24.8 कठिन शब्द :–

(1) संवेदना (2) समाहित (3) उपादानों (4) प्रांजल (5) भावाभिव्यंजक

(6) अंतर्द्वन्द्व (7) आवर्तन (8) परिनिष्ठित (9) निस्सारता (10) उपहास

(11) स्वप्निल (12) आवेश (13) सक्रान्त (14) आवर्तन (15) मार्मिकता

(16) सजीव (17) निरूपण

24.9 अभ्यासार्थ प्रश्न :–

प्र॰1. शिल्प का अर्थ एवं परिभाषाएँ दीजिए?

प्र॰2. 'यही सच है' कहानी की शिल्पगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए?

प्र॰3. 'यही सच है' कहानी की प्रमुख पात्र दीपा का चरित्र चित्रण कीजिए?

प्र॰4. 'मजबूरी' कहानी की शिल्पगत विशेषताओं पर रोशनी डालें?

प्र॰5. 'मजबूरी' कहानी की अम्मा एक ममतामयी स्त्री है स्पष्ट करें।

प्र॰6. 'मजबूरी' कहानी के शीर्षक की सार्थकता स्पष्ट करें?

प्र.7. 'मैं हार गई' कहानी की शिल्पगत विशेषताएँ बताइए?

प्र.8. 'मैं हार गई' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।

3.10 सन्दर्भग्रन्थ / पुस्तकें

1) मन्नू भंडारी का श्रेष्ठ सर्जनात्मक साहित्य– डॉ. बंसीधर, डॉ. राजेन्द्र मिश्र, नटराज पब्लिशिंग हाउस 1986

2) मन्नू भंडारी की कहानियों में आधुनिकता बोध–प्रो. उमा केवलराम, चन्द्रलोक प्रकाशन, 1997।

3) मन्नू भण्डारी का कथा साहित्य : संवेदना और शिल्प – डॉ. भूमिका पटेल, चिन्तन प्रकाशन, 2012.

4) साठोत्तरी हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी – डॉ. सौ. मंगल कप्पीकेरे, विकास प्रकाशन, 2002

5) साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ–डॉ. विजया वारद, विकास प्रकाशन, 1993.

*****